प्रकाशक
श्रीमान् सेठ लालचंद हीराचंद
अध्यक्ष—जैन संस्कृति संरक्षक संघ
सोलापुर (महाराष्ट्र)

प्रथमावृत्ति
प्रति ५००

मुद्रक
वर्द्धमान मुद्रणालय
जवाहर नगर कॉलोनी, दुर्गाकुण्ड, रोड
वाराणसी–२२१००१



स्व. ब्र. जीवराज गौतमचंद दोषी
स्व. रो. ता. १६-१-५७ (पौष शु. १५)

परिचय

सोलापुर निवासी स्व० ब्र० जीवराज गौतमचंद दोशी कई वर्षों से उदासीन होकर धर्मकार्यमें अपनी वृत्ति लगा रहे थे। सन् १९४० में उनकी प्रबल इच्छा हो उठी कि अपनी न्यायोपार्जित संपत्तिका उपयोग विशेषरूपसे धर्म और समाजकी उन्नतिके कार्यमें करें। तदनुसार उन्होंने समस्त देशका परिभ्रमण कर जैन विद्वानोंसे साक्षात् और लिखित रूपसे सम्मतियाँ इस बातकी संग्रह कीं, कि कौनसे कार्यमें संपत्तिका उपयोग किया जाय। स्फुट मतसंचय कर लेनेके पश्चात् सन् १९४१ के ग्रीष्मकालमें ब्रह्मचारीजीने सिद्धक्षेत्र गजपंथा (नाशिक) के शीतल वातावरणमें विद्वानोंकी समाज एकत्रित की और ऊहापोहपूर्वक निर्णयके लिए उक्त विषय प्रस्तुत किया।

विद्वान् सम्मेलनके फलस्वरूप ब्रह्मचारीजीने जैनसंस्कृति तथा जैनसाहित्यके समस्त अंगोंके संरक्षण, उद्धार और प्रचारके हेतु **'जैन संस्कृति संरक्षक संघ'** नामक संस्थाकी स्थापना की। उसके लिये रु० ३०,००० के दानकी घोषणा कर दी। उनकी परिग्रहनिवृत्ति बढ़ती गई। सन् १९४४ में उन्होंने लगभग दो लाखकी अपनी संपूर्णसंपत्ति संघको ट्रस्टरूपसे अर्पण की। इस संघके अंतर्गत 'जीवराज जैन ग्रन्थमाला' द्वारा प्राचीन प्राकृत-संस्कृत-हिंदी तथा मराठी पुस्तकोंका प्रकाशन हो रहा है।

आजतक इस ग्रन्थमालासे हिंदी विभागमें ३४ पुस्तकें, कन्नड विभागमें ३ पुस्तकें, तथा मराठी विभागमें ४४ पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं।

प्रस्तुत ग्रन्थ इस ग्रन्थमालाका हिंदी विभागका ३४ वाँ पुष्प है।

प्रकाश ीय निवेदन

यह श्रावकाचार संग्रह ग्रन्थ उपासकाध्ययनांगका चरणानुयोगका प्रकाशक अनुपम ग्रन्थ है। इसमें सब श्रावकाचारोंका संग्रह एकत्रित किया है। श्रावक धर्मका स्वरूप क्या है, आत्मधर्मके उपासककी दिनचर्या कैसी होनी चाहिये, परिणामों की विशुद्धिके लिये क्रमपूर्वक व्रत-संयमका अनुष्ठान नितांत आवश्यक है इसका विस्तारपूर्वक विवरण इस ग्रन्थका पठन-पाठन करनेसे ज्ञात हो सकता है। स्व० श्रीमान् डा० ए० एन० उपाध्ये ने सब श्रावकाचार ग्रंथोंकी नामावली भेजकर यह ग्रन्थ प्रकाशित करनेके लिये मूलप्रेरणा दी इसलिये यह संस्था उनकी कृतज्ञ है।

श्रावकाचारके इस पाँचवें भागका संपादन एवं हिन्दी अनुवाद श्री प० हीरालालजी शास्त्री ने तैयार करके ग्रंथमालाको जिनवाणीका प्रचार करनेमें सहयोग दिया है, जिसके लिये हम उक्त जैनधर्मसिद्धांतके मर्मज्ञ विद्वान्को हार्दिक धन्यवाद समर्पण करते हैं।

इस ग्रंथका मुद्रण कार्य सुचारु रूपसे करनेमें श्री वर्द्धमान मुद्रणालय वाराणसी के संचालकवर्गने सहयोग दिया है इसलिये हम उनका भी आभार मानते हैं।

अंतमें इस ग्रन्थका पठन-पाठन घर-घरमें होकर श्रावकधर्मकी प्रशस्त तीर्थप्रवृत्ति अखंड प्रवाहसे सदैव कायम रहे यह मंगल भावना प्रकट करते हैं।

श्री बालचंद दे ंद शहा
मंत्री श्री जैनसंस्कृतिसंरक्षक संघ
(जीवराज जैन ग्रन्थमाला, सोलापुर)

सम्पाद ीय वक्तव्य

श्रावकाचार-संग्रहका यह पंचम भाग पाठकोंके कर-कमलोंमें उपस्थित करते हुए मुझे महान् हर्ष हो रहा है। ऐ० पन्नालाल दि० जैन सरस्वती भवनमें पदम कविकृत 'श्रावकाचार'की एक प्रति विद्यमान है, उसे देखकर और पढ़कर उसकी महत्ताने हृदयपर यह प्रभाव अंकित किया कि इसका भी प्रकाशन हो जाना चाहिए। उसमें यतः श्रावककी ५३ क्रियाओंका वर्णन किया गया है अतः पं० किशनसिंह जी और पं० दौलतरामजीके क्रियाकोषोंको प्रस्तुत संग्रहमें संकलन करनेकी भावना उत्पन्न हुई और गत वर्ष इसी मईमें श्रद्धेय, परम पूज्य मुनि श्री १०८ समन्तभद्र जी महाराजके चरण-सान्निध्यमें कुम्भोज पहुंचा। वहाँपर संस्थाके मानद मंत्री श्री वालचन्द्रजी देवचन्द्रजी शहा पहिलेसे ही उपस्थित थे। तथा श्री ब्र० पं० माणिकचन्द्रजी चवरे कारंजा, श्री ब्र० पं० माणिकचन्द्रजी भिसीकर और श्री रायचन्द्रजीकी भक्त मण्डली भी मौजूद थी। उन सबके सामने मैंने उक्त तीनोंका प्रकाशन श्रावकाचार-संग्रहके पाँचवें भागके रूपमें करनेका प्रस्ताव रखा। सबके द्वारा समर्थन और अनुमोदन किये जानेपर संस्थाके मंत्रीजीने प्रकाशनकी स्वीकृति दी और इस विषयमें जीवराज-ग्रन्थमालाके प्रधान-सम्पादक श्रीमान् पं० कैलाशचन्द्रजी सिद्धान्त-शास्त्रीके साथ परामर्श करनेको कहा। यथा समय मैंने उनसे परामर्श किया और तदनुसार हिन्दी छन्दोवद्ध श्रावकाचारोंका यह पाँचवाँ भाग पाठकोंके सामने उपस्थित है।

हिन्दी भाषामें रचित होनेसे उनका अर्थ देनेकी आवश्यकता प्रतीत नहीं हुई। पदम कवि-रचित श्रावकाचारका सम्पादन ऐ० सरस्वती भवनकी एक मात्र प्रतिके आधारपर हुआ है। प्रयत्न करनेपर भी अन्य स्थानसे दूसरी प्रति उपलब्ध नहीं हुई। शेष दोनों क्रियाकोषोंका सम्पादन पूर्व-मुद्रित प्रतियोंके आधारपर हुआ है और उसमें किशनसिंहजीके क्रियाकोषका संशोधन श्रीमान् सर सेठ भागचन्द्र जी सोनी अजमेरके निजी भंडारकी हस्तलिखित प्रतिके आधारपर हुआ है। पं० दौलतरामजीके क्रियाकोषका संशोधन ऐ० सरस्वती भवनकी हस्तलिखित प्रतिके आधार-पर हुआ है, अतः हम उक्त सभीके आभारी हैं।

इस भागके शीघ्र प्रकाशनार्थ गतवर्ष नवम्बरमें मैं वाराणसी आया। एक मासके बाद ही मैं दमेसे वीमार पड़ गया और देश वापिस जाना पड़ा। दमेके शान्त होते ही हृदय-रोगसे पीड़ित गया और कुछ स्वस्थ होते ही पुनः वाराणसी मार्चके प्रारम्भमें आया। कमजोरी अधिक होनेसे श्रीमान् पं० फूलचन्द्रजी सिद्धान्तशास्त्री और महावीर प्रेसके मालिक पं० वावूलालजी फागुल्ल एवं अन्य वाराणसी-स्थित विद्वानोंने मुझे सर्व प्रकारसे संभाला और स्वास्थ्य-लाभमें सहायक वने। इसके लिए मैं उक्त सभी विद्वानोंका वहुत आभारी हूँ।

संस्थाके मानद मंत्री श्रीमान् सेठ वालचन्द्र देवचन्द्र शहा और ग्रन्थमालाके प्रधान सम्पादक श्रीमान् पं० कैलाशचन्द्रजी सिद्धान्त शास्त्रीका आभार व्यक्त करता हूँ जिन्होंने पत्रोंके द्वारा एवं मौखिक सत्परामर्श देकरके समय-समयपर मुझे अनुगृहीत किया है। वर्धमान मुद्रणालयने तत्प-रताके साथ इसका मुद्रण किया है इसके लिए मैं आप सवका आभारी हूं।

अन्तमें परम पूज्य श्री १०८ मुनि श्री समन्तभद्रजी महाराजका मैं किन शब्दोंमें आभार व्यक्त करूँ जिनसे पूरे वर्षभर पत्रोंके द्वारा स्वास्थ्य-लाभके लिए शुभाशीर्वाद और कार्य-प्रगतिके लिए सत्प्रेरणाएँ प्राप्त होती रही हैं जिससे प्रभावित होकर मैं उनके चरण-सान्निध्यमें बैठकर तीसरे भागके सम्पादकीय वक्तव्यमें उल्लिखित विशेषताओंके साथ श्रावकाचारकी विस्तृत प्रस्तावना लिखनेके लिए उत्सुक हो रहा हूँ।

पूर्वानुपूर्वीके क्रमसे नवीन उपलब्ध कुन्दकुन्दश्रावकाचारको प्रस्तुत संग्रहके चौथे भागमें विस्तृत प्रस्तावना और श्लोकानुक्रमणिकादि परिशिष्टोंके साथ दिया गया है और तदनन्तर-रचित होनेके कारण इस संग्रहमें हिन्दीकी उक्त तीन रचनाओंको दिया जा रहा है। तीनोंके रचयिताओंका संक्षिप्त परिचय, समय और उनकी विशेषताओंकी समीक्षाको प्रस्तावनामें दिया गया है।

आशा है, पूर्व भागोंके समान इस भागका भी स्वाध्यायप्रेमी जन समादर करेंगे।

श्री पार्श्वनाथ दि० जैन मन्दिर
मेलपुर, वाराणसी (उ० प्र०)
२७।५।७८

हीरालाल सिद्धान्तशास्त्री
हीराश्रम, साढूमल
जिला—ललितपुर (उ० प्र०)

प्रस्तावना

पदम कविका परिचय और समय

प्रस्तुत संग्रहमें सर्वप्रथम हिन्दी छन्दोवद्ध श्रावकाचार श्रीपदम-कविकृत संग्रहीत है। इन्होंने इसके अन्तमें जो प्रशस्ति दी है, उसके अनुसार इस श्रावकाचारकी रचना सम्वत् १६१५ के माघ सुदी पंचमी शक्रवारको पूर्ण हुई है यथा—

संवत् संख्या जिनभावना[१६], आनन्दा, संवच्छर संख्या प्रमाद[१५]तो।
मास माहु सोहामणो आनन्द, भाइ वा सुत मर्याद तो ॥६०॥
तिथि संख्या चारित्र भेदे, आनन्दा, रस संख्या शुभवार तो।
शुभ नक्षत्रे शुभ योगे, आनन्दा, कीयो मैं श्रावकाचार तो ॥६१॥ (पृष्ठ ११०)

इन्होंने अपनी जो गुरु-परम्परा दी है उसके अनुसार ईडर शाखाके भट्टारक श्री पद्मनन्दी तत्पट्टे भ० सकलकीर्ति हुए जिनका समय [संवत् १४५०–१५१० तक] का था उनके पट्ट पर भ० भुवनकीर्ति वैठे जिनका समय [संवत् १५०८–१५२७] तक है। उनके पट्ट पर भट्टारक ज्ञानभूषण वैठे जिनका समय (सं० १५३४–१५६०) तकका है उनके पट्टपर भ० विजयकीर्ति वैठे जिनका समय (सं०१५५७–१५६८) तकका है। उनके पट्टपर भ० शुभचन्द्र वैठे जिनका समय (सं० १५७३–१६१३) तकका है इनके शिष्य भ० कुमुदचन्द्र हुए जिनको पदम कविने अपने गुरु रूपसे नमस्कार किया है।

पदम कविने अपनेको भ० शुभचन्द्रकी आम्नायका उल्लेख किया है, विनयचन्द्रको आगम गुरु और कर्मश्री ब्रह्मको अध्यात्म गुरु लिखा है। हीर ब्रह्मेन्द्रका शिक्षा गुरुके रूपमें उल्लेख किया है। भ० शुभचन्द्रका अन्तिम समय सं० १६१३ तकका उल्लेख ऊपर किया गया है उनके शिष्य कुमुदचन्द्रका गुरु रूपसे उल्लेख कर प्रस्तुत श्रावकाचारकी रचना सं० १६१५ में हुई है यह उक्त भ० पट्टावलीसे भी सिद्ध होता है। (पृ० १०७)

पदम कविने जिन आचार्योंके श्रावकाचारोंके आधारपर अपने श्रावकाचारकी रचना की है उसमें स्वामी समन्तभद्रका रत्नकरण्ड, वसुनन्दिका श्रावकाचार, पं० आशाधरका सागार-धर्मामृत, और सकलकीर्तिका श्रावकाचार प्रमुख हैं। फिर भी श्रावक की त्रेपन क्रियाओंका वर्णन इन्होंने विस्तारके साथ किया है, इन्होंने श्रावकाचारको रत्नदीप और त्रेपन क्रियाओंको चिन्ता-मणि रत्न कहा है। यथा—

श्रावकाचार ते रत्नदीप आनन्दा, त्रेपन क्रिया चिन्तारत्न तो।
सुगुरु रत्न मूल्य नहीं, आनन्दा, दया करो तस जल तो ॥४४॥ (पृ० १०९)

पदम कविने अपने श्रावकाचारका ग्रन्थ परिमाण २७५० श्लोक प्रमाण कहा है और इसे छब्बीस प्रकारके रासोंमें रचा है। यथा—

छब्बीस भेद भासे भण्यों आनन्दा, श्लोक शत सत्तावीस तो।
पंचास अधिक सही आनन्दा, ग्रन्थ-संख्या अशेष तो ॥५८॥ (पृ० ११०)

उन छब्वीस रासोंमेंसे कुछ प्रमुख रासोंके नाम इस प्रकार हैं—१. चौपाई, २. दोहा, ३. भास रास, ४. मालंतडानी ढाल, ५. जसोधरनी भास, ६. वस्तु छन्द, ७. अंबिकानी भास, ८. सहीनी ढाल, ९. वीनतीनी भास, १०. भद्रबाहुनी ढाल, ११. हेलिनी ढाल, १२. ढाल, १३. हिंडोलानी ढाल, १४. नरेसुआनी ढाल, १५. गुणराजनी ढाल, १६. वैरागी भास, १७. विणजारानी भास, १८. सहेलडीनी ढाल, १९. सहेलीनी ढाल, २०. रसना देवीनी ढाल, २१. आनन्दानी ढाल, २२. रासनी ढाल।

उक्त ढालोंमें दोहा, चौपाई और वस्तु छन्दको छोड़कर प्रायः सभी ढालें गुजरात और राजस्थानके सीमावर्ती प्रदेशमें प्रचलित रही हैं अतः प्रस्तुत श्रावकाचारकी भाषा गुजराती मिश्रित राजस्थानी है ढाल, रास और छन्द ये तीनों एकार्थवाचक हैं।

पदम कविने अपने माता-पिताके नामका कोई उल्लेख नहीं किया। केवल अपनेको वाग्वर (वागर) देशके सापुर (शाहपुर) नगर वर्ती श्री आदिनाथके मन्दिरका और नन्दी संघ वाले हुंवड़ जाति-खदिर गोत्री और विरीत कुल का अवतंस कहा है। (देखो पृ० ११० पद्य ४९–५२)

पदम कविका परिचय 'राजस्थानके जैन सन्त, व्यक्तित्व एवं कृतित्व' नामक ग्रन्थमें नहीं दिया गया है। इससे ज्ञात होता है कि उक्त कविने प्रस्तुत श्रावकाचारके सिवाय अन्य किसी ग्रन्थकी रचना नहीं की है। इसकी एकमात्र प्रति ऐलक पन्नालाल दि० जैन सरस्वती भवन, व्यावरसे प्राप्त हुई। अन्य शास्त्र भण्डारोंकी ग्रन्थ सूचियोंमें इसका नाम दृष्टिगोचर नहीं हुआ।

किशनसिंह जीका परिचय और समय

प्रस्तुत संग्रहमें दूसरा हिन्दी छन्दोवद्ध श्रावकाचार श्री किशनसिंह जी का है जिसे उन्होंने स्वयं क्रियाकोष नामसे उल्लेखित किया है। (देखें अन्तिम पुष्पिका, पृ० २३९) इन्होंने अपने क्रियाकोपको सं० १७८७ के भादों सुदी पूनमको ढूंढाहर देश (वर्तमान राजस्थान) के सांगानेर नगरमें पूर्ण किया है। (देखो पृ० २३८ पद्य ९१)

ये रामपुराके निवासी थे। रामपुरा उणियारा-टोंकके समीप है तथा जो आजकल अलीगढ़ के नामसे प्रसिद्ध है। किशनसिहजीके पिताका नाम सुखदेव जी था उन्होंने रामपुरामें एक विशाल मन्दिर वनवाया, जिसकी नींव सं० १७३१ में पड़ी थी। ये दो भाई थे छोटे भाईका नाम आनन्द सिंह था। इनकी जाति खण्डेलवाल और गोत्र पाटनी था। किशनसिंह जी रामपुरासे आकर सांगानेर रहने लगे थे। इनकी अन्य १०. रचनाएँ और भी उपलब्ध हैं जिनके नाम इस प्रकार हैं—

१. णमोकार रास, २. चौवीस दण्डक, ३. पुण्यास्रव कथाकोप, ४. भद्रवाहु चरित्त, लब्धि विधान कथा, ६. निर्वाणकाण्ड भाषा, ७. चतुर्विंशति स्तुति, ८. चेतन गीत, ९. चेतन लोरी और १०. पद संग्रह।

प्रस्तुत क्रियाकोपका ग्रन्थ परिमाण २९०० श्लोक प्रमाण है। (देखो पृ० २३८, पद्य ९४) इस क्रियाकोप की रचना १. हिन्दीके चौपाई, २. पद्धड़ी, ३. सोरठा, ४. अडिल्ल, ५. गीता, ६. कुण्डलियां, ७. मरहठा, ८. छप्पय, ९. तेईसा, १०. इकतीसा सवैया और तथा त्रिभंगीमें तथा संस्कृतके त्रोटक, द्रुत विलम्वित और भुजंगप्रयात छन्दोंमें की है। इन्होंने अपनी अन्तिम प्रशस्ति में इनकी छन्द संख्या भी दी है। (देखो पृ० २३८)

यह क्रियाकोष लगभग ५० वर्ष पूर्व सूरतसे प्रकाशित हुआ था जो अब अप्राप्य है।

श्री किशनसिंह जीने उक्तं च करके १४ श्लोक और गाथाएँ उद्धृत की हैं। जिनमेंसे २ श्लोक प्रश्नोत्तर श्रावकाचारके हैं, १ श्लोक उमास्वाति श्रावकाचारका है तथा एक गाथा त्रिलोकसार और एक गाथा द्रव्य संग्रहसे ली गयी है। इन्होंने अपने गुरु आदिका कोई उल्लेख नहीं किया है। इससे ज्ञात होता है कि इनका श्रावकाचार सम्बन्धी ज्ञान स्वयंके शास्त्र-स्वाध्याय-जनित था। अपने समयमें प्रचलित मिथ्यात्वी व्रतों और कुरीतियोका वर्णन कर उनके त्यागका प्रभावक वर्णन किया हैं।

दौलतरामजीका परिचय और समय

प्रस्तुत संग्रह में तीसरा हिन्दी छन्दोबद्ध श्रावकाचार श्री दौलत राम जी का है जिसे उन्होंने स्वयं क्रियाकोष नाम दिया है। (देखो पृ० २४०)

इन्होंने इस क्रियाकोष की रचना उदयपुर में सं० १७९५ के भादों सुदी बारस मंगलवार को पूर्ण की हे! यथा—

संवत सत्रासै पच्याणव, भादव सुदि वारस तिथि जाणव।
मंगलवार उदै पुर माहैं, पूरन कीनी संसय नाहैं॥ (देखो पृ० ३८९)

श्री दौलत राम जी ने श्री किसन सिंह जी के क्रियाकोष की रचना (सं० १७८४) के ११ वर्ष पश्चात् (सं० १७९५) अपने क्रियाकोष को रचा है। इन्होंने अपनी रचना का परिमाण नहीं दिया है और न रचे गये छन्दों के नाम ही दिये हैं। फिर भी हिन्दी भाषा के प्रसिद्ध दोहा, चौपाई, वेसरी छन्द, जोगीरासा, इकतीसा सवैया, चाल छन्द, कवित्त, सवैया तेईसा और सोरठा छन्दों में इस क्रिया कोष को रचना की है।

पं० दौलतराम जीने अपने इस ग्रन्थमें उक्तं च करके कुछ गाथाएँ और श्लोक दिये हैं जिनकी संख्या ६ है। जिनमें से मयमूढमणायदणं""यह गाथा रयणसार की है, ३ श्लोक ज्ञानार्णव के हैं और २ लोक प्रश्नोत्तर श्रावकाचार के हैं।

डॉ० कस्तूरचन्द्र जी काशलीवालने इनकी १८ रचनाओंका उल्लेख किया है, और उन्हें तीन भागों में विभाजित किया है—

१. मौलिक रचनाएँ, २. अनूदित रचनाएँ और टव्वा-टीकाएँ।

मौलिक रचनाएँ आठ उपलव्ध हैं। यथा—१. क्रियाकोष, २. जीवन्धर चरित, ३. अध्यातमा वारह खड़ी, ४. विवेक विलास, ५. श्रेणिक चरित, ६. श्रीपाल चरित, ७. चौवीस दण्डक, और सिद्धपूजाष्टक में सभी रचनाएँ छन्दोबद्ध है।

अनूदित रचनाएँ सात उपलब्ध है। यथा—१. पुण्यास्रवकथाकोष, २. पद्मपुराण, ३. आदि-पुराण, ४. हरिवंश पुराण, ५. पुरुषार्थ सिद्धयुपाय, ६. परमात्म प्रकाश, और ७ सारसमुच्चय। ये सभी ढूंढारी भाषा में गद्य अनुवाद हैं।

तीसरे प्रकार की रचनाओं में—१. तत्त्वार्थसूत्र टव्वा-टीका, २. वसुनन्दि श्रावकाचार टव्वा-टीका और ३. स्वामिकार्तिकेयानुप्रेक्षा टव्वा-टीका ये तीन उपलव्ध हैं।

उक्त रचनाओं पर दृष्टिपात करने से यह सहज ही ज्ञात होता है कि पं० दौलतराम जी चारों ही अनुयोगोंके अच्छे ज्ञाता थे।

पं० दौलतराम जीका जन्म वसवाँ (राजस्थान) में सं० १७४९ के आषाढ़ सुदी १४ को हुआ। इनके पितामहका नाम घासीराम और पिताका नाम आनन्दराम था। जाति खंडेलवाल और गोत्र काशलीवाल था। इनका अध्ययन कहाँ और किससे हुआ, इसका कोई उल्लेख उन्होंने अपनी रचनाओंमें कहीं नहीं किया है। पर इनकी रचनाओंको देखते हुए ये प्राकृत और संस्कृतके अच्छे ज्ञाता थे, यह सहजमें ही ज्ञात हो जाता है। तथा इनके पिता यतः राज्यके उच्च पद पर आसीन रहे हैं, अतः इनकी शिक्षा-दीक्षा भी उभय-भाषा विशेषज्ञ विद्वानोंके द्वारा हुई होगी, ऐसा निश्चित है। चारों अनुयोगोंका ज्ञान इनका स्वोपार्जित प्रतीत होता है।

समी . ।

पद्म कवि कृत श्रावकाचार और दोनों क्रिया-कोषोंमें क्या समता और क्या विशेषता है इसका कुछ यहां विचार किया जाता है—

जिस प्रकार पदम कविने अपने श्रावकाचारको भूमिकामें समवशरणमें ले जाकर श्रेणिकके द्वारा गौतम गणधरसे श्रावक धर्मके जाननेकी इच्छा प्रकट की, उसी प्रकार किशन-सिंह जीने भी कराई है, किन्तु दौलतराम जीने ऐसा न करके मंगलाचरणके पश्चात् त्रेपन क्रियाओंका वर्णन यह कहकर प्रारम्भ किया है कि गृहस्थको अनेक क्रियाओंमें त्रेपन क्रियाएँ प्रधान हैं।

दोनों ही क्रिया कोषोंमें त्रेपन क्रियाओंकी नाम वाली एक ही गाथा 'उक्तं च' कहकर लिखी है। वे त्रेपन क्रियाएँ इस प्रकार हैं—मूलगुण ८, व्रत १२, तप १२, समभाव १, श्रावक प्रतिमा ११, दान ४, जलगालन १, अनस्तमित व्रत (रात्रि भोजन त्याग) १, दर्शन १, ज्ञान १, चारित्र १, =५३।

प्रस्तुत संग्रहमें निबद्ध तीनों ही ग्रन्थकारोंने त्रेपन क्रियाओंकी मुख्यतासे ही श्रावकके आचारका वर्णन किया है इसके पूर्व श्री राजमल जीने अपनी लाटी संहितामें भी उक्तंच करके त्रेपन क्रियाओंके नाम कली उसी गाथाका उल्लेख किया है जिसे कि उक्त दोनों क्रियाकोष कारों ने उद्धृत किया है।

पदम कविने आगे कहे जानेवाले विषयका निर्देश पूर्व कथनके उपसंहारके साथ छन्द में ही कर दिया है, किन्तु किशनसिंह जी ने उसके साथ वर्ण्य विषय का निर्देक्ष पृथक् शीर्षक देकरके किया है, जिससे पाठक को आगे वर्णन किये जानेवाले विषय का बोध सरलता से हो जाता है। दौलतराम जीने शीर्षक नहीं दिये हैं।

भक्ष्य-अभक्ष्य वस्तुओंकी काल-मर्यादाका निर्देश पदम कवि और किशनसिंह जीने पूर्वा-गत गाथाओंको देकर सप्रमाण वर्णन किया है, किन्तु दौलतरामजीने उक्त वर्णन करते हुए भी प्रमाण उद्धृत नहीं किये हैं।

पदम कविने गृहीत मिथ्यात्वके पांचों भेदोंका जितना स्पष्ट और विस्तृत वर्णन किय है, वैसा शेष दो क्रिया कोषकारोंने नहीं किया है।

मिथ्यात्वपूर्ण एवं मन-गढ़न्त लोक-प्रचलित मिथ्याव्रतों का वर्णन कर उनके त्याग का जैसा उपदेश किशनसिंह जीने दिया है वैसा शेष दोने नहीं किया है।

पदन कविने मिथ्यात्वके निरूपणके पश्चात् सम्यक्त्व-प्राप्तिकी योग्य भूमिका वर्णन कर सप्त तत्त्वोका और सम्यक्त्वके भेदोंका स्वरूप विस्तारसे कहा है। किन्तु किशनसिंह जीने त्रेपन क्रियाओं को गिनाकर और मिथ्यात्व एवं सम्यक्त्वका कुछ भी वर्णन न करके मूलगुणोंका वर्णन करते हुए इस प्रकारके अभक्ष्योंका विस्तारसे वर्णन किया है। दौलतराम जीने भी मंगलाचरणके पश्चात् मिथ्यात्व-सम्यक्त्वका वर्णन न करके अभक्ष्य-पदार्थोंका वर्णन किया है। साथ ही दोनोंने भक्ष्य-अभक्ष्य वस्तुओंकी काल-मर्यादा का वर्णन प्राचीन गाथाओं के प्रमाण के साथ किया है।

पदमकविने रत्नकरण्डकके समान सर्वप्रथम सम्यक्त्व के अंगोंका विस्तृत स्वरूप और उनमें प्रसिद्ध पुरुषों की प्रश्नोत्तर श्रावकाचार के समान कथाओं का निरूपण किया है। किन्तु किशन सिंह जी ने सम्यक्त्व के अंगों का और उनमें प्रसिद्ध पुरुषों को कथाओं का कुछ भी उल्लेख नहीं किया है। दौलतराम जी ने अति संक्षेप में आठों अंगों का स्वरूप कह कर उनमें प्रसिद्ध पुरुषों के केवल नामोंका ही उल्लेख किया है।

पदम कवि ने उक्त प्रकार से सम्यग्दर्शन का सांगोपांग विस्तृत वर्णन करके पश्चात् दर्शन प्रतिमा का वर्णन करते हुए सर्व प्रथम सप्त व्यसन-सेवियों में प्रसिद्ध पुरुषों का उल्लेख कर उनके त्याग का उपदेश दिया। तत्पश्चात् अष्टमूलगुण, पालने जल-गालने और रात्रिभोजन के दोष वताकर उसके त्यागका उपदेश दिया। तदनन्तर व्रत प्रतिमाके अन्तर्गत श्रावकके वारह व्रतोंका विस्तार से वर्णन किया है। किन्तु किशनसिंहजीने प्रतिमाओं के आधार पर उक्त वर्णन न करके आठ मूल गुणों का वर्णन कर अभक्ष्य पदार्थों का विस्तार से वर्णन कर उनके त्याग का और चौके के भीतर ही भोजन करने का विधान किया है।

पदम कविने सम्यक्त्वके अंगोंका और उनमें प्रसिद्ध पुरुषोंको कथाओंका वर्णन कर व्रत प्रतिमा आदिका विस्तारसे वर्णन कर अन्तमें छह आवश्यक, वारह तप, रत्नत्रय धर्म और मैत्री-प्रमोदादि भावनाओंका वर्णन कर अन्तमें समाधिमरणका वर्णन कर अपनी वृहत् प्रशस्ति दी है। किन्तु किशनसिंहजीने अभक्ष्य वर्णनके पश्चात् रजस्वला स्त्रीके कर्त्तव्योंका विस्तारसे वर्णन कर श्रावकके वारह व्रतोंका और समाधि मरणका वर्णन किया है। तदनन्तर श्रावककी ग्यारह प्रतिमाओंका संक्षेपसे वर्णन कर जल-गालन, रात्रि भोजन-त्यागरूप अणथम (अनस्तमित) व्रत और रत्नत्रय धर्मका वर्णन कर कैर-सांगरी आदिकी घृणित उत्पत्ति, गोंद, अफीम, हल्दी और कत्था आदिको जिन्द्य एवं हिंसामयी उत्पत्तिका विस्तारसे वर्णन किया है। तत्पश्चात् मिथ्यामतोंका निरूपण करते हुए लूँकामतकी आचार-हीनता का, और जिन-प्रतिमा का विस्तारसे वर्णन किया है।

पदम कवि ने लूँकामत का कोई उल्लेख नहीं किया है और दौलतराम जीने नामोल्लेख न करके उनके मतकी समालोचना कर जिन प्रतिमाकी महत्ताका शंका-समाधान पूर्वक वर्णन किया है। इससे ज्ञात होता है कि पदम कविके समयमें लूँकामतका या तो प्रारम्भ ही नहीं हुआ था, और यदि हो भी गया होगा, तो उसका प्रचार उनके समयमें नगण्य-सा था।

किशन सिंह जीने जन्म-मरणकी मिथ्या क्रियाओंका, सूतक-पातकका ग्रह-शान्ति, ज्योतिषचक्र और सूर्य-चन्द्रके ग्रहणका जैन मान्यताके अनुसार विस्तारसे वर्णन किया है। किन्तु पदम कविने और दौलतराम जीने यह कुछ भी वर्णन नहीं किया है।

पदम कविने मंत्र-जापके समय विभिन्न अंगुलियों परसे उसके विभिन्न फलोंका वर्णन किया है, किन्तु किशन सिंह जीने जाप्य मंत्रोंका वर्णन करते हुए भी विभिन्न अंगुलियों परसे जाप करने के विभिन्न फलों को का कोई वर्णन नहीं किया है। दौलतराम जी ने सामायिका विस्तृत वर्णन करते हुए भी उक्त विवेचन नहीं किया है।

पूजन का वर्णन यद्यपि तीनों की ग्रन्थकारोंने किया है, परन्तु पूजन-प्रक्षाल करते समय मुखपर कपड़ा बाँधनेका विधान केवल किशन सिंहजी ने ही किया है। मुखपर कपड़ा बांधकर पूजन-प्रक्षाल करनेका रिवाज मूर्तिपूजक श्वेताम्बर जैनोंमें आज भी प्रचलित है और कुछ समय पूर्व तक बुन्देल खण्डके दि० जैनियोंमें भी था।

पदम कवि ने निर्माल्य भक्षण के महादोष का वर्णन किया है, परन्तु दोनों क्रिया कोष-कारों ने इस विषय पर कुछ नहीं कहा है।

किशन सिंह जीने लोक-प्रचलित मन-गढ़न्त मिथ्या व्रतोंका निषेध कर आष्टाह्निक, सोलह कारण आदि अनेक जैन व्रत-विधानोंका जैसा विधि-पूर्वक विस्तृत विवेचन किया है, वैसा शेष दोनोंने नहीं किया है।

दौलतरामजीने बारह प्रकारके तपोंका जैसा विस्तृत वर्णन किया है, वैसा शेष दोनों ने नहीं किया है।

किशनसिंहजीने जिन-मन्दिरमें नहीं करने के योग्य चौरासी आसादनाओं का तथा मिथ्या-त्वमयी नवग्रह-शान्ति का निषेध कर जैनविधि से नवग्रह-शान्ति और ज्योतिष चक्र का वर्णन किया है, पर शेष दोनों ने इस पर कुछ नहीं लिखा है।

विवाह के समय एवं जन्म-मरण के समय की जाने वाली मिथ्यात्वपूर्ण क्रियाओं का जैसा निषेध पदम कविने किया है, वैसा शेष दोने नहीं किया है।

किशनसिंहजीने प्रातःकालीन पूजनको अष्ट द्रव्योंसे, मध्याह्न पूजन सुन्दर पुष्पोंसे और सायंकालकी पूजन को दीप-धूप से करनेका वर्णन किया है, वैसा शेष दोने नहीं किया है।

पूजकको नौ स्थानोंपर तिलक लगाने और आभूषण धारण करनेका वर्णन भी किशन-सिंहजीके सिवाय शेष दोने नहीं किया है। वस्तुतः यह विधि पंचकल्याणकादि विशिष्ट पूजा-विधानोंके लिए है, फिर भी भक्तजन अपने नवों अंगोंमें चन्दन लगाकर उक्त कर्त्तव्य की पूर्त्ति कर ही लेते हैं।

जाप करते समय णमोकारमंत्रको तीन श्वासोच्छ्वासोंके द्वारा उच्चारण करनेका विधान इन्होंने किया है। यथा प्रथम पदको श्वांस खींचते हुए, दूसरे पदको श्वास छोड़ते हुए, तीसरे पदको श्वास खींचते हुए और चौथे पदको श्वास छोड़ते हुए तथा पंचम पदके 'णमो लोए' पदको श्वास लेते हुए और 'सव्वसाहूणं' पदको श्वास छोड़ते हुए उच्चारण करना चाहिए। इस प्रकार से तीन श्वासोच्छ्वासोंमें उच्चारण करनेसे मन इधर-उधर न भागकर स्थिर रहता है।

सभीने पूर्व या उत्तर की ओर मुख करके पूजन और जाप करने का विधान किया है।

पं० दौलतरामजीने अष्ट मूलगुणोंके वर्णनके साथ ही अभक्ष्य वस्तुओंके त्यागका, चौका, चक्की, परंडा आदिको शुद्धिका, रजस्वला-प्रसूतादि स्त्रीके हाथसे स्पर्शी वस्तुओंकी अग्राह्यता का, और सप्त व्यसनों का जैसा भावपूर्ण वर्णन किया है, वह पढ़ते ही बनता है। शेष दोनों के वर्णनमें वैसी भावपूर्ण सरसता नहीं है।

इसी प्रकार व्रती श्रावकके नहीं करने-योग्य व्यापारोंका, सम्यक्त्वके भेदोंका विशद और सरस वर्णन तथा अहिंसाणुव्रतके वर्णनमें दया का अपूर्व विस्तृत वर्णन भी बार-बार पढ़ने के लिए मन उत्सुक रहता है।

पदम कविने सामायिकके ३२ दोषों का वर्णन तीसरी प्रतिमामें किया है। किन्तु किशन सिंहजीने दूसरी ही प्रतिमामें किया है। पर दौलतरामजीने उनका कहीं कोई वर्णन नहीं किया है। इन बत्तीस दोषोंका वर्णन अनेक श्रावकाचार-कर्त्ताओंने भी किया है। पर वस्तुतः ये दोष साधुओंके लिए ही मूलाचार आदिमें बतलाये गये हैं। श्रावकको जितना संभव हो, उतने दोषोंसे बचने का प्रयत्न करना चाहिए।

पदम कविने चार शिक्षा व्रतोंका वर्णन कुन्दकुन्दके अनुसार किया है, किन्तु किशनसिंह जी और दौलतरामजीने तत्त्वार्थसूत्रके अनुसार किया है।

श्रावकके १७ नियमोंका वर्णन तीनोंने ही किया है।

अन्तमें एक ही प्रश्न विचारणीय रह जाता है कि किशन सिंहजीके द्वारा सांगानेर (राजस्थान) में रहते हुए सं० १७८४ में क्रिया कोषकी रचना करनेके केवल ११ वर्षके बाद ही दौलत रामजीने उदयपुरमें अपने क्रिया कोषकी रचना क्यों की ? दोनों क्रियाकोषोंको गंभीर और सूक्ष्म दृष्टिसे देखनेपर हम दो निष्कर्षोंपर पहुंचे हैं। प्रथम तो यह कि संभव है कि दौलतरामजीको किशनसिंहजीके क्रियाकोषके दर्शन ही नहीं हुए हों। और संस्कृत क्रियाकोषके मिलनेपर उन्हें उसकी उपयोगिता प्रतीत होनेसे भाषा छन्दोंमें सर्वसाधारण पाठकोंके लिए उसकी रचना करना आवश्यक प्रतीत हुआ हो।

दूसरा कारण यह भी संभव है कि किशनसिंहजी-रचित क्रिया कोषमें उन्हें भट्टारकीय या बीसपन्थ-आम्नायकी गन्ध आई हो और इसलिए उन्होंने विशुद्ध तेरापन्थ-आम्नायके अनुसार क्रियाकोषकी स्वतंत्र छन्दोबद्ध रचना करना अभीष्ट रहा हो।

किशनसिंहजीके क्रियाकोषमें बीसपन्थकी गन्ध आनेके कुछ स्थल इस प्रकार हैं—

(१) मध्याह्न पूज-समए सु एह, मनुहरण कुसुम बहु देखि देह।
अपराह्न भविक जन करिह एव, दीपहि चढ़ाय बहु धूप खेइ ॥३८॥

(प्रस्तुत संग्रह पृ० २०४)

(२) जो भविजन जिन-पूजा रचै, प्रतिमा परसि पखालहि सचै।
मौन-सहित मुख कपड़ो करै, विनय विवेक हरख चित धरै ॥४८॥

(प्रस्तुत संग्रह पृ० २०५)

(३) पं० किशनसिंहजीने श्रावकके बारह व्रतों और ग्यारह प्रतिमाओंके वर्णनके बाद जल-गालन, प्रासुक जल-विधि और रात्रिभोजन-त्याग आदिका वर्णन किया है। पं० दौलतरामजीको यह वर्णन कुछ व्युत्क्रम-सा प्रतीत हुआ, हो और इसीलिए उन्होंने श्रावकके बारह व्रतोंका वर्णन करनेके पूर्व ही उक्त वर्णन सर्वप्रथम करना उचित समझा हो।

जो कुछ भी हो, फिर भी दौलतरामजीकी वर्णन-शैली बहुत ही भावपूर्ण, सरल और रोचक है। उन्होंने अहिंसादि प्रत्येक अणुव्रतका वर्णन विधि और निषेध-मुखसे किया है। जैसे अहिंसाणु-व्रतका वर्णन करते हुए पहिले अहिंसा या दया-करुणाकी महत्ता ६७ छन्दोंमें बताकर पुनः हिंसा पापके दोषोंका वर्णन २४ छन्दोंमें किया है। (देखो पृ० ५६३-२६८)

इसी प्रकार सत्य-असत्य, चौर्य-अचौर्य, ब्रह्म-अब्रह्म और परिग्रह-अपरिग्रहके गुण-दोषोंका वर्णन भी खूब विस्तारसे किया है।

उपसंहार

यद्यपि तीनों ही संग्रहोंमें ५३ क्रियाओंका वर्णन है, तथापि पदम कविने पूर्व परम्पराके अनुसार उत्थानिकामें श्रेणिकके प्रश्न करनेपर गौतम-गणधरके द्वारा श्रावकके व्रतोंका वर्णन कराया है और संस्कृतमें रचित श्रावकाचारोंकी दुरूहताके कारण सर्वसाधारणके लाभार्थ उसे अपनी मातृ-भाषामें उन्हें रचनेकी प्रेरणा हुई है। यही कारण है कि उन्होंने अपनी रचनाको 'श्रावकाचार'के नामसे ही उल्लिखित किया है। पं० किशनसिंहजी और पं० दौलतरामजीने यतः संस्कृत क्रिया-कोषके आधारपर अपनी रचनाएँ की हैं, अतः उन्होंने अपनी रचनाओंका नाम 'क्रियाकोष' देना ही उचित समझा है। तीनों रचनाओं की अपनी अपनी स्वतन्त्र विशेषता है, अतः तीनों ही पढ़ने, मनन करने और तदनुकूल आचरण करनेके योग्य हैं।

●

श्रावकाचार-संग्रह पंचम भागकी

वि य-सूची

परिशिष्ट

ि पद ा ाचार

ंग ाचर

वस्तु छन्द

सकल जिनेश्वर चरण-कमल ते नमुं
गुण छैतालीस सद्धारक वारक मोह-तिमिर-हर।
पंचकल्याण-नायक, दायक
शिवसुखकार मनोहर।
शारदा स्वामीनें मन धरूँ
आण धरूँ गुरु निर्ग्रन्थ पाय।
श्रावकाचार-विधि वरणवुं
जो तुम्हों करो अवसाय ॥१

चौपाई

महीतल द्वीप असंख्य मझार, जम्बू द्वीप जम्बु तरु धार।
द्वीप लक्ष योजन विस्तार, चौत्रीस क्षेत्र सोहै सविचार ॥२
ते मध्य मेरु सुदर्शन नाम, लक्ष योजन ऊँचो गुण दाम।
कनक-तणा सोल जिनगेह, त्रिण काल वंदुं हुं नेह ॥३
मेरु तणी दक्षिण दिस जान, भरतक्षेत्र नामें मन आन।
षट् खंडे करि सोहै तेह, पंच मलेच्छ एक आरज एह ॥४
आरज खंड मांहे शुभ ठाम, जनपद जानुं मगध सुनाम।
गिरि-गुहा वन वाडी कूप, वावि खंडोर बलि नदी स्वरूप ॥५
द्रोण कर्वट मटंब खेट ग्राम, पुर पाटण वाहन भेद नाम।
मणि माणिक मोती परवाल, धन धान्ये भरिआ हु विशाल ॥६
ठामि ठामि दीसे जिन गेह, हेम रत्न प्रतिमा नहि छेह।
ऋषि मुनी जती अनगार, संघ सहित ते करें विहार ॥७
सरस मगध देश मांहि मझार, राजगृही नयरी गुणधार।
गढ गोपुर खाई जलभृत्त, मटकोसीसा शोभाजुत्त ॥८
नगर मांहे सोहे जिनगेह, हाट मन्दिर नाला नहि छेद।
चतुःवर्ण वसे परजा लोक, मनुष्य जन्म पामा करि रोक ॥९
जिन पूजे पोषे यति पात्र, तीर्थ सिद्धक्षेत्र करे जात्र।
पुण्यतणां करे षट् कर्म, चार वर्ग साधे ते मर्म ॥१०

राजभवन राजा वसे चंग, श्रेणिक नाम भूप उत्तिंग ।
क्षायिक समकित सोहे सार, देव शास्त्र गुरु भक्ति उदार ॥११
चेलणा राणी आदि वहु नार, अभय वारिषेण आदि कुमार ।
राजा सुख भोगवे संसार, साधर्मी जन करे उपकार ॥१२
एक दिवस श्रेणिक महिपाल, सभा पूरि वैठो गुणमाल ।
प्रधान पुरोहित श्रेष्ठी भूपती, वहुविध वात करे निजमती ॥१३
तिण अवसर आव्यो वनपाल, करंड भरि फल फूल अपार ।
भेंट मुकीने करेय जुहार, स्वामी मुझ वीनती अवधार ॥१४
विपुलाचल मस्तक सुविशाल, समोसरयां श्रीवीर गुणमाल ।
वार सभानें दे उपदेश, त्रिभुवनपति सेवें जिनेश ॥१५
तव आनंद्यो श्रेणिक राय, तिणी दिशं सात पग जाय ।
परोक्ष नमोऽस्तु कियो जोड़ी हाथ, विनय सहित भूप रुळ साथ ॥१६
पछें मालीनें कीयो पसाय, वस्त्र आभूषण आव्या राय ।
आनंद मेरी तव उछली, वन्दन चाल्यो भूप मन रली ॥१७
राज प्रजा लोके संचरयो, अन्तःपुर भविजन पर वस्यो ।
हय गय रथ पालखी पदाति, गीत नृत्य वाजित्र जय क्षांति ॥१८
समोसरण मांही जव गया, तव आनन्द भवियण मन भया ।
मुखतें करतां जय जयकार, भेंटया जिननर त्रिभुवन तार ॥१९
तीन प्रदक्षिणा जावे दीध, अष्ठ प्रकारी पूजा कीध ।
जल गन्ध अक्षत पुष्प नैवेद्य, दीप धूप-फल अर्घ वसु भेद ॥२०
जिन पूजी स्तवन उच्चरी, भाव-सहित भक्ती घणुं करी ।
अनन्त गुणसागर जिनदेव, सुर नर फणिपति करें जिन सेव ॥२१
सफल चरण जाणों तेह तणा, जे जिन यात्र वरि आपणां ।
प्रशस्त हस्त कमल ते कही, जिन पूजे ते पात्र-दान तें सही ॥२२
धन्य मुख जिह्वा तेह तणी, स्तवन करो जे जिन गुण भणी ।
नयन सफल कीधो वली नेह, दीठ स्वामी जु जिन जेह ॥२३
जिनवाणी सुनी निज्र करण, सफल मस्तक तें नमें जिन-चरण ।
तप जप ध्यान अध्ययन अभ्यास, उत्तम शरीर जे साधे शिववास ॥२४
पूजी स्तवी वांछे भूप इष्ट, जन्म जरा मृत्यू हरो अनिष्ट ।
दुक्ख करमनो क्षय जिन करो, जनमि जनमि पाइ अनुसरो ॥२५
साष्टांग प्रणमी जिन पाय, पाछें वंद्या गौतम गुरु पाय ।
यथायोग्य भगति सहु करी, सावरमी जन विनय अनुसरी ॥२६
नर सभाइ कीयो परवेश, निज निज स्थानें वैठ्या नरेश ।
धर्म वांछा करें भविजन्न, जिम चातक मेह जीवन्न ॥२७
दिव्य वाणि प्रगट तव भई, निज निज भासा पृच्छ जु जुई ।
अर्ध मागधि श्री जिनवर भाष, सर्व संदेह करे विनाश ॥२८

द्विधा धर्म कियो परकाश, द्रव्य पदारथ तत्त्व निवास।
षट्द्रव्य पंचासतिकाय, जुजूआ लक्षण गुण पर्याय ॥२९
लोकालोक तणु स्वरूप, त्रिकाल गोचर रूप अरूप।
श्री जिनवाणी सूर्य समान, टाले मोह तिमिर अज्ञान ॥३०
धर्म हस्त अवलंब आपिया, स्वर्ग मोक्ष पद भवि थापिया।
महाव्रत अणुव्रत समकित सार, निजशक्ति मिलिया भवतार ॥३१
धर्म सुणी आणंद्यो राय, वली प्रणमी श्री जिनवर पाय।
गौतम गणधर वली वंदिया, धर्म वृद्धि सहुनें दिया ॥३२
कर-पद्म जोडी वीनवे ते भूप, गौतम स्वामी नु गुण-कूप।
गृहस्थ धर्म तणों विस्तार, विधी सहित कहो श्रावक आचार ॥३३
मति श्रुत अवधि मनः परियय ज्ञान, सप्त रिद्धि जाणों निधान।
गणपति कहे सावधानें सुणों, सप्तम अंगमांहें जिन भणो ॥३४
द्विविध धर्म तणी न हि आदि, सदाकाल सास्वतो अनादि।
भूत भावि छि अनें वर्तमान, त्रिलोक्य माहि दीपे जिम भांन ॥३५
द्वादश अंग कहीइ श्रुत ज्ञान, सातमों उपासकाध्ययन अभिधाम।
उपासक व्रत तणो विचार, वहुविध कहुं ते अंगमझार ॥३६
श्रावक अंग तणों सुणो मान, जे जिम कहीउ श्री वर्धमान।
लक्ष एकादश पद परिमाण, सत्तरि सहस्र अधिक सू जाण ॥३७
तिन अक्षर पद एक ज तणा, सोलसे चौत्रीस कोडि तस भणा।
असी लक्ष सप्त सहस्र कही, आठ से अठयासी अक्षर सही ॥३८
वत्तीस अक्षर तणा सलोक, संख्या केती कहि कोविद लोक।
कोडि एकावन अधिक अष्ट लक्ष, सहस्र चौरासी ते समक्ष ॥३९
छै से अधिका साढा एकवीस, श्लोक संख्या कहि जगदीश।
धर्म धर्म सहु को जिन कहे, धर्म भेद ते विरला लहे ॥४०
कनक जेम चहुंविध परखीय, छेद भेद कष ताप निरखीय।
चहुं गत्ति मांहि पामे जीव दुक्ख, धर्म विना कले न हि कांई सुक्ख ॥४१
अधोगति पड़ता जे उद्धरे, सार्थक नाम धर्म शिव करे।
श्रावक ते जे समकित धरे, ज्ञान-सहित निज तप जे करे ॥४२
दया-सहित व्रत पाले सार, भावसहित दान दे चार।
.... ॥४३

अथ त्रेपन क्रिया वर्णन

दोहा

दया शील तप भावना, सुध समकित भवतार। सुर नर वर पदवी देइ, आये शिव-धर-वार ॥१
देव-कुदेव गुरु-कुगुरु, वली साहास्त्र विचार। धर्म-अधर्म गुणउ लखी, तत्त्व-कुतत्त्व भेदसार ॥२
चैत्य[1] एकादश ऊजली, उत्तम अष्ट मूल गुण मूल। नेम निशा भोजन तणों, जल-गालन निपूण ॥३
चतुर्विध दान समतापणों, द्वादश व्रत विशाल। तप द्वादश रत्नत्रय, त्रेपन क्रिया गुण माल ॥४
एणिपरि श्रावक क्रिया कही, संक्षेपे सविचार। जे नर नारी पालसी, ते तरसी संसार ॥५

अथ भास रासनो

गौतम स्वामी ऊचरे ए, सुनो श्रेणिक सावधान तू।
मन वच काय निश्चल करीए, परिहारि मोह अज्ञान तू ॥६
श्रावक धर्म तरु तणो ए, मूल ए समकित सार तो।
दृढ पाइ थलहर थिर ए, प्रासाद पीठ उद्धार तो ॥७
समकित विण सोभा नहीं ए, जल विण जिम तलाव तो।
दंत विना दंती जेम ए, केसरि दंष्टरा त्याग तो ॥८
चन्द्र विना रजनी जेम ए, हंस विना जेम काय तो।
गंध सुगंध विना पुष्प जेम ए, राज विना जेम राय तो ॥९
धर्म विना जीव तेम ए, वृथा तस अवतार तो।
मनुष्य वेषें पशू रूप ए, जेहवो नर आकार तो ॥१०
अनादि काल ए आतमा ए, संसार-सागर मझार तो।
नाना विध दुख सहू ए, भमतां दुर्गति च्यार तो ॥११
मिथ्यात पाप तणो फल ए, त्रस थावर जोनि माहे तो।
नित्य-इतर निगोदे रही ए, कष्ट वहुविध चाहि तो ॥१२
मूल मिथ्यात एक भेद ए, उत्तर पंच असार तो।
उत्तरोत्तर अनेक भेद ए, असंख्य लोक प्रकार तो ॥१३
दर्शन मोह तणें उदये, जीवनें होइ मिथ्यात तो।
तत्त्व श्रद्धा ते न वि करे ए, रुचि नहीं तस वात तो ॥१४
जिम मतवालो जीवड़ो ए, ते न लहे हेयाहेय तो।
दुर्धर ज्वर जिम ऊपने ए, न वि रुचि औषध पीय तो ॥१५
भाव मिथ्यात अनादि काल ए, द्रव्यरूप तणी आदि तो।
पाखंडी भेद घणा ए, विरुद्ध करें वावाद तो ॥१६

---

१. प्रतिमा।

एकान्त विपरीत संशयपणो ए, विनयमत अज्ञान तो ।
द्रव्य भाव सहूउ लखी ए, टालो विष-समान तो ॥१७
असत्य वस्तु अहितकारी ए, स्थापना भाव एकान्त तो ।
द्रव्य रूप बौद्ध मत ए, करूँ बोधकीर्ति असंत तो ॥१८
श्री पार्श्वनाथ-तीर्थ समे ए, पलास नयर-नदी तीर तो ।
पिहिताश्रव सूरी शिष्य ए, बुद्धि कीर्त्ति मुनि भीरु तो ॥१९
कर्म-वशें भामरि गयो ए, वेश्यातणें वली गेह तो ।
अजाणपणें चोरी करी ए, अखादि भक्ष कीयो तेह तो ॥२०
निज गुरु ते सांभल्यु ए, पछें कीयो तस निषेध तो ।
छेदोपस्थापना ल्यो वच्छ ए, न वि माने ते अवेदतो ॥२१
चारित्र-भ्रष्ट होइ वापड़ो ए, आदर्यो वरचा तिणें रक्त तो ।
पात्र-पत्तित पवित्र कह्यो ए, खादि-अखादि असक्त तो ॥२२
तिलमात्र-मांस जु भक्षि ए, जीव-हिंसा-पापवंत तो ।
....॥२३

मद्य-बिन्दु जो जीव विस्तरी ए, सो माइ नहिं त्रिलोक्य मझार तो ।
कृत्य-अकृत्य ते न वि लहे ए, विह्वल करे जीव संघार तो ॥२४
मद्य मांस दोष ण भक्ष ए, न वि माने ते पाप तो ।
क्षणिक शून्य जीव कही ए, मोह मिथ्यात्वे व्यापतो ॥२५
कर्मतणों कर्त्ता जुदू ए, तस फल भोग वे अन्य तो ।
क्षिण जादू आवे क्षिण ए, जिम परिणामें मन्य तो ॥२६
बुद्ध देव नाम कहु ए, तस प्रतिमा सविकार तो ।
ऊर्ध्व कर जपमालिका ए, यज्ञोपवीत कंठ धारतो ॥२७
ए आदेइ विकृत धणी ए, थापी मत एकान्त तो ।
घोर नरकें ते वापड़ा ए, दुर्धर दुःख सहंत तो ॥२८
सुगत मत जे आदरी ए, मिथ्या कदाग्रही जेह तो ।
काल अनन्त ते जीवडा ए, भवि भवि दुक्ख सहंत तो ॥२९
इम जाणि आसन्न भव्य ए, परिहरो मत एकांत तो ।
जिन वाणी हृदय धरो ए, स्याद्वाद जिनमत्त सत्य तो ॥३०
विपरीत मिथ्यात तम्हें सुणो, जेह करे जीव अहित तो ।
कांहिवुं रे हवुं जे जू जू तु ए, ते जाणों विपरीत तो ॥३१
वस्त्रापूत जल पीजिए, वली कहु वहि तिन ही दोष तो ।
कन्दमूल दूषण कहियिए, वली खाइ ते मोख तो ॥३२
रयणी नीर दोष कह्यो ए, वली रयणी भोजन तो ।
रुधिर मांस समुं जल अन ए, ए मार्कंड-वचन तो ॥३३
एह वो दोष जे उचरि ए, वली करे निस आहार तो ।
माहरी माँ ने वांझणी ए, ए विपरीत अपार तो ॥३४

ब्रह्मचारी देवनें कही ए, अर श्री लक्ष्मी नार तो ।
राधासूँ क्रीड़ा करि ए, सोल सहस्र स्त्री भरतार तो ॥३५
जीव दया धर्म कहे ए, करे जीवनों घात तो ।
पुण्य कारण प्राणी हणे य, धर्म तणी कहे क्षात तो ॥३६
यागि अग्नि जीव होमो ए, नरक जवाजा वाग तो ।
मीढा महिष जे वावड़ा ए, पमुख प्राण करे घात तो ॥३७
वेद माही दया कही ए, वेद मध्य हिंसा कर्म तो ।
जस कर्मे जीव हणिए, ए विपरीत कुधर्म तो ॥३८
शौच काजि स्नान करिए, नवि हणि मांहि चर्मपात्र तो ।
अशुचि अस्थि वली आदरीए, ते विपरीत कुशास्त्र तो ॥३९
जीव हणी स्वर्ग वांछोए ए, तो नरकें किम होइ तो ।
पाप करे जो सुख होइए, तो पुण्य निष्फल जोइ तो ॥४०
जलता जीव जु सुख होइ ए, तो क्यों न दीइ माय वाप तो ।
विपरीत भाष्या मोटा जीव ए, ते वाहे पर आप तो ॥४१
दीन जीव तृण-भक्षक ए, ते वोल्या वलि कर्म तो ।
वाघ सिंह क्यों न कह्या ए, ते दे वलि तो मर्म तो ॥४२
सहस्र अठ्यासी रिखि कह्या ए, जुदु जुदु भाष्यो तेण तो ।
विपरीत मत ते जाणीए, ते वर्णव्यों जाइ केणि तो ॥४३
श्रावस्ती नयरी पती ए, वसु नामि नरेन्द्र तो ।
क्षीर कदम्वा द्विज सूरी ए, तस पुत्र पर्वत भद्र तो ॥४४
निज पिताइ दीक्षा ग्रही ए, पर्वत रह्यो निज गेह तो ।
नारद सख्य-शिरोमणि ए, आसन्न भव्य जीव तेह तो ॥४५
वेद पढ़ता पर्यंत कहू ए, अज सवदि छाग जाणि तो ।
अज त्रयो वरसतणा व्रीही ए, इम कहें नारद वाणि तो ॥४६
माहो माहे विवाद करिए, मानें नहि पर्वत मूढ तो ।
गुरु-भ्राता जे वस्तु करया ए, तेह वचन सत्य प्रौढ़ तो ॥४७
पर्वत-माता ए सांभल्युं ए, पुत्र-वाणी असत्य तो ।
पृच्छनपणें वसु वीनव्यो ए, वर-दान मांगि अनुमति तो ॥४८
मुझ पुत्र-वाणी थापज्यो ए, कृपा करी वसु भूपाल तो ।
मूढपणों तिण मांनीउ ए, निज घर आवी ते वाल तो ॥४९
राजसभा सहु देखता ए, नारद पर्वत कहे वाणि तो ।
आपणे गुरु अर्थ कुण कह्यो, अज शब्द तणो जाणि तो ॥५०
पर्वत दोल ते थापीए तु ए, भूप होय वसु मिथ्यात तो ।
फटिक सिंहासन कांपीओ ए, भूमिओ उ निपात तो ॥५१
कूटी साख जव भूप कह्यो ए, तव हुओ हा-हाकार तो ।
धरा विकसी अधो गति गयो ए, सातमी नरक मझार तो ॥५२

सुर-नर खग धिक्कार करी ए, कीयुं पर्वत निःसार तो ।
नारद वाणी सत्य सही ए, जिन-शासन जयकार तो ॥५३
पर्वत वन जाय चिंतवि ए, मुझ वचन कर्युं विस्तार तो ।
कर्मयोगे कालासुर साहाज ए, मधुपिंगल जीव गमार तो ॥५३
यजुर्वेद याग रच्यो ए, जीवतणा बहुघात तो ।
याजक जन स्वर्ग लहे ए, एहवी कहे खोटी वात तो ॥५४
भोला लोक भ्रमें पड्या ए, न लहि धर्म-विचार तो ।
पर्वत मरि नरकें गया ए, दुक्ख सहे पंच प्रकार तो ॥५५
ए मिथ्यात जिणें कर्यो ए, करै छै करसी जेह हो ।
तेहनां दुक्ख नो पार नहिं ए, ये घणुं सूं वर्णवूं तेह तो ॥५६
मुनिसुव्रत तीर्थ समिए ए, उपज्यो मिथ्यात्व विपरीत तो ।
पंचम काल घणुं विस्तर्यो ए, दुर्द्धर दीसे कलि रीत तो ॥५७
जे जिन शासन थी जुओ ए, तेह मिथ्यात नुं जाण तो ।
संक्षेपे कवि कथा हुं कह्यु ए, विस्तार महापुराण तो ॥५८
विनय मिथ्यात्व मरीचि यथा ए, भरत चक्री तणुं पुत्र तो ।
दर्शन रूप पाखंड घणा ए, कर्म वशि विचित्र तो ॥५९
एक दंड त्रिदंड धरिए, शिखा शिर एक मुंड तो ।
नग्न वेष जटा धरिए ए, काने मुद्रा करि-दंड तो ॥६०
चरम कंबल कौपीन धारिए, शींगी वाइ गीत ग्यान तो ।
शंख बजावे भस्म लगाइ ए, पवनपुरे चलि रीत तो ॥६१
विनय करी, गुणि निर्गुणी ए, दंडरूपे नमस्कार तो ।
बाल वृद्ध सहु नें नमें ए, न वि लहे तत्त्व विचार तो ॥६२
कंदमूल वावरिए ए, अणगल जल करि स्नान तो ।
अपेय अभक्ष ते आदरे ए, न वि जाणें विज्ञान तो ॥६३
शिला धरि ऊभो रह्यो ए, अधो शिर ऊँचा चरण तो ।
पंचाग्नि साधे तप ए, कष्ट करे वली मरण तो ॥६४
नैयायिक सांख्य मत ए, चारवाक मत कीध तो ।
सोल पंचवीस तत्त्व कह्यो ए, निज निज कल्पे वुद्धि तो ॥-५
आत्म स्वरूप ते न वि लहे ए, एक कडुं चन्द्र आकाश तो ।
जल कुम्भ-प्रतिविम्ब जिम ए, जू जूआ शरीर निवास तो ॥६६
आदीश्वर आदि करीए, आज लगे उतपन्न तो ।
हित-अहित ते न वि लहे ए, न वि लहे कृत्य-अकृत्य तो ॥६७
कुदर्शन कुज्ञान तप ए, कुत्सित ते आचार तो ।
तिसहु कर्म विडम्वणा ए, विनय मिथ्यात विकार तो ॥६८
जिनवाणी हृदय धरो ए, जुओ तत्त्व विचार तो ।
विनय मिथ्यात सहु परिहरो ए, अनुसरो जिनधर्म सार तो ॥६७

संशय मिथ्यात्व हवे सुणो ए, भावरूपें सदा होय तो।
द्रव्यरूपे किहां उपन्नों ए, तेह विचार नु जोय तो ॥७०
विक्रम राय जम्यां पुरें ए, वरस एक सौ छत्रीस तो।
सोरठ देश मांहे कही ए, विलहण नय निवेस तो ॥७१
पंचम श्रुत केवली हुआ ए, श्री भद्रबाहु गणेन्द्र तो।
तत्रासीस शांति सूरी ए, तेह शिष्य जिनचन्द्र तो ॥७२
दुर्भिक्ष दोष ते विभचरा ए, शिथिल थया आचार तो।
निजगुरें संबोधीया ए, मानें नहीं गमार तो ॥७३
आपणी वुद्धि कल्पना करी ए, श्वेतपट परि थाप तो।
कंधे कंवलि लाठी करी ए, राखे छिद्र लांवा कान तो ॥७४
पात्र परिग्रह ते ग्रही ए, भिक्षा याचे गेह गेह तो।
स्वेच्छापणें भक्षण करी ए, प्रत्याख्यान नहि तेह तो ॥७५
निर्दोष देव दूपण कहे ए, उपजावे संदेह तो।
बाह्य आभूपण थापना ए, सविकार प्रतिमा देह तो ॥७६
श्री वीरनें दूपण दीइए, ब्राह्मणी उरे अवतार तो।
पछें इन्द्र विस्मापिओ ए, गरभ कीयो परिहार तो ॥७७
त्रिशला राणी कूखें ठवो ए, पछे हूवो गर्भ वृद्धि तो।
वाले मेरु कंपावीयो ए, एह वी थापी खोटी वुद्धि तो ॥७८
वीर पाणिग्रहण कहिए, पुत्री तणी उतपत्ति तो।
वैराग उपजे घर रह्या ए, वरस लगें सनमंत तो ॥७९
दीक्षा लेई ध्यानें रह्या ए, उपसर्ग गोवाल तो।
करणां खीला कांनें ठव्या ए, पग पय पाक विशाल तो ॥८०
ध्यान थका कायर हुआ ए, दीन पणें करी बुंवतो।
वीर वेदना उपजी घणी ए, एह वा वोल ज वोल तो ॥८१
केवल ज्ञान उपज्यां पुठे ए, घर घर जावे आहार तो।
क्षुधा तृपा राग रोग कह्यु ए, रोग कह्यो वली सार तो ॥८२
वीर विगोणु घणु कह्यो ए, तेसुं कही ए वात तो।
कुक्कुट पाक औषध देई ए. कीधों रोगनों घात तो ॥८३
संशयमत मां इम कह्यो ए. केवलीनें आहार-निहार तो।
प्रासुक अन्न जिहा मल्यो ए, ते लीजे अविचार तो ॥८४
चउदे उपग्रहण ते ग्रही ए, अवर लिंग जाइ मोक्ष तो।
स्त्री सातमीं नरकें जाई ए, स्त्रीय लहे शिव-सौख्य तो ॥८५
घोटक गणधर नें कहे ए, मलिन जिन स्त्री लिंग तो।
ग्रही नें मुकतें कही ए, इह वां वोले वहु विग तो ॥८६
अस्थि चरम वली आदरया ए, न वि मानें लौकिक छोत तो।
पुष्पवती नारी दोप ए, कहे नहि सूतक-प्रसूति तो ॥८७

आछणं अथाणा आदरि ए, रसाईया जीव तणु भक्ष तो ।
अंतराय पाले नहि ए, अन्न वासी लेई रक्ष तो ॥८८
ए आदि बहु दूषण ए, आगम तत्त्व विरुद्ध तो ।
थापना करि अछेरा कही ए, संशय ज्ञान अमुद्ध तो ॥८९
प्रथम चौरासी गच्छ कहीया ए, बहु हुआ अधिकनें टोल तो ।
आप आपणी वुद्धि कल्पिए ए, जुजूआ माने वोल तो ॥९०
कूहित दृष्टान्त देई करी ए, थापे संशय कुमत्त तो ।
मूढजीव मानें घणा ए, न वि लहे सत्य-असत्य तो ॥९१
इणी परि श्वेतपट्ट मत करी ए, जिनचन्द्र पामी मरण तो ।
प्रथम नरकि ते ऊपज्यो ए, दुःख सहे नहि कोई सरण तो ॥९२
माया मानें मूढनी ए देई ए, धूर्त्त वाहि पर आप तो ।
ते पापी संसार मां ए, भाव भवि सहे संताप तो ॥९३
पारसनाथ तणो गणधर ए, तेह तणो शिष्य अज्ञान तो ।
मशक पूरणं नामे मुनी ए, वश थई मिथ्या मान तो ॥९४
श्री वर्धमान तीर्थ समै ए, अवगणना पामी दुष्ट तो ।
जिनशासन गुण परिहरी ए, हुओ आचारतें भ्रष्ट तो ॥९०
पश्चिम दिश जइने रह्यो ए, खोटा शास्त्र तेणे क्षुद्र तो ।
अज्ञानी लोक वश कीया ए, वोली जिनशासन छाइ तो ॥९६
अज्ञान पणें मुक्ति कह्यो ए, मुक्ति जीव नहि ज्ञान तो ।
गमनागमन नहि वली ए, अवर कहे वहु भ्रांति तो ॥९७
हजह जीरा थापीया ए, माने शून्य आकार तो ।
हिंसा कर्म ते वहु करि ए, पसुतणां संधार तो ॥९८
जे जे जिनतत्त्व हुता ए, ते मानें विपरीत तो ।
अणाचार अति आदर्यो ए, अवली देखा डेरीत तो ॥९९
जिन शासन सूं रोस करि ए, सूरज देखी जिम घूक तो ।
चैत्यालय भंजन करे ए, रंजक अग्यानी लोक तो ॥१००
अग्यान मिथ्यात नरक हुआ ए, जाणें नहीं कृत्य अकृत्य तो ।
निगोद माहे ते दुख सहे ए, पापी पामी ते मृत्यु तो ॥१०१
जे अज्ञान पणु आचरि ए, तेहनों होइ वहु पाप तो ।
जनमि जनमि ते जे जीवडा ए, सहि संसार संताप तो ॥१०२

दोहा

मूल मिथ्यात्व ते एक कह्यो, उत्तर भेद ते पांच ।
अवर असंख्य लोक भेद, किम कही जाय ते वाच ॥१०३
मिथ्यात्व घणु स्यूं वर्णवुं, मांहे दीसे नहीं कांई सार ।
धूल ऊपर जिम लीपणों, जाता न लागे वार ॥१०४

पंच मिथ्यात्व सदा सहि, भावरूपें वहु होइ । ते हुण्डावसर्पिणी मांहे, द्रव्य रूपइ लिंग जोइ ॥१०५
षट्दर्शन छन्नु पाखण्ड, जैनाभास वली पंच । संशय विभ्रम उपजावीनें, मूढ़ करे परपंच ॥१०६
शुद्ध दर्शन श्री जिनतणों, द्रव्य भावें अनादि । अवर डम्भक दीसे घणां, ते सघला उपाधि ॥१०७

जिन शासन थी बाहिरा, भिन्न भिन्न दीसे जेह ।
पंचम काले पाखण्ड घणां, मिथ्या जाणो सहु तेह ॥१०८
मिथ्यात्व समो शत्रु नहीं, नारक गति दातार ।
अनन्तकाल दुखदायक, भमे भवोदधि मझार ॥१०९

मिथ्याती संगथी भलो, वाघ सिंघ विसवास । जल अग्नि भृगुपात भलो, मिथ्यातें दुखरास ॥११०

मिथ्यात्व समो कोइ पाप नहीं, भारे वज्रसमान ।
आगे हुउ होसे नहीं, लोकमांहे नहि वर्तमान ॥१११
इम जाणि निश्चै करी, जो जिन तत्त्व विचार ।
जीव-हित होइ ते आचरो, घणु स्युं कहुं वारंवार ॥११२

ढाल मालंतडानी

सम्यक्त्व भेद हवे कहु ए, सुणे सुन्दरे, संक्षेपे विचार । मालंतडारे संक्षेपे सविचार ।
गुरु उपदेशे पामीउ ए, सुणे सुन्दरे, श्रावक घूरि अधिकार । मा० ॥१
मूल भेद एक कह्यो ए, सुणे सुन्दरे, अथवा द्विविध जाण । मा०
त्रिहु भेदे जे निरमलो ए, सुणे सुन्दरे, इम कही जिन वाण । मा० ॥२
समकित विना ए आतमा ए, सुणे सुन्दरे, लक्ष चौरासी जोनि मांहि । मा०
द्रव्य क्षेत्र काल भाव ए, सुणे सुन्दरे, पंचविध दुखतें चाहि । मा० ॥३
आसन्न भव्य पंचेन्द्री पणु ए, सुणे सुन्दरे, गर्भ संज्ञी जेह । मा०
चतुर्गतिक पर्यायनो ए, सुणे सुन्दरें, कठिण कर्म तणी छेह । मा० ॥४
पंच सामग्री दुर्लभ ए, सुणे सुन्दरे, भव-सायर जे नाव । मा०
अनन्त भव दुख छेदक ए, सुणे सुन्दरे, भेदक कर्म कुग्राव । मा० ॥५
क्षय उपशम पहिली लब्धि ए, सुणे सुन्दरे, मन विशुद्धि वीजी होय । मा०
देशन, प्रायोग्यता लब्धि ए, सुणे सुन्दरे, करण लब्धि पंचम जोय । मा० ॥६
च्यारि लबधि सहु जीव लहि ए, सुणे सुन्दरे, करण लब्धि भव्य जाणि । मा०
अधः करण अपूरव करण ए, सुण सुन्दरे, अनिवृत्ति करण मनि आणि । मा० ॥७
काल लब्धि आवा जब ए, सुणे सुन्दरे, तव ते करे त्रण करण । मा०
समकित रत्न सुधू ग्रहि ए, सुणे सुन्दरे, संसार मांहि जे सरण । मा० ॥८
तत्त्वतणी रुचि जब करि ए, सुणे सुन्दरे, तब ते लहे समकित । मा०
तत्त्व-भेद हवे कहु ए, सुणे सुन्दरे, जिण होइ निज-पर-हित । मा० ॥९
जीव अजीव आस्रव बंध ए, सुणे सुन्दरे, सँवर निर्जरा मोक्ष । मा०
चेतन अचेतन भेद ए, सुणे सुन्दरे, सप्त तत्त्व कहि दक्ष । मा० ॥१०
पुण्य पाप दुहु मलीए, सुणे सुन्दरे, नव ए पदारथ जाण । मा०
द्रव्य उत्पत्ति व्ययात्मक ए, सुणे सुदरे, द्रव्य गुण पर्याय वखाण । मा० ॥११

जीव तत्त्व हवे सुणो ए, सुणे सुन्दरे, चेतना लक्षण जीव । मा०
जीव्यो जीवसे जीवसी ए, सुणे सुन्दरे, सदाकाल ते शिव । मा० ॥१२
सुख सत्ता चैतन्य ए, सुणे सुन्दरे, निश्चयरूपें प्राण चार । मा०
आउ इन्द्री वल उस्वास सुणे सुन्दरे, ए प्राण विवहार । मा० ॥१३
संसारी मुक्त भेद विन्यू ए, सुणे सुन्दरे, मुक्त ए कर्म-रहित । मा०
संसारी जीव वहु विध ए, सुणे सुन्दरे, कर्म आठ सहित । मा० ॥१४
संसारी तणा वे भेद ए, सुणे सुन्दरे, थावर तरस वखाणि । मा०
थावर नाम उदयहूं वसिए, सुणे सुन्दरे, पण एकेन्द्री जाणि । मा० ॥१५
त्रस नाम कर्म उदय ए, सुणे सुन्दरे, वे इन्द्री ते इन्द्री चौइन्द्री जात । मा०
नामकर्म विपाक ए, सुणे सुन्दरे, असंज्ञी संज्ञी पंचेन्द्री विख्यात । मा० ॥१६
पर्याप्त अपर्याप्त प्रकार ए, सुणे सुन्दरे, भेद जाणों सात-सात । मा०
चौद समास जीवतणा ए, सुणें सुन्दरे, कर्म करे भाँति भाँत । मा० ॥१७
गुण पर्याय सहित द्रव्य ए, सुणे सुन्दरे, गुण सुख दर्शन ज्ञान । मा०
चहुँ गति काय पर्याय ए, सुणे सुन्दरे, कर्म तणो संतान । मा० ॥१८
कनक द्रव्य सदा सोही ए, सुणे सुन्दरे, पीत वरण सत गुण । मा०
हेम परीर्या मुद्रिकादिक ए, सुणे सुन्दरे, तेम जीव द्रव्य निपुण । मा० ॥१९
द्रव्य रूपे सदा सास्वतो ए, सुणे सुन्दरे, पर्यायरूपे अनित्य । मा०
पूर्व पर्याय विणसी सही ए, सुणे सुन्दरे, नूतन तणी उत्पत्ति । मा० ॥२०
गति चार, इन्द्री पाँच ए, सुणे सुन्दरे, छ काय, पन्नर योग । मा०
वेद त्रण पंचवीस कषाय ए, सुणे सुन्दरे, अष्टें ज्ञान जीव भोग । मा० ॥२१
संयम सात, दर्शन चार ए, सुणे सुन्दरे, षट्लेश्या भव्य अभव्य । मा०
वे संज्ञी असंज्ञी ए, सुणे सुन्दरे, आहारक अनाहारक दिव्य । मा० ॥२२
चौदे गुणस्थानें जीव जोइ ए, सुणे सुन्दरे, अट्ठाणु जीव समास । मा०
पर्याप्ति छ, प्राण दस, संज्ञा चार ए, सुणि सुन्दरे, उपयोगते द्वादश । मा० ॥२३
ध्यान सोल, प्रत्यय सत्तावन ए, सुणे सुन्दरे, चौरासी लक्ष जीव जाति । मा०
एक सौ साढी नवाणु लाख ए, सुणे सुन्दरे, कुलकोडि जीव विख्यात । मा० ॥२४
चौवीस स्थानें जीव लखो ए, सुणे सुन्दरे, जो इए ते तत्त्व विचार । मा०
जीवतत्त्व संक्षेपे कह्यो ए, सुणे सुन्दरे, आगम जाणों विस्तार । मा० ॥२५
अजीव तत्त्व भेद पंच ए, सुणे सुन्दरे, धर्म अधर्म आकाश । मा०
काल ए पुद्गल जांणीइ ए, सुणे सुन्दरे, द्रव्य गुण पर्याय वास । मा० ॥२६
अमूरत धरम गमन गुण ए, सुणे सुन्दरे, असंख्य प्रदेश पर्याय । मा०
पुद्गल जीव ने लोक मांहे ए, सुणे सुन्दरे, मच्छ ने जिम जल सहाय । मा० ॥२७
ठहरतां पुद्गल जीव ने ए, सुणे सुन्दरे, सहाय अमूर्त अधर्म । मा०
असंख्य प्रदेश लोक मात्र ए, सुणे सुन्दरे पंथी ने जिम छाया धर्म । मा० ॥२८
द्रव्य सहुँ जिहाँ अवकाश गुण ए, सुणे सुन्दरे, तेतलुं लोकाकाश । मा०
तेथी अवर अलोक नभ ए, सुणे सुन्दरे, अनन्त प्रदेश प्रकाश । मा० ॥२९

काल प्रदेश एक ए. सुणे सुन्दरे, नव-जीर्ण-कारी गुण । मा०
जुजुआ अणुत्तर रासि जिम ए. सुणे सुन्दरे, रहि लोक माँहि निपुण । मा० ॥३०
पुद्गल भेद छ हुइ ए, सुणे सुन्दरे, मूर्त्त रूपी गुणवंत । मा०
स्परस, रस गंध वर्ण वीस ए, सुणे सुन्दरे, संख असंख अनंत । मा० ॥३१
सूक्ष्म सूक्ष्म परमाणु ए. सुणे सुन्दरे, पुद्गल तणां पर जाय । मा०
[1]स्कन्ध देश प्रदेश अणु ए, सुणे सुन्दरे, लोक मांहि अवि जाय । मा० ॥३२
आस्रव तत्त्व हवे सांभलो, सुणे सुन्दरे, भावि द्रव्य ते होइ । मा०
मन परमाणे भावास्रव ए, सुणे सुन्दरे, कर्म अणु द्रव्ये जोई । मा० ॥३३
मूल आस्रव पंच भेद ए, सुणे सुन्दरे मिथ्यात अविरत कषाय । मा०
योग प्रसाद भेदे कही ए, सुणे सुन्दरे, अवर अनेक ते थाय । मा० ॥३४
मिथ्यात पंच पेहलें कह्यो ए, सुणे सुन्दरे, अविरत्त तणां वार भेद । मा०
पंच इन्द्री मन मोकला ए, सुणे सुन्दरे, छ काय जीव करे छेद । मा० ॥३५
अनन्तानुवन्धी अप्रत्याख्यान प्रत्याख्यान ए, सुणे सुन्दरे, संज्वलन कसाय असार । मा०
क्रोध मान माया लोभ ए, सुणे सुन्दरे, चौकड़ी भेद च्यार च्यार । मा० ॥३६
हास रति अरति सोक ए, सुणे सुन्दरे, भय जुगुप्सा स्त्री वेद । मा०
पुरुष नपुंसक नो कषाय नव ए, सुणे सुन्दरे, कषाय ते पंचवीस भेद । मा० ॥३७
सत्य असत्य उभय अनुभय ए, सुणे सुन्दरे, मन वचन च्यार च्यार ।
औदारिक औदारिकमिश्र काय ए, सुणे सुन्दरे, आहारकमिश्र ते आहार । मा० ॥३८
वैक्रियिककाय वैक्रियिकमिश्र ए, सुणे सुन्दरे, कार्मण कर्म तणो भोग । मा०
आठ सात भेदे करी ए, सुणे सुन्दरे, इणि पूरे पन्नर योग । मा० ॥३९
विकथा कथा च्यार भेद ए, सुणे सुन्दरे, पंच इन्द्री निद्रा स्नेह । मा०
पन्नर प्रमाद इणि परि ए, सुणे सुन्दरे, आस्रव तणां कारण एह । मा० ॥४०
वहुत्तरि आस्रवइं इमउं लखो ए, सुणे सुन्दरे, अवर जाणो असंख्यात । मा०
घड नाले जिम नीर आव ए. सुणे सुन्दरे, तिम आवे कर्म संघात । मा० ॥४१
कर्मास्रव ए आत्मा ए, सुणे सुन्दरे, चहुंगति भ्रमें अपार । मा०
नानाविध कष्ट ते सहे ए, सुणे सुन्दरे, भव-सागर मझार । मा० ॥४२
वन्ध तत्त्व चतुर्विध ए, सुणे सुन्दरे, प्रकृति स्थिति अनुभाग । मा०
प्रदेश भेद कर्मवन्ध ए, सुणे सुन्दरे, जेहवो होइ रोस राग । मा० ॥४३
मूल प्रकृति अष्टविध ए, सुणे सुन्दरे, उत्तर एक सौ अड़ताल । मा०
अवर असंख्य लोकमात्र ए, सुणे सुन्दरे, प्रकृति वन्ध विशाल । मा० ॥४४
ज्ञानावरणी पंचविध ए, सुणे सुन्दरे, दरसणावरणी नव होय । मा०
द्विविध वेदनी मोहनो अट्ठावीस ए, सुणे सुन्दरे, आयुकर्म चतुर्विध जोय । मा० ॥४५
नामकर्म त्राणुं भेद ए, सुणे सुन्दरे, गोत्र तणा भेद दोय । मा०
अन्तरायकर्म पंचविध ए, सुणे सुन्दरे, एक सौ अड़तालीस इम होय । मा० ॥४६

१. यहां सूक्ष्म सूक्ष्म-स्थूल आदिका वर्णन छूट गया है ।

आवरण विघन वेदनी स्थिति ए, सुणे सुन्दरे, सागर कोडाकोडि तेत्रीस । मा०
सत्तरि मोहनी वीस नाम गोत्र ए, सुणे सुन्दरे, आयु सागर तेत्रीस ॥४७
अनुभाग उदयरसरूप ए, सुन्दरे, सुख देई प्रकृति प्रशस्त । मा०
गुड खांड साकर अमृत समए, सुणे सुन्दरे, फल सुख देई समस्त । मा० ॥४८
अप्रशस्त विपाक वसि ए, सुणे सुन्दरे, जीव लहे असुक्ख । मा०
नींव कांजीर, विष हालाहल ए, सुणे सुन्दरे, अशुभकर्मे वहुदुक्ख । मा० ॥४९
असंखप्रदेशी आतमा ए, सुणे सुन्दरे प्रदेश प्रति कर्म अनन्त । मा०
परस्पर मिलि रहिए, सुणे सुन्दरे, प्रदेशवन्ध दुरन्त । मा० ॥५०
वँधनें वन्ध्यो जिम चोर ए, सुणे सुन्दरे, परवसि पामे कष्ट । मा०
तिम ए जीव कर्मवन्धी ए, सुणे सुन्दरे, दुःख देखे निकृष्ट । मा० ॥५१
प्रकृति प्रदेश वन्ध विधि ए, सुणे सुन्दरे, योग विशेषी होय । मा०
स्थिति अनुभाग कषाय वसें ए, सुणे सुन्दरे, इण परिवन्धनुं जोय । मा० ॥५२
कर्मास्रव जे रुंधिइ ए, सुणे सुन्दरे, ते संवर वखाणि । मा०
घडनाला जिम रुंधीइ ए, सुणे सुन्दरे, आवे नहीं नव पाणि । मा० ॥५३
नाव छिद्र जिम रुंधीइ ए, सुणे सुन्दरे, आवे न नीर लगार । मा०
मण वय काया तिम रुंधीइ ए, सुणे सुन्दरे, न वि होइ कर्म पसार । मा० ॥५४
सूको तुंबू जिम जल तिरे ए, सुणे सुन्दरे, ज्यों नहीं गर्वनो भार । मा०
तिम कर्मसहु सोखीइ ए, सुणे सुन्दरे, जीव तिरे संसार । मा० ॥५५
सविपाक अविपाक निर्जरा ए, सुणे सुन्दरे, सहजि सविपाक जोइ । मा०
संसारी सहु प्राणी ते ए, सुणे सुन्दरे, कर्म जाइ वली होइ । मा० ॥५६
यती व्रती ध्यान वली ए, सुणे सुन्दरे, जे करे कर्मनी हाणि । मा०
तीव्र तप जे कर्म गलिए, सुणे सुन्दरे, ते अविपाक मन आणि । मा० ॥५७
जिम जिम जीव कर्म निर्जरि ए, सुणे सुन्दरे, तिम तिम ऊर्ध्व स्वभाव । मा०
भार विना जिम नीरमाहे ए, सुणे सुन्दरे, ऊँची दीसे नाव । मा० ॥५८
कर्मरुंधि संवर हुई ए, सुणे सुन्दरे, कर्मक्षये निर्जरा जोय । मा०
संवर निर्जरा मोक्ष हेत ए, सुणे सुन्दरे, काललब्धि भव्ये होय । मा० ॥५९
सर्व कर्मक्षय जे हेतु ए, सुणे सुन्दरे, परिणाम भावे मोक्ष । मा०
जीवथी पृथक् कर्म जे कीजिए, सुणे सुन्दरे, ते द्रव्ये सिद्धि सोक्ख । मा० ॥६०
शुक्लध्यान अव ध्यायता ए, सुणे सुन्दरे, जे होइ कर्मविनाश । मा०
केवलज्ञान तव ऊपजे ए, सुणे सुन्दरे, लोकालोक प्रकाश । मा० ॥६१
अंगघात सहु परिहरी ए, सुणे सुन्दरे, जे पामे शाश्वत ठांम । मा०
क्षायिक पंच परम भाव ए, सुणे सुन्दरे, ते मोक्ष कहीए उद्दाम । मा० ॥६२
इन्द्र आदि जे भोगवे ए, सुणे सुन्दरे, हुव होइ छे हसे जेह । मा०
तेहना सुक्ख थी अनन्तगुणुं ए, सुणे सुन्दरे, एकसमय लहे ते सिद्धगेह । मा०॥६३
तत्त्व सात इमउ लखो ए, सुणें सुन्दरे, निज द्रव्य गुण पर जाय । मा०
जिन वाणीमें जिम कह्यो ए, सुणे सुन्दरे, ते तिम निश्चल ध्याय । मा०॥६४

पुण्य पदारथ किम कहुं ए, सुणे सुन्दरे, समकित ज्ञान व्रत सार। मा०
दान पूजा तप जप कीजिए ए, सुणे सुन्दरे, श्रावक जतिय आचार। मा० ॥६५
सम दम यम नियम पालिए ए, सुणे सुन्दरे, मन वच काया निरुद्ध। मा०
पापाचार सव संवरीए ए, सुणे सन्दरे, कीजे क्रिया विशुद्ध। मा० ॥६६
सदाचार पुण्य ऊपजे ए, सुणे सुन्दरे, सुख लहे पुण्य पसाय। मा०
सुर नर खग फणपतितणा ए, सुणे सुन्दरे, मनवांछित फल थाय। मा०॥६७
पाप पदारथ हवे कहुं ए, सुणे सुन्दरे, पंच पातक राग रोप। मा०
शल्य गारव त्रण दंड•ए, सुणे सुन्दरे, संज्ञा विसनथी दोप। मा० ॥६८
पंच मिथ्यात अविरत्ति वार ए, सुणे सुन्दरे, विकथा कपाय पंचवीस। मा०
पन्नर प्रमाद योग कुक्रिया ए, सुणे सुन्दरे, सेवि विपय अठावीस। मा० ॥६९
पाप विपाके प्राणी या ए, सुणे सुन्दरे, परवसि पामे दुक्ख। मा०
नरक पशू कुनर तणा ए, सुणे सुन्दरे, वहुविध देइ असुक्ख। मा० ॥७०
पुण्य पाप इमउ लखी ए, सुणे सुन्दरे, सप्त तत्त्व सहित। मा०
नव पदारथ इणि परि ए, सुणे सुन्दरे, जाणे होइ जीव-हित। मा० ॥७१
पट्द्रव्य पंचास्तिकाया ए, सुणे सुन्दरे, पदारथ नव परकार। मा०
संक्षेपे वखाणिया ए, सुणे सुन्दरे, आगम जाणो सार। मा० ॥७२
तत्त्व पदारथ द्रव्य तणी ए, सुन्दरे, श्रद्धाइ होइ समकित्त। मा०
जे जे जिनवर जेम कह्यो ए, सुणे सुन्दरे, ते तिम आणे चित्त। मा० ॥७३
श्रद्धा रुचि प्रतीति सुं ए, सुणे सुन्दरे, निश्चय भावें भेद चार। मा०
सत्यतणें तत्त्व निश्चय ए, सुणे सुन्दरे, श्रद्धा रुचि भवतार। मा० ॥७४
श्रद्धा समकित जाणीइ ए, सुणे सुन्दरे, श्रद्धा थी शुभ ज्ञान। मा०
श्रद्धा थी शुभ चारित्र ए, सुणे सुन्दरे, श्रद्धा सर्व प्रधान। मा० ॥७५
श्रद्धाइ पुण्य, पुण्य पूजा तणूं ए, सुणे सुन्दरे, श्रद्धाइ पुण्यदान। मा०
तप जप संजम श्रद्धा पणे ए, सुणे सुन्दरे, श्रद्धा गुण-निधान। मा० ॥७६
तत्त्व श्रद्धा शुभ भावना ए, सुणे सुन्दरे, श्रद्धा भावे निज ध्यान। मा०
श्रद्धा कर्म-क्षय-कारण ए, सुणे सुन्दरे, इम कहे जिन भान। मा० ॥७७
श्रद्धा विना समकित नहीं ए, सुणे सुन्दरे, श्रद्धा विना नहि तप दान। मा०
केवल काय कष्टकारी ए, सुणे सुन्दरे, होय नहि मोक्ष निदान। मा० ॥७८
इम जाणी हृदै आपणो ए, सुणे सुन्दरे, श्रद्धा करो जिन तत्त्व। मा०
संशय विमोह विभ्रम टालीयए, सुणे सुन्दरे, निःशल्य भावि भवितत्त्व। मा० ॥७९
जिण-जिणें तत्त्व सरदह्यां ए, सुणे सुन्दरे, तिण तेणें लह्यां वहु सोक्ख। मा०
सुर नर वर पदवी लही ए, सुणें सुन्दरे, अनुक्रमें पाम्यां मोक्ख। मा० ॥८०
तत्त्व अर्थ शुभ सद्दहणा ए, सुणें सुन्दरे, सम्यक्दर्शन एह। मा०
संक्षेपे एक भेद कह्यो ए, सुणे सुन्दरे, अवर वे कहु तेह। मा० ॥८१
निसर्ग पहेलो भेद ए, सुणे सुन्दरे, दूजो अविगम जोय। मा०
सहजि भवि रुचि उपजिए, सुणे सुन्दरे, उपदेश विना ते होय। मा० ॥८२

कर्मतणें उपराम होइ ए, सुणे सुन्दरे, अथवा क्षय उपशम । मा०
कर्मक्षयथकी उपजे ए, सुणे सुन्दरे, निसर्ग दृष्टि उत्तम । मा० ।।८३
गुरु उपदेशें पामीय ए, सुणे सुन्दरे, करतां तत्त्व अभ्यास ।
भणतां सुणतां अधिगम ए, सुणे सुन्दरे, उपजे चित्त उलास । मा० ।।८४
जिन प्रतिमा प्रासाद देखीय ए, सुणे सुन्दरे, पेखी महिमा सासन्न । मा०
पूजा प्रतिष्ठा जात्रा आदि ए, सुणे सुन्दरे, ऋद्धि वृद्धि यति जन्न । मा० ।।८५
देवा अतिशय देखि करी ए, सुणे सुदन्रे, तीव्र तप दान ज्ञान । मा०
तत्त्व जाणी अधिगम होइ ए, सुणे सुन्दरे, करतां गुण-आख्यान । मा० ।।८६
श्रद्धा समकित सेवीये ए, सुणे सुन्दरे, निसर्ग दृष्टि अधिगम । मा०
निर्मल मूल गुण कारण ए, सुणे सुन्दरे, शुद्ध भावे ते उत्तम । मा० ।।८७

वस्तु छन्द

शुद्ध भाव करो, शुद्धभाव करो, भविजण इणि परे ।
श्रावक जती धर्मकारण, तारण संसार सागर निर्भर ।
स्वर्ग मोक्ष फल दायक, नायक समकित सार मनोहर ।।
अनुदिन जे जन अनुसरे, धरे जे समकित रत्न । जिन सेवक **पदमो** कहे, तेह तणों करो जत्न ।।१

अथ भास जसोधरनी

भाव धरी भव्य सांभलो ए, सुभ समकितभेद । उपशम वेदक क्षायिक, जेम कह्यो जिनदेव ।।२
समकित रत्न गुणघातक, प्रकृति जाणों सात ।
मिथ्यात्व मिश्र सम्यक्त्व प्रभृति, दर्शनमोहतणी ख्यात ।।३
अनादि काल अनन्तानुवन्धी, क्रोध मान माया लोभ ।
शिला अस्थि वंश तणो मूल, लाख रंग सम लोभ ।।४
मिथ्यात्व उदयें मिथ्यात्व हुइ, पाले नहीं जिनधर्म ।
मिथ्यात देव गुरु शास्त्र तणी, सेवा नीच कर्म ।।५
मिश्र प्रकृति तणें विपाके, मिश्र होइ परिणाम । देव-अदेव गुरु कुगुरु, सारिखा परिणाम ।।६
देवतणा लक्षण सुणो, देव जाणों अरिहन्त । इन्द्रादिक पूजा करे, कर्म अरि करे अन्त ।।७
चोत्रीस अतिशय निर्मला, अष्ट प्रतिहार्यवन्त । अनन्तचतुष्टय ऊजला, छियालीस गुणसन्त ।।८
समोसरण लक्ष्मी भली, सेवा करे शत इन्द्र । धर्मोपदेश देइ सदा, इह वा ध्याओ जिनेन्द्र ।।९
देवदूषण थी वेगला, सुणो दोष अठार । क्षुधा तृषा नहीं जेह नइ, नहीं भय रोग लगार ।।१०
राग मोह चिन्ता नहि, जरा मृत्यु नहीं जन्म । खेद स्वेद मद रति नहीं, नहीं निद्रा रोगकर्म ।।११
विस्मय विखवाद जेहने नहीं, एह दोष अठार । अवर अवगुण पण कोय नहीं, ते देव भवतार ।।१२
एह वा जिनदेव सेवी ए, पूजीए जिनचरण । मुक्तिनारीवर निर्मला, भव-तारण-तरण ।।१३
गुरु आ गुरु सेवो गुणवन्त, गुरु जाणो निर्ग्रन्थ । धर्मोपदेश दीये ऊजलो, देखाडे मोक्ष पन्थ ।।१४
अभ्यन्तर वाह्यतणा नहीं, परिग्रह चौवीस । नग्न मुद्रा धरे निरमली, दिगम्बर जति-ईश ।।१५
चारु चारित्र धरे तेरस भेद, अट्ठावीस मूलगुण । दशलक्षणधर्म-धारक, तप बारस निपुण ।।१६
सम दम सूधो आचरइ, जीती इन्द्री मदमार । क्रोध मान माया लोभ नहीं, नहीं राग द्वेष विकार ।।१७
भव-सागर जे तरे तारे, जेम अच्छिद्रनाव । सेवो गुरु गुण उत्तम, हृदय आणी शुभ भाव ।।१८

सत्य शास्त्र ते जाणी ए, जेह मां होइ दयाधर्म । सत्य अचौर्यशील गुण, जिहां सदा शौचकर्म ॥१९
चार अनुयोग जहां निरूपिया, प्रथमानुयोग पवित्र । त्रेसठशलाका नरतणां, जास कीधा चरित्र ॥२०
त्रैलोक्यतणुं जिहां वर्णन, ते करणानुयोग । श्रावक यतिव्रत व्याख्यान, जाणो ते चरणानुयोग ॥२१
षट्द्रव्य पंचास्तिकाय, तत्त्व अर्थ प्रकार द्रव्यानुयोग ते निर्मलो, श्री जिनवाणी उद्धार ॥२२
देवगुरु शास्त्र नव भेद, जोइइ सत्य सुजाण । पूर्वापरइं जे विरुद्ध नहीं, तेहहि शास्त्र प्रमाण ॥२३
कुदेवतणुं लक्षण सुणुं, दीसे देह सिणगार । वस्त्र नारी करी लंकर्या, हाथे छे हथियार ॥२४
गदा शंख धरि चक्रपाणि हाथे छे जपमाल । गरुडगामी मोर पीछ भार, भामा भोगवे विशाल ॥२५
एक मूर्त्तिदीसे लजामणी, लिंग जोणी मझार । पुरुष नारी साथे सदा करे वृषभ विहार ॥२६
भस्म अंगि कपाल हस्ति, कंठे छे रुंडमाल । करि त्रिशूल भुजंग कंठि, जटा नग्न विकराल ॥२७
अवर देव तणो विकृत, दीसे वदन ते चार । राग-रंग रमे सदा, हंस यान संचार ॥२८
तिलोत्तमा रागि रत्यु, दण्ड कमण्डलु पात्र । कोपीन जनोपवीत कंठि, अक्षसूत्री कुगात्र ॥२९
धड़ लेई एक नर तणो, थापी शिर एक हस्ति । तेल सिन्दूर रचना रची, एहवी कहे देवमूर्त्ति ॥३०
पदे पसू चापी रहे, करे क्रूर हथियार । रुधिर मांस बलराती सदा, आगल पशु सिंधार ॥३१
जक्ष-जक्षी नाग-नागिणी, गुरु गोत्रज नाम । जलमी वराही इआदें करी, देवी भीषण भाम ॥३२
धात पाषाण माटी काष्ट, देव-देवी तणां मंच । मूढ जीव तणां रजक, माने मिथ्याती संच ॥३३
ए आदे देव देवी तणां, दीसे बहुमूर्त्ति । जिन-प्रतिमा थी बाहिरी, ते सहु मिथ्या विकृत्ति ॥३४
कुगुरु चिह्न हवे सांभलो, पंच पातक-सक्त । हिंसा असत्य चोरी आचरे, मैथुन अंग जे रक्त ॥३५
मठ मन्दिर वनवासी आ, रामा रागे ते राता । कृपण करे पशु-पालक, राग रोस मद माता ॥३६
विणज वीवाहे वैद ज्योतिषी, विद्या मन्त्र कुतंत्र । कामण मोहण वसिकरण पाखंड करे कुजंत्र ॥३७
चर्मरोम ओढ़े घणा, वनवण कुलकारी । पंचविध वस्त्र आदरे, नग्न कोपीन एक धारी ॥३८
विप्र संन्यासी कापडी, योगी दरवेश दोहिल्या । बौद्ध सांख्य कुतापसी, बहुभिक्षुक बोल्या ॥३९
गोपिच्छक धवल अम्बरी, द्रावड़ आपली संग । पिच्छविहोना दुर्मती, जैनभाषा प्रसंग ॥४०
जिनशासन जे बाहिरा, जिनमार्ग विखण्ड । ते कुगुरु मिथ्यातीया, कुवेष लिंग सहित ॥४१
कुत्सित शास्त्र हवे सांभलो, जेमां कुत्सित आचार । धर्मकाज हिंसा करे, जज्ञ जीव सन्घार ॥४२
असत्य चोरी अब्रह्मचर्य, निशि भोजन पाणी । कन्दमूल मधुभक्षण, स्नान नीर अछाणी ॥४३
श्राद्ध संवच्छरीने तर्पण, जागर मण्डल प्रश्न । पितरपिंड उतारणां अम्बर देवी कुकृष्ण ॥४४
वड पीपल शमड़ीवृक्ष, काग सूकर स्यान । वापी सरोवर नदी अ कूप, पूज्य माने अज्ञान ॥४५
रवि अ शनिश्चर संक्रम, ग्रहण आदित चन्द्र । एकादशी आमास आदि, ओछी स्थापना क्षुद्र ॥४६
देवने तो दूषण दीये, परनारी अपवाद । स्वामी लीला एहवी करे, एह इन्द्री उनमाद ॥४७
शीलवन्ती सती कहुं, वली पंच भरतार । अष्टादश पुराणमाहे, स्थापे असत्य अपार ॥४८
एक सौ असी क्रिया भेद, चौरासी अक्रियावाद । अज्ञानी सड़सठे भेद, बत्तीस विनयविवाद ॥४९
त्रणसै त्रेसठ एणि परे, कुवाद कुस्थान कुमन्त्त । संशय विमोह कारणें, ते कुशास्त्र असत्य ॥५०
जे जिम जेणें किया, थापए ते विपरीत । कुबुद्धि वले धूर्त कल्पित, दीखे अवली कुरीत ॥५१

जे जिनवाणी वेगला, थाप्या बहु विभचार ।
विरुद्ध वचनें रचना रची, किम कह्यो जाय विस्तार ॥५२

सत्यदेव कुदेव तत्त्व, गुरु कुगुरुने सरिखा । शास्त्र कुशास्त्र सम लेखवे, न जाणे ते परिक्षा ॥५३

गोलख सम ते लेखवे, चिन्तामणि-सम काच । गो-महिषी अर्क थोहर, दुग्ध सम एक वाच ॥५४
अमृत हलाहल विष समा, उद्योतनि अन्धकार । धर्म अधर्म सम लेखवे, भूला जीव गँवार ॥५५
मिश्रप्रकृति तणें उदये, न वि जाणे जिय भेद । शुभ अशुभ न वि उ लेखे, घणुं स्यूं कीजे निखेद ॥५६
सम्यक्त्व प्रकृति हवे सांभलो, माने देव अरिहन्त । निर्ग्रन्थ गुरु सेवा करिये, धर्म दशलक्षणवंत ॥५७
देव शास्त्र गुरु उ लखे, करे जिनधर्म विचार । तत्त्व पदारथ सरदहे, लहे समकित सार ॥५८
सत्य देवसूं प्रीति करे, नाहीं मनमें भ्रान्ति । देव गुरु ये मुझतणा, मुझ विघन करे शान्ति ॥५९
आदि देव अतिशयवन्त, परतो मुझ पूरे । शान्तिनाथ शान्तिकरण, दुःक्रम संकट चूरे ॥६०

समकित विना स्युं धर्म स्युं, भ्रान्ति आणे ते वाल ।
जिनशासन वोड़े नहीं, भमे जिम घंटा लाल ॥६१

क्रोध मान माया लोभने, कठिण कसाय जे चार । अनादिकाल अनन्तानुवन्धी, दुःख देई अपार ॥६२

मिथ्यात मिश्र समकितनाम, प्रकृति टालो ए सात ।
उदय होय जव तेह तणो, तव समकित करे घात ॥६३
ये सातों जव उपशमें, तव होय उपशम भाव ।
स्वस्ति परिणामें जीवनें, शुद्ध सहज परिणाम ॥६४

कचोली कर्दम नीर सहित, कसमल दीसे तेम । कतकफल माहे तवै, स्वच्छ थाइ जल जेम ॥६५
सर्वघातिस्फर्धकतणुं, होइ उपशम ज्यारे । समता भाव सात पणें, लाभे दर्शन त्यारे ॥६६
सप्तमध्य छ उपशमें, उदय समकित एक । वेदक रुचि तव ऊपजे, लहे धर्म विवेक ॥६७
नदी अ वहे जिम नीरपूर, समल ते जल मांहे । समकित पाके वेदक, भ्रान्ति जिन धरम चाहे ॥६८

वेदकतणी उत्कृष्ट स्थिति, जाणो छासठि समुद्र ।
निश्चल पणें जो रहे सदा, सौख्य आपे जिनधर्म ॥६९
सर्वघाती तणों क्षय होय, प्रकृति टले जव सात ।
क्षायिक समकित तव ऊपजे, नीपजे गुण व्रात ॥७०
आकाश जिम अभ्र विना, निर्मल दीसे तेज भान ।
प्रकृति क्षय क्षायिक रुचि, होय गुण-निधान ॥७१
क्षायिकतणी स्थिति उत्तम, जाणों सागर तेतीस ।
अष्ट वरस हीण वे पूर्व कोडि, अधिक भणें जगदीश ॥७२

चौथा गुणस्थान आदे करी, इग्यारमां पर्यन्त । उपशम सम्यग्दर्शन, प्राणी चढे उपशान्त ॥७३

अविरत आदि अप्रमत्त लगें, स्वामी वेदकवन्त ।
चौथा आदि चौदमा लगे, क्षायिकदृष्टि जयवन्त ॥७४
सम्यग्दृष्टी भवी अण, नरक गति न वि जाये ।
शर्करा प्रभृति आदि छ लगें, नारकी न विथा ये ॥७५

भवनवासी व्यन्तर ज्योतिषी, देव देवी ते मांहि । कल्पदेवी अवर स्त्रीवेद, पंढवेद न वि वाहि ॥७६
दुर्योनि न वि उपजिए, हीन दीन दारिद्री । खंज पंग कुब्ज वामणा, न वि थाये विकलेन्द्री ॥७७

पृथ्वी अप तेज वाय तरु, वेइन्द्री तेइन्द्री चौइन्द्री ।
निगोद म्लेच्छ कुभोगभूमि, पसु असंज्ञी पंचेन्द्री ॥७८

वार मिथ्या उपपाद माहि, तिहां जन्म न पावे ।
सम्यग्दृष्टि प्राणी आ, अल्प योनि न वि जावे ॥७९
वहिरा वारा वोवडा, वहु अन्ध विकराल । कोढी काला कुत्सित, न वि होइ मृत्यु अकाल ॥८०
एह आदे जे कष्टकारी, तिहां नहीं अवतार । सम्यग्दृष्टी, न वि लहे दुःख संसार ॥८१

दोहा

सम्यग्दृष्टी आतमा, उत्तम स्वर्ग अवतार । इन्द्र अहमिन्द्र ऊपजे, महर्धिक देव मंझार ॥१
कामधेनु चिन्तामणी, कल्पवृक्ष निधान । देवीस्युं क्रीडा करे, भूधर चैत्य उद्यान ॥२
उत्तम नर मांहे ऊपजे, भोगभूमि भागवंत । दशविध कल्पतरुतणा सुख लहे महंत ॥३
कर्मभूमि कुल महर्धिक, उपजे राज अधिराज । मंडलीक महामंडलीक, कान्ह केशव वलराज ॥४
चक्रवर्त्ति षट्खंडतणी, तीर्थंकर पदसार । सुर नर सहु सेवा करे, आपे मोक्ष दुवार ॥५
सम्यग्दृष्टी सजनतणों, महिमा कह्यो किम जाइ । सुर नर वर सुख भोगवी, अनुक्रमे सिद्ध थाइ ॥६
इम जाणी निश्चय करी, सेवो समकित रत्न । जनमि जनमि सुखदायक, सदा करो तस जत्न ॥७

अथ भास अंविकानी

सम्यग्दृष्टी जेह जीव, तेह लक्षण हवे सांभलो ए ।
निःशंकित आदे अष्ट अंग संवेग गुण ऊजलो ए ॥१
उपजे पंचवीस दोष, समकित ना जत्न करो ए ।
तेहतणां सुणो हवे भेद, सम्यग्दृष्टि मल परिहरि ए ॥२
मूढ त्रय मद अष्ट, छ अनायतन दुद्धर ए । संका आदि दोष, पंचवीस मल निरभर ए ॥३
देवमूढ, शास्त्रमूढ लोकमूढ त्रण भेद ए । न लहे देवस्वरूप, मूर्खपणुं तेहने मन मनि ए ॥४
देव एक अरिहंत, तेह विना दूजो नहि ए । अवर करे जो सेव, देवमूढ मल ते सही ए ॥५
अवश्र सुणी जे शास्त्र, हित अहित ते नवि लहे ए ।
तत्त्व अतत्त्व गुण दोष, विचार भेद ते नवि कहि ए ॥६
भारह संगीत कोकशास्त्र, मिथ्यापंथ जो रोपीया ए ।
ज्योतिष वेद कुवाद कुगुरुमुखे निरूपिआ ए ॥७
लोकमूढ लोकीक, कुतीर्थ जात्राए जे गमिए । गंगा जमुना पुष्कर सागर-संगम जे भमिए ॥८
शीत उष्ण पडवेय, भैरव वीज गुरु त्रीजए । रक्ष संयोग पांचमि, शील सातमि आठमि दोजए ॥९
तुलीतुं नवमी अहव दशमी, एक द्वादसी अमावास ए ।
अे आदि कुतिथि दिन्न, वहु मूढ लोक ते भास ए ॥१०
उत्तरायण होली शिवराति, नव हस्ती नवरात्र कही ए ।
गणागुरिणी गोत्राड, साचो रवि सोमवार कही ए ॥११
जाग जागरण चन्द्रायण, गुंजन आदि त रोटला ए ।
ग्रहण सती संक्रान्ति, कुदान पाप पोटला ए ॥१२
पंच ते कुमती भाव, छन्नु पाखण्ड जे कह्या ए ।
ते जाणो लोकीक मूढ, जिनशासन वाह्य रह्यां ए ॥१३
अशुभ जे आचार, मिथ्यात्व पूजा पाय ए । जे जिनवाणी थी भिन्न, ते सहु मिथ्या पाप ए ॥१४

एणी परे त्रण मूढ, विवेक गुणें करि व्यजो ए। प्रौढ होय समकित्त, हितकारो सदा भजो ए ॥१५
हवे सुणों अष्ट मद, मत्सर मानें पाप उपजे ए। अहितकारी अति कष्ट, राग रोष ते नीपजे ए ॥१६
जाति मद कुल मद, लक्ष्मी ज्ञान रूप मद ए। तप बल विज्ञान मद, आठ मद पाप प्रमाद ए ॥१७

जाति तणों एह मद, पक्ष मोटो मुझ माय तणो ए।
मोटो कीधो तेणे काज तुनुस्तुंलिकसुं घणु ए ॥१८

लक्ष चौरासी जीव, अनेक वार जीव ग्रही ए। जाति तणो संक्रम, परंपराते कुण लहे ए ॥१९
कुल तणो करे गर्व उत्तम काज वृद्धे कयुँ ए। वंश मोटे मुज तात, एम कही मद अनुसरे ए ॥२०

एक सौ साढ़े नवाणुं, लक्ष कोडि ते कुल कहीया ए।
वली-वली ऊपजे जीव, तात संक्रम ते कुण लहि ए ॥२१
लक्ष्मी तणो किसो गर्व, अल्परिद्धि रामी करी ए।
छिंण आवे छिण जाय, वृक्ष छाया छिण जिम फिरे ए ॥२२
अल्प भणी श्रुतज्ञान, मत्सर करे मूढमती ए।
ज्ञान लही केवल वोध, तो अज्ञानी कहे जती ए ॥२३

पामी शरीर सरूप, देखी मद करे तेह तणो ए। जिन चक्री काम देव, ते आगले किसूं घणूं ए ॥२४
पामी अंग सवल, कहे शक्ति मुझ ने घणी ए, आगे हुआ कोटी भट्ट, ते सम वड़ कांइ भणुं ए ॥२५
अल्प करी उपवास, कठिण तप घणो कीयो ए। एक वेच्यारे षट् मास, ते आर्गाल कांइ भणुं ए २६
चित्र-मंडण लेख कर्म, सीखी मद स्युं तणुं ए। एक एक थी अधिक विज्ञान, तुं रीझे किसुं घणुं ए ॥२७

इणि परें आठे मद, जुजुआ जोउं जुगति करी ए।
समकित ने दीये दोष, मद छांडो मार्दव धरी ए ॥२८

जे-जे कृत्रिम वस्तु, कर्म संजोगे जे मिली ए। छिण-छिण विणसे तेह, सूं मद कीजे जू तेटलू ॥२९

कर्मतणे वशि जीव, ऊँच नीच गोत्र ग्रही ए।
हीन अधिक वुद्धि कुबुद्धि, शुभ अशुभ कर्म लहि ए ॥३०
कुदेव कुगुरु तणा भक्त, कुलिंगी भक्त तेह तणा ए।
कुशास्त्र कुशास्त्र तणा भक्त, अनायतन षट् भेद भण्या ए ॥३१
दूषण-सहित कुदेव, परिग्रह-सहित कुलिंगि कहीया ए।
कुत्सित आचार कुशास्त्र, पूजा भक्ति दूषण ग्रह्या ए ॥३२

अष्ट शंकादिक दोष, भेद कहूँ हवे तेह तणा ए। दोष टाले होइ गुणा, अष्ट भेद अंग सुण्या ए ॥३३

जल-विन्दु जीव असंख, निगोद देही अनंत रासी ए।
सूक्ष्म कह्या तत्त्व भेद, शंका दोष संशय भास ए ॥३४

दान पूजा तप ध्यान, अध्ययन धर्म करी ए। निंदा न करी वांछे भोग, आकांक्षा दूषण धरी ए ॥३५

जती व्रती गुणवन्त, जल्ल-मल्ल अंग रोग देखी ए।
सूग करे जे मूढ, विचिकित्सा दोष पेखीये ए ॥३६
देव-अदेव गुरु-कुगुरु, तत्त्व अतत्त्व जे न वि लहि ए।
धर्म-अधर्म अविचार, मूढ दोष इणि परि वहि ए ॥३७

सागारी अणगार, चारित्र आचरण वसि ए। मलिण देखि त्रस व्रत, अन आछादन देइ दोष ए ॥३८

उपासक यतिनाथ, कर्म वसि व्रतथी चल्यो ए।
स हि न निज राखे धर्म अस्थिति करण मल ठवि ए ॥३९
यती व्रती साधर्मी, वात्सल्ल भक्ति ते न वि करे ए।
न वि करे प्रीति उपगार, अवात्सल्ल दूपण धरि ए ॥४०
जिन प्रासादमां प्रतिमा, प्रतिष्ठा अतिशय लोपीय ए।
शासन महिमा करे हानि, अप्रभावना दोष रोपी ए ॥४१
ए इणी परे आठे दोष, मल उ लखी जो परिहरि ए।
तो होय उत्तम अंग, निःशंकादि अष्ट गुण धरि ए ॥४२
अंग-विहूणो दर्शन, निज काज असमर्थ कही ए।
अक्षर-हीन जिम मंत्र, विष-वेदना टाले नहीं ए ॥४३
राज-अंगे जिस भूप, सबल पणें वैरी ने जीति ए।
तिम अंग-संगे सबल, दर्शन कुकर्म क्षेपीइ ए ॥४४
जिम तिम करी भव्य जत्न, दोष पंचवीस दूरे करो ए।
अंग गुण अष्ट समृद्ध, निर्मल समकित अनुसरो ए ॥४५
शंकाकारी सात भय, दुखदाई शल्य त्रणि ए।
कपट माया मिथ्यात, निदान शल्य त्यजी जन ए ॥४६
एह लोक भय परलोक, अत्राण अगुप्ति कही ए।
आकस्मिक भय रोग, मरण भय सातमो सही ए ॥४७
संवेग निर्वेद निन्दा, गर्हा, उपशम भक्ति ए। वात्सल्य अनुकम्पा, अष्ट गुणें रुचि उत्पत्ति ए ॥४८
धर्म अधर्म तणा फल, प्रीति रुचि संवेग गुण ए। संसार-भोग एह अंग, वैराग्य निर्वेद पुण ए ॥४९
प्रमाद पणें करी काज, निन्दा करे ते आपणी ए।
देव गुरु शास्त्र भक्ति करि, उच्छाह भावना जोड़ी ए ॥५०
साधर्मी वाच्छल्ल, स्नेह धरे गो-वच्छ परि ए। दया करे परिणाम, अष्ट गुणें दृष्टि वरी ए ॥५१
अष्ट अंग संवेग, सम्यग्दृष्टी जीव लक्षण ए।
समकित तणां एह मूल, जिम तिम करो एह रक्षण ए ॥५२
समकित सर्व प्रधान, जिम तारा मांहें चन्द्रमा ए।
पसुअ मांहे जिम सिंव, देव मांहे जिम इन्द्र तो ए ॥५३
तरु मांहे जिम कल्प वृक्ष, रत्न मांहे जिम चिन्तामणी ए।
रस मांहे जिम अमृत, धर्म मांहे समकित रत्न ए ॥५४

वस्तु छन्द

धरो दर्शन धरो दर्शन, भवि जिन भावे करी।
मद शंका दोष वेगलो, मूढ अनायतननि जु कसमला,
अष्ट अंगे करी दृढ पणें, संवेग गुणें करी ऊजला।
अनुदिन जि जन अनुसरे, अंगे धरि अति उल्हास,
जिन सेवक पदमो कहे, ते लहे अविचल वास ॥५५

अथ ढाल सहीनी

निःशंकित पहिलो निर्मलो, निःकांक्षित दूजो भलो। निर्विचिकित्सा तीजो ऊजलो, सही ए ॥१
अमूढ अंग चौथो कही, उपगूहन पंचमो लही। संस्थितिकरण अंग छट्ठो सही ए ॥२
वात्सल्य अंग सातमो, प्रभावना अंग आठमो। आठ अंगे दर्शन अति वली ए, सही ए ॥३

निःशंकित गुण किणि पाल्यो, जिनशासन तें अजु आल्युं।
अंजना चोर कथा हवे सांभलो ए, सही ए ॥४

भरत क्षेत्र एह जाणीए, मगध देश मण आणी ए। राजगृही नयरी वखाणिइ ए, सही ए ॥५
जिनदत्त श्रेष्ठी नाम, सावे ते धर्म अर्थ काम। दान पूजा तप जप ते गुण ग्राम ए, सही ए ॥६
चतुर्दशी पोसह कही, समसान रह्यो काउसग्ग धरी। घर सावद्ययोग सव परिहरी ए, सही ए ॥७
आकाश देव युग आवीया, अमितप्रभ पहिलो भावीया। विद्युत्प्रभ दूजो सोहावी उ ए, सही ए ॥८
प्रथम सुर सम्यग्दृष्टी, दूजो मिथ्यादृष्टि। दोय मित्र पहिला नरभव तणा ए, सही ए ॥९
विचार करी ते मांहो माहे, धर्मतणी परीक्षा चाही। यमदग्नि पासे आवीया ए, सही ए ॥१०

चिडो चिडी रूप लीयो, तापस कान्ह मालो कीयो।
चिडी मूकी निज काज चिडो चालीयो ए, सही ए ॥११
चिडी कहे कही कहीये आवसो, न वि आवो तो सम करो।
आवूं नहीं तो कुतापस पापे लीजिए, सही ए ॥१२
तदि तापस मन कोपियो, कुच मालो करि लोपियो।
तव पंखी उड़ि आकाशे गया ए, सही ए ॥१३
क्षमा भ्रष्ट तापस देखी, कुमत धर्म तेणे उ वेखी।
चालो मित्र गुरु जोउं तुम तणां ए, सही ए ॥१४

देवे दीठो जिनदत्त श्रेष्ठी, ध्यावे निज मन परमेष्ठी। निःकम्प मेरु जिम, ऊभो रह्यो ए ,सही ए ॥१५
जैन देव ते इम कहे; सद्-गुरु वाणो तत्त जोऊं। जिन शासन श्रावक परीक्षा करो ए, सही ए ॥१६
दुद्धर उपसर्ग ते करे, देव माया विकृति धरे। वहुविधि विक्रिया भय देखविए, सही ए ॥१७
च्यार पहर कीयो उपसर्ग, निश्चल जाणो कायोत्सर्ग। परिषह सहतां प्रभात हुओ ए, सही ए ॥१८
तव देव मन रीझियो, जिनशासन धर्मे भीजीयो। प्रगट थई श्रेष्ठी पाये नमें ए, सही ए ॥१९

अमितप्रभ कहु कहु अम्हो, आकाशगामिनी ल्यो तम्हो।
विद्या वले अढ़ाई द्वीप जिन भेंटीए, सही ए ॥२०
विधि-सहित विद्या दीधी, वस्त्र आभरण देई भक्ति कीधी।
साधर्मी परशंसी ते सुर गया ए, सही ए ॥२१
श्रेष्ठी निज घर आवीयो, विद्या लाभें हर्ष पामीयो।
पूजा लेइ मेरु जिन जात्रा गयो ए, सही ए ॥२२
एक दिन श्रेष्ठी जात्रा जाई, सोमदत्त सेवक मन ध्याई।
विद्या मांगे श्रेष्ठी पासे रूवडी ए, सही ए ॥२३
हुआ वुझी मैं तम साथे, पूजा द्रव्य धरी निज हाथे।
तुम प्रसादे स्वामी जात्रा करूँ ए, सही ए ॥२४

तव श्रेष्ठी कृपावंत, विद्या उपदेश देइ संत । एक मना सांभल तूं सोमदत्त ए, सही ए ।।२५
कृष्ण चतुर्दशी रात्रें, वे उपवास करी पवित्र । गात्र स्मसान वडतरु पूर्व शाखि ए. सही ए ।।२६
दर्भ तणो शीको रुवड़ो अठोत्तर सौसरि जोडु । भूतली ऊर्ध्व मुखि खड्ग तीक्ष्ण ए, सही ए ।।२७
शीके वेसी निर्भयपणें, अपराजित मंत्र गुणी । एकेकी सर छेदे शीकातणी ए, सही ए ।।२८
जव मंत्र पूरण थाय, तव आकाश विद्या आय । मनवांछित काज करे घणुं ए, सही ए, ।।२९
श्रेष्ठि उपदेश सांभली, सोमदत्त पूगीडली । विद्या साधन ते लागो वुध वली ए, सही ए, ।।३०
मंत्र जपि एक सर कापी, खड्ग देखी मन भय व्यापी । संशय हवो तव श्रेष्ठि ने ए, सही ए ।।३१

शस्त्र ऊपर जो होसे पात, तो निश्चय होइ घात ।
इम जाणी ते चढ़े ऊतरे वली वली ए, सही ए ।।३२
अंजन चोर तिण अवसरे, आव्यो अंजनसुंदरि घरे ।
सन्मुख न वि दीठी ते कामिनी ए, सही ए ।।३३
चोर पूछे किम द्यामणी, गणिका कहे सुणों धणी ।
राणी तणों हार द्यो तम्हो आणी ए, सही ए ।।३४

राजा ते प्रजापाल, तस राणी कनकमाल । ते हार विना किसूं जीविए ए, सही ए ।।३५
अंजन चाल्यो अंजन वले, हार हर्यो ते छोर वले । अदृश्य रूप ते लेइ नीसर्यो ए सही ए ।।३६
हार तेजे उद्योत कीयो, कोटवाल वेगें लीयो । हार मूकी अंजन नीसरी गयो ए, सही ए ।।३७

सोमदत्त कन्हें आवीयो प्रौढ, किसूं आक्षेप करै छै मूढ ।
श्रेष्ठी सम्बन्ध तेणें सहुँ कह्यो ए, सही ए ।।३८

अलगो रहे ए हवुं कही, शीके वेसी ते सर ग्रही । एकवार ते सघली शर छेदी ए, सही ए ।।३९
श्रेष्ठी वयण करी प्रमाण, जव आवे भूपति मूं जाणि । तव आकाश देवें झेलीयो ए, सही ए ।।४०

निःशंक अंग प्रगट कर्यो, विमान वेसंता संचर्यो ।
जिहां श्रेष्णी छे तिहां जात्रा गयो ए, सही ए ।।४१

मेरु अकृत्रिम जिन भेटीया, पाप संकट वे छुटीया । चारण मुनि वंदा श्रेष्ठी पासे ए, सही ए ।।४२
तव श्रेष्ठी अचंभीयो, अंजन देखी मन क्षोभीयो । चोर सम्बन्ध कही थोभीयो ए, सही ए ।।४३
मुनिवर दीयो उपदेश, धर्म लीउं ते यति ईश । सीस नामी अंजन एम वीनवी ए, सही ए ।।४४
स्वामी तम्हो कृपा करो, भवसायरतें उतारो । संजम देओ मुझ देव दुर्लभ ए, सही ए ।।४५
अल्प आयु ते जाणीउ, आसन्नभव्य मन आणीउ । श्रेष्ठें अंजन गुण वखाणीयो ए, सही ए ।।४६
दीक्षा दीवी मुनिवर तणी, सह गुरु प्रशंसा करे घणी । तप जप संजम अंजन करी ए, सही ए ।।४७

ध्यान वले कर्म निर्जरी, केवल ज्ञान प्रगट करी ।
कैलाशगिरि आवी मुकति श्री वरी ए, सही ए ।।४८

धन्य धन्य मुनि अंजन, सिद्ध हवो करम भंजन । सुरे आवी निर्वाण पूजा करी ए, सही ए ।।४९

दोहा

निःशंकित अंग ऊजलो, पाल्यो अंजन चोर । श्रेष्ठी वयण निश्चय करी, परिहरि संशय घोर ।।१
निश्चय विणा दर्शण नहीं, निश्चय विणा कोई नही सिद्धि ।
निश्चय विणा शिव सुख नहीं, निश्चय विणा नहि वुद्धि ऋद्धि ।।२

सात विसन ते सेवतो, करतो पाप अनन्त । कर्महणी मुकते गयो, अंजन समकितवन्त ॥३
इम जाणी निश्चय करी, जिनवर-वचन प्रमाण । सुरनर सुख ते अनुसरी, अनुक्रमे लहे निर्वाण ॥४

भास वीनतीनो

उपराजी जिनधर्म, भोग वांछा नवी कीजिइ ए ।
संतोष धरी निजमंत्र, निःकांक्षित गुण लीजिइ ए ॥१
कुणे पाल्यो एह अंग, जिनशासन माहे ऊजलो ए ।
अनन्तमती सती नाम, तेह वृत्तान्त हवे सांभलो ए ॥२
अंगदेश मझार, चंपा नयरी छै भली ए । श्रीवर्द्धन तस राय, लक्ष्मी मती राणी निर्मली ए ॥३
प्रियदत्त श्रेष्ठी नाम, अंगवती नारी धणी ए । धर्म अर्थ साधि काम, देवागम गुरु भक्ति घणी ए ॥४
तस विहु कूखे जाणि, अनन्तमती पुत्री रूवड़ी ए ।
रूप सौभागनि खाणि, कनकतणी जे सीपड़ी ए ॥५
एक वार वनहँ मझार, धर्मकीर्ति गुरु आवीया ए ।
वन्दन चाल्यो श्रेष्ठि, निज परिवार सुहावीयो ए ॥६
वन्दे सद्गुरु श्रेष्ठी, धर्मकथा रस सांभली ए ।
नन्दीश्वर दिन अष्ट, शीलव्रत लीधो वली ए ॥७
अवसर तेणें श्रेष्ठी, निज पुत्री प्रति भासीउ ए ।
वेटी लेउ तमें शील, विनोद व्रत अपादीयो ए ॥८
वंदी सद्-गुरु पाय, ते सहु आव्या निज मन्दिरे ।
यौवन पामी अनुक्रमें, सयल लक्षण देखी सुंदरी ए ॥९
विवाह तणी सुणि वात, तात प्रतें वेटी कहे ए ।
तम्हो देवास्युं अम्हे व्रत, शीलवंती वर किम गुही ए ॥१०
वाप वोल्यो सुण वेटी, विनोद व्रत देवारीयो ए । अष्ट दिन पर्यन्त, इम कही लेवारीयो ए ॥११
वलतु कहे ते पुत्री, धर्मकाज किस्युं हांसु ए ।
मुझ नियम सीमा न कीध, वली वली कहु किसुं ए ॥१२
तव भाष्यो थयो साह, निश्चल मन वेटी तणुं ए ।
अविचारी करे जे काज, पश्चात्ताप होइ घणुं ए ॥१३
पापी करावे पाप, धर्मी नें धर्मरुचि ए । हासे लेवा सुं नेम, पुण्यतणो हवे संचय ए ॥१४
धन्य धन्य पुत्री मन्न, तात कहे रहो घरे ए । सखी संजन सहित, दान पूजा तप करे ए ॥१५
एक वार वनहि मझार, चैत्रमासे क्रीडा करै ए ।
हरखें हिंडोले हीलंत, निज सखी स्युं परिवरी ए ॥१६
तिण समय ते जाण, विजयार्ध दक्षिण श्रेणी ए ।
किन्नर नगर को ईस, कुंडल मंडित विद्या धणी ए ॥१७
सुकेशी तस नार, विमान वेसी विन्हे चालिया ए ।
शोभा जोइ भूपीठ, कन्या देखी मन हालिया ए ॥१८
काम जाग्यो मन माहे, ए कन्या विण जीववुं किस्युं ए ।
पाछो आव्यो मूको वर नारि, कन्या पासे आव्यो धसी ए ॥१९

कन्या हरी चाल्यो खग, जिम नागिण गरुड ग्रहिए ।
मनोरथ करे ते मूढ, कठिण कष्ट कन्या लहिए ॥२०
सुकेशी तत्काल, कंतकेडे वेग वली ए । नारी नहीं अ विश्वास, आवती दीठी ते कसमली ए ॥२१
नारी तणों देखी कोप, ते कन्या खगें तजी ए ।
प्राण लघवी प्रभाव, सन्नि सन्नि ते वन भजी ए ॥२२
रुदन करे अपार, एकली घोर अटवी मांहि ए । दुःख देखे ते वाल, क्रूर वनचर भय वहू ए ॥२३
तव आव्यो एक भील, कन्या लेइ निज घर गयो ए ।
देखी बालारूप, मोह-मयण विह्वल थयो ए ॥२४
भील कहे घणु नार, यौवन इन्द्रीफल भोगवो ए ।
हूँ भीम पल्लीनाथ, मुझ साथे सुख अनुभवो ए ॥२५
कन्या मन अविचल, भीम भाषा भेदे नहीं ए । उपसर्ग करे ते दुष्ट, रात्ति मरम वयण कहीं ए ॥२६
सती अ शील प्रभाव, वनदेवी आवी उचरि ए ।
रे पापी भील मूढ, सती अ संग तु किम करी ए ।।२७
हवे हूँ टालुं तुझ राजि, काज सहित प्राण हरुं ए ।
तव हुओ भील भयभीत, ते वाला दूरे करी ए ॥२८
पुष्प नामें सार्थवाह, ते कन्या आपी तस ए । देखी रूप विशाल, साह हवो काम वशी ए ॥२९
कन्या नें देखाडे लोभ, भार्या थाऊं मुझ घर तणीं ए ।
तूं मुझ तात समान, वलती कन्या इस भणी ए ॥३०
अविचल जाण्यो तस मन्न, साह अजोध्या नयरी गयो ए ।
कामसेना वेश्या गेह, कन्या आपी निश्चल थयो ए । ३१
वेश्या कहे सुणो वाल, यौवन भोग सुख अनुसरो ए ।
न वि भीजे तस मन्न, निश्चल जिम मेरु सिरो ए ॥३२
नगरस्वामी सिन्वराय, कन्या आपी वेश्या कहे ए ।
ए तुम्ह होसे पटदेवि, स्त्री लोभे भूप ग्रही ए ॥३३
रात्रि समये ते भूप, कामचेष्टा करे घणी ए ।
आ ले वस्त्र- आभरण, देवी थाउ मुझ पटतणी ए ॥३४
माने नहिं तस वोल, क्रोवे भूप उपसर्ग करी ए ।
सती अ गणे नवकार, परमेष्ठी पद मनि धरी ए ॥३५
सती अ पुण्य प्रभाव, नगर देवी सहाय कीयो ए ।
यष्टि मुष्टि देई प्रहार, राजा खेद-खिन्न कीयो ए ॥३६
देवी कहे भूप मूढ, अन्याय कर्मका मांडीयो ए ।
हवे हरुं तुम राज्य-काज सहित प्राण खंडुं ए ॥३७
तव थयो भूप भयभीत, कन्या घर थी मोकली ए ।
देवी स्युं करी क्षमितव्य, निज स्थानें गई एकली ए ॥३८
धन्य धन्य शील-प्रभाव, धन्य धन्य मन कन्या तणो ए ।
आसन कम्प्या देव देवी साहाय करयो घणु ए ॥३९

अनन्तमती तिणि वार, कर्मतणा फल चिन्तवी ए।
तव आर्यिका आवी एक, पद्मश्री नामें स्तवी ए ॥४०
वाला देखी गुणवन्त, आर्या पूछे मीठी भाष ए।
सकल कह्यो सम्वन्ध, साधर्मी जाणि विश्वास कीयो ए ॥४१
आर्यिका लेई ते वाल, तेठी आवी श्री जिन गेह ए।
साहाय करे सावर्मी, साँचो सन्त गुण सस्नेह ए ॥४२
साधर्मी घरे आहार, तप जप संजम आचरि ए।
विज्ञान विजन पाक, ते कन्या चतुराई करे ए ॥४३
वम्या अन्न समान, भोग-वांछा न वि करे ए।
सन्तोष धरि निज मन्न, आर्यिका पासे ते रहे ए ॥४४
तिणं समये प्रियदत्त, पुत्री-वियोगे विह्वल थयो ए।
दुःख विसामा काज, तीर्थजात्रा अजोध्या गयो ए ॥४५

ते अ नगर मझार, जिनदत्त सालो वसे ए। साह आव्यो तेह गेह, सजन-सन्मान दे तस ए ॥४६
पुत्री-विरह-सम्वन्ध, परस्परि ते जाणियो ए। बात करे सुख-दुःख, कर्म-विपाक वखाणियो ए ॥४७
प्रभात समय श्रेष्ठि, स्नान धौत वस्त्र पहिरिए।
अष्टप्रकारी लेई पूज, जिनमन्दिरने संचरिए ए ॥४८
पूजे जिनवर-पाय, सद्गुरु स्वामी वंदिया ए।
सांभली श्री जिनवाणि, धर्मध्याने आनंदिया ए ॥४९
जिनदत्त केरी नारि, कन्या तेठी प्रीते जड़ी ए।
अंगण पूराव्युं चौक, रसोई सन्धावी रूअड़ी ए ॥५०
साधरमी करी काज, कन्या निज स्थानक गई ए।
तव आव्यो प्रियदत्त, जोई मंडण सन्मुख थई ए ॥५१

स्वस्तिक कीधो जेण, तेतेडो चौसाल कए। विस्मय पाम्यो साह, तव अ बीते बालक ए ॥५२
जव दीठी ते वाल, साह नेत्र नीर वहे ए। हा हा तू मुझ धीह, मुझ विण तुं किहां रही ए ॥५३
वाप वेटी तिण वार, कंठ लागी रुदन करी ए।
सजन सहु परिवार, प्रतिवोध वाणी उचरी ए ॥५४
अहो अहो कर्म-विपाक, पापकर्में वियोग होइ ए। शुभकर्में संजोग, जन पंडित सदा कहि ए ॥५५
पिता आगल ते पुत्री-हरण वात सवल कही ए। पछे जीम्या सज्जन, कन्या सुख तें रह्यो ए ॥५६
तात कहे सुणो धीय, हवे आवो आपणे घर ए। वलतुं कहै ते वाल, घर सुख पूरे मुझ ए ॥५७
दीक्षा देवारो अम्ह तात, जो वांछो हित मुझ ए।
तात प्रशंसि धन्य मन्न, धन्य धन्य शील तुझ तणो ए ॥५८
क्षमी क्षमावी सजन, पदमसिरि आर्जिका पासे ए।
धरियो संजमभार, अनन्तमती ध्यान धरे ए ॥५९
समकित फले तेह, ज्ञान अभ्यास सदा करि ए। तीव्र करे वहु तप, जप ध्यान धर्म धरी ए ॥६०
जव जाण्यो क्षीण आय, समभावे संन्यास लीयो ए।
छेदि नारीनो लिंग, समाधिमरण तेणे कीयो ए ॥६१

सहस्रार बारमें स्वर्ग, महर्धिक देव ऊपजो ए।
सहज वस्त्र आभरण वैक्रियिक देह ते नीपज्यो ए ॥६२
कल्पवृक्ष विमान, देवी स्युं क्रीडा करि ए।जिनकेवली पूजे पाय, धर्मरुचि सदा धरि ए ॥६३

दोहा

विनोद शील नियम ग्रही, अनन्तमती सती नार।
स्वर्गतणा सुख अनुभवी, ते तरसी संसार ॥६४
निःकांक्षित अंग ऊजलो, पाले जे नरनार। स्वर्ग मोक्षसुख ते लहे, अन्त तिरे संसार ॥६५
सती-शिरोमणि सीता कही, द्रौपदी चन्दनवाल।
निःकांक्षित गुण आदरी, पाम्पा सुख गुण माल ॥६६
इम जाणिय दृढ़ मन करी, समकित पाले सार। जिनसेवक पदसो कहे, ते पामे भवपार ॥६७

अथ तृतीय अंग लिख्यते। ढाल भद्रबाहुनी

निर्विचिकित्सा पालो अंग, रोग देखी श्रावक यति संघ, सूग साधमी परिहरी ए ॥१
निर्विचिकित्सा वर्यो केणे अंग, तेह तणों हवे कहु प्रसंग, भूप उद्दायण कथा सुणो ए ॥२
भरतक्षेत्र मांहे कच्छ देश, रौरवनयर तणों नरेश, उद्दायण भूप तणों ए ॥३
प्रभावती नम्में तस राणी, पूजे श्रीजिन सद्गुरु वाणी, दान पूजा जप तप करी ए ॥४
एक वार सौधर्म स्वर्गनाथ, सभा पूरी बैठो देवसाथ, धर्मतणां गुण वर्णवे ए ॥५
निर्विचिकित्सा समकित अंग, उद्दायण पाले अभंग, रंग सदा जिनधर्म तणुं ए ॥६
इन्द्र प्रशंसा सुणी तव देव, विस्मय पाम्यो वासव देव, परीक्षा जोवानें चालीओ ए ॥७
वृद्ध मुनिवर तणुं रूप लीधो, गलित कोढ़ व्रण अंगतें कीधो, देह दुर्गन्ध माखी भमे ए ॥८
थर-थर कांपे मुनिवर-देह, मध्याह्न समय आव्यो राय-गेह, तिष्ठ तिष्ठ करी पड़िगाहिआ ए ॥९
आसन देय पखाले पाय, विधि-सहित आहार देई राय, प्रभावती भक्ति करें ए ॥१०
तव मुनि वम्यो आहार, राय-अंग ऊपर अपार, दुर्गन्ध अंग व्यापीयो ए ॥११
हा हा भूप कहे मुनिवृद्ध, अजाणपणें अन्न दीधो विरुद्ध, भूप निन्दा करे आपणो ए ॥१२
वली मुनि वमे बीजी वार, प्रभावती छांटी सविचार, अवर जन सहु दूरे गया ए ॥१३
सूग नवि आणीं राजा राणी, निर्मल प्रासुक लेय पाणी, मुनि अंग पखालियो ए ॥१४
तव देवें प्रगट रूप लीयो, राय-राणी स्तवन बहु कीयो, धन्य धन्य इन्द्रे प्रशंसिया ए ॥१५
देवे वस्त्र आभूषण आपो, समकित महिमा महीयल थापी. गुण स्तवी सुर घर गयो ए ॥१६
भूप राणी सुखें करे राज्य, सारे प्रजा तणूं बहु काज, न्याय विधि राज भोगवे ए ॥१७
धरम काज करता दिन जाय, निमित देखी वैराग्य मन ध्याय, निज पुत्र राज थापियो ए ॥१८
श्री वर्धमान जिनेश्वर पासें, दीक्षा लेइ ते शास्त्र अभ्यासे, ध्यान अध्ययन तप आचरि ए ॥१९
शुक्लध्याने घाती कर्मचूरी, केवलज्ञान ते वांछित पूरी, धर्म उपदेश देइ निर्मलो ए ॥२०
अंग अघाती कर्म क्षय कियो, साम्राज्य सिद्ध पद लियो, उद्दायण मुनि मुकतें गयो ए ॥२१
प्रभावती राणी तिणी वार, वैराग लीधो संयम भार, तप जप सूधो आचरि ए ॥२२
निर्मल समकित पाले चंग, तव वलें टाले स्त्री लिंग, मरण समाधि साधीयो ए ॥२३
ब्रह्म स्वर्गे ते उपज्यो देव, महर्धिक वैक्रियिक नीपज्यो, वस्त्राभरण ते लंकर्यो ए ॥२४
उद्दायण भूप पाम्या मोक्ष, प्रभावती राणी देव सौख्य, निर्विचिकित्सा अंग करी ए ॥२५

मुनिवर हुवा श्रीनन्दषेण, निर्विचिकित्सा अंग पाल्यो तेण, दशमें स्वर्गे ते देव हुओ ए ।।२६
पछी हुओ वसुदेव सुजाण, तेह कथा हरिवंशे जाण, अवर जीवें अंग पालियो ए ।।२७

चौथो अमूढ अंग प्यते

एह रहीयो इहां वृत्तान्त, अमूढ़ अंग कहुँ हवे सन्त, रेवती राणी कथा सुणो ए ।।२८
देव आगम गुरु परीक्षा कीजे, सगुण निर्गुण भेद लहीजे, मूर्खपणुं दूरे तजो ए ।।२९
विजयार्ध एह दक्षिण श्रेणी, मेघकूट नयर तणों धणी, चन्द्रप्रभ खेचरपती ए ।।३०
राजरिद्धि सुख भोगवे राय, अढ़ाई द्वीप मांहे जात्रा जाय, पूजे जिन केवली पद ए ।।३१
जात्रा करतो आव्यो दक्षिण देश मथुरा एह, शशिनामें सूरी भेटीआ ए ।।३२
धर्मसुणी उपज्यो वैराग, संगतणुं करि परित्याग, चन्द्रशेखर राज थापियो ए ।।३३
जात्रा काजे विद्या एक राखी, क्षुल्लक दीक्षा लीधी गुरु साखी, तप जप संजम आचरे ए ।।३४
ब्रह्म कहे सुणों, गुरु तम्हो, उत्तर मथुरा जाइ अम्हो, कहोनों कांई कहो छो किसुं ए ।।३५
गुरु कहे सुणो वच्छ विचक्षण, सुव्रत मुनि छै शुभ लक्षण, मुझ वन्दना कहियो तस ए ।।३६
मथुरातणों स्वामी छे वरुण, तस राणी रेवती शुभ चरण, धर्म वृद्धि कहियों तस ए ।।३७
ब्रह्म पूछी सद् गुरु त्रण वार, अवर कांई भविक है गुणधार, आज्ञा लेइ ब्रह्म संचर्यो ।।३८
तव मन चिंते ब्रह्मचारि, भव्यसेन भणे अंग इग्यारि, तेहनें कांइ कह्यो नहीं ए ।।३९
विस्मय पाम्यो ते मन माहे, तेह तणी हवे परीक्षा चाहे, कवण कारण छै तेह तणुं ए ।।४०
उत्तरमथुरा वनहि मझार, सुव्रत मुनि वंद्या भवतार, निज गुरु तणी वंदना कहीइ ए ।।४१
ब्रह्मनें धर्मवृद्धि तेणें दीधी, गुप्त गुरु प्रतिवंदना कीधी, सामाचारी जती तणी ए ।।४२
क्षुल्लक तणों वात्सल्य बहु कीयो, विनय सहित सन्मान ते दीयो, माहो माहे क्षेम प्रश्न करी ए ।।४३
भव्यसेन मुनिवर छे जिहां, ब्रह्मचारि आव्यो वली तिहां, नमोस्तु करी ऊभो रह्यो ए ।।४४
वलतो धर्मवृद्धि न वि दीधी, साधर्मी भणि भक्ति न वि कीधी, मिथ्या अहंकारे संचर्यो ए ।।४५
विद्या गर्व-भूधर ते चढ़ी उ, अभ्यन्तर अज्ञाने जडीउ, नडीयो मोह कर्म घणुं ए ।।४६
ते मुनि उपज्यो मिथ्या मान, न वि जाणें ते भेदनें ज्ञान, ज्ञान विना शुभ गुण नही ए ।।४७
प्रभात समय मल-मोचन जाय, विनय सहित ब्रह्म साथें, थाय, जलकुंडी निजकर ग्रही ए ।।४८
चन्द्रप्रभ विद्याप्रभाये, एकेन्द्री अंकुर सहावे, हरित कायमय पंथ कियो ए ।।४९
भव्यसेन अंकुरा वाहे, एकेन्द्री कह्या आगम माहे, मन चितवि पण रुचि नहीं ए ।।५०
ते अंकुरा ऊपर मुनि चाले, यत्न विना ब्रह्म दुख साले, पाप प्रमादे ऊपजे ए ।।५१
ब्रह्मचारी प्रपंच जव कीयो, कुण्डी जल सोसी तव लियो, दीनूं कमंडलु रीतो करी ए ।।५२
व्यांमि जई कुंडी मुनि जोई, जल विना शौच किम होई, मन मूकी पछे बोलीयो ए ।।५३
ब्रह्मचारी कहे भव्यसेन, मृतिका शौच करो तमे तेह, सर दाखी अलगो रह्यो ए ।।५४
सरोवर जाई तेणें लीधो, कृपाभाव मुनि नवि कीधो, विचार थकी ते वेगलो ए ।।५५
सुध वोध कुज्ञान ते थाइ, सूर्य तेज घूक नवि पाइ, तिम मिथ्या ते जीव दूसियो ।।५६
शुद्ध स्वाद सहजे जिम दूध, कटुकतुंवी थाइ असुद्ध, मिथ्या अज्ञान ते वासीयो ए ।।५७
अभव्यसेन नामें तस दीयो, लोक मांहे प्रगट गुण कीयो, ब्रह्मचारी निजस्थानक गयो ए ।।५८
एक दिन पुर पूरव पगार, ब्रह्मा रूप कीया मुख चार कमलासन कंठे सूत्र धरे ए ।।५९
कोपीन करि कमंडल पात्र, ब्रह्म वेद भणें बहु छात्र, गात्ररूप लोक-रंजक ए ।।६०

राजा आदि पुरलोक, आव्या, अभव्यसेन आदें मुनि आव्यां, ब्रह्मा देखी मन रीझिया ए ॥६१
रेवती राणी आगल ते कहीयो, ब्रह्मा प्रत्यक्ष पिते रहीयो, प्रेरी पणं पण गई नहीं ए ॥६२
दूजे दिन पोलितें दक्षिण, महेशरूप कीयो रे विलक्षण, बैल बैठो गौरी साथे ए ॥६३
वरुण आदि आव्या पुरि-जन्न, चले नहीं रेवती मन्न, महेश देखी लोक मोहिया ए ॥६४
तीजे दिन पुर पश्चिम द्वार, विष्णु-गोपी सोलसहू कुमार, गदा शंख-चक्र धरी ए ॥६५
विष्णु वन्दन बहु लोक ते जाइ, विस्मय पामी आव्यो ते राउ, कृष्ण मायाए लोक रंजीया ए ॥६६
मूढलोक अचम्भो ते पाम्यां, घरे रही ते रेवती रामा, भामें पड़ा भोला लोक ए ॥६७
दिन चौथे उत्तर दिस जाण, समोसरण जिन करे बखाण, बार सभा पुरे दीसए ॥६८
लोक सहित भूपे जई वंद्या, अभव्यसेन मुनि आनंद्या, जिन देखी लोक चमकीया ए ॥६९
रेवती रानी चिन्ते तिण वार, जिन चोवीस गया मोक्ष दुवार, ब्रह्मारूप ते को छे नहीं ए ॥७०
होइ गया ते रुद्र इग्यार, नव केशव ते गति अनुसार, जिन आगम माहे सांभल्यो ए ॥७१
विद्याधर अथवा कोइ देव, कपट मायाए करावे सेव, देव दानव वैक्रिय करी ए ॥७२
चन्द्रप्रभ माया सहू छांडी, वृद्ध ब्रह्म तणुं रूप मांडो, कांपि काया रोग घणों ए ॥७३
मध्याह्न समय तस आंगण आवी, भूमि पड्यो ते मूर्च्छा आवी, देखी रेवती हाहाकार करे ॥७४
शीतल जल घाली सीस नवाय, सावधानी करी ब्रह्म काय, प्रासुक आहार तेणें दीयो ए ॥७५
आहार लेय वमे ब्रह्मचार, रेवती सुश्रूषा करे तिणी वार, अंग पखालि निशंकपणे ए ॥७६
तब क्षुल्लक प्रगटरूप लीयो, रेवती गुण प्रशंसा कीयो, धन धन तुम अमूढगुण ए ॥७७
निज गुरुनी ते धरमवृद्धि दीवी, तुझ नामें मे जात्रा कीवी, गुण स्तवी ब्रह्मचार गयो ए ॥७८
धन धन राणी अंग अमूढ, धन धन महिमा जस प्रौढ; अमूढव्रतें मन चल्यो नहीं ए ॥७९
वरुणराय तस रेवती राणी, जिन पूजे सुणें सद्-गुरुवाणी, राज रिद्धि सुख अनुभवी ए ॥८०
वरुणराय पाम्यो वैराग्य, दीक्षा लीवी करी संग त्याग, वसुकीर्त्ति राजा थापीयो ए ॥८१
रेवती राणी तप जप संजम सुद्धो पाले, मरण समाधि आप संभाले, माहेन्द्र स्वर्गे ते देव हुओ ए ॥८२
रेवती राणी संजम तप वलीउ, सम दम, तप बहु तेणे कीयो राग रोष मद परिहरो ए ॥८३
समकित बलें टालें स्त्रीलिंग, ब्रह्म स्वर्गे हुओ देव उत्तुंग, महर्द्धिक संपदा लंकर्यो ए ॥८४
मेरें नंदीश्वर जात्रा जाय, जिनकेवली सदा पूजे पाय, धरम ध्याने सुखे रहे ए ॥८५

वस्तु छन्द

अमूढ अंग धरो, अमूढ अंग धरो
भवियण इणि पर देव तत्त्व गुरु परखीय मूर्ख पणूं तजि अति निर्भर,
रेवती स्त्रीलिंग छेदीने, पंचमे स्वर्ग हुओ देव मनोहर।
अवर जीव बहु आदरो अमूढ़ अंग गुण धार, जिन-सेवक पदमो कहे ले पामे भव पार ॥८६

उपगूहन अंग। ढाल हेलिनो

उपगूहन पालो अंग, दोष अछादु व्रती तणुं हेलि। कर्म-उदय होय दोष, न कीजे तेह घणुं हेलि ॥१
ढाकी पर अवगुण गुण वालो, पर उजला हेलि।
कुणें पाल्यो एह अंग, तेह कथा हवे संभलो हेलि ॥२

सोरठ देश मझार, पाटलीपुर नयर धणी हेलि ।
जसोधर तस राय, सुषमा राणी तेह वणी हेलि ॥३

तस बहु कूखे पुत्र, सुवीर नामें उपज्यो हेलि । कर्म तणें प्रभाव सप्त विसन ते नीपज्यो हेलि ॥४

उत्तम कुल तस जात, मात तात तस रूवडा हेलि ।
कहिनें न दीजे दोष, पाप कर्मे जीव बहु नडा हेलि ॥५
विसन वाहायो रे कुमारं, राजरिद्धि मूकी नीसर्यो हेलि ।
सुवीर हुओ ते चोर अवर चोरें बहु परिवर्यो हेलि ॥६

गौडदेश इह जाण, ताम्रलिप्त नयरी धणी हेलि ।
जिनेन्द्रभक्त नामे श्रेष्ठि, देव शास्त्र गुरु भक्ति घणी हेलि ॥७
सात क्षेत्र वेवे वित्त, जिन-भवन जिन-विम्व तणां हेलि ।
चतुर्विधि संघनें दान, ज्ञान विस्तारे जिन भण्यां हेलि ॥८
जिन गेह सातमी भूमि, प्रासाद कीयो श्री जिन तणो हेलि ।
श्री पार्श्व जिन प्रतिमा सुण्यो जस ते घणो हेलि ॥९

प्रतिमा ऊपर त्रण छत्र, दंड वैडूर्य रत्न धर्यो हेलि ।
अमोलिक मणि तेजवन्त, संत सदा रक्षा करे हेलि ॥१०
तेह ज रत्न प्रभाव, पर देशें जस विस्तर्यो हेलि ।
सांचो जे गुणवन्त, संत महिमा ले प्रसरे हेलि ॥११
सुवीर सुणी ते वात, निज साथी प्रति कहे ते हेलि ।
जेह ल्यावे ए रत्न, रत्न सहित जस विस्तरे हेलि ॥१२

सूर्पक कहे चोर, रत्न आणुं इन्द्र सिर तणुं हेलि ।
एह मणि कुण वात, क्षात वोलुं छै किसुं घणुं हेलि ॥१३
आदेश लेय ते चोर, गूढ ब्रह्म वेष कीयो हेलि ।
कोपीन धरी ऊ खंड वस्त्र, जल पात्र निजकर लीयो हेलि ॥१४
तप करे बहु कष्ट, क्षीण अंग कीयो घणुं हेलि ।
सम दम वहु धरि नेम, जस विस्तार्यो तेणें आपणों हेलि ॥१५

देश नयर द्रोण ग्राम, विहार करतो ते आवीयो हेलि ।
ताम्रलिप्त पुर पास, गुण श्रेष्ठि भावीयो हेलि ॥१६
महिमा करो तस प्रौढ़, साह निज घर आणीयो हेलि ।
जिहाँ छै जिन रत्न विम्ब, जात्रा करी गुण वखाणीयो हेलि ॥१७
रत्न देखी ते अमोल, ब्रह्म संतोष ते पामीयो हेलि ।
जिन सोनी देखे हेम, हृदय हरषे तेम पामीयो हेलि ॥१८

धूरत जीव बहु चिह्न, डंभपणो कोई न वि लहे हेलि ।
गुणी जाणें गुणवंत, साधर्मी भक्ति श्रेष्ठी वहे हेलि ॥१९
स्वामी रहो मुझ गेह, यत्न करो प्रतिमा तणुं हेलि ।
वाल इच्छा विण ब्रह्म, कूड करे छल जोइ घणुं हेलि ॥२०

एक दिवस ते श्रेष्ठि, व्यापार काजि ते संचर्यो हेलि ।
निज वनि कीयो प्रस्थान, सेवक जिन बहु परिवर्यो हेलि ॥२१
व्यापार तणें ते काज, घरि जन सहु व्यग्र देखीयो हेलि ।
मध्य रात्रें ब्रह्मचार, रत्न हरण समय पेखीयो हेलि ॥२२
अमोलिक लेई रत्न, सन्नि-सन्नि ब्रह्म चालीयो हेलि ।
तेज देखि कोट वाल, चोर जाणी ते झालीयो हेलि ॥२३
नीसरी न सक्यो ते दुष्ट श्रेष्ठि पासे ते आवीयो हेलि ।
रक्ष-रक्ष तूं नाथ, हाथ जोड़ी शरण भावीयो हेलि ॥२४
तव वोल्यां ते साह, कोटवाल तम्हें सांभलो हेलि ।
तम्हें कीउं अपराध, साधु संताप्यो अह्म तणो हेलि ॥२५
हुं जाऊं छुं व्यापार, सार रत्न अण्याव्यो अह्मो हेलि ।
मुझ तणुं सद्गुरु कांई, संताप्यो घणो तम्हें हेलि ॥२६
कोटवाल कहे सुणो देव, अम्हें तो गुरु जाण्यों नहीं हेलि ।
क्षमा करो अम्ह साथ, इम कही ते गयो सही हेलि ॥२७
निज रत्न लेइ साह, ब्रह्म एकान्त तिणें तेडीयो हेलि ।
कवण करम तें जोड़ीयों रे-रे पापी दुष्ट, हेलि ॥२८
तं अज्ञानी दुष्ट कपट करी मुझ वंचीयो हेलि । ब्रह्मचारी लेय रूप, पाप करम तें संचीयो हेलि ॥२९
पामी जिन सासन्न, दुर्जन ने माया करे हेलि ।
ते वाहि पर आप, पाप भारें भव किम तरे हेलि ॥३०
निर्भ्रान्ति कीयो ते चोरि, जिन शासन थी निकालियो हेलि ।
वाहा अ आच्छादी दोष, उपगूहन अंग साह पालियो हेलि ॥३१
जिनेन्द्र भक्त शुभ साह, उच्छाह जिन शासन करी हेलि ।
ते पाम्यो शुभ स्थान, उपगूहन अंग धर्यो हेलि ॥३२
इम जाणि भव्य जीव, दोप म बोलो पर तणों हेलि ।
ढाकी पर-अवगुण, गुण ग्रहो ते पर गुण घणों हेलि ॥३३

अथ स्थितिकरण अंग

एक कथा रही इह, अवर वृत्तान्त हवे कहुँ हेलि ।
संस्थितिकरण जे अंग, श्री जिनशासनमें कह्यो हेलि ॥३४
सागरी अणगारी, धर्मथकी चलतो देखी हेलि ।
जिम किम रहे निज ठाम, स्थितिकरण ते गुण देखी हेलि ॥३५
मगध देश मझार, राजग्रही नयरी भली हेलि ।
श्रेणिकनामें भूपाल, चेलणा राणी महासती हेलि ॥३६
धर्म अर्थ वली काम, त्रण पदारथ साधक हेलि ।
पाले समकित सार, जिन शासन आराधक हेलि ॥३७
तस विहु जायो पुत्र, वारिषेण नामें रूवडुं हेलि ।
रूप कला गुणवन्त, संत सदाचार नें भलो हेलि ॥३८

चौदसि करी उपवास, पोसह लेई ते वन गयो हेलि ।
रहियो कायोत्सर्ग धर्म ध्याने निश्चल मन रह्यो हेलि ॥३९
तिण समय एक साह, वसन्त क्रीडा करवा आवीयो हेलि ।
श्रीकीर्ति तस नारि, तेह कंठे हार सोहावीयो हेलि ॥४०
मगधसुन्दरि वेश्या हार, ते देखी मन क्षोभीयो हेलि ।
घर आवी ते नारि, विद्यू तस्कर ते लोभीयो हेलि ॥४१
मुझ तणों जोउ कंत, तो हार आणीनें मुझ देओ हेलि ।
सर्वकला ते निपुण, हार लेवा ते नीकल्यो हेलि ॥४२
परपंच करी हर्यो हार, नयर मांहे लेई नीसर्यो हेलि ।
तव दीठो कोटवाल, हार तेज ते विसार्यो हेलि ॥४३
तव नाठो ते चोर, तलरक्षक केडे गयो हेलि ।
जिहा छै श्री वारिषेण, हार मूकी तिहां अदृश्य थयो हेलि ॥४४
कोटवाल तिणिवार, पद-आगलि हार देखीयो हेलि ।
विस्मय पाम्या घणुं तेत, वारिषेण कुमर पेखीयो हेलि ॥४५
राय-आगल कही वात, वारिषेण तुम्ह नन्दन हेलि ।
राते हरी लयो हार, कायोत्सर्गे रहिउ जइ वन हेलि ॥४६
तव कोप्यो भूपाल, विचार न कीयो दुर्मति हेलि ।
कुमार-मारिवा काज, मातंग मोकल्या भूपति हेलि ॥४७
ते आव्या कुमरनें पास, खडग घात कंठे भेदीयो हेलि ।
कुमर-पुण्य-प्रभाव, पुष्पमाल खडग कीयो हेलि ॥४८
तव हूओ जय जयकार, सुर-असुर पुष्पवृष्टि करे हेलि ।
वाजे दुंदुभि-नाद, साधु तणी महिमा हुई हेलि ॥४९
सांचो पुण्य प्रभाव, समुद्र ते गोष्पद थाइ हेलि ।
अग्नि जल, विष अमृत, शत्रु मित्र सम थाइ हेलि ॥५०
राजा सुणी तव वात, परिवार-सहित ते आवीयो हेलि ।
प्रशंसा करे घणुं भूप, धन धन्य तुम्ह गुण भावीयो हेलि ॥४१
धन्य धन्य तुझ मन्न, पुण्य प्रभाव देवे कीयो हेलि ।
विरासी थो हुं अ मूढ, विचार विना मिं दंड दीयो हेलि ॥५२
जे जे मूढा जीव, काज विमासी करे नहीं हेलि ।
अर्थ हानि पश्चात्ताप, अपजस ते पामे वहु हेलि ॥५३
राय दीयो अभयदान, तव ते चोर प्रकट थयो हेलि ।
स्वामी हर्यो ए में हार, इहां मूकी हुं अदृश्य थयो हेलि ॥५४
तव ते हूओ परभात, भूप कहे कुमर सुणो हेलि ।
हवे आवो निज गेह, राज-सुख भोगवो घणों हेलि ॥५५
तव बोल्यो ते कुमार, राज सुख मुझ छे घणुं हेलि ।
अहार लेऊं कर-पात्र, दीक्षा-सहित में नियमु हेलि ॥५६

सहुज क्षमावी स्वजन्न, सुरदेव गुरु वंदिया हेलि ।
छांडी परिग्रह भार, संजम लेइ आनंदिया हेलि ॥५७
वारिषेण हुआ मुनीश, तप जप करे ते ऊजलो हेलि ।
ध्यान अध्ययन अभ्यास, ग्रास प्रासुक ले निर्मलो हेलि ॥५८
पलासकूट एह ग्राम, श्रेणिक मंत्री अग्निमित्र हेलि ।
तेह पुत्र पुष्पडाल, सोमिल्ला नारी तणों पती हेलि ॥५९
वारिषेण एक वार, आव्यो पुष्पडाल घरे हेलि ।
प्रासुक दीयो तेणें आहार, सोल गुण प्रकट करि हेलि ॥६०
मुनि वोलावा ते जाय, वालमित्र मुनिवर केडे हेलि ।
जल-कुण्डी लेइ हाथ, नगर वाहर चाले जिम हेलि ॥६१
सरोवर देखाडे मित्र, आगे क्रीडा करता इहां हेलि ।
वली देखाडे अंव वृक्ष, सुख रमता आपणें इहां हेलि ॥६२
पाछो वलवा काज, भपड्यो मनोरथ करे हेलि ।
पुष्पडाल ते विप्र, सोमिल्ला नारी सूं स्नेह धरे हेलि ॥६३
मुनि चाले समभाव, न वि तेडि न वि रहो करे हेलि ।
आव्या निज गुरु पासि, नमोस्तु करी आगलि रहे हेलि ॥६४
परसंस्यो ते पुष्पडाल, वाल मित्र गुण स्नेह धरे हेलि ।
दीक्षा देवारी गुरुपासि, उल्हास विना लाजि करी हेलि ॥६५
लाज काजि भय भाव धरे, धर्म काज कीजे सदा हेलि ।
पुष्पडाल तिणि वार, भार संजम लीयो हेलि ॥६६
तप जप करे मुनीश, ध्यान ज्ञान-अभ्यास करे हेलि ।
द्रव्य दीक्षा पाले चंग, अन्तरंग सोमिल्ला साथे धरे हेलि ॥६७
वार वरस पूरा होइ, वारिषेण गुरु वीनव्या हेलि ।
सद्गुरु आज्ञा दीध, तीर्थ जात्रा करते परठव्या हेलि ॥६८
वारिषेण पुष्पडाल, दोय मुनि विहार कर्म करे हेलि ।
आव्या समवसरण श्रीवीर, वंद्या भाव धरी हेलि ॥६९
धन धन्य तुम जिन स्वामी, काम वालापणें ते जीतियो हेलि ।
टाली करम सवल, केवल ज्ञानें गुण देखीयो हेलि ॥७०
स्तवी वंदी वर्धमान, पुण्य उपार्जी वारिषेण हेलि ॥
वैठा मुनिवर कोष्ठ, धरम सुणें तत्क्षण हेलि ॥७१
इन्द्र-पूजित पद-पद्म, गन्धर्व देव स्तवे घणुं हेलि ।
गीत नृत्य वाजित्र, सराग शब्द मुनि सुण्यां हेलि ॥७२
तव चिंते पुष्पडाल, वाला-विरह दुःख उपनों हेलि ।
त्यजवा संजम भार, विकार मुनि मनि नीपनों हेलि ॥७३
विचक्षण वारिषेण, निज मित्र मन जाणीयो हेलि ।
ल्याव्यो नयर मझार, चेलणा राणी घरि आणीयो हेलि ॥७४

आवता देखी मुनि अकाल, चतुर चेलणा परीक्षा करे हेलि ।
वीतराग सराग, आसन, मुनि नें धर्या हेलि ॥७५
वैरागें आसन मुनि वैठा, चेलणा आयी नमोस्तु करे हेलि ।
गुरु देइ धर्म वृद्धि, वारिषेण वली उच्चरे हेलि ॥७६
चेलणा सुणों मुझ वात, अन्तःपुर आणों मुझ तणों हेलि ।
धरीय सयल सिणगार, नारि बत्रीसे रूप घणों हेलि ॥७७
आवी ते सहु वाल, प्रणाम करी आगलि रही हेलि ।
देखाडी पुष्पडाल, विशाल वाणी गुरु कहे हेलि ॥७८
मित्र सुणो मुझ वात, युवराज तम्हें भोगवो हेलि ।
सहित सकल परिवार, सार सौख्य तमें जोगवो हेलि ॥७९
तव लाज्यो पुष्पडाल, एह वी रिद्धि गुरु परिहरी हेलि ।
अपछर-सरिखी एह वी नारि, सोय संपदा न वि अनुसरी हेलि ॥८०
अल्प रिद्धि मुझ होइ, एक नारी नेत्रकाणी हेलि ।
तेह साथे हूँ धरु मोह, धिग ते रागी प्राणीयो हेलि ॥८१
हूँ अज्ञानी मूढ, प्रौढ़ वाला स्नेह जडो ले हेलि ।
दुःख देखे अपार, झूरि-झूरि घणूं रडोले हेलि ॥८२
तब ते कहे पुष्पडाल, तू धन धन्य गुरु निर्मलो हेलि ।
वार वरस में कीयो कष्ट, शल्य-सहित तप कसमलूं हेलि ॥८३
तव गुरु कहे सुणो वच्छ, दुःख जणित-मोह भजू हेलि ।
करम तणें विपाक, भाव विषम जीव ऊपजे हेलि ॥८४
जिन आगम अनुसार, प्रायश्चित्त गुरु आपीयो हेलि ।
विनय भक्ति-सहित व्रत शुद्धि मन थापीयो हेलि ॥८५
आवी वनहि मझार, तप जप करे ते निर्मलो हेलि ।
संस्थितिकरण अंगसार, वारिपेण कीउ उज्जलो हेलि ॥८६

दोहा

पुष्पडाल व्रत थापिओ, वारिपेण मुनिराय । धर्म-स्थितिकरण तेणें की धन्य दे गुणराय ॥१
नागश्री नारी निर्मली, प्रति बोधी निज कंत । व्रत स्थितिकरण तिणे कीयो, पाल्यो धर्म महंत ॥२
तेह कथा तुमें जाणज्यो, जंबु कुमार चरित्र । भवदेव भावदेव तणी, विस्तार-सहित पवित्र ॥३
धर्म स्थितिकरण जेणें कियों, साहाय करी गुण धार ।
सुर नर सुख ते भोगवे, ते पाम्या भव-पार ॥४

अथ वात्सल्य अंग । अथ ढाल

वाच्छल्ल अंग हवे कहीइ, साधर्मी तणों विनय वहीइ, लहीइ शासन धर्म ॥१
जती व्रती साधर्मी जेह, तेह साथे धरो शुभ स्नेह, जिम प्रीति गोवच्छ तेह ॥२
साधर्मी सूं म करो रोस, कहीनें न वि दीजे दोस, संतोप धरो सहु साथे ॥३
वाच्छल्ल अंग केणि पाल्यो जिनशासन माहे आल्यो, विष्णु वृत्तान्त सांभल्यो ॥४

भरत क्षेत्र मझार अवन्ती देश, उज्जैणी पुरी श्री ब्रह्म नरेश, श्रीमती रानी तणु ईशा ॥५
वलि बृहस्पति नाम प्रधान, प्रल्हाद, नमुचि अभिधान, ए चार मंत्री राजान ॥६
राजा छै जिनधर्मी सार, मिथ्यादृष्टि मंत्री गमार, सर्प व्याघ्र वदन जिम फार ॥७
नगर तणां उद्यान मंझार, आव्या अकम्पन गुणधार, सात सै मुनि परिवार ॥८
सहि गुरु कहे ते ज्ञान भण्डार, संघाष्टक सहु सुणो भवतार, मौनि रहिज्यो इणि वार ॥९
कवण साथे बोलो जे सार, तो होसे नही संघार, गुरु आज्ञा मुनि धार ॥१०
गुरु-आज्ञा मानें नहीं जेह, कुत्सित शिष्य जाणों तमें तेह, जनक पीड़ा कुमित्र ॥११
नयर जन गुरु वंदन जाइ, देखी पूछे मंत्री राइ, कवण काजे पुर जन्न ॥१२
वलतुं बोले मंत्री ते वाणि, स्वामीने गुरु आव्या जाणि, निर्ग्रन्थ गुरु गुण खानि ॥१३
तव राजाने आपनों भाव, गुरु वंदूं भव-सायर नाव, सजन सहित भूप चाल्यो ॥१४
केता रहीया ऊभा लेइ ध्यान, केता बैठा मन शुभ स्थान, निश्चल मेरु-समान ॥१५
गुरु देखी हरष्यो भूपाल, प्रत्येक प्रत्येक वंद्या गुणमाल, आसीस न कही तिणि वार ॥१६
वंदी स्तवी जाइ तिणी वार, तव ते मंत्री करे अहंकार, जाणे मुनि नहि कांई विचार ॥१७

आवतो साम्हों दीठो मुनि ऐक, मंत्री न जाणें कांइ विवेक, उदर पूरी आव्यो विशेष ॥१८
तव मुनि बोल्यो स्याद्वाद, वाद करीओ तास्यों वाद, मंत्री पाम्या विषवाद ॥१९
मुनि आवी गुरु वंद्या जैवन्त, वाद तणुं कहियो वृत्तान्त, कडु न कीयो वत्सल्लसंभ ॥२०
जइ रहो तमें वादनें ठाम, तो टले उपसर्ग उद्दाम, सयल मुनि गुणग्राम ॥२१
श्रुतसागर तव पाछो जाय, वाद स्थाने रहीं निश्चल थाय, मेरु समी निज काय ॥२२
तव आव्या रात्रें परधान, मिथ्यादृष्टि ते अज्ञान, मूढ धरे बहु मान ॥२३
ऊभो रहियो ते मुनिवर देखी, क्रोध धरे ते अवरउ वेषी, तीखी खडग तणी धार ॥२४
मुनि मारेवा मंत्री चार, खडग घात दीया एकी वार, मुनि कंठे दुःखकार ॥२५
मुनिवर स्वामी पुण्य-प्रभावे, आसन कंपे पुर देव ते आवे, सार्या काज गुण भावे ॥२६
ऊर्ध्व हस्त खडग मंत्री थंम्या, प्रभात समय देखी लोक अचंम्या, दुर्वचने मंत्री क्षोभ्या ॥२७

समंघ सुणि आव्यो तिहां राय, मंत्री देखि कोप तसयाम, प्रणमी रया मुनि पाय ॥२८
भूप कहे मंत्री तमों दुष्ट, कांइ अपराध कीयो कनिष्ट, हवे करूं निज राज भ्रष्ट ॥२९
देव खमी मुकाव्या मंत्री, अधम विप्र मारे किम क्षत्री, शत्रु पणें कृपा ऊपजी ॥३०
सांचा नर जे होइ साध, ते क्षमें परन्तणु अपराध, केहने करे नहीं बाध ॥३१
अग्नि दहन्ते अगर हरिचन्दन, सुगन्धवास करे मन नन्दन, तिम सज्जन सहंतो वेदन ॥३२
इम विधि पुरी बैठा गुणधार, सुर नर वंदि करे जयकार, धर्म वृद्धि कही भवतार ॥३३
भूपे मंत्री दंड बहु दीयो, निर्भ्रंछन विडंबन कीयो, देश छेह करी घन लियो ॥३४
तुरत पाप लागो परवान, राजभ्रष्ट थया अपमान, पाम्या दुःख निधान ॥३५
मुनिवर स्वामी क्षमा भंडार, परीषह जीती सोहता संघ मझार, घर गया जन परिवार ॥३६
कुरुजांगल नामे शुभ देश, हस्तिनगर महापद्म नरेश, लक्ष्मीमती नारी जीवेश ॥३७
पुत्र दोय हुआ पद्म विष्णु नाम, रूप कला यौवन गुणग्राम, अनुभवे सुख उद्दाम ॥३८
महापद्म पाम्यो वैराग, पद्म राज थापी कर्यो संग त्याग, सांचो संत शिव दाग ॥३९
वन जाय वंद्या श्रुत मुनिसागर, दीक्षा लीधी महिमा आगर, सहित विष्णु कुमार ॥४०

गजपुर आव्या ते अपराधी, मंत्री पदम सेवा आराधी, परधान पदवी तिणें साधी ।।४१
पद्म भूप सभा एक वार, झांख्यु देखी पूछे मंत्री चार, कवण चिंता मन अपार ।।४२
भूप कहे सुणो परधान, चिंता कारण दुख निदान, वैरी धरे एक मान ।।४३
कुम्भ नयर सिंहरथ भूपाल, गढ़ तणु बल पामी विकराल, मानें नहीं आज्ञा विशाल ।।४४
आदेश लेय चाल्या परधान,हय गय रथ पायक संधान, परपंचे गया अरि स्थान ।।४५
बुद्धि वलें वैरी जीति आव्या, सिंहरथ आणि आण मनाव्या, पद्म मनें मंत्री भाव्या ।।४६
पद्म भूप कहे हवे हूं तुष्ट, मंत्रो मांगो मन अभीष्ट, वलि कहे वलतु विशिष्ट ।।४७
स्वामी वर भंडार ते थापो, ज्यांरे मांगू त्यारे मुझ आपो, इम कही बोल जस व्यापो ।।४८
हस्तिनागनयर तणा तेणे वन्न, संघ सु आव्या सूरि अकंपन्न, जाणि क्षोम्यो मंत्री मन्न ।।४९
मुझ तणा छै रिपुनी एह, मान भंग अम्ह कीधो जेह, हवे दुःख देन बहु तेह ।।५०
वर मांग्यो आवि भूप पासे, सात्त दिन रहो नारी वासे, राज देय सारो मुझ काजे ।।५१
पद्म आप्यो वरदान, राज करे ते वलि परधान, राणीवासे रहे राजान ।।५२
वलि मंत्री उपज्यो कोप, मुनि तणों हवे करुं हु लोप, ऊपर कीयो मंडप रोप ।।५३
मुनि पाषल कीधी वहुवाडि, चरम रोम घाल्या घणा हाड, कलेवर कीधी तस आड ।।५४
मुनि मारिवा तणी ते काज, नरमेध मार्यो तिणें राज, वैरीतणों करे काज ।।५५
अग्नि धूम आकाशें व्याप्यो, यती वर निश्चल काउसग्ग थाप्यो, जिन ध्यान मन व्याप्यो ।।५६
अनशन लीधी दोइ प्रकार, जो जीवसुं तो लेसुं आहार, न हि तो प्राण परिहार ।।५७
तिणि अवसरें मथुरा नयर, सागरचन्द्र छे ते मुनिवर, तिहां आव्या वसति दुआर ।।५८
कंपतो देखी श्रवण नक्षत्रे, निमित्त जोइ ते अवधि नेत्रे, खेद करे मध्य रात्रे ।।५९
तब पूछे ते ब्रह्म पुष्पदंत, खेद किस्युं करो भगवन्त, गुरु कहे सुणो वच्छ तुरन्त ।।६०
हस्तिनाग नयर उद्यान, सात सै मुनिवर छै गुणभान, उपसर्ग करे वलि परधान ।।६१
कवण परें उपसर्ग ति जाय, ते स्वामी मुझ करो उपाय, विद्यावल मुझ थाय ।।६२
गुरु कहे गिरि धरणीभूषण, तिहां मुनि रह्यो विष्णु महन्त, विक्रिया रिद्धि शुभ लक्षण ।।६३
तव वेगे चाल्यो ब्रह्मचार, वन जाय वंद्या विष्णुकुमार, भेद कह्यो मुनि संघार ।।६४
उत्पन्नी न जाणें वैक्रिय रिद्धो विष्णु मुनि परीक्षा तस कीधी, कर पूरी हुए मन शुद्धी ।।६४
राज प्रतें चाल्यो विष्णु कुमार, रात्त समय आव्या घर द्वार पद्में कीधो नमस्कार ।।६६
विष्णु कहे पद्म तूं परम, कांइ अपराध माड्यो नीच करम, न जाणों स्वामी हु मर्म ।।६७
पद्म भूप कहे सुनो मुझ वाणी, वरदान आप्यो में अजाणी, हवे कसू करूं तुम वाणी ।।६८
तव विष्णु विप्रवेष लीयो, वैक्रिय वामन रूप ते कीयो, आवी आसीस बलिनें दीयो ।।६९
वलि राज वोलै तस वाच, जे मांगो ते आपु द्विज राज, मन वांछित करो सांच ।।७०
वामन कहे सुणो भूप तुम्हो, त्रण कदम भूमि मांगूं अम्हो, अवर न जांचूं अम्हो ।।७१
अवर हंसि बोल्यो तिन वार, एहवो स्युं जांच्यो वृममध गमार मांगो अर्थ भंडार ।।७२
उदक-सहित वाणी कहि थापी, त्रण कदम भूमि तस आपी, सर्वसाखे परतापी ।।७३
वामन वैक्रिय देह तस कीधो, एक चरण मेरु मस्तके दीधो, मानुषोत्तर दूजे पाय लीधो ।।७४
त्रीजो पद ऊंचो करि उद्यम, तोली रहियो ते मांगे ठाम, बलि पूठी दीयो ताम ।।७५
तव वलि खेद खिन्न बहु कीयो, स्वजन सहित मुनि शरण ते लीयो, तव अभयदान सहुं दीयो ।।७६

सकल मुनि टाल्यो उपसर्ग, जय जयकार करे सुरवर्ग, गर्भ वा लण उतारे अर्व ॥७७
प्रगट थया मुनि विष्णुकुमार, क्षमी क्षवामी सहु परिवार, कीयो वात्सल्य गुणवार ॥७८
सात सौ मुनिवर कीयो रक्षण, जाय गुरु वंद्या देय प्रदक्षिण, प्रायश्चित्त लीयो व्रत ततक्षण ॥७९

दोहा

वात्सल्य अंग ते पालीयो, विष्णु कुमार भवतार। ध्यान धरी कर्म निर्जरी, पहुँचा मोक्ष दुआर ॥१
वज्रकरण भूप तणों वाच्छल्ल कीयो श्रीराम। कुल देश भूषण तणों, टाल्यो उपसर्ग उछाम ॥२
जलतां मुनिवर राखीया, कन्या सहित वनहि मझार।
सुधि जातां सीता तणी, वाच्छल्ल हनुमंत कुमार ॥३
तेह कथा तुम्हें जाणज्यो, पदम-चरित्र मझार। अवर जीय वहु आदर्यो, ते किम कहियो जाय ॥४
साधर्मी श्रावक मुनि तणों, वाच्छल्ल करे जव जेह।
सुर नर सुख ते भोगवी, पामे शिव-सुख तेह ॥५
जती व्रती गुणि जीवसूं, रोप धरें जे मूढ। मत्सर पणें माने नहीं, ते दुख देखे प्रौढ ॥६
इम जाणिय भवियण सदा, वात्सल्य करो गुणवार। जिन सेवक पदमो कहे, ते पामे भवपार ॥७

आठमों प्रभावना अंग। ढाल हिंडोलानी

प्रभावना अंग कीजिए, जिन शासन प्रभाव।
प्रासाद प्रतिमा प्रति प्रतिष्ठा करी, हिंडोल डा रे. ज्ञान, दान तप भाव ॥१
प्रभावना अंग केणें कीयो, कथा कहूँ अव तेह।
वज्रकुमार मुनि तणी, हिंडोलडा रे, प्रसिद्ध कीयो गुण जेह ॥२
हस्तिनाग नयर भलो, वलिनामें भूपाल।
गरुड पुरोहित छे तेह तणों, हिंडोलड़ा रे, सोमदत्त पुत्र विशाल ॥३
वाद शास्त्र ते वहु पठ्यो, चाल्यो द्विज सोमदत्त।
अहिछत्र नयर ते आवीयो, हिंडोलडा रे सुभूति मित्र विद्यामत्त ॥४
परहुणावार मामें कीयो, सोमदत्त कहे सुणो वात।
दुमुंख भूप मुझ मेलवो, हिंडोलडा रे, जिम पामूं वहु ख्यात ॥५
विद्यामदे ते मातुल, माने नहीं तस वाणि,
उपाय रची भूप भेटीयो हिंडोलडा रे, आपणपे वुद्धि जाणि ॥६
वाद करी ते वुद्धिवले, राजसभा मझार।
संस्कृत वचन ते उच्चरी, हिंडोलड़ा रे, अवर मनाव्या द्विज हार ॥७
विद्वान् सोमदत्त जाणीइ, राय थाप्यो परधान।
सांचु ज्ञान गुण अति वले, हिंडोलडा रे, विप्र पाम्यों वहुमान ॥८
सोमदत्त तिणें मातुले, सुभूति तिणी वार।
जज्ञदत्ता कन्या रूआडी, हिंडोलडा रे, परिणावी तिणि सार ॥९
सोमदत्त ते सुखे रहे, नारी उपनो ते गर्भ।
डोहलो हुओ आम्रफल तणो, हिंडोलड़ा रे, वरपा काले ते दुर्लभ ॥१०
आम्रफल जोवा चालीयो, सोमदत्त वनहं मझार।
सफल आंवो एक देखीयो, हिंडोलडा रे, विस्मय पाम्यो अपार ॥११

आम्र तरु तले रहिया, सुमित्र सूरी योगवन्त ।
ऋद्धि प्रभावे तरु फल्यो, हिंडोलडा रे, निज मन वांछे द्विज सन्त ॥१२
आम्रफल लेइ मोकल्या, सेवक साथे निजगेह ।
आम्र आस्वादी ते कामिनी, हिंडोलडा रे, संतोष पामी तब देह ॥१३
सोमदत्त वैराग हुओ, अथिर जाण्यो संसार !
संग छांडी गुरु वीनवी, हिंडोलड़ा रे, लीधू ते संयम भार ॥१४
ध्यान अध्ययन तप आचरे, धर्यो आतापनयोग ।
नाभिगिरि मस्तक रूअडो, हिडोलडा रे, कायोत्सर्ग लीयो ध्यान भोग ॥१५
जज्ञदत्ताइ पुत्र जाइनुं संवंध कीउ गुरु भ्रांत ।
आदी मुनिपद ऊपरें, हिंडोलडा रे, वाल मूकी कहे वात ॥१६
ए पुत्र कंत तुम्ह तणुं, माहरे नथी कांइ काज ।
रोस धरी धरि ते गई, हिंडोलडा रे, नारी निर्गुण नहीं लाज ॥१७
तिणें समय रूपाचली अमरावती पुरी ईश ।
दिवाकर देव पुरन्दर, हिंडोलडा रे, सहोदर घर विद्वेष ॥१८
पुरन्दरा विद्यावले, जुद्ध कीये ज्येष्ठ भ्राति साथ ।
नयर मूकी नीसरी गयो, हिंडोलडा रे, दिवाकर दिवाखग नाथ ॥१९
यात्रा करतो आवीयो, मुनि भेंट्या सोमदत्त,
वालक देखि अचंभियो, हिंडोलडा रे, वज्र कुमार नाम दीयो सत्य ॥२०
विद्याधर इम वोलीयो, निजनारी सुं सार ।
ए वालक, तुम्हें लेयो, हिंडोलडा रे, रूप कला गुणधार ।।२१
कनक नयर ते आवीयो, विमल वाहन करे राज ।
ते सालो ते खगतणों, हिंडोलडा रे, सुखे रहि करे राज ॥२२
अनुक्रमें पुत्र मोटो थयो, विद्या साधी तिण वार ।
रूप कला यौवन भरे, हिंडोलडा रे, सोहें ते वज्रकुमार ॥२३
गरुड वेग विद्याधर, गर्गावती तस नार ।
वस तणी कूंखे उपनी, हिंडोलडा रे, पवन वेग कुमार ॥३४
ह्रीमन्त भूधर, मस्तके, विद्या साधी ते वाल ।
प्रज्ञप्ती नामें भली, हिंडोलड़ा रे, मंत्र जपे सकुमाल ॥२५
वदरी कंटक वाइ पर्यु, कन्या नयन मंझार ।
चित्त चले नेत्र गले, हिंडोलड़ा रे, पावे नहीं नमोकार ॥२६
रमतो कुमार ते आवीयो, ते कन्या तिणि पास ।
विज्ञानी शल्य जाणीउ, हिंडोलडा रे, कंटक दीयो निकास ॥२७
कन्या ध्यान जव लागीयो, विद्या हुई तस सिद्ध ।
कन्या कहे कुमार धन्य, हिंडोलड़ा रे, तुम्ह पसाय विद्या रिद्ध ॥२८
कन्या कहे अवर वरूं नहीं, तुं मुझ हुओ भरतार ।
भाव जाणी महोच्छव करी, हिंडोलड़ा रे, कन्या वरी वज्रकुमार ॥२९

विद्या वले ते चालीयो, जूद्ध करवा तिणि काज।
काको जीति राज लीयो, हिंडोलड़ा रे, तात थापु निज राज ॥३०
राय राणी सुं रंगे रहे, वहु अर सहूँ परिवार।
जया राणी इच्छा करे, हिंडोलड़ा रे, देखी ते वज्रकुमार ॥३१
ए छतां मुझ पुत्रनें, राज तणु नहीं भार।
इम जाणिय रोपज वरे, हिंडोलड़ा रे, धिग् धिग् लोभ असार ॥३२
कवण पुत्र ए जन्मीयो, कहि नें करे संताप।
कुमर सुणीं विस्मय हुवो, हिंडोलड़ा रे, पूछ्यो ते निज वाप ॥३३
तात मुझ सांची कहो, कहि तणों पुत्र संत।
नहि तो हुँ जीमूं नहीं, हिंडोलड़ा रे, तातें कहो रे वृत्तान्त ॥३४
सयल संबंध सांभली, चाल्यो वज्रकुमार।
निज तात गुरु वंदिवा, हिंडोलड़ा रे, साथे खग-परिवार ॥३५
मथुरा नगरी आवीया, क्षत्रिय गुफा मझार।
सोमदत्त गुरु वंदीया, हिंडोलड़ा रे, वैठा तिहां वज्रकुमार ॥३६
धर्म कथा रस सांभली, पूछ्यो निज वृत्तान्त।
सकल सम्बन्ध ते गुरु कह्यो, हिंडोलड़ा रे, जनम आदि पर्यन्त ॥३७
सह गुरु कहे वच्छ तमें लेउ ते संयम-भार।
गुरु वचनें संग छांडियो, हिंडोलड़ा रे, दीक्षा लीधी वज्रकुमार ॥३८
अवर सजन वहु घरि गया, मुनि करे शास्त्र-अभ्यास।
सम दमे संजम आचरे, हिंडोलड़ा रे, तप जप करे गुरु पास ॥३९
मथुरा नयरी तणों धणी, पूत गन्ध भूप नाम।
अचिणा (उर्मिला) राणी तस तणी, हिंडोलड़ा रे, दान पूजा गुण ग्राम ॥४०
सागर दत्त श्रेष्ठी वसे, समुद्र दत्ता नारी नाम।
दरिद्रा नामें पुत्री हवी, हिंडोलड़ा रे, दारिद्र दुख तणो ठाम ॥४१
पुत्री जव उरे अपनी, मरण पाम्यो तप वाप।
धनसूं कुटुम्ब क्षय गयो, हिंडोलड़ा रे, धिग धिग कर्म कुपाप ॥४२
दुःख देखीतें वृद्धि थई, कुत्सितई लेवे आहार।
क्षुधा पीड़ी पर धरि भमे, हिंडोलड़ा रे, दीन दारिद्र कुमारि ॥४३
दोय मुनीश्वर संचर्या, लघु मुनि कहे तिणी वार।
ए धर की कष्टे जीवे, हिंडोलड़ा रे, धिग धिग पाप अपार ॥४४
ज्येष्ठ मुनि तव वोलियो, वच्छ सुणों मुझ वात।
पट्टराणी होसे भूपतणी, हिंडोलड़ा रे, पामिसे ए वहु ख्यात ॥४५
भिक्षा काजे वन्नक भमें धर्मश्री तस नाम।
मुनि-वयण निश्चय करी, हिंडोलडा रे, ते लेइ गयो निज ठाम ॥४६
अन्न पान मिष्ट देई, पुष्टि पमाडी ते वाल।
वस्त्र आभूषण आपीया, हिंडोलड़ा रे, यौवन थई गुणमाल ॥४७

हरषि हिंडोले हिचली, वसन्त क्रीडा चैत्र मास ।
पूतिगन्ध भूपें दीठी, हिंडोलड़ा रे, उपनो राग-अभिलाष ॥४८
भूपे मंत्री मोकल्यो, कन्या जांची निजकाज ।
वृद्ध कहे भूपति सुणो, हिंडोलड़ा रे, जो धर्म लेय वृद्धराज ॥४९
तो कन्या तुम्हनें देऊं, न हीं तो करो संतोष ।
मूढ भूपे वोल मानीयो, हिंडोलड़ा रे, अर्थी न देखे दोष ॥५०
चिन्तामणि तिणें परिहरी, राय लीयो तव कांच ।
सत्य धर्म जिन-भाषित, हिंडोलड़ा रे, किहा मन वौद्ध असांच ॥५१
महोच्छव करि कन्या वरी, राय गयो निज घरि सार ।
पट्टराणी पद थापियो, हिंडोलड़ा रे, आपी स्त्री-सिणगार ॥५२
अचिला राणी भूप तणी, सदा करे जिन धर्म ।
नन्दीश्वर अष्ट दिन, हिंडोलड़ा रे, रथ जात्रा करे परम ॥५३
आषाढ़ कार्तिक फागुण, वरस व्रते त्रण वार ।
रथ ऊपर जिन विम्ब धरि, हिंडोलड़ा रे, महोच्छव करे गुणधार ॥५४
अचिला तणों रथ देखी ने, वृद्धि राणी करे कोप ।
प्रथम रथ चाले मुझ तणों, हिंडोलड़ा रे, देव छै सारी वुद्धदेव ॥५५
अचिला कहे पहिलो मुझ तणुं, जो चाले रथ सार ।
तव ते करूँ हूँ पारणों, हिंडोलड़ा रे, नहीं तो नियम-आहार ॥५६
क्षत्रिय गुफा जाइ वंदिया, मुनिवर श्री सोमदत्त ।
अनशन मांगे निर्मलो, हिंडोलड़ा रे, मुनि पूछ्यो सयल वृत्तान्त ॥५७
तिणि अवसरि गुरु वन्दिवा, आव्या दिवाकर देव ।
वज्रकुमार भणें, खग सुणो, हिंडोलड़ा रे, अचिला सहाय करो देव ॥५८
तव खेचर विद्यावलें, वृद्धि-रथ कीयो ध्वंस ।
मिथ्याती मान चूरीयो, हिंडोलड़ा रे, तिमिर उगे जिम हंस ॥५९
रथ चाल्यो अचिला तणों, तव हुओं जय जयकार ।
जिन विम्ब रथ आगे हुओ, हिंडोलड़ा रे, गीत वाजे अपार ॥६०
जिन शासन प्रभावना, अचिला जस विस्तार ।
राय राणी ते जैन हुआ, हिंडोलड़ा रे, जिन धर्म करे भवतार ॥६१
प्रत्यक्ष महिमा देखी ने, लोक करे जिन धर्म ।
मिथ्यात-विष सहु परिहरी, हिंडोलड़ा रे, निश्चय आणी मत परम ॥६२
वज्रकुमार ते इणी परे, कीयो प्रभावना अंग ।
सहाय कीयो अचिला तणों, हिंडोलड़ा रे दिवाकर देव प्रसंग ॥६३
निज शक्ति प्रगट करी, शासन करे जे उद्धार ।
सुर नर वर पदवी लही, हिंडोलड़ा रे, ते पामें भव-पार ॥६४
जिणें किणें उपाय करी, शासन करी प्रभाव !
समकित अंग सुद्धों धर्यों, हिंडोलड़ा रे, ते होई भवोदधि-पार ॥६५

शासन दोष जे ऊचरे, जिन-महिमा करे लोप ।
ते मूढ मिथ्यात्वीआ, हिंडोलड़ा रे, भव-भव लहे कष्ट कूप ॥६६
जिणें जिणें जीवे कीयो, माहातम जिन शासन ।
संसार-दुःख दूरे करी, ते पाम्या मोक्ष भविजन हिंडोलड़ा रे ॥६७

वस्तु छन्द

प्रभावना अंग, प्रभावना अंग धारो भवियण अनुदिन ।
वज्रकुमार मुनिश्वर कीयो, शासन विलास तणों मनोहर ।
सुर नर सुख ते भोग वैं अनुक्रमें पामें शिव निर्भर ॥
आठों अंग करि अति वलो, पालें जे समकित सार ।
जिन-सेवक पदमो कहे, धन धान्य ते अवतार ॥६८

अथ ढाल नरेसुआनी

समकित्त गुण इम वर्णवीए, नरेसुआ, प्रतिमा सुणों हवे भेद ।
दर्शन नामें निर्मली ए, नरेसुआ, जिम होय कर्म-तणों छेद ॥१
सात विसन दूरे टाली ए, नरेसुआ, पालीये अष्ट मूल गुण ।
श्रावक सर्वक्रिया मांहीए, नरेसुआ, दर्शन वारो निपुण ॥२
द्यूत मांस सुरा पान ए, नरेसुआ, वेश्या संग आखेट ।
चोरी पर नारी सेवा ए, नरेसुआ, सप्त विसन पाप मूल ॥३
जूआ खेलें योगी थया ए, नरेसुआ, पांडव हुआ राज्य-भ्रष्ट ।
द्यूत व्यसन दुख देइ ए, नरेसुआ, प्रथम नरकनें कष्ट ॥४
मांस-लोंलुयी पाप करे ए, नरेसुआ, जीव तणां संघार ।
वक राजा ए वापडों ए, नरेसुआ, दुर्गति सहे दुख भार ॥५
मद्यपान मति विहवल ए, नरेसुआ, न वि जाणें हेया हेय ।
नयर सुं यादव क्षय गयो ए, नरेसुआ, मित पामी मद्य एह ॥६
वेश्या संगे पाप उपजे ए, नरेसुआ, अर्थ-हानि, जाय लाज ।
चारुदत्त चंचल पणें ए, नरेसुआ, हार्यो निजघर-काज ॥७
आहेंडे आरम्भ घणो ए, नरेसुआ, पशु अ तणों विणास ।
ब्रह्मदत्त चक्रवर्ती ए, नरेसुआ, सातमी नरक-निवास ॥८
चोरी व्यसन धातक घणा ए, नरेसुआ, विहू लहे पर बंध ।
शिवभूति तापस आदि ए, नरेसुआ, पाम्यों दुःख तणो कंध ॥९
परनारी दूरे तजो ए, नरेसुआ, तेहथी होइ महापाप ।
रावण धवल श्रेष्ठि ए, नरेसुआ, सही ते नरक-संताप ॥१०
द्यूत व्यसन पहिलो नरक ए, नरेसुआ, मांस बीजो श्वभ्र जाण ।
मद्यपान तीजी नरक ए, नरेसुआ, वेश्या-सेवे चौथी जाण ॥११
आहेडे पांचमी नरक ए, नरेसुआ, चोरी कीवे छट्ठी जाय ।
पर नारीइ सातमी नरक ए, नरेसुआ, पंचविध दुःखते थाय ॥१२

सप्त व्यसन-सम सात नरक ए, नरेसुआ, न वि जाणें हेयाहेय।
जुजूआ सेवे जेह एकेकें विसनें करी नरेसुआ, दुख देखे वहु तेह ॥१३
एक व्यसनिजो नरक हुए नरेसुआ, सातें सेवें जे सात।
तेहना दुःखनों पार नहीं ए, नरेसुआ, किम कही जाय ते वात ॥१४
उत्तम वंशे जे उपजी ए, नरेसुआ, व्यसन सेवे जे मूढ।
लाधू चिन्तामणि जे त्यजी ए, नरेसुआ, नीच गति पामें ते प्रौढ़ ॥१५
इम जाणिय भविजन तुम्हो ए, नरेसुआ, जो सुख वांछो देह।
तो विसन सहु परिहरो ए, नरेसुआ, घणु सूं कहिए वलि तेह ॥१६
अष्टमूल गुण हवे सुणो ए, नरेसुआ, मद्य, मांस मधु त्याग।
ऊँवर बड़ कठु वरी ए, नरेसुआ, पीपल पीपरी कुराग ॥१७
मद्य मांहे जीव वहु मरे ए, नरेसुआ, मद्य पीधे नहीं सान।
दुःख दुर्गति होइ ए, नरेसुआ, पापी मद्य कुपान ॥१८
एक विन्दु मद्य तणा ए, नरेसुआ, थाह जो जीव विस्तार।
त्रैलोक्य मांहि मावे नहीं ए, नरेसुआ, किम कह्यो जाइ पाप विस्तार ॥१९
अथाणा संधाणा त्यजो ए, नरेसुआ, अनन्त जीव रस काय।
कुली निगोद वहु ऊपजे ए, नरेसुआ, शास्त्र कही, ते किम खाय ॥२०
दिन विहुं पूठे दही छांछ ए, नरेसुआ, वासी न स्वाद-रहित।
आछण फूली वस्तु त्यजो ए, नरेसुआ, मद्य-नेम-सहित ॥२१
मांस-भक्षण दूरे त्यजो ए, नरेसुआ, मांस मरे वहु जीव।
जिह्वा लंपट पापी आ ए, नरेसुआ, अधोगति पाडे ते रीव ॥२२
चर्मघाल्या घृत तेल ए, नरेसुआ, जल हींग सरस वस्त।
सरसव शुल्वां धान त्यजो ए, नरेसुआ, दोषते मांस समस्त ॥२३
चर्म-जोगे जल रस थकी ए, नरेसुआ, उपजें जीवते सूक्ष्म।
सूर्यकान्त चन्द्रकान्त मणि ए, नरेसुआ, अग्नि जल झरे तेम ॥२४
चर्म पात्रे जल त्यजो ए, नरेसुआ, शौच कर्म नहि योग्य।
तो स्नान तिणें किम कीजिए, नरेसुआ, किम पीजे जल अभोग्य ॥२५
जीव इंड थी उपनो ए, नरेसुआ, म्लेच्छ ते चर्वित जाण।
मधु भक्षे सूग ऊपजे ए, नरेसुआ, नीपजे वहु जीव हाणि ॥२६
सात गाम वाले जेतलु ए, नरेसुआ, तेतलुं पाप होइ ताम।
मधु विन्दु एक भक्षण करे, नरेसुआ, लोक-प्रसिद्ध एक भाष ॥२७
शरीर धाय व्रण आदि ए, नरेसुआ, नेत्र करण अयोग्य।
औषध काजे मधु त्यजो ए, नरेसुआ, कीजे नहीं ते प्रयोग ॥२८
पत्र पुष्प शाका त्यजो ए, नरेसुआ, विहु घडी पूठें नवनीत।
काचु दूध नीर त्यजो ए, नरेसुआ, भागो नेम-सहित ॥२९
काचा गोरस-मिश्रित ए, नरेसुआ, त्यजो ते द्विदल अन्न।
वरसाले अन्न दल्यां ना ए, नरेसुआ त्यजो ते जिन मांसी मन्न ॥३०

श्रावक व्रत तरुतणां ए, नरेसुआ, पीठ वंध गुणमूल ।
यत्न करो घणुं ते तणों ए, नरेसुआ, दृढपणें अनुकूल ॥३१
सप्त व्यसनं जे परिहरे ए, नरेसुआ, वरें जे मूलगुण अष्ट ।
प्रथम प्रतिमा ते सहित ए, नरेसुआ, दर्शन नामी अभीष्ट ॥३२
जल गालण भेद सुनो ए, नरेसुआ, हृदय थई सावधान ।
जे जाण्या विण जीवने ए, नरेसुआ, हुए ते वहु परिज्यान ॥३३
गाढो नूतन चीरज ए, नरेसुआ, दीर्घ अंगुल छत्तीस ।
दुगुणो चीर ते कीजिए ए, नरेसुआ, विस्तारे चौवीस ॥३४
विहु-विहु घड़ी इ जल गालिए, नरेसुआ, दिन पर ते विहु-चार ।
कोमल परिणाम कीजिए ए, नरेसुआ, जीव जत्न गुणवार ॥३५
जल-विन्दु एक मांहि ए, नरेसुआ, असंख्यात जीव होय ।
भमर जेम वड़ो जो थाइ ए, नरेसुआ, त्रैलोक्य न वि माइ सोय ॥३६
अणगल नीर किम पीजिइ ए, नरेसुआ, जीव तणों होइ भक्ष ।
त्रस भक्ष जो कीजिए, नरेसुआ, तो किम मूल गुण दक्ष ॥३७
काचो नीर न पीजिइ ए, नरेसुआ, पाणी गल्यो तत काल ।
पवित्र भाजने ते घालिइ ए, नरेसुआ, मांहे न रहे पंक-सेवाल ॥३८
वेहडा कसेलो कुछठ ए, नरेसुआ चूर्ण करी पवित्र ।
अधिको ऊनो न वि मूकिइ ए, नरेसुआ, निरति करीइ विचित्र ॥३९
वर्ण रुडो जव देखिइ ए, नरेसुआ, तव ग्राहीये ते नीर ।
प्रासुक जल जले करो ए, नरेसुआ, प्रमाद छांडी सरीर ॥४०
गल्या जल प्रासुक पछे ए, नरेसुआ, प्रासुक पहर ते दोय ।
अतिउष्णं आठ पहर लगे ए, नरेसुआ, पच्छे अ सम्मूर्च्छिम होय ॥४१
अनगल स्नान न कीजिइ ए, नरेसुआ, न वि धोइ ए ते वस्त्र !
सावु जो जल मांहे पडे ए, नरेसुआ जलचर ने शस्त्र ॥४२
इम जाणि जल-जत्न करो ए, नरेसुआ, जीव-जत्ने दया होय ।
जिहाँ दया तिहाँ धर्मज ए, नरेसुआ, धर्म तिहाँ सुख जोय ॥४३
धर्मे सुर नर वर पद ए, नरेसुआ, धर्मे मनवांछित सुक्ख ।
ऋद्धि वृद्धि वुद्धि घणी ए, नरेसुआ, धर्मे अनुक्रमे मोक्ष ॥४४
पाणी प्रमादे गाले नहीं ए, नरेसुआ, जत्न न करे जे सार ।
ते पापी अज्ञानि जीव ए, नरेसुआ, भमें ते भवहिं मझार ॥४५
पाप फलें नरक पशुगति ए, नरेसुआ, नर नारी निरधार ।
हीन दीन दलिद्री देखिए, नरेसुआ, पापे परंवश गँवार ॥४६
वहिरा वाडा वोवडा ए, नरेसुआ, खंज पग मुका जेह ।
अधम विध वियोगीआ ए, नरेसुआ पाप तणां फल एह ॥४७
इम जाणी सावधान हो ए, नरेसुआ जो सुख वांछो देह ।
तो जल जत्न सदा करो ए, नरेसुआ, घणुं सुं कहिए तेह ॥४८

रात्रि भोजन दूरें करो ए, नरेसुआ, भेद सुणो हवे तेह ।
सूर्य उग्यां घड़ी विहुं पुठें ए, नरेसुआ, भोजनकाल छै तेह ॥४९
दिवस दोय घड़ी जब होय ए, नरेसुआ, तिं वार पहिलो आहार ।
सूर्य किरण मंद दीसइ ए, नरेसुआ, निशा समो तिणि वार ॥५०
संध्या समै जे भोजन ए, नरेसुआ, प्रगट न दीसे भान ।
निशि-आहार ते जाणीइ ए, नरेसुआ, दिवस तणें अवसान ॥५१
अंधारे अगासडे ए, नरेसुआ, जिहां नहिं गोचर दृष्टि ।
असंन तिहां न वि कीजिइ ए, नरेसुआ जिहां दीसे नहीं स्पष्ट ॥५२
प्रमादी जे लोभीया ए, नरेसुआ, ते वाहें निज अक्ष ।
जिह्वा लम्पट वा पडा ए, नरेसुआ, रयणी देखे प्रतक्ष ॥५३
वुवडत विम्ब उ तावला ए, नरेसुआ, पशु परि करे आहार ।
भोजन करे ते वाउला ए, नरेसुआ, रुले घणु संसार ॥५४
डंस कीट पतंगीआ ए, नरेसुआ, बहु जीव पड़े सूक्ष्म ।
अन्न रस तक्र मांही ए, नरेसुआ, त्रस जीव दीसे केम ॥५५
रात्रें भोजन जो कीजीइ ए, नरेसुआ, तो ते जीव हुइ भक्ष ।
मांस-आहार सम ते सही ए, नरेसुआ, दूषण दीसे समक्ष ॥५६
मूढ जे रात्रे जीमिइ ए, नरेसुआ, तेनु सरूप राक्षस जेय ।
जाति-अन्ध सम ते कहीइ ए, नरेसुआ, न वि जाणे हेयाहेय ॥५७
तम्बूल सुं जल मूकोने ए, नरेसुआ, जो अणसण आथमें सूर ।
भोग्य अशन फल जो लीइ ए, नरेसुआ, तो दर्शन तेहनें दूर ॥५८
रात्रि तणा रांध्या जीमिइ ए, नरेसुआ, ते कहिए मूढ गंवार ।
स्थूल सूक्ष्म वहु जीव मरे ए, ते नहीं मूल गुण धार ॥५९
निशा-आहार पापकारी ए, नरेसुआ, नरकगत्ति-अवतार ।
पल्योपम सागर तणां ए, नरेसुआ, दुःख सहे पंच प्रकार ॥६०
क्रूर पशूगति ऊपजे ए, नरेसुआ, सर्प वीछी व्याघ्र व्याल ।
मांजार कूकर सूकर ए, नरेसुआ, काक पंखी विकराल ॥६१
पापी नीच नरकगत्ति लहे ए, नरेसुआ, हीन दीन दालिद्र ।
अल्प आयु काय रोगीआ ए, नरेसुआ, विकल वियोगी क्षुद्र ॥६२
ए आदे सुर नर तणा ए, नरेसुआ, जे जे दीसे नर वहु दुक्ख ।
निशा-आहार तणा फल ए, नरेसुआ, कहिय न पावे सुक्ख ॥६३
इम जाणी जे परिहरे ए, नरेसुआ, रयणी तणों आहार ।
मनवांछित सुखते लहें ए, नरेसुआ, पुण्य फलें गुणधार ॥६४
सुख संयोग सौभागिया ए, नरेसुआ, वृद्धि ऋद्धि सन्तान ।
सुर नर वर पदवी लही ए, नरेसुआ, अनुक्रमे मोक्ष निदान ॥६५
चित्रकूट नयर भलो ए, नरेसुआ, जागरी नामें चंडाल ।
निशा भोजननि फल ए, नरेसुआ, विस्मय पामी विशाल ॥६६

सागर श्रेष्ठी कुल उपनी ए, नरेसुआ, पुत्री नामें श्री नाम।
रूप कला लावण्य घणु ए, नरेसुआ, यौवन देखो गुण ग्राम ॥६७
श्रीधर श्रेष्ठी ते वरी ए, नरेसुआ, सुख पामी संसार।
तप करि स्त्रीलिंग छेदीयो ए, नरेसुआ, स्वर्गे लीयो अवतार ॥६८

दोहा

निश्चल नियम जे आचरें, निशा आहार-परित्याग। संसार सुख ते अनुभवि, पामें शिवपुर भाग ॥१
सूर्य साखे भोजन करो, दिन प्रति एक वे पार। अरता-फिरता खाइए नहीं, उत्तम नहीं आचार ॥२
समकित-सहित सदा धरो, उत्तम मूलगुण अष्ट। विसन भय शल्य गारव त्यजी, दर्शनप्रतिमा अभोष्ट ॥३
दर्शनप्रतिमा इणि परे, वर्णवी गुण बहुवार। व्रतप्रतिमां बीजी सुणो, संक्षेप कहुं सुविचार ॥४

अथ ढाल गुणराजनी

सांभलो ए व्रत शुभ बार, पंच अणु व्रत पालीए, गुणव्रत त्रण प्रकार।
चार शिक्षा व्रत संभलो ए, सांभलो ए व्रत शुभ बार ॥१
अहिंसा ए पहिलो अणुव्रत, सत्य व्रत बीजो सही ए।
अचौर्य ए ब्रह्म सुचर्य, संग-संख्या पांचमो कही ए ॥२
थावर ए पंच प्रकार यत्न सहित विराधक ए।
गृहस्थ ए श्रावक सार, अणु व्रत आराधक ए ॥३
त्रसघात ए बहु घात जेह प्रमाद विषय सहु परिहरो ए।
वेन्द्री तेइन्द्री चौइन्द्री जीव, पंचेन्द्रीं रक्षा करो ए ॥४
कृमि कीट ए अलसी ए जुल, संख सीपी नां वेइन्द्री ए।
कीड़ी कुन्थु ए जुंआ की देह, माकण आदि तेइन्द्रीं ए ॥५
दंश मशक ए माखी पतंग भमर आदि चौइन्द्री ए।
नरक पशु ए माणस देव पंच इन्द्री ए त्रस जीव ए ॥६
इणि परे ए उ लखी त्रस, मन वच काय रक्षा करो ए।
कृत कारित ए अनि अनुमोद, नव भेदे यत्न धरो ए ॥७
खंडाण ए पीसणी चुल्लि, जलकुम्भी प्रमार्जणी ए।
गृही कर्म ए पंच ए सूना, छहुं इ द्रव्य उपार्जनी ए ॥८
पीसण ए करीय पवित्र, सुल्या अन्न सोधन करो ए।
जत्न सहित ए कीजे चूर्ण, वासी जंत्र न फेरीइ ए ॥९
जोइ पुजीइ ए कजिए जत्न, उखले खण्डण कीजिइ ए।
सुल्या झुल्या ए हुए जे अन्न, तस घाय नवि दीजिए ॥१०
इंधण ए छांणा जेह जीव सोधि तावड़े धरीइ ए।
जीव-जयणा ए कीजे, पाक संधुक्षण जतनें करीइ ए ॥११
व्यापार ए कीजे तेह, जेह थी हिंसा न उपजे ए।
अचौर्य ए सत्य-सहित, जिन्हे आरंभ न नीपजे ए ॥१२

आरंभ थी ए उपजे पाप, वंचन द्रोह छद्म घणु ए।
असत्य ए हुइ अन्याय, व्यापार त्यजो ते द्रव्य तणो ए ॥१३
कंटोल ए धातुड़ी पान, साबु मैण महुडा गली ए।
विष लोह कु काष्ट ढोर अस्थि चरम वली ए ॥१४
मद्य मांस ए मधु कुचीड़, माखण न वि तवावीइ ए।
कण सल ए कवण व्यापार, घाणी न वि कराविइ ए ॥१५
वापी कूप ए द्रह तडाग, खाई न वि खणावीह ए।
कपावीइ ए नहि वन काष्ट, अंगष्टिनीमा न चडवाइ ए ॥१६
एह आदि दुर्व्यापार, पाप आरंभ उपजे वहू ए।
लाभ न दीसै ए मूल विनास, तें वाणिज्य त्यजो सहु ए ॥१७
उपार्जि ए कष्टे द्रव्य, व्यापार करे ते अति वलो ए।
कुटुम्ब ए लेवते भोग, नरके जाद्र तूं एकलो ए ॥१८
इम जाणीय दुर्व्यापार, पापारंभ ते परिहरो ए।
हित मित ए न्याय सम्वन्ध, जोग्य वाणिज्य ते अनुसरो ए ॥१९
खंडण पीसण चुल्ली, जल स्थान ऊपर कहीइ ए।
देरासर ए समन ऊपर, चन्द्रोपक्र वांधो सहीइ ए ॥२०
षट् कर्म ए जत्न सहित, सदा कीजे त्रस-रक्षण ए।
जो कीजे ए जीव वहु जत्न, ते अहिंसा व्रत-रक्षण ए ॥२१
चालीइ ए जत्न-सहित, जीव जत्न करि वेसीइ ए।
सोइए ए जत्न सहित, जीभ जत्न करि भासीइ ए ॥२२
जीव जत्न ए करे आरम्भ, अल्प पाप हुए तस ए।
कोमल ए कीजे परिणाम, परिणामें पूण्य जस ए ॥२३
इम जाणिय ए आसन्न भव्य, सर्वदा जीव जत्न करो ए।
जीव जत्ने ए उपजे पुण्य, पुण्य फल स्वर्गे संचरे ए ॥२४
आपीए ए भार सोवर्ण मेरू-सहित वसुन्धरा ए।
जीव एक ए दीजिइ दान, ते सम नहीं कोइ गुणधणी ए ॥२५
वल्लभ ए एणि संसार, जीवितव्य विना अवर नहीं ए।
ते भणी ए जीव दया दान, जिम किम दीजे सही ए ॥२६
आपण ने ए जो जीववु इष्ट, सो परनें जीववुं वल्लभ ए।
तो किम ए लीजे पर प्राण, जीव जत्न करो दुर्लभ ए ॥२७
दया विण ए नहीं जिन पूज, पात्र दान नहीं दया विन ए।
तप जप ए ध्यान अध्ययन, दया विण नहीं कोई गुण ए ॥२८
देव मांहि ए जिम जिनदेव, ज्ञान मांहे केवल ज्ञान ए।
रत्न मांहि ए जिम चिन्तारत्न, तिम दान मांहे जीव दया ए ॥२९
जीव दया ए लहे वहु आयु, काय निरोग रूप घणुं ए।
पामीइ ए सुख संजोग, भोग वांछित निज भलपणुं ए ॥३०

सुर नर ए वर पद होइ, ऋद्धि वृद्धि वुद्धि घणी ए।
जेह जेह ए उपजे सुख, ते सहु फल दया पणें ए ॥३१
तिल सम ए कन्दमूल मांहे, जीव अनन्त निगोद भर्या ए।
सूक्षम ए गोचर नहि दृष्टि, केवलज्ञान श्री जिन कह्या ए ॥३२
तिल सम ए कंदमूल भक्ष तो ते जीव अनन्त मरे ए।
अल्प सुख ए जिह्वा लोल, बहु जीव ते घात करे ए ॥३३
नरक पशु ए गति अवतार, हिंसा ए पामे ते बापडा ए।
क्षुधा तृषा ए सहेय सन्ताप, जन्मि जन्मि दुःखे जड्या ए ॥३४
हीन दीन ए नर दारिद्र, दुखी अ दोर्भागी दोहिला ए।
रोग सोग ए कष्ट वियोग, अल्प आयु ते पामीया ए ॥३५
नर नारी ए हुइ निरधार, वन्ध्या नारी ते सही ए।
एह आदि ए हुअे बहु कष्ट, ते फल पाप हिंसा सही ए ॥३६
इम जाणिय कीजे दया जीव, जिहां दया तिहां धर्म जए।
जिहां धर्म ए तिहां होइ सुक्ख, सुक्ख तिहां शिव पद फल ए ॥३७
नर नारी ए पशु बालक, कर्ण नासा न वि वींधिअे ए।
न वि छेदी ए तस तणा अंग, छेद नामे न छेदिअे ए ॥३८
भार बहु ए जे नर ढोर, मानथीं अधिक न रोपीइ ए।
बापडा ए पर-वश तेह, भार-मान न वि लोपइ ए ॥३९
मानुष ए पशु ए हवाल, अन्न पान न वि रुधीइ ए।
निज पर ए पीडा होइ, ते विती पात मन सोधीइ ए ॥४०
इण परि ए पंच अतीचार, जीव दया व्रत तणां ए।
जत्न करो ए टालो निर्दोष, प्रमाद विषय ते जो घणां ए ॥४१
अतीचार ए रहित धरे व्रत, सोल में स्वर्गे ते उपजे ए।
उत्तम ए नर पद होइ, अनुक्रमें शिव सुख संपजे ए ॥४२
प्रथम ए अणु व्रत एह, जत्न करी पालो सदा ए।
मातंग यमपाल नाम, तेह कथा हवे सांभलो ए ॥४३
सौरम्य ए देश मझार, पोदनपुर नयर घणी ए।
महावल ए नामें भूपाल, तस पुत्र वलि दुर्मती ए ॥४४
नन्दीश्वर ए अष्ट दिवस, भूपें अमार आण दीधी ए।
जे कोई ए करसे जीव वध, ते मोकलुं जम सन्निधी ए ॥४५
राजपुत्र ए वलिकुमार, भक्ष करे मांस तणो ए।
वन जाइ ए तेणें मूढ, गूढपणें मींढ्यो हणो ए ॥४६
वलि जाणें ए न वि देखे कोई, जिह्वा लम्पट मांस ग्रह्यो ए।
तिण समि ए चम्पा वृक्ष, ऊपर माली दर्षि रह्यो ए ॥४७
सन्ध्या समय ए आव्यो नहीं मेंप, राय कहे कुण कारण ए।
पूछियो ए निज कोटवाल, मींढो जुओ के तस मारण ए ॥४८

नहीं तो ए देऊँ तुम्हें दंड, मुझ आज्ञा भांजी किणि ए।
गुप्तचर तल रक्षक ए मुकीया चार, रातें घर जइ सुणें ए ॥४९
तिण समें ए माली निज गेह, अति अंधारे आवीयो ए।
नारी ऊ ए पूछे निजकंत, असुरो तु का भावीयो ए ॥५०
मालीय ए कहे सुण वात्त, राजपुत्र मीढो हण्यो ए।
तिण समें ए रह्यो हुँ झंप, मुझने भय घणों उपनो ए ॥५१
एहवुं ए सुणी संबंध, चर आयी भूपने कह्यो ए।
प्रभात ए पूंछ्यो माली तेह, निर्भयपणें ते सहु लह्यो ए ॥५२
तव भूपनें ए उपनों कोप, लोप कीयो आज्ञा तणो ए।
तल रक्षक ए मलावो वार, दुष्ट खंड करो घणों ए ॥५३
मातंग ए यमपाल नाम आव्या तल वर तस घरे ए।
आवत्ता ए देखी तेह, प्रच्छन्न रह्यो तिणी समे ए ॥५४
तल रक्षक ए पूछी तस नारि, किहाँ गयो मातंग आज ए।
नारी कहे ए सुणों कोटवाल, घर नहीं, गयो निज काज ए ॥५५
तल रक्षक ए कहें तिणी वार, भाग्य नहीं मातंग तणो ए।
राज पुत्र ए मारी ने आज, वस्त्र आभूषण द्रव्य घणो ए ॥५६
तव नारी ए उपनो लोभ, हस्त संज्ञा ते देखाडीयो ए।
घर तणें ए सुणें रह्यो तेह, तव वलें तेणें काढीयो ए ॥५७
मातंग ए कहे सुणो वात्त, घात जीव छे मुझ तिम ए।
चौदस ए दिन व्रत आज, कीजे कृपा कहो इम ए ॥५८
तल रक्षक ए पाम्यां कोप, हठ करी तें डीगया ए।
राय आगल ए कही तस वात, घात नहीं विस्मय भया ए ॥५९
मातंग ए कहे सुणो नाथ, हाथ जोडी ऊभो रहो ए।
स्वामी मुझ ए वीनती अवधार, सार नियम कथा लही ए ॥६०
एक दिन ए मुझ डसीयो सर्प, मूर्च्छा आयी धरणी पड्यो ए।
मूकीयो ए हु लेइ समसान, सज्जन मिली घणु रुले ए ॥६१
मुनिवर ए ऋद्धि गुणवंत, शरीर-स्पर्श-पवन वले ए।
निर्विष ए हुई मुझ देह, चेतना आयी मूर्च्छा वली ए ॥६२
सावधान ए हुओ तिणि वार, मुनिवर बोल्या कृपावंत ए।
वधतणो ए मुझ दीयो नेम, चौदस एक दिन गुण संत ए ॥६३
ते नियम ए पालुं भवतार, सार जीव हृण वातणो ए।
गुरु साक्षी ए लीयो जे व्रत, हित्त जीव सदा घणुं ए ॥६४
प्राण त्याजे ए नावि छोडुं नेम, प्राणी जन्म-जन्म धणुं ए।
दुर्लभ ए जीव दया धर्म, समकारी भूपें सुण्या ए ॥६५
तव कोपे ए कहले भूप, तूं चंडाल अधम सही ए।
निर्मल ए श्री जिन धर्म, नेम तुझ योग्य नहीं ए ॥६६

भूपति ए दीयो आदेश, नंदन मातंग मारवा ए।
क्रोधे ए नहीं शुद्धि वुद्धि, गुण दोष विचारवाए ॥६७
सेवक ए मिल्या वहु दुष्ट, यष्टि मुष्टि प्रहार करे ए।
बाँधीयो ए वलि मातंग, मारण लेइ ते संचरयां ए ॥६८
विडंपन ए वा देई दहु दुष सिसुमार द्रह नाखीउ ए।
राजपुत्र ए हिंसा पाप दुर्गति दुख ते दाखीया ए ॥६९
मातंग ए नेम प्रभाव जल देव आसन कंपीया ए।
जल उपरे ए कमल आसन, तिहाँ मातंग आरोपिया ए ॥७०
नीपनों ए जय जयकार, गीत नृत्य वाजित्र घणां ए।
सुर नर ए करे पुष्प वृष्टि, प्रातिहार्य भूते सुण्यां ए ॥७१
निगर्व ए थयो तव राइ, अन्याय कीयो में मूढ़पणो ए।
आपीयो ए मातंग पास, क्षमितव्य करे वली-वली घणो ए ॥७२
सुर नर ए देय सनमान, वस्त्र आभूषण आपीया ए।
मातंग ए आण्यों निज गेह, महोत्सव करि जस थापीया ए ॥७३
धन धन्य ए नेम प्रणाम, सुधन धन्य जस घणों ए ॥
जाव जीव ए पालियो नियम निश्चल मन करी आपणों ए ॥७४
इहि लोक ए पामीउ सुख, मरण समाधि साधीयो ए।
मातंग ए पाम्यो देव लोक, महर्धिक पद आराधीयो ए ॥७५
जुओ जुओ ए पुण्य प्रभाव, किहां मातंग नीच जाति ए।
उपनों ए ते देवलोक, ऋद्धि वृद्धि गुण ख्यातिय ए ॥७६
उत्तम ए नरपति वंश, वलि कुमार हिंसा करी ए।
पांमीयो ए अपजस दुक्ख, पापे नीच गति अणुसरी ए ॥७७
इमि जाणि ए धर्म उत्तम, उत्तम वन्दो सुरोझीये ए।
धर्म हाणि ए जाइ नीच गति गुणीअ गुणीनें वुझीये ए ॥७८
धनश्री ए जार कुं नारि, जार लक्षीते पापिणी ए।
मारीयो ए गुणपाल पुत्र, अपकीर्त्ति पांमी आपणी ए ॥७९
भूपति ए दीयो वहु दंड, खर-आरोहण विडंवण ए।
धनश्री ए जीव-हिंसा पाप, दुर्गति पांमी खंडण ए ॥८०

दोहा

जीव दया व्रत निर्मलो मातंग नाम जमपाल। स्वर्ग तणो सुख पांमीयो, धन धन्य दया गुण माल ॥१
जीव-हिंसा करि पापिणी, धनश्री नामि कुमार। दुख दुरगति ते सही, धिग हिंसा असार ॥२
हिंसा समु कोइ पाप नहीं, हूवो होस वर्तमान। दया समो कोइ धर्म नहीं, एहवो कह्यो जिन भान ॥३
इम जाणीय निश्चल करी, दया पालो गुणवार। सुर नर सुख ने भोगवे, पांमे मोक्ष भवतार ॥४

ढाल

अहिंसा अणुव्रत वर्णव्यो ए, हवे अ कहुँ सत्य व्रत तो।
बीजो अणुव्रत निर्मलो ए, थूलपणें जीव हित तो ॥१

झूठा वचन न वोलिये ए, कडुआ कठिण कठोर तो।
कूट कपट कड़क सत्य जो ए, मरम मोसा घनघोर तो ॥२
अलिय वयण नवि वोलीये ए, छल छद्म वंचन द्रोह तो।
परपंच पर वंचन ए, संच न पाप संदोह तो ॥३
असत्य वाणी तमें परिहरो ए, कूडी साख कुवोल तो।
निन्दा अपजस विस्तरे ए, ते टालो निटोल तो ॥४
पर पीड़ाकारी वचन, पर-पैशुन्य अपवाद तो।
जिणें वोले अधर्म होइए, तेऊ तजो विसंवाद तो ॥५
जो वोले आप पीडिये, ते किम पर सोहाय तो।
निर्लज्जपणें न वि वोलीए, जिणें उपजे पर दाह तो ॥६
तीव्र कोपकारी त्यजुं ए, मान मायाने लोभ तो।
राग द्वेष मद उपजे ए, जिणे होइ पर क्षोभ तो ॥७
जिण वोले हिंसा होय ए, उपजे असत्य अपवाद तो।
मरम वोलवाड़ी त्यजो ए, सूल समी जे भास तो ॥८
जिणें सांचे दुख उपजे ए, वध वन्ध हुई परछेद तो।
विष था विष समी तज्यो ए, वेदनाकारी न खेद तो ॥९
अविचार्यु न वि वोलीए ए, न वि दीजे केइतें आल तो।
आर्त्त रौद्र दु ध्यान करी ए, केहतें न दीजे गाल तो ॥१०
आपण झूठू न वोलीये ए, वोलावी जे नहीं कोई तो।
अनृत न वि अनुमोदीये ए, मन वच कायाइ जोइ तो ॥११
सत्य वचन सदा वोलीये ए, हित मित कारी मिष्ट तो।
जेणें वोले जस होइ ए, आपण पर होइ इष्ट तो ॥१२
असत्य वोले पाप उपजे ए, पापें सहि ते संताप तो।
नरक पशू गति ते लहिए, रहे दुखें अति व्याप तो ॥१३
सत्य वोले पुण्य उपजे ए, पुण्ये होइ वहु सुक्ख तो।
सुर नर वर पद पायीइ ए, कहीये न वि देखे दुक्ख तो ॥१४
इम जाणी सत्य वोलीइ ए, टालीए पंच अतिचार तो।
स्थूल सुव्रत तेह तणा ए, हवे सुणो तेह प्रकार तो ॥१५
मिथ्या उपदेश न वि दीजीइ ए, एकान्त होइ जे वात तो।
ते तो न वि प्रकाशीये ए, न वि कीजे तेह वात तो ॥१६
कूट लेख न वि कीजिये ए, तेणें होइ विश्वास घात तो।
थापण मोसो हरीइ नहीं ए, न्यासापहार ते जाति तो ॥१७
साकार मंत्र तुम त्यजो ए, न वि कीजे मरम प्रकाश तो।
पर ईर्ष्या न वि कीजीइ ए, ईर्ष्या पाप-निवास तो ॥१८
इणि परि पंच भेद धरो ए, छोड़ो दोष अतिचार तो।
निर्मल सत्य व्रत पालीइ ए, जिम तरीए संसार तो ॥१९

सत्य व्रत किणें पालीयो ए, कहुँ अ तेह व्रतान्त तो ।
धनदेव श्रेष्ठि तणो ए, कथा सुणों तुम्हें सन्त तो ॥२०
जम्बूद्वीप सुहावणों ए, मेरु तणी पूर्व विदेह तो ।
पुष्कलावती क्षेत्र नाम तो ए, पुंडरीकिणी पुरी एह तो ॥२१
धन देव श्रेष्ठो वसे ए, अल्प ऋद्धि तणो नाथ तो ।
जिनदेव दूजो श्रेष्ठि ए, बहुधन जन वहु साथ तो ॥२२
एक दिवस ते जिनदेव ए, करवा चाल्यो व्यापार तो ।
धन देव साथे लीयो ए, संच कीयो तिणें वार तो ॥२३
वणिज-वित्त जे वाव तो ए, तेह माँहें भाग आवो आव तो ।
माहो माँहे ते संच कीयो ए, साखि न कीयो कोई साव तो ॥२४
ए हवु कही ते संचर्या ए, परदेसें पुण्य पसाइ तो ।
द्रव्य घणों उपराजीयो ए, जिनदेव मन लोभ थाइ तो ॥२५
कुशल क्षेम पुरी आवीया ए, धनदेव मांगे निज भाग तो ।
जिनदेव आपे नहीं ए, लोभ करे द्रव्य राग तो ॥२६
जिनदेव आपे झूठो वोलीयो ए, अल्प देइ तस वित्त तो ।
सत्यवादी धनदेवनों ए, भाग मांगे निज हित्त तो ॥२७
मांहो मांहे झगड़ो करे ए, वुझे नहीं निज वृद्धि तो ।
प्रजा लोके प्रीच्छ्यां नहीं ए, पछे गया राज-सान्निध्य तो ॥२८
अग्निदेव तिहाँ कीयो ए, सुध पाम्यो धनदेव तो ।
सत्यपणे साहस वल ए, जय पाम्यो ते सेवि तो ॥२९
सत्यपणें अग्नि जल थाइ ए, सती सर्प पुष्प माल तो ।
सत्ये सुर नर पूजा करे ए, सत्ये जय वाल गोवाल तो ॥३०
जिनदेव अशुद्ध होवो ए, राजसत्ता मझार तो ।
झूठू वोले ते वापड़ा ए, सहु मिली कियो धिक्कार तो ॥३१
तस भूपें न्याय विधि ए, वित्त अल्पावु, तरु सर्वतो ।
वस्त्र आभूषण पूजिया ए, लेइ आव्यो घर द्रव्य तो ॥३२
धनदेव जय पामीयो ए, सत्य वोली इह लोक तो ।
जस महिमा गुण विस्तर्यो ए, सुख पाम्यों परलोक तो ॥३३
जिनदेव झूठुं वोलीयो ए, द्रव्य लीयो सहु तेह तो ।
अने वली अपजस पामीयो ए, पापें परभवं कष्ट तो ॥३४
पर्वत झूठी साख भरी ए, वसु नामें मूढ़ राइतो ।
निंदा अपजस पामीयो ए, सातमें नरकें जाय तो ॥३५
सत्यघोष विप्रतणी ए, पर्वत वसु भूपाल तो ।
तेह कथा तम्हें जाण ज्यो ए, महापुराण विशाल तो ॥३६
झूठू वोले जे जीवडा ए, भंड कहें तस लोक तो ।
ख्याति पूजा जाइ तस ए, परभवे दुःख सहे तेह तो ॥३७

इम जाणी सत्य सदा ए, जे बोले सुख खाणि तो ।
सुर नर वर पद भोगवे ए, अनुक्रमें पामें निर्वाण तो ॥३८
अचौर्य व्रत हवे सांभलो ए, तीजो अणुव्रत नाम तो ।
स्थूल पणें ते वर्णवु ए, स्तेय विरत्ति गुण ग्राम तो ॥३९
अण आप्पो जे पर तणुं ए, चेतन-अचेतन द्रव्य तो ।
आपण पै जे लीजीइए, ते चोरी पाप सर्व तो ॥०४
पर द्रव्य जो चोरीइ ए, तो होइ विश्वास-घात तो ।
विश्वासघाते हिंसा होइ ए, हिंसाथी पापवन्त होइ तो ॥४१
आपणपे न वि चोरिये ए, चोरी दीजे न वि अन्य तो ।
परलेता द्रव्य देखीये ए, न वि कीजे अनुमित्त तो ॥४२
वाटे पड़ियो पर द्रव्य ए, थापण वीसरे चित्त तो ।
ते किम्हें न वि राखीये ए, मन वचन काया करी चित्त तो ॥४३
पड़ी देखी वस्तु बहु मूल्य ए, उलंघे न हि,जेह तो ।
तो सहुँ समक्ष लेई मूको ए, पूज्य काज जिन गेह तो ॥४४
चोरी करे पातक बहु ए, कूट कपट दुख खाणि तो ।
निन्दा अपजस विस्तरे ए, निजधर्म गुण होइ हाणि तो ॥४५
वध बंधन छेदन करे ए, राजा देइ बहु दंड तो ।
खर-आरोहण विडंबण ए, दुख देखाडे प्रचंड तो ॥४६
चोरी आणें पर वस्तु तो ए, जो दीजे लेइ मोल तो ।
माहो माँहे मर्म कही ए, भय देखाडे अतोल तो ॥४७
जो राजा लीधो जाणे ए, तो हरे मूल सहित्त तो ।
यष्टि मुष्टि प्रहार करी ए, कष्ट पमाडे अहित तो ॥४८
जीवितव्यथी वालो घणु ए, धन जाता मूकी प्राण तो ।
तो ते धन किम लीजिये ए, हिंसाकारी ते जाण तो ॥४९
त्रण आदें रत्न लगे ए, सधणी होइ जे वस्तु तो ।
अण पूछें जो लीजिये ए, ते चोरी समतुल्य तो ॥५०
जे करता इम जाणीइ ए, पर देखे रखे कोइ तो ।
तेह काज नवि कीजिये ए, कारण विना व्रत जाइ तो ॥५१
धन चोरे तुं एक लो ए, धन कुटुम्ब सहु खाइ तो ।
वध बंधन सहे तुं अकेलो ए, एकलो नरकें जाइ तो ॥५२
विष भखवा सारुं सही ए, विष हरे एक भव प्राण तो ।
चोरी पाप दुख-दोहिलु ए, जनमि जनमि दुख खाणि तो ॥५३
इम जाणिय चोरी त्यजों ए, न्यायविधि करो व्यापार तो ।
हित्त मित्त सुख कारीया ए, संतोष धरो मन सार तो ॥५४
जे हवुं कर्म उदय आपणु ए, ते हवुं फल देई सोय तो ।
लाभ-अलाभे समप्रीति ए, नवि कीजे राग द्वेष तो ॥५५

चोरी उपदेश न दीजिये ए, लीजे नहीं चोरी आणी वस्तु तो ।
राजनीति न विलोपी ए, रोपीये प्रगट प्रशस्त तो ॥५६
तुला मान निरतां राख तो, अधिक ओछो न वि कीजीइए तो ।
सखर निखर वस्तु ममेल तो, घाट वस्तु न वि दीजिए तो ॥५७
इणि परे पंचे भेद लीउ ए, अतीचार दोष टाल तो ।
थूल पणें त्रीजो अणुव्रत ए, मन वचन कायाइ संभाल तो ॥५८

दोहा

अचौर्य अणुव्रत आचरी, पंच रहित अतिचार । सुर नरवर पूजा लही, श्री वारिषेण कुमार ॥१
श्रेणिक भूपति-नन्दन, चेलणा उरि अवतार ।
स्तेय विरती व्रत फल लही, वारिषेण पाम्यो भवपार ॥२
तेह कथा में पहिली कही, स्थितिकरण अंग मझार ।
ते सम्बन्ध तिहाँ जाणजो, संक्षेपे कहियो सार ॥३
जिण-जेणें चोरी आदरी, इहि लोक देखी दुक्ख ।
पर भवि ते दुरगति गया, कहो न वि पायी सुक्ख ॥४
इम जाणिय चोरी परिहरि, धरइ जे अचौर्य भवतार ।
जिन सेवक पदमो कहे, ते पामे भवपार ॥५

भास वैरागी

अचौर्यव्रत इम वर्णवी हो, हवे सुणो शीलव्रत ।
चौथौ अणुव्रत उजलो हो, थूल पणें जीव-सहित, हो जीवड़ा ॥१
ब्रह्मचर्य दृढ़ पालो, पर-नारी संगति टालो हो, जीवड़ा ।
अग्नि साखे जे नारी वरी हो, तेह सुं कीजे संयोग ।
काम-रोग शान्ति हेतु हो, सन्तान-काजे सेवा भोग, हो जीवड़ा ॥२
स्वदार-सन्तोष कीजिये हो, निवृत्त कीजे परदार ।
एह वुं अणुव्रत गृहमेवी हो, थूल ब्रह्मचर्य धार, हो जीवड़ा ॥३
पर-नारी सहु परिहरो हो, वृद्ध यौवन रूप बाल ।
मात वहिन पुत्री समी हो, लेखवो ते सकोमाल, हो जीवड़ा ॥४
नारी परायी दूरि तजो हो, घृणि भजो तेह संग ।
काम क्रीड़ा न वि कीजिए हो, दीजे नहीं दृष्टि रंग, हो जीवड़ा ॥५
हास्य बहु आले तजो हो, मूकीए नहीं निजलाज ।
मरम वयण न वि बोलिए हो, मयण चेष्टा तणी काज, रे जीवड़ा ॥६
वात गोठी संगति तजो हो, झुणि चिनुत सराग ।
रूप निरीक्षण नारी तणों हो, घृणुं म चिंतो सोभाग, रे जीवड़ा ॥७
पर नारी सांपणि-समी हो, राग विष विकराल ।
दृष्टि विषसम दूर वरी हो, सावी बाल गोपाल, हो जीवड़ा ॥८

पुरुष मन नवनीत समो हो, पर-रामा अग्नि कुज्वाल।
राग तापि तल तले हो, नर पतंग वाले वाल, हो जीवड़ा ॥९
दूर रहि नारी देखीइ हो, पुरुष मन विनाश।
जिम कणक काकडि गंध हो, वेगे थाइ ते निराश, हो जीवड़ा ॥१०
हाव भाव विभ्रम करी हो, पुरुष तणों मन पाडि।
कपट माया मेंणों देइ हो, भोला नर रमाड, हो जीवड़ा ॥११
पर-नारी संगे पाप होइ हो, झटके लोक दे आल।
निन्दा अपजस विस्तरे हो, भूप दंडे ततकाल, हो जीवड़ा ॥१२
मन वचन काया़इं करी हो, पर नारी संग टाल।
कृत कारित अनुमोदना हो, नव भेदे शील पाल, हो जीवड़ा ॥१३
वेश्या संग तम्हो परिहरो हो, जेह वुं उच्छिष्ट अन्न।
रजक शिला-समी सही हो, चरवी ऊच नीच जन, हो जीवड़ा ॥१४
मांस-भक्षण करे पापिणी हो, करे ते मद्य कुपान।
ते वेश्या किम सेवीइ हो, सेवे लम्पट ते खान, हो जीवड़ा ॥१५
धनवंत नर ने आदरे हो निर्द्रव्य करे परिहार।
द्रव्य काजि ते स्नेह धरे हो, भोला भूला गंवार, हो जीवड़ा ॥१६
जेणें नर वेश्या आदरी हो, ते थया लाज-भ्रष्ट।
धन यौवन नें गुण तजी हो पाम्या नरक निकृष्ट, हो जीवड़ा ॥१७
इम जाणी रामा पर तजो हो, छोड़ो वेश्या तणुं संग।
सधणी निधणी नारी तजो हो, पालो शील अभंग, हो जीवड़ा ॥१८
ब्रह्मचर्य व्रत तणां हो, छोड़ो पंच व्यतिपात।
तेह भेद हवे सांभलो हो, जेह थी पाप-संघात, हो जीवड़ा ॥१९
पर विवाह पहिलो भेद हो, इत्वरीया-गमन दूजो होइ।
पर गृहीत अनगृहीत हो, त्रीजो भेद ते जो दूरे, हो जीवड़ा ॥२०
अनंग क्रीडा भेद चौथो हो, अभिनिवेश तीव्र काम।
इणें दोषे पाप उपजे हो, पंच अती चार एह नाम, हो जीवड़ा ॥२१
पर विवाह न वि कीजीये हो, कीवे न होइ जस पुन्न।
इत्वरिका दासी जे नारी हो, न कीजे तेह गेह गम्य, हो जीवड़ा ॥२२
परगृहीत अनगृहीत नारी, तस घर गमन त्यजानि।
योनि विना अवर अंगे हो, अंग क्रीडा न वि कीजे, हो जीवड़ा ॥२३
तीव्र काम जेणें उपजे हो, नीपजे उद्रेक राग।
तेह वस्तु न वि सेवियै हो, दोष करो परित्याग, हो जीवड़ ॥२४
इणि परे पंच भेद हो, छोड़ो व्रत अतिचार।
स्थूल अणुव्रत पालिये हो, नव ब्रह्मचर्य गुणधार, हो जीवड़ा ॥२५
निर्मल ब्रह्मचर्य जे धरे हो, दृढ मने भवतार।
ते धन्य ते पुण्यवन्त हो, तेह गुणनों नहीं पार, हो जीवड़ा ॥२६

शीले अग्नि ते जल थाइ हो, शीले सर्प पुष्पमाल ।
शीले केशरी मृग थाइ हो, शीले व्याघ्र सियाल, हो जीवड़ा ॥२७
शीले विप अमृत होइ हो,समुद्र गोष्पद थाय ।
शीले वन भवन होइ हो, महिमा कह्यो किम जाय, रे जीवड़ा ॥२८
शीले शत्रु सहु मित्र थाइ हो, शीले संकट विनाश ।
शीले सुर नर पूजा करे हो, शीले अतिचल वास, रे जीवड़ा ॥२९
इम जाणी शील सदा पालीइ हो, टालो दोप तुरन्त ।
शील व्रत किणें पालीयो हो, तेह कहुँ वृत्तान्त, हो जीवड़ा ॥३०
आरजखण्ड एह रूअड़ो हो, लाड विपय विशाल ।
भृगुकच्छ नयर भलो हो, राजा तिहां वसुपाल, हो जीवड़ा ॥३१
जिनदत्त श्रेष्ठी तिहां वसे हो, जिनदत्ता स्त्री भरतार ।
तस तणी कूखें उपनी हो, पुत्री नीली नाम धार, हो जीवड़ा ॥३२
रूप यौवन ते संचरी हो, जिनधर्म करे भवतार ।
निज सहेली पर वरी हो जिन गेह गई एक वार, हो जीवड़ा ॥३३
अष्ट भेदे जिन पूजिया हो, जल आदि फल-पर्यन्त ।
जाप जपी स्तवन भणो हो, कायोत्सर्ग लेइ रही सन्त, हो जीवड़ा ॥३३
अवर श्रेष्ठि तिहां वसे हो, समुद्रदत्त तस नाम ।
सागरदत्ता नारी ते भणी हो, पुत्र सागरदत्त अभिराम, हो जीवड़ा ॥३५
रूप यौवन ते मंडीयो हो, क्रीड़ा करे अ कुमार ।
तें कन्या तेणें दीठी हो, लावण्य गुणह भंडार, हो जीवड़ा ॥३६
स्वर्ग तणी ए अपछरा हो, अथवा नाग कुमारी ।
चन्द्रतणी ए रोहिणी ए रोहिणी हो, अथवा खेचर ते नारी, हो जीवड़ा ॥३७
कन्या रूपें नर मोहीयो हो, आव्यो ते निज गेह ।
प्रियदत्त मित्रनें कहे हो, मन तणी वात सहुँ तेह, हो जीवड़ा ॥३८
निज तातें ते साम्भल्यो हो, साह वोलें तिणी वार ।
वच्छ, आपण बौद्धधर्मी हो, ते जैन गुणधार, हो जीवड़ा ॥३९
आपणनें ते लेखवे हो, मातंग लोक समान ।
तो कन्या तुझ किम दीये हो, ते श्रावक गुणमान, हो जीवड़ा ॥४०
कपटपणें ते श्रावक थयो हो, पूजे जिन गुरु पाय ।
शास्त्र सुणें व्रत आचरे हो, कूट जाण्यो किम जाय, हो जीवड़ा ॥४१
कन्या मांगु तिणें कीयो हो, साधरमी थइ ते माह ।
निष्कपटी जिनदत्त श्रेष्ठी हो, जैन जाणि कीयो उच्छाह, हो जीवड़ा ॥४२
ते कन्या तेह नें दीधी हो, परण्यों सागरदत्त ।
वहु अर निज घरि आदीआ हो, सांचो धर्म फल सत्त्य, हो जीवड़ा ॥४३
मुक्यों तेणें धर्म जिन तणों हो, वली थयो बौद्ध भक्त ।
नारी निज मन चिन्तवे हो, दैवे कीधो अयुक्त, हो जीवड़ा ॥४४

जिनदत्त श्रेष्ठी इ सांभल्यो हो, कन्या धूती गयो धूर्त्त ।
प्रपंच रचि विवाही गयो हो, कपट पणें बौद्ध वृत्त, हो जीवड़ा ॥४५
हा, कन्या रत्न मुझ तणु हो, लेंइ गयो बौद्ध भाग ।
जानें समुद्र मांहे पड्यो हो, अथवा कूप अथाग, हो जीवड़ा ॥४६
कन्या रत्न मुझ तणों हो, दैवे उदा लीने लीध ।
मिथ्याती घरि काइ पड्यो हो मोटो पातक कीध, हो जीवड़ा ॥४७
जैन विना निज पुत्री नें हो, मिथ्याती नें जे देय ।
ते अज्ञानी महापापी आ हो, वहु जन्म दुख ते लेय, हो जीवड़ा ॥४८
कूप मांहे घाले वावारु हो, अथवा दीने वारु विष ।
एक भव ते दुक्ख दीये हो, मिथ्याती वहु भव दुःख, रे जीवड़ा ॥४९
मिथ्याती नें जो दीजिइ हो, तो करे मिथ्यात वृद्धि ।
जिनधर्मी नें जो दीजिइ हो, तो होइ धर्म सन्तान शुद्धि, हो जीवड़ा ॥५०
जो जैन नें परिहरि हो, द्रव्य तणों करि लोभ ।
मिथ्यादृष्टि नें जो देइए हो, तो होय निजधर्म क्षोभ, हो जीवड़ा ॥५१
इम जाणी जत्न करी हो, कन्या रत्न मनाख ।
सावर्मी दानज दीजिये हो, अथवा दीक्षा काजें राख, हो जीवड़ा ॥५२
सुसरो केहो वहु धर्म करो, हो, बौद्ध तणी करो सेव ।
ज्ञानवंत गुरु अम्ह तणा हो, परतक्ष जाणें सहु हेव, हो जीवड़ा ॥५३
भोजन काजे नोंतरा हो, आव्या वौद्ध ततकाल ।
एकेकी पगखरी तणों हो, कीधो व्यंजन रसाल, हो जीवड़ा ॥५४
जीम करी ते संचर्या हो, एकेकी खुरीउ न वि देख ।
पूछे कहो किहां पगखुरी हो, अरू परू इम जोइ रे, हो जीवड़ा ॥५५
नीली कहे तम्हें ज्ञानें जोउ हो, निज उदर छै मझार ।
अन्न वमी तिणें जोइयो हो, देख्या खंड तिणी वार, हो जीवड़ा ॥५६
तव लाज्या ते वापड़ा हो, बौद्ध गया निज मट्ठ ।
वौद्ध मान भंग जाणीनें हो, सजन करे तस हट्ठ, रे जीवड़ा ॥५७
जुदी उ रीते मूकिया हो, रहे ते स्त्री भरतार ।
निश्चल मन नीली तणुं हो, धर्म न मूके सार, हो जीवड़ा ॥५८
कंत पिता मणी सहोदरी हो, रोसे दीओ तस आल ।
नीली ए पर नर सेवियो हो, जाणें उवी विषझाल, हो जीवड़ा ॥५९
हलुये हलुये दोष विस्तरे हो, नीली तणो लोक मांहि ।
नीली निज कानें सांभल्यो हो, कर्म-तणां फल चाहि, हो जीवड़ा ॥६०
जिन-आगल कायोत्सर्ग धरी हो, द्विविध लीयो संन्यास ।
यो दोष टले तो पारणुं हो, नहीं तो प्राण-विनास, रे जीवड़ा ॥६१
पुर देवी आसन कंपीयो, सती य शील प्रभाव ।
अवधिज्ञानें जाणीने हो, नीली पासे देवी आव, रे जीवड़ा ॥६२

सेनें प्राण तम्हो तजो हो, सती सुणों मुझ वात ।
नयर प्रतोली हुं जड़ु हो, आलउ-तारु प्रभात, रे जीवड़ा ॥६३
राजा प्रधान श्रेष्टीनें हो, सरखुं सुपन देखाडि ।
सती तणें वाम पाथ हो, नयर-पोल उघाड़, रे जीवड़ा ॥६४
एहवुं कहि मन थिर करी हो, देवी गई निज ठाम ।
तिणी रात्रें स्वप्न देख्यु हो, देवाणो पोल उदास, रे जीवड़ा ॥६५
नयर क्षोभ ते सांभली हो, रुंधी पुरी-पोल चार ।
राजा आदि सहुं आवीया हो, रात्रें स्वपन संभार, रे जीवड़ा ॥६६
नयर नारी सहु तेडीआ हो, देवाड्यो वाम पाय ।
प्रतोली न वि उघड़ी हो, लाजी ते पाछी जाय, रे जीवड़ा ॥६७
पछे सती नीली आणी हो, देवाड्यो डांवो कदम ।
चारी पोल तव उघड़ी हो, लोक तणो गयो भरम, रे जीवड़ा ॥६८
जय जयकार तव नीपनों हो, देव करे पुष्प वृष्टि ।
सयल सती माहें शिरोमणि हो, नीली सती उत्कृष्ट, रे जीवड़ा ॥६९
वस्त्र-आभूषण भूप दीया हो, पुहती कीवी निज गेह ।
गीत नृत्य महोच्छव करे हो, कलंक ठल्यो सहु तेह, रे जीवड़ा ॥७०
इहि लोके सुर पूजा लही हो, परलोके पायी पद देव ।
शील व्रत फल्या सती हो, नीली जस गुण हेव, रे जीवड़ा ॥७१
सती सीता शील वल हो, अग्निकुंड जल पूर ।
सूरजें पण पूजा कही हो, सोलमें स्वर्ग हुओ सुर, रे जीवड़ा ॥७२
द्रौपदी चन्दन वाला आदि हो, शीलतणा फल जोइ ।
इहि लोके जस गुण पायीने हो, परलोके देव पद होइ, रे जीवड़ा ॥७३
सुदर्शन श्रेष्ठी भलो हो, तेहनों गुण प्रसिद्ध ।
सुर नर पूजा पायीने हो, शील फल हुवो सिद्ध, रे जीवड़ा ॥७४
जयकुमार सेनापति हो, शील प्रशंसा इन्द्र कीव ।
देव आदी परीक्षा करी हो, जस कीर्त्ति जय लीध, रे जीवड़ा ॥७५
सुकेत श्रेष्ठी आदें करी हो, जिणें जिणें शील पाल ।
सुर पूजा महिमा लही हो, संसार तणा दुःख टाल, रे जीवड़ा ॥७६
तेह कथा तमें जाण ज्यो हो, जिन शासन मझार ।
शील महिमा किम वर्णवुं हो, किम कह्यो जाइ पार, रे जीवड़ा ॥७७
शील जिणें न वि पालीयो हो, तेह तणीं कहुं वात ।
जमदंड़ी माता शिवा हो, भूपे कियो तस घात, रे जीवड़ा ॥७८
दुःख देखि दुर्गति गयो हो, जमदंडी कोटवाल ।
लंपटपणें माता सेवी हो, पाम्यो वहु कष्ट जाल, रे जीवड़ा ॥७९
रावण तिहुं खंडे राजीया हो, सीता तणें अभिलाष ।
निन्दा अपजस पायीयो हो, पाम्यो नरक निवास, रे जीवड़ा ॥८०

धवलश्रेष्ठी दुरमती हो, मदन मंजूषा करी आस ।
धन जस भ्रष्ट थयो हो, सहे दुर्गति-वास, रे जीवड़ा ॥८१
अमृता महादेवी नामें हो, कुब्ज लंपट कुनार ।
छट्ठी नरक भूमि उपनी हो, जसोधर कंत मार, रे जीवड़ा ॥८२
ए आदें बहु नर नारी हो, जेणें शील न रक्ष ।
तेह दुःख सुवर्णवुं हो, संसार दुःख तणा दोष, रे जीवड़ा ॥८३

वस्तु छन्द

शील पालो शील पालो, भविजन भविजन भावे करी ।
शील चिन्तामणि कामधेनु, शील कल्प वृक्ष अमूल्य ।
मनोहर सुर नर वर पद देई नें, अनुक्रम आपे मोक्ष निरभर ॥
जे नर नारी शील पालसी, टाले सर्व अतीचार । जिन सेवक **पदमो** कहे, धन धन्य ते अवतार ॥८४

अथ पंचम अणुव्रत वर्णन । ढाल विणजारानी

चौथो कह्यो शीलव्रत, पांचमो व्रत हवे सांभलो, विणजारा रे ।
परिग्रह संज्ञानाम, थूल अणुव्रत ऊजलो, विणजारा रे ॥१
क्षेत्र वास्तु धन धान्य, द्विपद वली चतुष्पद, विणजारा रे ।
आसन शयन कुप्य भांड, आदि पद दश भेद, विणजारा रे।।२
क्षेत्र करो मर्याद, हल भूमि संख्या लीजिये, विणजारा रे ।
हाट घर तणा वास, कोटि-कोटि संख्या कीजिये, विणजारा रे ॥३
धन सौवर्ण रत्न रूप्य, अर्थ मर्यादा कीजिये, विणजारा रे ।
गोधूम चणका शालि, कोग कोदव आदें संक्षेपिये, विणजारा रे ॥४
दासी दास कर्मकारि, चौपद महिषी गोकुल, विणजारा रे ।
शकट सिंहासन रथ, जान जंपान चकडोल, विणजारा रे ॥५
ढोल खाट पट पाटि, वस्त्र आभूषण नारीना, विणजारा रे ।
धातुतणा भाजन, क्रयाणा वस्तु-रक्षण, विणजारा रे ॥६
क्षेत्र आदि दस विध परिग्रह तणी संख्या करो, विणजारा रे ।
छांडि ममता मोह, निज मनें संतोष धरो, विणजारा रे ॥७
छोड़ो बहु आरंभ, आरंभथी हिंसा घणी, विणजारा रे ।
हिंसा तृष्णाकारी पाप, तृष्णा पाप दुख खाणी, विणजारा रे ॥८
परिग्रह पाप नुं मूल शूल-समो साले सदा, विणजारा रे ।
जिम जिम मिले बहुधन, तिम तिम लोभ बाधे तदा, विणजारा रे ॥९
लोभ ए दावानल धन, इंधन अधिको वले सही, विणजारा रे ।
तृष्णा तेल संचित अधिक पणें घणु तल फले, विणजारा रे ॥१०
लोभे करे सहु क्षोभ, लोभके हनें माने नहीं, विणजारा रे ।
लोभे बहु अवगुण, लोभे दुःख सदा सहे, विणजारा रे ॥११
संतोष पाणी पूर, लोभ अनल ते उछले, विणजारा रे ।
तृष्णा तजो पाप बीज, मन सुधे ते योग वो, विणजारा रे ॥१२

धन काजे सहे कष्ट, वन सागर दे समें फिरे, विणजारा रे।
वरषा शीत उष्ण काल, वात शीतलु अणुसरे, विणजारा रे ॥१३
धन काजे करे सेव, घोटक आगल संचरे, विणजारा रे।
मस्तक धरे वहुभार, धन काजे कष्ट घणुं करे, विणजारा रे ॥१४
कष्टे मिले जो धन, तो दुर्जन राजा हरे, विणजारा रे।
जल अग्नि धन विघ्न, गोत्री धन इच्छा करे, विणजारा रे ॥१५
धन उपजत्तां होय कष्ट, जो आव्यो तो कष्टे रहे, विणजारा रे।
कष्टें आवे कष्ट देय जाय, धिग धिग रा धन कष्ट वहे, विणजारा रे ॥१६
मोटा करे मनोरथ, पुण्य विना ते किम फले, विणजारा रे।
उदय होय जो पुण्य, तेह सहिजे सहु मिले, विणजारा रे ॥१७
इम जाणी करो पुण्य, पुण्य नियम थी ऊपजे, विणजारा रे।
नियम करो संग सीम, सीमे संतोप ऊपजे, विणजारा रे ॥१८
नियम विना नहीं पुण्य, पुण्य विना सुक्ख नहीं, विणजारा रे।
नियम विना मन प्रसार, मन प्रसरे, पाप उपजे, विणजारा रे ॥१९
मन तृष्णा महापाप, सालसिक्थ ए माछलो, विणजारा रे।
मन तृष्णा करि तेह, नरकें गयो ते कसमलो, विणजारा रे ॥२०
करो मन गज संवर, मन गज गाढ़ो वंधीए, विणजारा रे।
परिग्रह-संख्या ते सीम, नियम-अंकुश ते साधी ए, विणजारा रे ॥२१
मन मोकले महादुक्ख, छिन एकें त्रिभुवन फिरे, विणजारा रे।
पवन थी मन चंचल, सवलि सघले ते संवरे, विणजारा रे ॥२२
परिग्रह तणा मनोरथ, मन प्रसर पाप कारण, विणजारा रे।
अणमिलतां चिंते जेह, तेह कीजे निवारण, विणजारा रे ॥२३
जिम किम रहे निज ठाम, त्याम पणे मल संवरो, विणजारा रे।
वुद्धि वले धरि संतोप, रोष राग ते परिहरो, विणजारा रे ॥२४
नियम विना नर-नारि, असंज्ञी पशुसम जाणिये, विणजरा रे।
तेह भणी संग सीम, यथाशक्ति तिम आणिये, विणजारा रे ॥२५
परिग्रह संख्य अणुव्रत, थूल पणें पंचमुं कही, विणजारा रे।
छोड़ो पंच व्यत्तीपात, तेह भेद सुणो सही, विणजारा रे ॥२६
अतिवाहन पहिलो नाम, अतिसंग्रह अतिविस्मय, विणजारा रे।
अति लोभ चोथो भेद, अति भारारोपण पंचम, विणजारा रे ॥२७
अतिवाहन ते जोइ, वैल आदि पशु खेडे घणुं, विणजारा रे।
नियम उलंघी जेम यदि, अतिवाहन दूपण तेह तणुं, विणजारा रे ॥२८
संग्रहे धान अत्यन्त, कुहि कीट पहे धणुं, विणजारा रे।
वेंचे नहीं अति लाभ, लोभे करी करे घणुं, विणजारा रे॥ २९
लेय वेंचे क्रयाणुं, वस्तु सार मूल्य देई, विणजारा रे।
पछें करे विसंवाद, तृष्णा पणें विस्मय लेई, विणजारा रे ॥३०

विणजी वस्तु अत्यन्त, लाभ लेय विक्रीय करी, विणजारा रे।
पछे करे मन क्षोभ, वहुमूल्य ममता धरे, विणजारा रे ॥३१
सखर वेईल महिष, जीव जेता भार वहे, विणजारा रे।
मान अधिक छाले भार, अतिभारा रोप दोष लहे, विणजारा रे ॥३२
इणि परि पंचे अतिचार, पंचम व्रत, दोष तजो, विणजारा रे।
परिग्रह संख्या अणुव्रत, थूण पणें निर्मल भजो, विणजारा रे ॥३३
जिम जिम कीजे संवर, तिम तिम सन्तोप ऊपजे, विणजारा रे।
सन्तोपे होय पुण्य, पुण्यें धन सुख सम्पजे, विणजारा रे ॥३४
संग-संख्या शुभ नियम, पंचम अणुव्रत किणें पाल्यो, विणजारा रे।
हवे कहुं ते सम्वन्ध, जेणें व्रत अजुआ लीयो, विणजारा रे ॥३५
कुरुजांगल इह देश, हस्तिनागनयर भलों, विणजारा रे।
सोमप्रभ तसराय, कुरुवंशी भूप गुण-निलो, विणजारा रे ॥३६॥
तस पुत्र जमनामा, सुलोचना नारी तेह तणी, विणजारा रे।
भरततणों सेनापती, महिमा जसकीर्त्ति घणी, विणजारा रे ॥३७
वन्दे सह गुरु पाय, एक पत्नी व्रत लियो, विणजारा रे।
सुलोचना एक नारि, अवर नारी-नियम कियो, विणजारा रे ॥३८
एक दिन जयकुमार, ऊपर ली भूमि वैठो रही, विणजारा रे।
पासें सुलोचना नारि, पूरव भवकथा कहीं, विणजारा रे ॥३९
हिरण्यवर्मा भूपाल, प्रभावती नारी धणी, विणजारा रे।
जातिस्मरण-प्रभाव, पहिला भव सम्वन्ध सुणी, विणजारा रे ॥४०
तव आवी विद्याचंग, आकाशगामिनी आदे करी, विणजारा रे।
साधी थी जे पेहले भव, पुण्य प्रभावें ते वरी, विणजारा रे ॥४१
विमान रचि विशाल, विद्याधर जात्रा गयो, विणजारा रे।
साथे सुलोचना नारि, जयकुमार सन्तोप भयो, विणजारा रे ॥४२
मेरु आदि करी जात्र, कैलाश पर्वते आवीयो, विणजारा रे।
चौवीस जिन हिम गेह, भरत भूपें जे भावीया, विणजारा रे ॥४३
पूजी वन्दि जिन पाय, राय-राणी गिरि-शिर गया, विणजारा रे।
वन क्रीड़ा करे सार, जुजुआ दोई जव ते थया, विणजारा रे ॥४४
तिणसमय सौधर्मनाथ, साथ सभा माहे इम कहे, विणजारा रे।
पुण्यवन्त जयकुमार, एक पत्नी नाम वहे, विणजारा रे ॥४५
तव रविप्रभ एक देव, परीक्षा करवाते संचर्यो, विणजारा रे।
कीयो नारी शुभरूप, तिहु विल्यासती परिवर्यो, विणजारा रे ॥४६
जिहां छै जयकुमार, तिहां आगल आवी ऊभी रही, विणजारा रे।
हाव भाव विलास, हास्य करी विनती कही, विणजारा रे ॥४७
नेमी विद्याधर ईश, तरु नारी हुं रूवड़ी, विणजारा रे ॥४८
निज कंत इच्छा भाव, ते तजी हुं इहा आवी, विणजारा रे।

तुझ ऊपर क्यों मोह, मुझ वांछा पूरो हवे, विणजारा रे ॥४९
जव सुणी जय वात, पात वज्र जाणें हुओ, विणजारा रे।
जय कहे सुणों तम्हें वात, भाव कांइ कीजे जुठो, विणजारा रे ॥५०
तुर्नें कहीइ परनार, सुलोचना विण नियम मुज्झ, विणजारा रे।
सहोदरा होइ परनार, खप नहीं माह रे तुज्झ, विणजारा रे ॥५१
इम कही धरियो मौन, कायोत्सर्ग लेइ ध्यानें रह्यो, विणजारा रे।
निश्चल जैसो मेरु, धीर वीर गम्भीर कह्यो, विणजारा रे ॥५२
तव नारी तिणी वार, दुर्धर, उपसर्ग करे, विणजारा रे।
देखाडे वहु श्रृङ्गार, रागचेष्टा विकार धरे, विणजारा रे ॥५३
निष्कम्प जाणिय मन्न, तव देव ते प्रगट थयो, विणजारा रे।
धन्य धन्य जयकुमार, सुधन्य-धन्य शील भयो, विणजारा रे ॥५४
इन्द्र प्रशंसा तव कीध, सत्य सहाय तुझ निर्मलो, विणजारा रे।
आयी वस्त्र-आभरण, सुर पूजी गयो ऊजलो, विणजारा रे ॥५५
जय पामी जयकुमार, निज नारी सुंधर आवीयो, विणजारा रे।
भोगवी राज भंडार, सार वैराग ते भावीयो, विणजारा रे ॥५६
भव भोग क्षण-भंग, रंग जिम मेघ वीजली, विणजारा रे।
अथिर आयु जिम वायु, काय यौवन जल अंजली, विणजारा रे ॥५७
राजा थापी निजपुत्र, समोसरण आदि जिन वंदिया, विणजारा रे।
छोड़ा परिग्रह भार, संजम धरि आनंदिया, विणजारा रे ॥५८
ध्यान अध्ययन अभ्यास, तप वल कर्म निर्जरी, विणजारा रे।
पामी केवलज्ञान, जय मुनि मुक्ते गयावी, विणजारा रे ॥५९
जुओ जुओ नियम प्रभाव, एक पत्नी व्रत पालियो, विणजारा रे।
जय पामी सुर पूज्य, संसार दुःख वली टालियो, विणजारा रे ॥६०
इणि परे करी संग सीम, पंचम अणुव्रत जे धरे, विणजारा रे।
पामी सोलमें स्वर्ग, अनुक्रमें शिवते अनुसरे, विणजारा रे ॥६१॥
पाले नहीं जे व्रत्त, परिग्रह-ममता जें करें, विणजारा रे।
नियम विना होइ पाप, पापें दुर्गति संचरे, विणजारा रे ॥६२
लुव्वदत्त इक श्रेष्ठि, परिग्रह ममता करी घणी, विणजारा रे।
संचिय कूर्च नवनीत, अग्नि जल्यो ते तृष्णा धणी, विणजारा रे ॥६३
पांम्यो वहु दुर्ध्यान, मरण पामी दुर्गति गयो, विणजारा रे।
ममता पाप विपाक, सदा सहु दुखी भयो, विणजारा रे ॥६४

दोहा

सुभूमि चक्रवर्ती आठमो, वहु आरंभ पसाय। लोभ तृष्णाफल लंपट, सातवें नरके जाय ॥६५
नव नारायण नारद, चक्री प्रति वासुदेव। वहु आरंभ पाप आचरी, नरकें पाम्या दुख हेव ॥६६
जे जे नरकें जीव उपनां, उपजे हैं वर्तमान। वली उपजसे जे नारकी, ते पापारंभ निदान ॥६७
इम जाणी मन दृढ़ करी, छांडो आरंभ पाप। संतोषे मन संवरो, जिम टले भव-संताप ॥६८

ढाल चौपाइनी

पंच अणुव्रत इणि परें कही, त्रण गुणव्रत हवे सुणो सही।
अणुव्रतनें वधारे जेह, ए त्रण ही सार्थक गुण तेह ॥१
दिग्-संख्या पेहलो गुणव्रत, बीजो देश व्रत गुण सत्य।
त्रीजो अनर्थ दंड परिहार, ए त्रणे व्रत करिये सार ॥२
पूरव दक्षिण उत्तर दिसा, अग्नि नैऋत्य वाय ईशान।
इन जुत अधो ऊर्ध्व दस भेद, एह दिस-संख्या करो तेह ॥३
नदी सागर पर्वत वन जाणि, देश नयर संख्या मनि आणि।
गांव योजन तणी करो मर्याद, दिग्-संख्या व्रत गुण अनादि ॥४
भूमि-सीमा कीजे जेतलो, उलंघे नहीं किमे तेतलो।
सीमा अभ्यन्तर अणुव्रत होइ, सीमा बाह्य ते महाव्रत जोइ ॥५
थावर त्रस जीव रक्षा कीध, अभय दान सदा तस दीध।
दिग्-संख्या होइ व्रत गुण, महाव्रत पुण्य आये निपुण ॥६
यत्न करि धरो गुणव्रत सदा, किणें विसारो निजव्रत कदा।
व्रत तणां छोड़ो अतिचार, हवे कहूँ ते पंच प्रकार ॥७
अधो ऊर्ध्व अतिक्रम दोय, तिरछ गमन त्रीजो ते जोय।
क्षेत्र-अवधि-लंघन चौथो होय, स्मृति अन्तर पंचम ते सोय ॥८
गिरि-शिखर आकाशे जे चढ़े, ऊर्ध्व गमन अतिक्रम जड़े।
भू-गर्भ वापी कूप गर्तखाणि, अधो गमन अतिक्रम ते जाणि ॥९
नगर-गमन उलंघन जेह, तिरछ अतिक्रम दूषण तेह।
क्षेत्र-अवधि-लोप न वली करे, सीमस्मृति अन्तर ध्यान धरे ॥१०
इम जाणीने थई सावधान, व्रततणां छोड़ो दोष वितान।
निर्मल गुणव्रत सदा धरो, निजशक्ति दिग्-संख्या करो ॥११
देशविरत हवें तम्हें सुणो, दिग्-संख्या माहे ते भणों।
निजनयर प्रतोली भणी, संख्या कीजे सीमा भणी ॥१२
प्रभात समय निरन्तर तणी, सीमा कीजे गांव योजन तणो।
ग्राम सेरी पाटिक हाट गेह, अनुदिन संख्या कीजे तेह ॥१३
देश गुणव्रत इणि परिवरो, निजशक्ति संख्या अनुसरो।
तेहतणा छोड़ो अतिचार, हवे कहुं ते पंच प्रकार ॥१४
आनयन नाम पेहलो अतिचार, पर-प्रेषण बीजो प्रकार।
त्रीजो शब्द, रूप चौथो होय, पुद्गल क्षेप पंचम ते जोय ॥१५
रहते निज सीमा मझार, पर पाहि वस्तु अणावे सार।
उपदेश देय करावे काज, पर-प्रेषण ते दोष-समाज ॥१६
आपणपें सीमा-मांहे रही, काज करावे शब्दें कही।
रूप देखाड़ी पर आपणों, सेवक पेंरी कीजें घणो ॥१७

काज वश पुद्गल-क्षेप करी, प्रेरे परनें संज्ञा धरी ।
इणि परे अतिचार पंच, दोप टालि करो पुण्य संच ॥१८
देश अणुव्रत इणि परें धरो नियम-संख्या अणुव्रत सरे ।
थावर जीव त्रस-रक्षा काजि, जल-सहित पालो भव्य राजि ॥१९
त्रीजो गुणव्रत अनर्थ दंड, मन वच काया त्यजो प्रचंड ।
अर्थ विना जे कीजे काज, ते अनर्थ पाप जानो समाज ॥२०
अनर्थदंड तम्हो दूर करो, पंचविधि सदा परिहारो ।
तेह तणा सुणो हवे भेद, वृथा पाप कीजे नहि खेद ॥२१
पाप उपदेशो पेहलो नाम, हिंसा उपदेश दूजो उद्दाम ।
त्रीजो अपध्यान चौथो दुःश्रुति होय, प्रमादचर्या पंचम ते जोय ॥२२
पापोपदेश न वि दीजिए, हिंसा झूठ चोरी नवि कीजिए ।
मैंथुन सेवा परिग्रह मोह, क्रोध मान माया मद लोए ॥२३
भूमि-खनन वृथा रावन नीर, अग्नि-जालण निक्षेप समीर ।
तरु-छेदन भेदन त्रसजीव, खंडण पीसण पातक अतीव ॥२४
धर्म-विघ्न त्रिहवा आदेश, वापी वेहला सरकूप निवेश ।
धर्म विना जेणें उपजे पाप, तेह उपदेश छोडो संताप ॥२५
हिंसातणा उपकरण जे बहु, खड्ग आदि आयुध जे सहुं ।
कोस कुदाला छुरिका दात्र, फरसी सांखल बंधन कुं गात्र ॥२६
अग्नि ऊखल मूसल कुजंत्र, क्षेत्र सारण वन वाडी तंत्र ।
मंजारि कुर्कट श्वान सिचांण, ते नवि पालो हिंसक अज्ञान ॥२७
दुर व्यापार तजो अपध्यान, पापकारी बहु कुवस्तु संधान ।
कन्दमूल मधु माखण व्यापार, जिणे उपजे सावद्य अपार ॥२८
हिंसा मृषा चोरी संभोग, रतिचिंतन टालो संयोग ।
इष्ट अनिष्ट पीडा निदान, आर्त्त पाप तजो अपध्यान ॥२९
भरत पिंगल संगीत कुनाद, कोकशास्त्र करे उन्माद ।
दुःश्रुति अष्टादश पुराण, कलकारी परमत कुराण ॥३०
कामण मोहण वशि कारी जंत्र, स्तम्भ डम्भ चमत्कारी मंत्र ।
राज आदि विकथा पंच वीस, करतां सुणतां होइ पाप-उपदेश ॥३१
प्रमाद पणें ते नवि चालीइ, फोके पाप पिंड नवि वालीइ ।
आलस कीधे सावद्य उपजे, यत्न विना पुण्य किम नीपजे ॥३२
इम जाणिय छोडो परमाद, राग द्वेष तजो विसंवाद ।
अनर्थ दंड तणा अतिचार, पंच भेद करो परिहार ॥३३
कन्दर्प पहेलो व्यतिपात, बीजो कुकर्म त्रीजो मौखर्य वात ।
असमीक्ष्याधिकरण चौथो होय, भोगोपभोगानर्थ पंचम जोय ॥३४
काम चेष्टाकारी बहुराग, बीभत्स वचन बोले अभाग ।
कुत्सित बोले बहुभंड, गालि दुर्वाक्य बोले व्रत खंड ॥३५

मौखर्य पणें जल्पन वहु करे, काज विना वचन जु उच्चरे।
हित-अनहित अविचारी कहे, असमीक्ष्याधिकरण ते वहे ॥३६
भोग-उपभोगकारी जे वस्त, अर्थ विना चिंते समस्त।
ये पंच टालो अतिचार, त्रीजो व्रत पालो गुणधार ॥३७

वस्तु छन्द

त्रिण गुणव्रत त्रिण गुणव्रत धरो भवियण भावे करी।
पंच अणुव्रत गुणदायक, सार्थक नाम जेह तणां निर्भर।
थावर त्रस रक्षा कारण वारण संसार-दुःख दुर्धर ॥
जे भवियण जत्ने करी पाले गुणव्रत सार। सुर नर सुख ते भोगवी, ते पामें भवपार ॥३८

ढाल रासनी

गुणव्रत इम में वर्ण्यव्यो ए, हवे कहुँ शिक्षाव्रत चार तो।
शिक्षा जीव हित कारण ए, वारण संख्या संसार तो ॥१
भोग्य वस्तु शिक्षा पहिलो ए, उपभोग्य दूजो होय तो।
अतिथि संविभाग त्रीजो व्रत ए, अंत संलेखणा चौथो जोय तो ॥२
भोग्य वस्तु ते जाणिये ए, जे होइ भोग्य एक वार तो।
पुनरपि काज आवे नहीं ए, अनुभव होइ निःसार तो ॥३
चन्दन कुंकुंम केशर ए, पुष्प फल रस-पान तो।
असन खादिम स्वादु वस्तु ए, लेय पेय पकवान तो ॥४
भोग्य वस्तु ते परिहरो ए, सावद्यकारी अहित तो।
कन्दमूल अथाणा आदि ए, अनन्तकाय परित्याग तो ॥५
पत्र पुष्प शाक रु त्यजो ए, नवनीत दूध नहि लाग तो।
दोह्यां पछी काचा दूधमां ए, वेहु घड़ी केडे जाणि तो ॥६
सम्मूर्च्छन असंख्य होइ ए, इम कहे जिनवाणि तो।
पशु दोहि दूध गालिये ए, उष्ण करो ततकाल तो ॥७
जल करी ते आखरो ए, आलस छांडी तम्हो वाल तो।
पीलु प्रपोटा जांवु वोर ए, वेल सेलर जाति तो ॥८
मीठा कडुवा तुंबडा ए, पिंडोला कुसुमां भांड तो।
किरकाली गलकल काफल ए, छिदल काचा दही छांछ तो ॥९
निज कंठ श्वास योगिये ए, उपजे त्रसजीव राशि तो।
देश विरुद्धांरी गणां ए, अवर विरुद्ध कवली जेह तो ॥१०
शास्त्र विरुद्धी जे होइ ए, भक्ष तजो वहुँ तेह तो।
.... ॥११
ए आद अयोग्य जे जाणिये ए, जीव असंख्य, अनन्त काय तो।
लव सुख, दुःख मेरु समु ए, भविजन ते किम खाय तो ॥१२
इम जाणि भोग्य वस्तु ए, कीजे तस मर्याद तो।
त्रस थावर-रक्षा हेतु ए, होय नहीं हरप विषाद तो ॥१३

प्रथम ते शिक्षाव्रत तणा ए, छोड़ो पंच अतिचार तो।
पंच इन्द्री भोग संख्या ए, उलंघन करो परिहार तो ॥१४
बीजो शिक्षाव्रत सुणो ए, उपभोग वस्तु जेह तो।
वली वली जे अनुभवीये ए, उपभोग्य वस्तु जाणो तेह तो ॥१५
निज नारी आदें करी ए, वस्त्र आभूषण माल तो।
कनक रजत माणिक मोती ए, हीरा छीक परवाल तो ॥१६
देश नयर घर हाट ए, द्विपद चतुष्पद आदि तो।
चेतन अचेतन जे वस्तु ए, तस कीजे मर्याद तो ॥१७
हस्ती तुरंग पालकी रथ ए, भाजन वस्तु वाहन्न तो।
गीत नृत्य वाजित्र आदि ए, गमन शयन आसन्न तो ॥१८
तिथि नामे अन्न फल रस ए, नित प्रति कीजे नेम तो।
निजशक्ति मास वरस ए, जावजीव अथवा सीम तो ॥१९
नेम विना एक घड़ी ए, वृथा गयो तेनों काल तो।
इम जाणि सावधान थई ए, कीजे व्रत संभाल तो ॥२०
नेम विना नर जाणवु ए, कृत्रिम मनुष्य आकार तो।
अथवा असंज्ञी पशु-समो ए, जाणें नहीं विचार तो ॥२१
नेम-सहित एक दिन ए, जीवितव्य तस प्रमाण तो।
व्रत विना वरस कोटी ए, वृथा जीवितव्य जाण तो ॥२२
इम जाणि नियम धरो ए, नियमें उपजे पुण्य तो।
पुण्ये ऋद्धि वृद्धि संपजे ए, ऋद्धिपणें सुख वन्य तो ॥२३
मूढ मन चिंतवी ए, वांछा करे बहुभोग ए तो।
उपभोग चिंते घणां ए, पुण्य विण नहीं संजोग तो ॥२४
उपभोग संख्या करो ए, संख्याथी होय संतोष तो।
संतोषे सुख उपजिये ए, नवि होइ राग कुरोप तो ॥२५
उपभोग व्रततणां ए, जोड़ो पंच व्यतिपात तो।
व्यतीपातें पाप उपजे ए, पापें होवे व्रतघात तो ॥२६
अनुप्रेक्षा पहिलो दोष ए, अनुस्मृति दूजो होय तो।
अति लौल्य तृष्णा चौथो ए, अनुभव पंचम जोय तो ॥२७
निरन्तर भोग सेवीइए, ते अनुप्रेक्षा नाम तो।
भोग-सीम संभारे नहीं ए, ते अनुस्मरणदोष भान तो ॥२८
लंपट पणें भोग सेवियें ए, अति रागे तुल्य होइ तो।
भविष्यत्त भोगवांछा करि ए, अतितृष्णा ते जोइ तो ॥२९
अतृप्तिपणें भोग सेवीये ए, अनुभव करे असंतोष तो।
पंच इन्द्री उपभोग्य सीम ए, उलंघन पंच दोष तो ॥३०
उपभोग्य व्रततणा ए, टालो पंच अतिचार तो।
सावधान पणें सदा धरो ए, निर्मल शिक्षाव्रत सार तो ॥३१

व्रत पाले पुण्य उपजे ए, जस महिमा गुण होइ तो।
सुर नर वर सुख पामीइ ए, अनुक्रमें शिव सुख जोइ तो ॥३२
तीजो शिक्षाव्रत तणो ए, नाम अतिथि संविभाग तो।
आहार औषध अभय ज्ञान ए, दीजे चतुर्विध त्याग तो ॥३३
तिथि वार पर्व मांही ए, निमित्त उच्छव नहि राग तो।
काय स्थिति काजें अन्न लीये ए, ते अतिथि पात्र करूँ भाग तो ॥३४
आमंत्रण निमित्त करी ए, आहार काजे आवे जेह तो।
अतिथि पात्र ते हुइ नहीं ए, अभ्यागत जाणों सहु तेह तो ॥३५
त्रिधा पात्रे भेद सुणो ए, विधि जणांवली भेद तो।
दान तणां भेद कहुँ ए, जिम कह्यो जिनदेव तो ॥३६
उत्कृष्ट मध्यम जघन्य पात्र ए, मुनिवर पात्र उत्कृष्ट तो।
अट्ठावीस मूल गुण धारी ए, रत्नत्रय विशिष्ट तो ॥३७
परिषह सहें तिहँ कालतणा ए, धर्मदश लक्षण सहित तो।
सहस्त्र अष्टादश शीलवर ए, परिग्रह चौवीस रहित तो ॥३८
उत्तम अष्ट ध्यान धरी ए, तप द्वादश गुणवंत तो।
सोल भावना भावक ए, तेर क्रियाव्रत संत तो ॥३९
तप जप संजम आचरे ए, निज-पर करितु उपकार तो।
ख्याति पूजा वांछे नहीं ए, भवोदधि तरंग तार तो ॥४०
रागद्वेष सर्व विगला ए, तृण-रत्न समभाग तो।
ऊँच-नीच समगेह ए, श्रीमन्त समधन त्याग तो ॥४१
ममता मोह थी विगला ए, गुण चौरासी लक्ष तो।
ध्यान अध्ययन सदा करि ए, उत्तम पात्र मुनि दक्ष तो ॥४२
जती थये जे धन ग्रहे ए, द्रव्य आपे दातार तो।
जतीव्रत भंग पापी ए, ते जाइ नरक अवतार तो ॥४३
जंत्र मंत्र तंत्र करे ए, कामण मोहण वशीकार तो।
ज्योतिष वैद्यक कुविद्या करे ए, तेहनें पाप अपार तो ॥४४
श्रावक मध्यम पात्र कह्या ए, जे धरे प्रतिमा इग्यार तो।
समकित सु अणुव्रत धरे ए, ब्रह्मचर्य गुणधार तो ॥४५
व्रत विना दर्शन धरे ए, भक्ति करे जिन देव तो।
तत्त्व श्रद्धा धर्म रुचि ए, जघन्य जाणो संक्षेप तो ॥४६
सप्त गुण दातारतणा ए, श्रद्धा शक्ति अलुब्ध तो।
भक्ति ज्ञान दया क्षमा ए, गृहमधी गुण शुद्ध तो ॥४७
श्रद्धापणें दान-रुचि करे ए, शक्ति प्रगट करे निज तो।
दान भेद वांछे नहीं ए, अलुब्ध पुण्य गुण बीज तो ॥४८
पात्र विनया भक्ति करे ए, विवेक-सहित विज्ञान तो।
जीव जत्नें दया करो, कोपे क्षमा निधान तो ॥४९

स्नान करी धौत वस्त्र पेहरी ए, पूजि जिन भवतार तो।
मध्याह्न समये द्वारावलोकन ए, गणिये नव नमोकार तो ॥५०
पुण्य प्रेर्यो पात्र आवीयो ए, सावधान थई मनि धीर तो।
तिष्ठ तिष्ठ करी पडिगाहिये ए, प्रासुक देखाडी नीर तो ॥५१
गुरु उच्चासन दीजिए ए, चरण कीजे प्रक्षाल तो।
गुरु-पद-पूजन कीजिए ए, प्रणाम कीजे गुणमाल तो ॥५२
मन वचन काया शुद्ध कीजिए ए, पवित्र देहु आहार तो।
दोष त्रांणुथी वेगलो ए, एषणा शुद्धि थी वेगला तो ॥५३
सप्त गुण दातार तणां ए, नव ए पुण्य प्रकार तो।
सोल गुण प्रगट करो ए, दान वेला सविचार तो ॥५४
तुष्टि पुष्टि तप-वृद्धिकरी ए, न्याये उपार्ज्युं जे धन्न तो।
निज कुटुम्ब काजे नीपनुं ए, ते सदा द्यो शुभ अन्न तो ॥५५
आहारदान इम दीजिए ए, विवेक लेइ ते पात्र तो।
ममता मोह थी वेगलो ए, स्थित कीजे निज गात्र तो ॥५६
आहार थी औषध जाणिए ए, जेह थी समें क्षुधारोग तो।
रोग शमें कृपा नीपने ए, नीपने ज्ञान नियोग तो ॥५७
इम जाणि आहार दीजिए ए, छांडी कृपण-कुमाय तो।
जस महिमा पूजा करी ए, भव-सागर जे नाव तो ॥५८
उत्तम औषध दान दीजिए ए, पात्रतणा टालो रोग तो।
जिणें किणें उपाय करि ए, शरीर कीजे सुख भोग तो ॥५९
निरोगपणें दृढ़ अंगि ए, धरें ते संजम-भार तो।
ध्यान अध्ययन तप आचार ए, दुःकर्म-क्षयकार तो ॥६०
च्यार नियोग चतुरपणें ए, विस्तारो जिन सूत्र तो।
....॥६१
लिखो लिखावों भक्ति करी ए, जिनवाणी अनुसार तो।
शास्त्रदान सदा दीजिइ ए, निज-पर करें उपकार तो ॥६२
वेहरी मठ करावीइ ए, शून्य घर गुफा स्थान तो।
संजमी सहाय कारण ए, दीजे वसतिका दान तो ॥६३
अभयदान शुभ दीजिइ ए, थावर त्रस जीव जेह तो।
मन वचन काया करीइ ए, रक्षा कीजे सहु तेइ तो ॥६४
दीन दरिद्री दोहिला ए, अशरण कायर जे वृद्ध तो।
जिनें दीयें दया उपजे ए, कीजे ते कृपा समृद्ध तो ॥६५
अभयदान अभ्यन्तर ए, उत्तम दान ए चार तो।
जिहाँ दया तिहाँ दान सहुँ ए, दया सर्व सुधीर तो ॥६६
केवल दर्शन ज्ञान सुख ए, केवल वीर्य वितान तो।
जिहाँ आतमा तिहाँ गुण ए, तिम अभय माहें सव ही दान तो ॥६७

दया विना तप जप नहीं ए, दया विण नहीं धर्म ध्यान तो।
दया विण शम संजम नहीं ए, दया सर्व प्रधान तो ॥६८
इम जाणिय दया दीजिए ए, कीजे पर उपकार तो।
गुण सगला दयादान ए, घणुं सुं कहीए वारो-वार तो ६९
सयल भूधर माँहि मेरु ए, देव माँहे जिन देव तो।
रत्न माँहि चिन्तामणी ए, तिम दान माँही दया एव तो ॥७०
पात्र आहार दान फल ए, भोग भूमितणा सुक्ख तो।
सुर नर वर पदवी लही ए, अनुक्रमे धर्म मोक्ष तो ॥७१
योग्य औषध दानफल ए, निरोग होइ शरीर तो।
कान्ति कला लावण्य गुण ए, सवल सरूपी धीर तो ॥७२
ज्ञान दान तणों फल ए, मति श्रुत अवधि बोध तो।
मनः पर्यय केवल गुण ए, कोविद कला कवि सुद्धि हो ॥७३
गढ़ गोपुर धवल गृह ए, त्रि-सप्त खणा आवास तो।
दैव विमान असुर रोह ए, मठ दानें पुण्य राशि तो ॥७४
कोड़ि पूरव पल्यतणा ए, सागर जे वर आयु तो।
उत्तम काय सवल पणुं ए, लहे ते दया पसाय तो ॥७५
गृहां धरमइ दानन वड़ी ए, व्रत सुघे न वि होइ तो।
निज शक्तें प्रगट करि ए, दान देयो सहु कोइ तो ॥७६
दानें लक्ष्मी संपजे ए, दानें जस गुण होइ तो।
ख्याति पूजा महिमा घणु ए, दान तोले नहीं कोई तो ॥७७
इहि लोके जस विस्तरे ए, पंचाश्चर्य करे देव तो।
दातृ-पात्र विधि लहो ए, परलोक शिव संक्षेप तो ॥७८
दान गृहां वन संपजे ए, जेह वो पंक्षी माल तो।
आठ पोहर पावकरी ए, दुर्गति लहे ते वाल तो ॥७९
दान पुण्ये लक्ष्मी वधे ए, निष्कासित कूप नीर तो।
द्रुपुटाती वाधे जिम ए, तिम दाने धन धीर तो ॥८०
व्यसन चोर हरे नहीं ए, दाने खुटे नहिं धन्न तो।
जिम सर उगन मूकीइ ए, नीर रहे अखूट तो॥८१
धने सहु संकट टले ए, विष भी अमृत सम थाइ तो।
शत्रु मित्र समो थई ए, दाने राज्य पसाइ तो ॥८२
अल्प धन हू पात्र-दानें ए, पुण्य पामें विस्तार तो।
अल्प वड़ वीज जिम ए, तरु पामें वहु विस्तार तो ॥८३
सम्यग्दृष्टी पात्र दान ए, सुर नर पायी सौख्य तो।
चक्रवर्ती तीर्थंकर पद ए, पामें अविचल मोक्ष तो ॥८४
दान पात्र दान विधि ए, इण कही संक्षेप तो।
अवर कुपात्र भेद कहुँ ए, जिम जाणों गुण हेव तो ॥८५

पात्र-कुपात्र भेद विहु ए, कुपात्र कहुं हवे चिह्न तो ।
समकित विना जे व्रत धरे ए, क्रिया पाले चल मन्न तो ॥८६
यतीश्वरा वक्र वेष लेई ए, परीषह सहे त्रण काल तो ।
तीव्र तप संतपि घणो ए, कष्ट करे विशाल तो ॥८७
तप व्रत-सहित मुनि ए, पोषे जे मिथ्यात्व तो ।
अथवा श्रावक मिथ्यात्व-पोषि ए, ते कुपात्र साक्षात तो ॥८८

दृष्टि व्रत जैन गुण नहीं ए, आरंभ करे षट्कर्म तो ।
मिथ्यात्वी मूढमती ए, संग-सहित गृहाश्रम तो ॥८९
देव-गुरु सावर्मी तणी ए, निन्दा करे गुण हीन तो ।
जिनशासन थी वेगला ए, ते अपात्र कही ए दीन तो ॥९०
कुपात्र-दान-तणें फले ए, कुभोगभूमि कुनर जन्म तो ।
छन्नुं अन्तर द्वीप मांहे ए, अल्प पामी कुशर्म तो ॥९१

म्लेच्छ राजा नीच नर ए, जे पामें वहु ऋद्धि तो ।
हस्ती घोड़ा वैल महिषी ए, ते कुपात्र पुन विधि तो ॥९२
अपात्र दान निष्फल गमी ए, जिम ऊसर भूमि वीज तो ।
पाथर-नाव-सम सही ए, ते वोले पर निज तो ॥९३
अपात्र दान दीघा वि ण ए, डु डु नाख्युं कूप मध्य तो ।
अनेक जन्म दुःख देई ए, पापाचारि ते वृद्धि तो ॥९४
पात्र-कुपात्र सम लेखवि ए, ते भोला अजाण तो ।
अमृत विष, रत्न काच ए, तुम्ब नाव पाषाण तो ॥९५

एक कूप नर सिंचीए ए, सेल डीली वव तुर तो । धतूरे-विष ऊपजे ए, सेलरी मधुर तो ॥९६

स्वाति नक्षत्रें मेह वरसि ए, मोती पड़े सीप विशाल तो ।
ते जल सर्प मुखें पड़े ए, विष थाइ हलाहल तो ॥९७
त्रिधा सत्पात्र दान ए, त्रिधा होइ भोगभुमि तो ।
दशधा कल्प तरु सुख ए, देव शिव अनुक्रमें तो ॥९८

दान लही क्रिया जेहवी करे ए, दाता लहे तेहमां भाग तो ।
कुंलवी जिम करषण करे ए, राजा ले जिम भाग तो ॥९९
सत्पात्र क्रिया शुभ करे ए, अपात्र कुत्सित आचार तो ।
दान वलें जेहवुं कर्म करे ए, तेहवुं उ फल दातार तो ॥१००

गौ हेम गज वाजि तिल ए, मही दासी नारी गेह तो ।
रथ आदें कुदान कह्यां ए, ए दश भेदे पाप-हेत तो ॥१०१
क्रोध मान माया लोभ ए, राग-द्वेष मदकार तो ।
पापारम्भकारी कह्यां ए, दुःख सहे दातार तो ॥१०२
मूढ़ साला मिथ्यामती ए, थाप्यां दश कुदान तो ।
मेघ रथ भूपें दीवा ए, वार्या सुमति प्रधान तो ॥१०२

मेघरथ मूढ़साला पण ए, सातमीं नरके ते जाय तो ।
कुदान-पाप तणें फल ए, अवर नारकी इम थाय तो ॥१०४
इम जाणि विवेक धरी ए, परिहरु कुदान कुपात्र तो ।
जैन पात्र सहु पोषीए ए, सफल कीजे निज गात्र तो ॥१०५
पात्र-कुपात्र इमउं लखी ए, पात्र-दान धर्म वृद्धि तो ।
अवर कुपात्र-अपात्र कह्यां ए, दान दीजे दया शुद्धि तो ॥१०६
लक्ष्मी तणा फल लीजिए ए, पुण्य सांचो दातार तो ।
सप्त क्षेत्रें वित्त वावरो ए, जिनशासन मझार तो ॥१०७
जिन प्रासाद करावीइ ए, जीर्ण तणो उद्धार तो ।
जिनवर विम्ब भरावीइ ए, जिनपुस्तक विस्तार तो ॥१०८
प्रासाद प्रतिमा जंत्र आदि ए, कीजे प्रतिष्ठा चंग तो ।
अष्टविध जिन पूजोइ ए, कीजे महोत्सव चंग तो ॥१०९
जिन गेह-विम्ब ज्यां लगि नांदीइए, पूजा करे भविजन्न तो ।
धर्मे उपराजी वहु परि ए, त्यां लगे दाता लहे पुण्य तो ॥११०
यव-सम प्रतिमा जिन-सम ए, विम्ब-दल प्रासाद तो ।
तेहनां पुण्य नो पार नहीं ए, भव्य मन करे आह्लाद तो ॥१११
जेह घर जिन विम्ब नहीं ए, त्रिधा पात्र नहीं दान तो ।
जिहां साध्रमी आदर नहीं ए, ते घर जाणों समसान तो ॥११२
मुनीश्वर आर्या कहीइ ए, श्रावक-श्राविका संघ चार तो ।
भक्ति विनय घणों कीजीइ ए, कीजे पर उपकार तो ॥११३
संघ मिलि संघपति थइ ए, सिद्धक्षेत्र कीजे जात्र तो ।
साधर्मी वात्सल्य कीजीइ ए, सफल कीजे धन गात्र तो ॥११४
ए आदि वहु परि ए, कीजे पुण्य आचार तो ।
त्रीजा शिक्षाव्रत तणी ए, दोप कहुँ पंच प्रकार तो ॥११५
सचित्त-निक्षेप पेहली दोष ए, सचित्त पद्म पत्र आदि तो ।
ते उपर ववि आहार करे ए, ते तमें त्यजो अतिचार तो ॥११६
आदर विना आहार दीइ ए, अथवा द्ये उपदेश तो ।
व्यापार काजे वेगो जाइए, ते त्रीजो दान दोष तो ॥११७
दान देतो मत्सर करे ए, धरे ते लक्ष्मी-अहंकार तो ।
दान काल उलंघन करे ए, प्रमादपणें तिणि वार तो ॥११८
ये पंच दूषण त्यजी ए, सदा देओ शुभ दान तो ।
अतिथि संविभाग व्रत धरो ए, हृदय थई सावधान तो ॥११९
चौथो शिक्षाव्रत सुणों ए, अन्त संलेखण नाम तो ।
शरीर-संलेखण कीजीइ ए, क्षीण कषाय परिणाम तो ॥१२०
क्रोध मान माया लोभ ए, क्षीण कीजे रोष कुराग तो ।
पंच इन्द्री प्रसार मन ए, कीजे मद परित्याग तो ॥१२१

अभ्यन्तर ज्ञान वल ए, कीजे दूर कपाय तो ।
वाह्य वैराग्य तप वले ए. क्षीण कीजे इन्द्री काय तो ॥१२२
जिम जिम काया कस कीजिये ए, तिम तिम इन्द्री मद जाइ तो ।
रागद्वेष उपशम हुवे ए, दुर्धर मन वश थाइ तो ॥१२३
मन गज गाढ़ो वांधीइ ए, अंकुश देई निज ज्ञान तो ।
सुमति सांकल सांकलो ए, वैराग्य स्तम्भ समान तो ॥१२४
अंग इन्द्री कषाय कृपि ए, लीजे शुभ संन्यास तो ।
चतुर्विध आहार त्यजी ए, कीजे ध्यान अभ्यास तो ॥१२५
दर्शन ज्ञान चारित्र तप ए, आराधना आराधो चार तो ।
मरण समाधि साधीइ ए, अंत संलेखणा भव-तार तो ॥१२६
पंच विधि अतिचार होइ ए, जीवित मरण संशय होय तो ।
मित्र प्रीति सुख-अनुवन्ध ए, निदान पंचम दोप होइ तो ॥१२७
दीर्घ जीवे वांछा करि ए, कष्ट देखी वांछे मरण तो ।
मित्रे घणुं अनुराग धरे ए, सुख वांछा अनुसरण तो ॥१२८
दान पूजा तप जप करि ए, वांधे निदान कुकर्म तो ।
रागें अथवा द्वेप भावे ए, चिंते निज मन मर्म तो ॥१२९
इणि परे पंच दूषण त्यजी ए, साधु संलेखणा सार जो ।
सुर नर वर सुख भोगवी ए, पामीइ भवोदधि-पार तो ॥१३०

वस्तु छन्द

व्रतहं पालो व्रतहं पालो भविजन जिन भावे करी ।
पंचव्रत अणुव्रत निर्मला, त्रिणि गुणव्रतचार शिक्षाव्रत उज्ज्वल ।
गुण शिक्षा सम शील कहि, स्वर्ग पोडश दायक निर्मल ॥
अणु गुण शिक्षा एणीं परे धरे जे एह व्रत वार । जिन-सेवक पदमो कहे, ते तरसे संसार ॥

ढाल सहेलडीनी

दान तणा फल वर्णवुं रे, किणें दीयो दान आहार ।
तेह कथा तम्हें सांभलो रे, श्रीषेण तणी भवतार ॥
साहेलडी, दीजे दान सुपात्र, सफल कीजे निजगात्र साहेलडी, दीजे दान सुपात्र ॥१
आर्य खंड इह जाणीए रे, मलय देश मझार ।
रत्न संचय नयर भलो रे, श्रीषेण भूप गुण धार, साहेलडी० ॥२
तस दोय राणी रूअडी रे, संधन दित्ता पेहिली नाम ।
अनिन्दत्ता दूजी निर्मली रे, रूपकला गुण दाम, साहेलडी० ॥३
वे वेहु कूखें पुत्र अवतर्या रे, इन्द्र नामें पेहिली होय ।
उपेन्द्र वीजो ऊजलो रे, चरम शरीरी ते दोय, साहेलडी० ॥४
सातकी विप्र तिहां वसेरे, जंवुनामें तस नार ।
तेह कूखें पुत्री उपनी रे, सत्यभामा कुमारि, साहेलडी० ॥५

एह कथा इहां रही रे, अवर सुणो एक वात ।
पाडलीपुर नगर वसे रे रुद्र भट्टं विप्र जाति, साहेलडी० ॥६
तस चेटी भणों नन्दनु रे, कपिल नामे ते जाण
विप्र पासे शिष्य वहु भणे रे; वेद ने शास्त्र पुराण, साहेलडी० ॥७
कांन झटे तिणे सोखिया रे, भणे ते वहु कुशास्त्र ।
निज वुद्धि वले आचार्या रे, कपिल थयो कुछात्र, साहेलडी० ॥८
शास्त्र भण्यों ते सांभली रे, रुद्रभट्ट पाम्यों कोप ।
निज नयरें थी निकासियो रे, शूद्र माटे कीयो लोप, साहेलडी० ॥९
कपिल तिहां थी संचर्यो रे, लीधो विप्र आकार ।
कंठे जनोई उत्तरासण रे, धीर थयो तिणि वार, साहेलडी० ॥१०
सन्नि सन्नि ते आवीयो रे, सातकी विप्रतणें गेह
विद्वांस ते जाणीयो रे, सत्यभामा दीधी तेह, साहेलडी० ॥११
कपिल सुखें तिहां रहे रे, सत्यभामा एक वार ।
रतिवन्ती हुई कामिनी रे, लिंग स्वभाव एहवो नार, साहेलडी० ॥१२
तव कपिल मूढ़मती रे, चेष्टा करे तस काम ।
नीच जाति जाणि वरजिया रे, चिन्ते ते सत्यभाम, साहेलडी० ॥१२
पुष्पवन्ती नारी तणों रे, सुणों ते दोष विचार ।
चिहु दिन विन जे भोगवी रे, ते नर नीच गंवार, साहेलडी० ॥१४
पेहिले दिन चंडाली समी रे, दूजे दिन रजकी समान ।
अस्पृश्य शूद्र तीजे दिने रे, दिन दिन करे ते स्नान, साहेलडी० ॥१५
उपवास वने करि निर्मला रे, अथवा एकान्तर जाणि ।
रस तजी भोजन करे रे, ई भांति श्री जिनवाणि, साहेलड़ी ॥१६
चौवीस पहर दूरे रहे रे, घर-व्यापार ने जोग ।
एकान्त रहे ते एकली रे, कवण काजे नहीं भोग्य, साहेलड़ी० ॥१७
देव शास्त्र गुरु वेगली रे, चाहे नहीं धरमी मुख ।
माहो मांहे स्परसे नहीं रे, आप निन्दा लिंग दुःख, साहेलड़ी० ॥१८
रतिवन्ती नारी तणी रे, मांने नहीं जे वहु छोनि ।
तेह प्राणी पाप-फल भोगवे रे, पामे दुःख दुर्गति जोनि, साहेलड़ी ॥१९
परतक्ष दोष ते सांभलो रे, वड़ी पापड़ी विनाश ।
रंग-भंग ते नीपजे रे, सरस वस्तु निरास, साहेलड़ी० ॥२०
नेत्र रोगी अन्ध थाइ रे, मरण पामे घायवन्त ।
एह आदें दूषण धणां रे, लोक-प्रसिद्ध, नहीं अन्त, साहेलड़ी ॥२१
इम जाणी दूरे परिहरो रे, पुष्पवन्ती नारी संग ।
घणुं घणुं सुं वर्णवुं रे, लाज तणों प्रसंग, साहेलड़ी० ॥२२
सत्यभामा मन चिन्तवे रे, कर्मे कीधो अयुक्त ।
द्विज वंश मुझ निर्मलो रे, नीच वर मुझ भक्त, साहेलड़ी० ॥२३

एक दिन ते रुद्रभट्ट रे, चाल्यो तीर्थ सु जात्र।
रत्न संचय पुर आवीयो रे, कपिल मिल्यो कुछात्र, साहेलड़ी० ॥२४
कपिल निज घरि आणीयो रे, लोक मांहे कहे मुझ तात।
भक्ति विनय भोजन दियो रे, कुशल तणी पूछी वात, साहेलड़ी० ॥२५
सत्यभामा प्रच्छन्नपणें रे, सौवर्ण आपी पूछे जाति।
कन्त तणी ते निर्मली रे, सत्यपणें कहो वात, साहेलड़ीं० ॥२६
रुद्रभट्ट कहे वधु सुणो रे, मुझ दासी तणों पुत्र।
शूद्र जाति भणी परिहर्यो रे, भण्यो ते वेद वहु सूत्र, साहेलड़ी० ॥२७
तव भामा भय उपनों रे, मुझ शील होसे भंग।
संघनन्दिता राणी तणें रे, शरणि गई मन रंग, साहेलड़ी० ॥२८
नाम प्रशंसा पासें राखी रे, साधर्मी दीयो सनमान।
धरमी वाछल्य करे नहीं रे. ते पापी अज्ञान, साहेलड़ी० ॥२९
श्रीषेण भूप घरे आवीया रे, चारण-युगल गुणधार।
विधि-सहित आहार दीया रे, निरन्तराय हुओ आहार, साहेलडी० ॥३०
श्रीषेण भूपें दान दियो रे, निज नारी साथें दोय।
सत्यभामा भावें भांवना रे, भावनाए पुण्य होय, साहेलड़ी० ॥३१
काल मरण पामीयो रे, श्रीषेण भूपते जाणि।
उत्कृष्ट भोगभूमि अवतर्यो रे, दशविध भोग सुख खाणि, साहेलड़ी० ॥३२
भूपतणी दोय कामिनी रे, सत्यभामा सहित।
दान तुण्यें तिहां उपनी रे, भोगभूमि निज हित, साहेलड़ी० ॥३३
पात्र दानें फल श्रीषेण रे, भोगभूमि पाम्यो सुख।
दश विध कल्पतरु तणां रे, आंखें मेष नहीं दुक्ख, साहेलड़ी० ॥ ३४
त्रण गाउ नु देह उंची रे, त्रण पल्य तस आय।
मरण पामी ते आवीया रे, स्वर्गे देवते थाय, साहेलड़ी० ॥३५
सुर नर सुख ते भोगवी रे, श्रीषेण भूपतिणी वार।
पात्र दान फल निर्मलो रे, लेइ जन्म ते वार, साहेलड़ी० ॥३६
सोलमो जिन ते उपमो रे, शान्तिनाथ जस नाम।
चक्रवर्त्ति जे पांचमो रे, वारमों देव ते काम, साहेलड़ी० ॥३७
पंच कल्याणक भोगवी रे, गुण छेतालीस वार।
कर्म हणी केवल लही रे, पोहचा मोक्ष दुआर, साहेलड़ी० ॥३८
वज्रजंघ दान फले रे, पांमो भोग भूमि सुक्ख।
अनुक्रमें आदि जिन हुआ रे, कर्म हणी पाम्यां मोक्ष, साहेलडी० ॥३९
श्रीमती राणी दान दीयो रे, अनुक्रमें श्रेयान्स भूप।
आदि जिन दीयो पारणुं रे, व्यापो जस गुण रूप, साहेलड़ीं० ॥४०
एह आदें वहु भवि जन्न रे, पात्रने देई दान।
सुर नर सुख ते पामीआ रे, किम कह्यो जाइ ते पार, साहेलड़ी० ॥४१

पात्र आहार पुण्य वर्णवी रे, अवर सुणो वृत्तान्त।
औषध दान कथा कहुँ रे, वृषभसेना तणी संत, साहेलड़ी० ॥४२
आर्य खंड मांहे जाणीइ रे, जनपद देश विशाल।
कावेरी नयरी भली रे, उग्रसेन भूपाल, साहेलड़ी० ॥४३
धनपति श्रेष्ठि तिहाँ वसै रे, धनश्री तेह तणी नारि।
तस तणी कूखें उपनी रे, वृषमसेना कुमारि, साहेलड़ी० ॥४४
रूपवती धाय तेह तणी रे, स्नान अंजन करे भक्ति।
पय पान देई पोषे घणु रे, अन्न पाणी करे युक्ति, साहेलड़ी० ॥४५
वृषभसेना स्नान-पाणी रे, रह्यो ते गरत मझार।
रोगी कूकर आवीयो रे, लोटयो ते तिणी वार, साहेलड़ी० ॥४६
श्वान नीरोग थयो देखीने रे, विस्मय पामी धाय तेह।
निज मातानेत्र रोगी रे, वरस वार पीड़ा जेह, साहेलड़ी० ॥४७
परीक्षा काजे नीर सिंचीयो रे, नेत्र हुआ ते निरोग।
धाय-महिमा जस व्यापीयो रे, कन्यां तणे संयोग, साहेलड़ी० ॥४८
उग्रसेन नामें भूप तीरे, तस मंत्री पिंगल नाम।
मेघ पिंगल भणीमो कल्यो रे, ते वैरी विषमें ठांमि, साहेलड़ी० ॥४९
दलवल वहुते परवर्यो रे, वेगे चाल्यो परधान।
वेरी तणें देस आवीयो रे, साथे लेई वहु संधान, साहेलड़ी० ॥५०
विष-मिश्र जल वावस्करे, ज्वर उपनों मंत्री देह।
वेगे वली पाछी आवीयो रे, नीरोग हुओ नर-देह, साहेलड़ी० ॥५१
उग्रसेन तव कोपीयो रे, चाल्यो ते वैरी पासि।
तिणें जले ज्वर उपनों रे, पाछो आव्यो हुई निराशि, साहेलड़ी० ॥५२
वृषभसेना-कन्या तणों रे, जल जाचे वा काज।
दूत प्रेषी अणावीयो रे, निरोग हुओ तव राज, साहेलड़ी० ॥५३
धनपति श्रेष्ठि ते डावीयो रे. आव्यो ते सभा मझार।
कन्या देउ मुझ निर्मली रे, भूप कहे तिणी वार, साहेलड़ी० ॥५४
श्रेष्ठी कहे भूप सांभलो रे, जिन पूजो अष्ट प्रकार।
पंजर थी पक्षी मूको रे, वंदी छोड़ो करो राग, साहेलड़ी० ॥५५
जिम जिम श्रेष्ठी इजे कह्यो रे, ते तिम कीधू भूपाल।
वृषभसेना कन्या वरी रे, महोच्छव करी गुणमाल, साहेलड़ी० ॥५६
विवाह समय वंदी मुक्या रे, एक न मुक्यो पृथ्वीचन्द्र।
वाणारसी नयरी धणी रे, पाय पाके आव्यो तन्द्र, साहेलड़ी० ॥५७
तस राणी नारायणदत्ता रे, मंत्री सुं कीयो विचार।
वृषभसेना तिणें नामें रे, माड्यो तिणें सत्तकार, साहेलड़ी० ५८
सत्तकार भोजन करी रे, लोक आवे विहु जाणि।
वृषभसेना जस वोले रें, निज कांते सुणी वाणि, साहेलड़ी० ॥५९

राणी वाचे द्विज पूछीया रे, सत्तकारह तजेह ।
वाणारसी नयरी पती रे पृथ्वी चन्द्र-त्रैदि-गेह, साहेलड़ी० ॥६०
वृषभसेना वेगे करी रे, मूकाव्यो तव भूप ।
पृथ्वीचन्द्र विनय वहे रे, पट्ट लिखी त्रण रूप, साहेलड़ी० ॥६१
राणी तणें पाय नमे रे, आपणपै भूप जेह
चित्र रूप देखी रीझियों रे, उग्रसेन भूप तेह, साहेलड़ी० ॥६२
पृथ्वीचन्द्र संतोषीयों रे, उग्रसेन दीयो आदेश ।
मेघपिंगल वैरी जीपी रे, निजपुरि जाइ नरेश, साहेलड़ी० ॥६३
मेघपिंगले भूप सांभल्यो रे, मुझ भरवी पृथ्वी चन्द्र ।
वेगे आवी भूप भेदीयो रे, महत पांम्यो नरेन्द्र, साहेलड़ी० ॥६४
हेम रत्न मोती आदे रे, गज वाजी मूकी भेट
मेघपिंगल विनय करी रे, उग्रसेन मान्यो श्रेष्ठि, साहेलड़ी० ॥६५
जूझ विना आवी मिल्यो रे, हरख्यो उग्रसेन राय ।
मेघपिंगल सेवक जाणी रे, भूपति कीयो पसाय, साहेलड़ी० ॥६६
वहुमूल्य भेंट जे आवी रे, रत्न कंवल निज दोय ।
निज निज नामें अंकीयो रे, जुजूआ आपे ते सोय, साहेलड़ी० ॥६७
वृषभसेना एक आवीयो रे, मेघपिंगल एक दीध ।
पलटाणों ते काज वसे रे, तो देवे विपरीत कीव, साहेलड़ी० ॥६८
कर्म उदय पाप वशे रे वस्तु थापे विपरीत ।
वृषभसेना पूर्व पापे रे, हित हुओ ते अहित, साहेलड़ी ॥६९
मेघपिंगल कंवल ओढी रे, सभा आव्यो एक वार ।
निज नारी नाम ते देखी उ रे, कोप्यो ते भूप गँवार, साहेलड़ी० ॥७०
रक्त मुख भूप देखीने रे, मेघपिंगल बुद्धिवंत ।
काज मिसे नासी गयो रे, उग्रसेन हुओ असंत, साहेलड़ी० ७१
वृषभसेना सुं कोपियो रे, जाण्यों शील-हीण नारि ।
निज भृत्य आदेश दीयो रे, नाख्यो स्त्री समुद्र मझारि, साहेलड़ी० ॥७२
शीलवंती ते कामिनी रे, निश्चल कीधो निज मन्न ।
कलंक टले तो पारणुं रे, नहीं तो नियम भोजन्न, साहेलड़ी० ॥७३
समुद्र मांहे ते क्षेपवी रे, सती शील गुण माल ।
जलदेव आसन कंपियो रे, आवी ते ततकाल, साहेलड़ी० ॥७४
कमल सिंहासन तिहां कीयो रे, सती विचारी गुणवंत ।
गीत नृत्य वाजित्र करी रे, प्रातिहार्य होइ संत, साहेलड़ी० ॥७५
धन-धन्य शील सती तणु रे, आसन कंप्या देव ।
सती-महिमा भूपे सांभली रे, उग्रसेन आव्यो णिक्षेव, साहेलड़ी० ॥७६
क्षमा करावी विनय करी रे, वेसारी पाव लखी मांहि ।
संभ्रम करी आवी जिसे रे, तत्र सती मुनि वाहि, साहेलड़ी० ॥७७

गणधर गुरु ते वंदिया रे, पूछे पूर्वभव वृत्तान्त ।
केवली मुखते पामीयो रे, पापे कलंक दूरन्त, साहेलड़ी० ॥७९
अवधि ज्ञान गुरु निर्मला रे, वोल्या ते भवतार ।
एकमना सती सांभले रे, पेहलो भव विचार, सालेहड़ी० ॥८०
इणि नगरी द्विज तणी रे, पुत्रीनुं नागश्री नाम ।
जिन चैत्यालय सदा करी रे, प्रभार्जन सुभांम, साहेलड़ी० ॥८१
सन्ध्या-समय एक आवियो रे, मुनिदत्त नामें जतीराय ।
गढ पासे गरता मांहे रे, रह्यो निश्चल करी काय, साहेलड़ी० ॥८२
रात्रि तणों योग लेइ रह्यो रे, रह्यां धरी निज ध्यान ।
प्रभात समय आवी नागश्री रे, वोलें ते अज्ञान, साहेलड़ी० ॥८३
सैन्य सहित भूप आवसे रे, इहां थी जाउ मुनि आज ।
अलीक वोले मद भंभली रे, इक्ष किरे निःकाज, साहेलड़ी० ॥८४
इम कही मही पूजावी रे, एक वुछंकरी कतवार ।
मुनि ऊपर नें नाखीयो रे आछाद्या मुनि भवतार, साहेलड़ी० ॥८५
निन्दा करे मुनिवर तणी रे, जोड़े ते पाप अपार ।
रोष करे ते पापिणी रे, करम करे असार, साहेलड़ी० ॥८६
क्रीड़ा काजें भूप आवीयो रे, देखो शासन स्वास ।
तव कतवार दूरे कियो रे, दीठा मुनि गुण रासि, साहेलड़ी० ॥८७
मुनि प्रशंसा भूप करे रे, स्वामी ते क्षमा भंडार ।
मुनि-अंग पीडा उपनी रे, पाम्यो योग तिणि वार, साहेलड़ी० ८८
तव लाजी ते कामिनी रे, करे औषध जोग्य काज ।
भक्ति सुश्रूषा करे घणी रें, निरोगा कीया मुनिराज, साहेलड़ी० ॥८९
योग्य औषध दान दीयो रे, कीयो जती वैयावृत्य ।
पुण्य घणुं पोते करयो रे, सर्व औषधि ऋद्धि हेत, साहेलड़ी० ॥९०
निन्दा गर्हा घणी करी रे, मरण पामी ते नारि ।
निन्दा दोषे तु उपनी रे, वृषभ सेना कुंवारि, साहेलड़ी० ॥९१
कन्या स्नान पवित्र जले रे, सर्व रोग विनाश ।
महिमा ख्याति जस पामीयो रे, राजा देई सुखवास, साहेलड़ी० ॥९२
मुनि वैयावृत्त्य तणें फ़ले रे, योग्य औषधि दीयो दान ।
तिणि गुणें तुझ उपनी रे, औषधि ऋद्धि निधान, साहेलड़ी०॥९३
निन्दा करी मुनि टाकीया रे, नाखी ते कतवार ।
तिणें पापे तुझ आवीयो रे, कलंक दुःख दातार, साहेलड़ी० ॥९४
देव शास्त्र गुरु धर्म तणी रे, निन्दा करे जे मूढ़ ।
तेहमा पाप तणों पार नहीं रे, जनमि जनमि दुःख सहे मूढ़, साहेलड़ी० ॥९५
इम जाणी तम्हो केह तणी रे, निन्दा करे जे मूढ़ ।
ते भक्ति विनय करो पर तणी रे, नहीं तो मध्यस्थ होय, साहेलड़ी० ॥९६

वृषभ सेना निज भव सुणी रे, उपज्यों मन वैराग ।
स्वजन सहु खिमावीयो रे, छोड़्यो मोह घर-राग, साहेलड़ी० ॥९७
आर्यिका थयी ते निर्मली रे, करे ते जप तप ध्यान ।
मरण समावें साधीयो रे, स्वर्ग हुओ गीर्वाण, साहेलड़ी० ॥९८

दोहा

आहार दान पुण्य वर्णव्यो, श्रीषेण पाम्यो सौख्य ।
शान्तिनाथ श्रीजिन हुआ, पाम्या अविचल मोक्ष ॥१
नागश्री नारी निर्मली, दीयो योग्य औषध दान ।
वृषभसेना कन्या ऊपजी, औषध रिद्धि निधान ॥२
जस महिमा गुण पामीने, सुख भोगवी संसार । जप तप संजम आचरी, पहुँची स्वर्ग-दुआर ॥३
इम जाणी तम्हो भविजनों, पात्रें देउ औषध दान । निरोग पणुं पामीइ, पामीइ अविचल थान ॥४
दातार ऋद्धि सफल कही, जे दें दान सुपात्र । चन्द्रकान्त मणि चन्द्रयोगे, अवर पाथर आदि ॥५
सुंव थकी कूकर भलो, जे वहु मिलि खाइ ग्रास । सुंव सानि उडी ऋद्धि, महि मुकी जाइ निरास ॥६
कृपण धन मूकी मरे, साथ लेई दातार । दाता ते कृपण सही, मूके नहीं निज सार ॥७

अथ ढाल जसोधरनी

औषध दान कथा वर्णवी, हवे कहूँ कथा सार । ज्ञान दान तणी निर्मला, कुंडेश तणी गुणवार ॥१
भरतक्षेत्र एह जाणीए, आर्य खंड विशाल । कूर्म नामें ग्राम इक कही, वसे गोविन्द गोपाल ॥२
एक वार वन मांहे गयो, चारे बहु गोधन्न । तरु तणां कोटर मांहे, लाधो पुस्तक मन्य ॥३
ते पुस्तक तिणें लेई दीयो, पद्मनन्दी मुनीश । पुस्तक वांची निर्मलो, दीयो धर्मोपदेश ॥४
भट्टारक आदेश हु मिली लीयो पुस्तक दान । संघ सहु समक्ष पणें, पूजे श्रुत शुभ ज्ञान ॥५
पुस्तक पूजी विनय धरी, थाप्यो कोटर मांहि । वली वली पूजे ते गोविन्द, पुस्तक गुण चाहि ॥६
काल क्रमें मरण पामीउ, करी दोष निदान । तिण नगरें वसे ग्राम कूट, तस हुओ ते सन्तान ॥७
कुंडेश नाम ते पुत्र तणुं मोटो थयो ते कुमार । पद्मनन्दी मुनि देखीया, वन गयो एक वार ॥८
जाति स्मरण ज्ञान ऊपज्यो, जाण्यो पूर्व भव विचार ।
पद्मनन्दी गुरु भेटीया, पहिला जन्म-संस्कार ॥९
तव कुंडेश तणे मनें उपज्यों वैराग । संयम लीयो निर्मलो करी संग परित्याग ॥१०
जप तप संजम आचरे, करे ते आतम काज । मरण समाधि साधीयो, पाम्यो ते देवराज्य ॥११
गोविन्द पहिले भव दीयो, दीयो पुस्तक दान । तेह फल तस ऊपनों, जाति स्मरण सुज्ञान ॥१२
इणि परि जे भविजन देइ, दीये पुस्तक दान ।
लिखि लिखायी, उपदेश देइ, ते लहे केवल ज्ञान ॥१३
ज्ञान दान कथा कही ए, अवर कहूँ सुविचार । वसतिका दान कथा सुणों, संक्षेपैं सावधान ॥१४
मालव देश मांहे वसे, घट नामें सुग्राम । देंविल नामें कुंभकार, नावी धर्मिल नाम ॥१५
मित्राचार हुओ बिहु, कीयो मनसुं विचार । मठ एक करावीयो, पंथी जन साधार ॥१६
एक दिन तेणें देवलि, आव्या मुनि भवतार । ता मठमांहि ते राखीया, साहाय्य करे तिणि वार ॥१७
पछें धर्मिल नावी तिणें, आण्यो संन्यासी एक दुष्ट ।
बिहू मिलि झगड़ो करी, नीकाल्या मुनि ज्येष्ठ ॥१८

मुनि कोटर मांहे जाय रह्या, स्वामी क्षमा भंडार। वात शीत उष्ण तणां, सहे परीषह-भार ॥१९
पछे ते देवलि जाणीयो, कीयो पश्चात्ताप। माहो मांहे जुद्ध करी, पाम्या अति दुख पाप ॥२०
आर्त्त ध्यानें मरी ते हुओ, व्याघ्रनें भय कृष्ट। कुम्भकार मरी वापडुं, हुओ सूकर अशुष्ट ॥२१

गुफा द्वारे रहे सूअर, मुनि रहें गुफा मझार।
समाधिगुप्ति पेहलुं नाम, दूजो त्रिगुप्तिमें गुण धार ॥२२
मुनिवर जब देखीया, भणतां सुणी जिनवाणि।
तव सूकर मन ऊपज्यो, जातिस्मरण गुण जाण ॥२३

धर्मोपदेश ते सांभली, सुअर हुओ धर्मवंत। निज शक्ति व्रत ग्रही, हूओ ते अति संत ॥२४
मनुष्य गंधे व्याघ्र आवीयो, साहामो सूकर थाय। परस्परे जुद्ध कीयो, वेगे मरण ते पाय ॥२५
व्याघ्र मरण ते पामीयो, पाम्यो नरक अवत्तार। छेदन भेदन मार-मार, सहे दुःख पंच प्रकार ॥२६
कुम्भकार ते सुअर, देई वसतिका दान। महर्द्धिक देवपद पामीयो, कल्पवृक्ष विमान ॥२७

इम जाणी जत्ति सहाय कीजे, देय मठ शुभ स्थान।
सुर नर वर गेह पामीइ, लहिये अविचल थान ॥२८

संक्षेपै मैं वर्णवी, दान तणी कथा चार। जिन पूजा कथा सांभल्यो, भेद तणी भवत्तार ॥२९
जम्बूद्वीप पर लिया मणों, भरत क्षेत्र विशाल। आर्य खण्ड मांहे मगध देश राजगृह गुण माल ॥३०
श्रेणिक राजा राज करे, चेलना तस राणी। सभा पुरी वैठो भूपती, आव्यो माली एक वार ॥३१

अकाल पुष्प फल भेट लेई, विनय वहे वह वनपाल।
विपुलाचल जिन समोसर्या, श्री वीर सकोमाल ॥३२

तव राजा आणंदीयो, वीर वंदण जाय। समोसरणमां जिन पूजी, श्री वंद्या जिन पाय ॥३३
पूजि स्तवी जिन पय नमी, गौतम गुरु वंद्या। नर सभा वैठो भूपती, धर्मवृद्धि आनंद्या ॥३४
देव असुरो ए आवीयो, सुर गयो मंडूक चिह्न। देव देखी आचंभियो, भूप पूछे तव जिन्न ॥३५
गौतम गणधर (पूछियो) सुणों श्रेणिक राज। देव मोडो जे आवीयो, कारण कहो तस आज ॥३६
राजगृह पुर तुझ तणें, वसे श्रेष्ठी नागदत्त। भवदत्ता राणी तेहतणी, वहु ऋद्धिमो भासत्ति ॥३७
मूढमती साह भद्रक, वापी करावी निज वन्न। पद्म आच्छादी जल भरी, वि द्रव्यो वहु धन्न ॥३८
आर्त्तध्यानें श्रेष्ठी मरी, तिर्यञ्च गति ऊपन्नों। वापी मांहि मेंढक हुओ, जातिस्मरण ते सम्पन्नो ॥३९
भवदत्ता पाणी भरे तिणि वापी तस नार। तल पिडे डकरिवाले चड़े, नाखे नीर मझार ॥४०
भवदत्ताइ गुरु पूछिया, मुनि अवधि ज्ञानवन्त। कहो स्वामी कृपा करी, मंडूक तणों वृत्तान्त ॥४१
सुवृत्त गुरु कहे सांभलो, तम्ह तणों जे कन्त। आर्तध्यान थी अवतर्यो, मंडूक भागदन्त ॥४२
जातिस्मरण ज्ञानें करी, तुझ ऊपर धरे स्नेह। तेह भणी खोले चढ़े, पेहली स्त्री मोही तेह ॥४३
तव नारी वापी आवीया, लीयो मेंढक जाणी। घरि आणी कूडी ढव्यो, भरियो निर्मल पाणी ॥४४
तिणें समै वीर समोसर्या, चालो वन्दण राय। भवदत्ता ते संचरी, तव भेक मन ध्याय ॥४५
कमल-पत्र मुखें धरी, हलुए हलुए हरि जाय। पुर द्वारें जव आवीयो, तव चांप्यो गज पाय ॥४६
मरण पामी भावें चड़ रो, जिनपूजा परिणाम। सौधर्म स्वर्ग तें अवतर्यो, देव महर्द्धिक ठाम ॥४७
वैक्रियिक देव ते नीपनों, अन्तमुहूर्त्त मझार। अवधि ज्ञानें ते जाणीयो, पूरव भव संसार ॥४८
विमान वैसी सुर आवीयो, पूजवा श्री जिनदेव। गौतम कहे सुणों श्रेणिक, उपनों ए सुर हेव ॥४९
देव आवी जिनपूज-स्तवी, भावें करीय प्रणाम। पुण्य घणों पोते करी, वैठो सुर-सभा ठाम ॥५०

तव श्रेणिक आनन्दीयो, उपज्यो पूजा वहु भाव। वन्य वन्य पूजा तिण तणी, भव-सायर जे नाव ५१
जिन-चरणें पद्म तणी, पूजा अष्ट प्रकार। जल आदे फल पर्यन्त, अर्घदान अवतार ॥५२
इम जाणिय जिन पूजो स्तवो, जाप देउ नवकार। उपराज्यो पुण्य वहु भव्य, सफल करो अवतार।५३
सुर नर वर सुख भोगवी, पूज्य वर स्थान। मन वांछित सुख अनुभवी, अनुक्रमें केवलज्ञान ॥५४

वस्तु छन्द

जिनपूजा करो जिनपूजा करो, भविजन भावे करी।
जिनपूजा कल्पतरु समी, चिन्तामणि कामवेनु पूजा निर्भर।
मन वांछित फलदाय इन्द्र जिनेन्द्र पद देई जे मनोहर॥
अनुदिन जे जिनपूजसे, निर्मल करि परिणाम। जिनसेवक पदमो कहे, ते लहे अविचल ठाम ॥५५

ढाल मालंतडानी

व्रत द्वादश इम वर्णव्या ए, सुण सुन्दरे, प्रतिमा सुणो हवे भेद। मालंतडा०
मन वचन कायाइ पालीये, ए, सुण सुन्दरे, व्रत प्रतिमा कर्म छेदं, मालंतडा० ॥१
सामायिक प्रतिमा त्रीजी ए, सुण सुन्दरे, संक्षेपे कहुं सविचार। मालंतडा०
सामायिक समता पणुं ए, सुण सुन्दरे, राग-द्वेष परिहार, मालंतडा० ॥२
नाम स्थापना द्रव्य क्षेत्र ए, सुण सुन्दरे काल भेद शुभ भाव। मालंतडा०
षट् भेद सामायिक ए, सुण सुन्दरे भवसागर जे नाव, मालंतडा० ॥३
शुभ अशुभ नाम जे भणी ए, सुण सुन्दरे, राग द्वेष करो वश्य। मालंतडा०
नाम सामायिक लीजिए, सुण सुन्दरे, सम परिणाम समस्त, मालंतडा० ॥४
स्थापना सामायिक साविए, सुण सुन्दरे, सुख दुःखकारी जे द्रव्य। मालंतडा०
ते ऊपर समता भावन ए. सुण सुन्दरे, स्थापना सामायिक दिव्य, मालंतडा०॥५
जिनप्रासाद शून्य मठ ए, सुण सुन्दरे, गुफा भूवर उद्यान। मालंतडा०
वाल पशू स्त्री वेगला ए, सुण सुन्दरे, निरंजन क्षेत्र स्थान, मालंतडा० ॥६
पूर्व मध्य अपराह्ण ए, सुण सुन्दरे, दो दो घड़ी त्रिण काल। मालंतडा०
वरषा शीत उष्ण हो ए, सुण सुन्दरे, समय सामायिक विशाल, मालंतडा० ॥७
राग द्वेप सहु परिहरो ए, सुण सुन्दरे, शत्रु मित्र समभाव। मालंतडा०
निर्मल मन निज कीजिए ए, सुण सुन्दरे, ते सामायिक सुभाव, मालंतडा० ॥८
प्रतिलेखी पृथिवी पीठ ए, सुण सुन्दरे, दृढ़ वरी पदमासन्न। मालंतडा०
अथवा काउसग्ग ऊभा रही ए, सुण सुन्दरे, थीर करी निज मन्न, मालंतडा० ॥९
पूरव उत्तर दिशा रही ए, सुण सुन्दरे, अथवा प्रतिमा सन्मुख। मालंतडा०
हस्त पाद मुख नेत्र-नी ए, सुण सुन्दरे, संज्ञा तजो पर दुःख, मालंतडा० ॥१०
सर्व प्राणी समता पणुं ए, सुण सुन्दरे, भावना वरो य संयम। मालंतडा०
आर्त्त रौद्र ध्यान तजो ए, सुण सुन्दरे, करो सामायिक उत्तम, मालंतडा० ॥११
आर्त्त ध्यान भेद चार ये, सुण सुन्दरे, इष्ट विरह अनिष्ट संयोग। मालंतडा०
त्रीजो पीडा चिंतन ए, सुण सुन्दरे, चौथो निदान करें भोग, मालंतडा० ॥१२

इष्ट वियोगे दुःख नहीं ए, सुण सुन्दरे, अनिष्ट संयोगे नहीं रोष। मालंतडा०
रोग पीडा चिंतन त्यजो ए, सुण सुन्दरे, निदान त्यजो धरो संतोष, मालंतडा० ॥१३
आर्त्त ध्यानें पाप उपजे ए, सुण सुन्दरे, पापें पशुगति होय। मालंतडा०
इम जाणिय आर्त्ति परिहरो ए, सुण सुन्दरे, धरो सामायिक सोय, मालंतडा० ॥१४
रौद्र ध्यान चार सुणो ए, सुण सुन्दरे, हिंसा मृषा स्तेय आनन्द। मालंतडा०
विषय संरक्षणा आनन्द ए, सुण सुन्दरे, रौद्र ध्यानें पाप वृन्द, मालंतडा० ॥१५
जीव हिंसा झूठे वचन त्यजो ए, सुण सुन्दरे, चोरिये नहीं पर धन्न। मालंतडा०
विषय भोग भावे त्यजो ए, सुण सुन्दरे, भजो सामायिक भविजन्न मालंतडा० ॥१६
रौद्र ध्याने तीव्र पाप ए, सुण सुन्दरे, पापें नारक दुःख होय। मालंतडा०
क्रूर परिणाम टालीइ ए, सुण सुन्दरें, पालीये समभाव सोय, मालंतडा० ॥१७
दुर्ध्यान दूरें करो ए, सुण सुन्दरे, चारो धरो धर्म ध्यान। मालंतडा०
आज्ञा उपाय विपाक विचय ए, सुण सुन्दरे, चौथो त्रिलोक संस्थान, मालंतडा० ॥१८
आज्ञा मानो श्री जिन तणी ए, सुण सुन्दरे, चतुः कर्म-विनाश उपाय। मालंतडा०
कर्म-विपाक फल चिंतवो ए, सुण सुन्दरे, लोक-संस्थान ते ध्याय, मालंतडा० ॥१९
धर्मध्याने पुण्य उपजे ए, सुण सुन्दरे, पुण्ये नर-सुर-सौख्य। मालंतडा०
शुक्ल ध्यान धरो भावना ए, सुण सुन्दरे, भावनाए होइ मोक्ष, मालंतडा० ॥२०
त्रिविध वैराग्य ते चिन्तवो ए सुण सुन्दरे, भवते भोग शरीर। मालंतडा०
अनुप्रेक्षा वार चिन्तन ए, सुण सुन्दरे निश्चल करि मन धीर, मालंतडा० ॥२१
कुड्मल कर-युग कीजीइ ए, सुण सुन्दरे, नासा अग्रि निज दृष्टि।
हीन दीर्घ स्वर नहीं ए, सुण सुन्दरे, छ राग भास नहीं धिष्ट, मालंतडा० ॥२२
निज करणे सुणीइ जिह ए, सुण सुन्दरे, तिम भणो सामायिक सूत्र। मालंडा०
वचनें अक्षर उच्चरो ए, सुण सुन्दरे, निज मनि अर्थ पवित्र, मालंतडा० ॥२३
भणतां पाठ जो आवे नहीं ए, सुण सुन्दरे, तो पंच गुरु नमस्कार। मालंतडा०
पंच शत ध्याओ जपो ए, सुण सुन्दरे सामायिक पुण्य साधार, मालंतडा० ॥२४
मन वचन काया पवित्र करी ए, सुण सुन्दरे, पहरी निर्मल एक चीर। मालंतडा०
ईर्यापथ-शोधन करी ए, सुण सुन्दरे, कायोत्सर्ग धरि एक धीर, मालंतडा० ॥२५
ॐ नमः सिद्धेभ्यः इम कही ए, सुण सुन्दरे, भणीए सामायिक शास्त्र। मालंतडा०
नव वन्दन देव करो ए, सुण सुन्दरे, तेह भेद सुणो छात्र, मालंतडा० ॥२६
पंच परमेष्ठी जिन गेह ए, सुण सुन्दरे, जिनप्रतिमा जिनधर्म।
जिन-वयण ए नय देव ए, सुण सुन्दरे, वंदना करो अनुकर्म, मालंतडा० ॥२७
चैत्य भक्ति पंच गुरु भक्ति ए, सुण सुन्दरे शान्तिभक्ति जिनसार। मालंतडा०
त्रण भक्ति दंडक तणो ए, सुण सुन्दरे, विधि कहूँ सुणो सजन्न, मालंतडा० ॥२८
चैत्य भक्ति आदि पंचांग प्रणाम ए, सुण सुन्दरे, त्रण आवर्त्त शिर नुति। मालंतडा०
ऐक दंडक मध्य कायोत्सर्ग आदि ए, सुण सुन्दरे, त्रण आवर्त्त शिर नति एक, माल०॥२९
कायोत्सर्गे नवकार नव ए, सुण सुन्दरे ए, नवकार-प्रति त्रणें उच्छ्वास। मालंतडा०
सत्तावीस शुभ दीजीइ ए, सुण सुन्दरे, हीन अधिक न वि श्वास, मालंतडा० ॥३०

कायोत्सर्ग अन्ते आवर्त्त त्रण ए, सुण सुन्दरे, एक शिर नमस्कार । मालंतडा०
दंडक अन्ते पंचांग प्रणाम ए, सुण सुन्दरे, त्रण आवर्त शिर नति सार, मालंतडा० ॥३१
एणी परे दंडक प्रति ए, सुण सुन्दरे, दोइ पंचांग नमस्कार । मालंतडा०
वार आवर्त चार शिर नमी ए, सुण सुन्दरे, एक कायोत्सर्ग धार, मालंतडा० ॥३२
पछें चैत्य भक्ति भणों ए, सुण सुन्दरे, वली पंच गुरु तणी भक्ति । मालंतडा०
शान्ति भक्ति शुभ भणों ए, सुण सुन्दरे, करी सामायिक सदा युक्ति, मालंतडा० ॥३३
त्रण काल सदा कीजीइ ए, सुण सुन्दरे, पूर्व मध्य अपराह्ण । मालंतडा०
चार घड़ी मांहें सही ए, सुण सुन्दरे, रखेउ लंवे तमें मान, मालंतडा० ॥३४
सागारी सामायिकवन्त ए, सुण सुन्दरे, सर्व सावद्य-रहित । मालंतडा०
वस्त्रे वेढ्यो जेहवु मुनिवरु ए, सुण सुन्दरे, तेर चारित्र सहित, मालंतडा० ॥३५
सागारी सामायिक वली ए, सुण सुन्दरे, सोल स्वर्ग-पर्यन्त । मालंतडा० ।
सुर नर वर सुख भोगवी ए, सुण सुन्दरे, अनुक्रमें होइ मुक्तिकन्त, मालंतडा० ॥३६
जिनमुद्रा तप श्रुतवन्त ए, सुण सुन्दरे, सदा सामायिक धरे जेह । मालंतडा०
नव ग्रैवेयक लगें ऊपजे ए, सुण सुन्दरे, अभव्य प्राणी वली तेह, मालंतडा० ॥३७
आसन्न भव्य जिनमुद्रा धरी ए, सुण सुन्दरे, लेइ सामायिक सार । मालंतडा०
दुर्द्धर कर्म सहु निर्जरी ए, सुण सुन्दरे, होइ मुक्ति भवतार, मालंतडा० ॥३८
सामायिक महिमा घणी ए, सुण सुन्दरे, क्रूर जीव वश थाइ । मालंतडा०
व्याघ्र सिंह सर्प आदि ए, सुण सुन्दरे, विषम विष तस जाइ, मालंतडा० ॥३९
सुर नर सहु सेवा करी ए, सुण सुन्दरे, शत्रु सर्वे मित्र होइ । मालंतडा०
मन वांछित फल पामीइ ए, सुण सुन्दरें, सामायिक प्रभावे जोइ, मालंतडा० ॥४०
इमि जाणि सदा कीजिइ ए, सुण सुन्दरे, सामायिक गुणधार ।
निज शक्ति प्रगट करि ए, सुण सुन्दरे, घणु सुं कहिये वारम्बार, मालंतडा० ॥४१
प्रमादपणें जे करे नहीं ए, सुण सुन्दरे, तृष्णा करि व्यापार । मालंतडा०
अष्ट पहर पाप करि ए, सुण सुन्दरे, भमे ते वहु संसार, मालंतडा० ॥४२
विषयारम्भ जे जीवडा ए, सुण सुन्दरे, गमें वृथा वहु काल । मालंतडा०
हा हा करतां हींडे सदा ए, सुण सुन्दरे, धर्म थी भूला ते वाल, मालंतडा० ॥४३
धर्म-सामग्री दोहिली ए, सुण सुन्दरे, जिम चिन्तामणि रत्न । मालंतडा
विषय प्रमादें का गमो ए, सुण सुन्दरे, करो सामायिक यत्न, मालंतडा० ॥४४
काल कला घड़ी मुहूर्त्त लगे ए, सुण सुन्दरे, निज शक्ति अनुसार । मालंतडा०
धर्म ध्यान दिन जे गमि ए, सुण सुन्दरे, ते सार्थक अवतार, मालंतडा० ॥४५
सामायिक विण नर जाण वा ए, सुण सुन्दरे, गेह रथ्यावेल समान । मालंतडा०
जाव जीव ते भार वही ए, सुण सुन्दरे, पामे नरक अवतार, मालंतडा० ॥४६
सामायिक पाठ आवे नहीं ए, सुण सुन्दरे, तो सदा गिणों नमोकार । मालंतडा०
पंच परमेष्ठी पद निर्मला ए, सुण सुन्दरे, चौदह पूर्व मांहे सार, मालंतडा० ॥४७
वाल नवे सूत सुतता ए, सुण सुन्दरे, मंत्र जपो नमोकार । मालंतडा०
सर्व मंत्र तणों नायक ए, सुण सुन्दरे, भवोदवितारण हार, मालंतडा० ॥४८

विकट संकट वैरी टले ए, सुण सुन्दरे, विषम विघ्न विनाश, मालंतडा०
नमोकार महिमापणें ए, सुण सुन्दरे, दुख दारिद्र मिटे अरु त्रास, मालंतडा० ॥४९
डाकिमणी शाकिणी भुत प्रेत ए, सुण सुन्दरे, खवीस झोटिंग वेताल, मालंतडा०
क्रूर ग्रह राक्षस टले ए, सुण सुन्दरे, वाघिन सिंह फणिटाल, मालंतडा० ॥५०
विषम विष अमृत हुइ ए, सुण सुन्दरे, दुर्द्धर अग्नि जल थाइ, मालंतडा०
नमोकार प्रभाव घणुं ए, सुण सुन्दरे, जोभे कह्यो किम जाइ, मालंतडा० ॥५१
वाघ वानर श्वान चोर ए, सुण सुन्दरे, मरता लहे नमोकार, मालंतडा०
देवतणां पद पामियां ए, सुण सुन्दरे, अनुक्रमें मोक्ष दुआर, मालंतडा० ॥५२
जापतणो विधि सांभलो ए, सुण सुन्दरे, अक्षसूत्र लेइ पवित्र, मालंतडा०
मन वच काया निश्चल करी ए, सुण सुन्दरे, मंत्र नमोकार विचित्र, मालंतडा० ॥५३
मोक्ष हेतु अंगुष्ठ जपि ए, सुण सुन्दरे, तर्जनी अंगुली धर्म-काज, मालंतडा०
मध्य अंगुली शान्ति-हेतु ए, सुण सुन्दरे, अनामिका अर्थ-समाज, मालंतडा० ॥५४
कनिष्टका सर्व कार्य सिद्ध ए, सुण सुन्दरे, लक्षणःस्युं जपो मंत्र, मालंतडा०
मंत्र-प्रसादें पामीइ ए, सुण सुन्दरे, दुर्धर जे परतंत्र, मालंतडा० ॥५५
अंगुली अग्र जे जप्यो ए, सुण सुन्दरे, जे जप्यो लंघी मेर, मालंतडा०
ते सहु निःफल जाणवो ए, सुण सुन्दरे, उपजे पुण्य नहीं भूर, मालंतडा० ॥५६
इम जाणि जत्न करो ए, सुण सुन्दरे, मंत्र जपो थई सावधान, मालंतडा०
पुण्य घणो वली उपजे ए, सुण सुन्दरे, नासे विघ्न वितान, मालंतडा० ॥५७
सामायिक स्तव वंदन प्रतिक्रम ए, सुण सुन्दरे, कायोत्सर्ग प्रत्याख्यान, मालंतडा०
अखंड पणें सदा कीजिये ए, सुण सुन्दरे, आवश्यक अभिधान, मालंतडा० ॥५८
समता सामायिक जाणीये ए, सुण सुन्दरे, जिन चोवीस स्तवन, मालंतडा०
एक तणा जिण गुण ए, सुण सुन्दरे, ते वदन पावन्न, मालंतडा ॥५९
दोषतणुं आलोचन ए, सुण सुन्दरे, ते कहीइ प्रतिक्रम, मालंतडा०
निन्दा गर्हा निज कीजिये ए, सुण सुन्दरे, टालिये पाप कुकर्म, मालंतडा० ॥६०
निजशक्ति कायोत्सर्ग धरो ए, सुण सुन्दरे, ऊभा अथवा पद्मासन्न, मालंतडा०
वस्त्र परित्याग जे कीजिए, सुण सुन्दरे, ते प्रत्याख्यान यति जन्न, मालंतडा० ॥६१
पट् आवश्यक नित पालीइ ए, सुण सुन्दरे, टालीये सकल प्रमाद, मालंतडा०
पंच इन्द्री मन वश करी ए, सुण सुन्दरे, हारी हरख विषाद, मालंतडा० ॥६२
दंत विना हस्ती जिम ए, सुण सुन्दरे, दंष्ट्र्या विना जिम सिंघ, मालंतडा०
आवश्यक विना जति तिम ए, सुण सुन्दरे, नवि सोहे व्रत्त प्रसंग, मालंतडा० ॥६३
सामायिकतणां दोष त्यजो ए, सुण सुन्दरे, त्यजीये पंच अतिचार, मालंतडा०
मनवचकाया दुःप्रणिधान ए, सुण सुन्दरे, अनादर स्मृति अंतर आधार, मालंतडा० ॥६४
सामायिकपाठवचनें भणों ए, सुण सुन्दरे, संकल्प विकल्प सन्तान, मालंतडा०
आर्त्त रौद्र जे चिन्तन ए, सुण सुन्दरे, ते मनि दुःप्रणिधान, मालंतडा० ॥६५
सुन विना पाठ भणि ए, सुण सुन्दरे, मुखे करे हुंकार, मालंतडा०
पूर्वान्वय वोले वली ए, सुण सुन्दरे, ते वचन अतिचार, मालंतडा० ॥६६

निजकाय चंचल करि ए, सुण सुन्दरे, चलण हस्त संचार, मालंतडा०
मुखे नेत्र संज्ञा करि ए, सुण सुन्दरे, ते अंग दूषणकार, मालंतडा० ॥६७
प्रमादपणें पाठ जे भणें ए, सुण सुन्दरे, अनादर दूषण तेह, मालंतडा०
स्मृति तणों अन्तर करि ए, सुण सुन्दरे, संभारे पाठ नहीं जेह, मालंतडा० ॥६८
इणि परे पंच विधि ए, सुण सुन्दरे, त्यजो सामायिक अतीचार, मालंतडा०
मन वचन काया ए करी ए, सुण सुन्दरे, वरो समता भवतार, मालंतडा० ॥६९
सामायिक सूत्रतणां ए, सुण सुन्दरे, सुणो दोष बत्रीस नाम, मालंतडा०
संक्षेपे कहूं जुजुआ ए, सुण सुन्दरे, जे कह्या जिन स्वामि, मालंतडा० ॥७०
अनादर स्तब्ध प्रविष्ट ए, सुण सुन्दरे, प्रतिपीडित दोलायित नाम, मालंतडा०
अंकुश कच्छपरिंगित ए, सुण सुन्दरे, मच्छ उद्वर्त दोष भाम, मालंतडा० ॥७१
मनोदुष्ट वेदिकाबंध ए, सुण सुन्दरे, भय दोष विभक्ति ऋद्धि होइ, मालंतडा०
गारव स्तेनित प्रत्यनीक ए, सुण सुन्दरे, प्रदुष्ट तर्जित दोष जोइ, मालंतडा० ॥७२
शब्द हेलित त्रैवलित ए, सुण सुन्दरे, संकुचित दृष्ट अदृष्ट, मालंतडा०
संघ कर मोचन आलब्ध ए, सुण सुन्दरे, अनालब्ध दोषते दुष्ट, मालंतडा० ॥७३
हीन उत्तर चूलिका नाम ए, सुण सुन्दरे, मूक दर्दुर दोष जाणि, मालंतडा०
चुल्ललित चरम नाम ए, सुण सुन्दरे, दोष बत्रीस पाप खाणि, मालंतडा० ॥७४
कृतकर्मज आलस करे ए, सुण सुन्दरे, अनादर नाम दोष, मालंतडा०
विद्या अहंकार जे करे ए, सुण सुन्दरे, स्तब्ध आकारि ते सेस, मालंतडा० ॥७५
पंच परमेष्ठी पासें भणी ए, सुण सुन्दरे, ते कहिये दोष प्रविष्ट, मालंतडा० ।
निज हस्ते जानु युग वरी ए, सुण सुन्दरे, ते पर पीडित निकृष्ट, मालंतडा० ॥७६
निज तनु मन चंचल करि ए, सुण सुन्दरे, दोष दोलायित तेह, मालंतडा० ।
निज निलाडे अंगुष्ठ वरी ए, सुण सुन्दरे, वंदनांकुश दोष एह, मालंतडा० ॥७७
कटि चंचल कच्छप नीयरे चंचल ए, सुण सुन्दरे, मच्छ उद्वर्तित ते भाम, मालंतडा ।
...., मालंतडा ॥७८
सूरी आदि संक्लेश पन ए, सुण सुन्दरे, ते दुष्ट मन दोष, मालंतडा०
कर युग्यें जानु विहि जोड़ी ए, सुण सुन्दरे, वेदिका नाम ते दोष, मालंतडा० ॥७९
भय पामी मरण तणों ए, सुण सुन्दरे, ते सामायिक भय होइ, मालंडता०
गुरु तणें भय जे भणि ए, सुण सुन्दरे, ते विभक्ति दोष नुं जोइ, मालंतडा० ॥८०
पूजा वांछें जे संघतणी ए, सुण सुन्दरे, गौरव पणें ऋद्धि दोष, मालंतडा०
माहात्म्य प्रकाशे जे आप तणों ए, सुण सुन्दरे, भणें गारव ते शोष, मालंतडा० ॥८१
गुरु थी प्रच्छन्न पणें भणें ए, सुण सुन्दरे, ते चोरी दोष वखाणि, मालंतडा०
देव शास्त्र थी परान्मुख भणें ए, सुण सुन्दरे, ते प्रत्यनीक दोष जाणि, मालंतडा० ॥८२
पर साथें द्वेष क्लेश करी ए, सुण सुन्दरे, वंदना ते दोष प्रदुष्ट, मालंतडा०
परने भय करतो जे भणी ए, सुण सुन्दरे, तर्जित दोष निकृष्ट, मालंतडा० ॥८३
मौन विना पाठ जे भणि ए, सुण सुन्दरे, ते कहिये वचन दूषण, मालंतडा०
आचार्य आदें पराभव करि ए, सुण सुन्दरे, ते हेलित दोष लक्षण, मालंतडा० ॥८४

त्रिवली भंग अंग जे करि ए, सुण सुन्दरे, भाले रेख त्रिवली तेह, मालंतडा०
हस्तें स्पर्श संकोचे अंग ए, सुण सुन्दरे, वंदना दोष संकुचित, मालंतडा० ॥८५
संघ सहु देखी भणि ए, सुण सुन्दरे, वाह्य पणें दोष दृष्ट, मालंतडा०
सहि गुरु थो उलवी भणें ए, सुण सुन्दरे, पृष्ठत्तो वंदना अदृष्ट, मालंतडा० ॥८६
संघ रंजि भक्ति वांछिए, सुण सुन्दरे, संघकर मोचन तेह, मालंतडा०
पर थी द्रव्य पामी भणें ए, सुण सुन्दरे, आलब्ध नामें दोष एह, मालंतडा० ॥८७
लोभें द्रव्य वांछे पर तणो ए, सुण सुन्दरे, ते अनालब्ध दोष नाम, मालंतडा०
अर्थ व्यंजन काल हीण भणें ए, सुण सुन्दरे, ते हीन दोष उद्दाम, मालंतडा० ॥८८
घुर्घुर नादें मोटे शब्दें भणें ए, सुण सुन्दरे, दर्दुर दोष ते होइ, मालंतडा०
पंचम रागें पर क्षोभ करे ए, सुण सुन्दरे, धूललित दोष इम जोइ, मालंतडा० ॥८९
इणि परें त्रत्रीस दोष ए, सुण सुन्दरे, संक्षेपें कह्यो विचार, मालंतडा०
विस्तार आगमें जाण जो ए, सुण सुन्दरे, हूँ नर अल्पमति धार, मालंतडा० ॥९०
दोष वत्रीस दूरे करी ए, सुण सुन्दरे, परिहरि सयल अतिचार, मालंतडा०
मन वच काया दृढ़ करी ए, सुण सुन्दरे, वरिये सामायिक सार, मालंतडा० ॥९१
सदोष वन्दना जु कीजिये ए, सुण सुन्दरे, तो नो होइ पुण्य लगार, मालंतडा०
केवल काय कष्टकारी ए, सुण सुन्दरे, श्रम तणो लाहे भार, मालंतडा० ॥९२
इम जाणि दोष परिहरी ए, सुण सुन्दरे, धरों समता भवतार, मालंतडा०
अखंड आवश्यक पालिये ए, सुण सुन्दरे, टालिये दुःख संसार, मालंतडा० ॥९३
कायोत्सर्गे वंदना जे करे ए, सुण सुन्दरे, तेहनां दोष वत्रीस, मालंतडा०
जे जिन आगम जाणज्यो ए, सुण सुन्दरे, घोटक आदें निर्देश, मालंतडा० ॥९४
चहुं अंगुल तणें अंतरे ए, सुण सुन्दरे, भू पीठ धरी दोय पाय, मालंतडा०
जानु लगें लंव हस्त ए, सुण सुन्दरे, निश्चल करी निज काय, मालंतडा० ॥९५
विहु पासें पूठि मस्तकि ए, सुण सुन्दरे, अडकीये किसे नहीं आणि, मालंतडा०
स्वनेत्र संज्ञा किसी ए, सुण सुन्दरे, मौन धरी निज वाणि, मालंतडा० ॥९६
इणि परे पाठ जे भणी ए, सुण सुन्दरे, लेइ कायोत्सर्ग गुणधार, मालंतडा०
इम दोष कोइ नहीं होइ ए, सुण सुन्दरे, जो रहे शास्त्र अनुसार, मालंतडा० ॥९७
सदा सामायिक कीजिये ए, सुण सुन्दरे, निज शक्ति लेइ कायोत्सर्ग, मालंतडा०
सुर नर वर सुख भोगवीइ ए, सुण सुन्दरे, इणि परे होइ अपवर्ग, मालंतडा० ॥९८
जिम जिम समता कीजीइ ए, सुण सुन्दरे, तिम तिम दुःकर्म हाणि, मालंतडा०
पुण्य घणुं वली ऊपजे ए, सुण सुन्दरे, पुण्ये स्वर्ग सुख खाणि, मालंतडा० ॥९९
यती अथवा गृहस्थ पणें ए, सुण सुन्दरे, समता धरि घड़ी दोय, मालंतडा०
मनवांछित सुख ते लहे ए, सुण सुन्दरे, समता तोले नहीं कोय, मालंतडा० ॥१००

वस्तु छन्द

धरो सामायिक, धरो सामायिक भविजन भावे करी।
मन वचन काया दृढ़ पणें, करे सामायिक सार निर्मल,
इन्द्र नरेन्द्र पद पायिनें, अनुक्रमें सुख देइ ते अविचल।

अनुदिन जे जन पालसे, व्रत सामायिक सार, जिन सेवक पदमो कहे, ते जासे भव-पार ॥१०१

अथ ढाल सहेलीनी

कही सामायिकसार, भेद त्रीजी प्रतिमा तणों, साहेलड़ी०
कहूँ प्रोषध उपवास, प्रतिमा चतुर्थी सुणों, साहेलड़ी० ॥१
मास एक मझार, चार उपवास कीजिए, साहेलड़ी०
आठम चौदस पर्व, पोसासहित सदा लीजिए, साहेलड़ी० ॥२
सातमि तेरसें जाणि, अष्टविध जिन पूजा करी, साहेलड़ी०
पूजे जिनवर पाय, सुर पद पूजा अनुसरी, साहेलड़ी ॥३
त्रिविध मिले जो पात्र, प्रासुक आहार तस दीजिए, साहेलड़ी०
सफल करी निज गात्र, अतिथि संविभाग भाव कीजिए, साहेलड़ी० ॥४
निज स्वजन-सहित आपण पें, एक स्थान करीइए, साहेलड़ी०
तुष्टि तप एक भक्त, नीर-सहित नित पालीइए, साहेलड़ी ॥५
असन पान खादि स्वादि, चतुर्विध आहार करी, साहेलड़ी०
पछें करी मुखि-शुद्धि, वृद्धि निज आहार संचरी, साहेलड़ी ॥६
पछें जई जिनगेह, पाय पवित्र करी, साहेलड़ी०
सोधी ईर्यापन्थ, निसही निसही त्रणि उच्चरी, साहेलड़ी ॥७
देइ प्रदक्षिणा त्रण, जिन पूजि स्तवन भणी, साहेलड़ी०
करी साष्टांग प्रणाम, नीसरवां कही आवसही त्रणी, साहेलड़ी० ॥८
पूजी सहिं गुरु वाणि, पंचांग प्रणाम विनय करी, साहेलड़ी०
गुरु उपदेशे उपवास, विधि सहित पोसह धरी, साहेलड़ी० ॥९
रही निरन्तर स्थान, जिन प्रासाद शून्य गेह, साहेलड़ी०
गिरि-गुफा उद्यान, समसान भूमि रही तेह, साहेलड़ी ॥१०
छांडी घर व्यापार, आरम्भ पट्कर्म परिहरी, साहेलड़ी०
त्रण दिन ब्रह्मचर्य, धरे वस्त्र एक ऊजलो, साहेलड़ी० ॥११
वाली दृढ़ पद्मासन्न, अथवा कायोत्सर्ग धरी, साहेलड़ी०
कीजे शुभ धर्मध्यान, आर्त्तरौद्र दूरें करी, साहेलड़ी० ॥१२
क्रोध मान माया लोभ, राग द्वेष मद वेगलो, साहेलड़ी०
त्रण दिन ब्रह्मचर्य, धरे वस्त्र एक ऊजलो, साहेलड़ी० ॥१३
भणिये जिनवर-वाणि, विनय व्याख्यान करो, साहेलड़ी०
छोड़ी विकथावाद, धर्म चर्चा ते अनुसरो, साहेलड़ी० ॥१४
कीजे दोय प्रतिक्रमण, कीजे सामायिक त्रण काल, साहेलड़ी०
लीजे स्वाध्याय चार योग भक्ति वे गुणमाल, साहेलड़ी० ॥१५
यतितणों आचार, पोसह तणें दिन पालिये, साहेलड़ी०
जेहवो मुनिवर धीर, वीर विग्राग्रह सम्भालिये, साहेलड़ी० ॥१६
पंच परमेष्ठी गुण, षट्द्रव्य पंचास्तिकाय, साहेलड़ी०
सप्त तत्त्व अष्टकर्म, नवपदार्थ विधि न्याय, साहेलड़ी० ॥१७

दशलक्षण जिनधर्म-चैत्य एकादश अंग, साहेलड़ी०
अनुप्रेक्षा वार सुतप, तेर क्रिया व्रत रंग, साहेलड़ी० ॥१८
चिंतो चौद गुणस्थान, प्रमाद पनर प्रजालिये, साहेलड़ी०
भावना भावो शुभ सोल, सत्तर संजम पालिये, साहेलड़ी० ॥१९
प्रमाद साढ़ा सात्रीस, लक्ष चौरासी मुनिगुण, साहेलड़ी०
चरचा कीजे माहो मांहि, समता भावे मतिनिपुण, साहेलड़ी० ॥२०
अष्टमी तणों उपवास, अष्टकर्म तणुं हारक, साहेलड़ी०
आपे सिद्धगुण अष्ट, अष्टमी भूमि सुखकारक, साहेलड़ी० ॥२१
चतुर्दशी उपवास, केवलज्ञान प्रकाशक, साहेलड़ी०
चौदमु देइ गुणस्थान, चतुर्गतिना दुखनाशक, साहेलड़ी० ॥२२
आठमि चौदसि उपवास, नीर विना सदा जे करें, साहेलड़ी०
ते पुण्य होइ अपार, पाप दुष्कर्म निर्जरें, साहेलड़ी० ॥२३
उष्ण लेइ जो नीर, तो आठमो भाग जाइ, साहेलड़ी०
कसाल्यां द्रव्य जल मिश्रा, तो उपवास हीण थाइ, साहेलड़ी० ॥२४
आठम चौदस उपवास, अखंड पणें जे आचरें, साहेलड़ी०
सदा पोसा सहित, सदा पंच इन्द्री मन वसि करें, साहेलड़ी० ॥२५
सावद्य-सहित उपवास, लीपणों जिम धूल ऊपर, साहेलड़ी०
अथवा जिम गजस्नान, नाखे धूलि सूंढ भर, साहेलड़ी० ॥२६
सावद्य-रहित उपवास, पुण्यकारी कर्म-निर्जरे, साहेलड़ी०
सहित सावद्य उपवास, कष्टकारी कर्म अनुसरे, साहेलड़ी० ॥२७
निःपातन कुदाल, जालकर्म तरु मूल खणें, साहेलड़ी०
सो तप वज्र समान, कठिण कर्म पर्वत हणें, साहेलड़ी० ॥२८
सोल प्रहर नु मान, उत्तम पोसह जिण भण्यो, साहेलड़ी०
धारणां दिन मध्यान, पारणें मध्यान लगे सुणो, साहेलड़ी० ॥२९
धारणें पारणें एक वार, भोजन पानी साथे सही, साहेलड़ी०
वार पहर ते मध्य, एक दिन वे रात्रि कही, साहेलड़ी० ॥३०
दिन एक रात्रि एक, जघन्य पोसो ते कह्यो, साहेलड़ी०
पोसो नियम सहित, निजशक्ति मन आणीये, साहेलड़ी० ॥३१
पारणें कीजे जिनपूज, पात्रदान वली दीजिये, साहेलड़ी०
निज साधर्मी जिन साथ, भोजन सूं वाच्छल्य कीजिये, साहेलड़ी० ॥३२
निज पर्व उपवास, मूलव्रत जे आचरे, साहेलड़ी०
जीवितव्य तेह प्रमाण, अखंड नियम जे अनुसरे, साहेलड़ी० ॥३३
इम जाणिय तम्हो भव्य, मूलव्रत सदा धरो, साहेलड़ी०
निज शक्ति अनुसार, उत्तर तप वहु करो, साहेलड़ी० ॥३४
तप ए निर्मल नीर, पाप-कर्दम-प्रक्षालक, साहेलड़ी०
तप अग्नि जीव सुवर्ण, कर्म-कलंक प्रजासक, साहेलड़ी० ॥३५

आठमि चौदसि जाण, जे मूढा मैथुन करे, साहेलड़ी०
ते नर पशु समान, पाप-फल नरकें अवतरें, साहेलड़ी० ॥३६
आठमि चौदसि तिथि पर्व, निर्मल शील जे ध्याय, साहेलड़ी०
ते उत्तम गुणवंत, पुण्य फलें स्वर्गे जाय, साहेलड़ी० ॥३७
पोसा तणें दिन भव्य, शरीर-सिणगार न कीजिये, साहेलड़ी०
स्नान विलेपन आभरण, सुगंध पुष्प न वि लीजिये, साहेलड़ी० ॥३८
उत्तम प्रतिमावंत, पोसह करो नियम-सहित, साहेलड़ी०
उत्तम मध्यम अंतर नहीं ए, अवर विर्वे जलत्र रहित, साहेलड़ी० ॥३९
शक्ति होय जेहनें हीन, ते करें कांजी रूक्ष आहार, साहेलड़ी०
एक स्थान एक भक्त, जघन्य व्रत विधि वार, साहेलड़ी० ॥४०
करें नहीं जे उपवास, पंच इन्द्री अंग जे पोसें, साहेलड़ी०
ते लंपट करे पाप, भव-भव दुख ते सहें, साहेलड़ी० ॥४१
परवश पड़ियो जीव, लंघन कष्ट करे घणुं, साहेलड़ी०
स्वाधीन पणें धर्मकाज, करे नहीं ते मूढ़ पणुं, साहेलड़ी० ॥४२
प्रगट करि निज शक्ति, तप व्रत शुभ आचरो, साहेलड़ी०
तप चिन्तामणि कल्पवृक्ष, सौख्य जिम मोक्ष वरो, साहेलड़ी० ॥४३
निर्दोष कीजे तप, पंच अतीचार तजो, साहेलड़ी०
पोसह तणां अतिपात, पंच पाप मन तजो, साहेलड़ी० ॥४४
जो या विणजे द्रव्य, झणी ववो भूमि ऊपर, साहेलड़ी०
नव लीजे उपकर्ण, विवण पूंजी जोइ, साहेलड़ी० ॥४५
संथारा कीजे यत्न, आदर करो आवश्यक तणो, साहेलड़ी०
मन वच करि सावधान, व्रत संभारो आपणों, साहेलड़ी० ॥४६
इणि परे दोष रहित, पोसा तणी विधि पालीइए, साहेलड़ी०
चौथी प्रतिमा उत्तुंग, मन वचन कायाइ संभालीए, साहेलड़ी० ॥४७
संक्षेपे कह्यो विचार, पोसह तणो मैं ऊजलो, साहेलड़ी०
पोसह तणें फल भव्य, सोलमें स्वर्गे जाइ निर्मलो, साहेलड़ी० ॥४८
इन्द्र नरेन्द्र पद होइ, मन वांछित सुख पामीये, साहेलड़ी०
लहे चक्री जिन पद, अनुक्रमें मोक्ष पामीये, साहेलड़ी० ॥४९
सचित्त वस्तुनो त्याग, पंचम प्रतिमा सांभलो, साहेलड़ी०
संक्षेपें कहुँ सार, कृपा कीजे भेद ऊजलो, साहेलड़ी ॥५०
हरित कंद फल फूल, पत्र प्रवाल त्वक् सचित्त, साहेलड़ी०
अप्रासुक जल धान, तेह तणी कीजें निवृत्त, साहेलड़ी० ॥५१
आर्द्रक आदें कंद, आम्र केल आदि फल, साहेलड़ी०
नागवल्ली आदि पत्र, अप्रासुक जल शीतल, साहेलड़ी० ॥५२
तरु तणी नीली छाल, नीलमा आदि जे कुसुम, साहेलड़ी०
गोधूम चणका ज्वार, विरहाली आदि बीज उत्तम, साहेलड़ी० ॥५३

जे जे सचित्त वस्तु, ते ते भक्षण न वि कीजिये, साहेलड़ी०
अप्रासुक मिश्र प्रासुक, द्रव्य सचित्त सहु तजीजिये, साहेलड़ी० ॥५४
सूकूं पाकूं अग्नि, तस कसाल्या द्रव्य मांहे भले, साहेलड़ी०
अथवा कीजे चूर्ण, पूर्ण प्रासुकं जन्त्र-दले, साहेलड़ी० ॥५५
शुद्ध प्रासुक जे द्रव्य, स्परस रस गंध वरण, साहेलड़ी०
जेह मानें निज मन्न, ते प्रासुक वस्तु जोग्य करण, साहेलड़ी० ॥५६
पृथिवी अप तेज वायु, असंख्य जीव न वि बंधीये, साहेलड़ी०
वनस्पति अनंतकाय, तेह जीव न विराधीये, साहेलड़ी० ॥५७
जो मिले प्रासुक द्रव्य, तो आपणें न विराधीये, साहेलड़ी०
कोमल करि परिणाम, जीव दया धर्म राखीये, साहेलड़ी० ॥५८
मन वच कायाइ जाणि, पंचम प्रतिमा पालिये, साहेलड़ी०
जीव दया तेणें काज, जीव हिंसा हुं टालिये, सालेहड़ी० ॥५९
दिवा मैथुन त्याग, रात्रें आहार चार त्यजो, साहेलड़ी०
छट्ठी प्रतिमा नेम, रात्रि भुक्ति विरति भजो, साहेलड़ी० ॥६०
अशन पान खादि स्वादिम, अन्न आदि अशन कही, साहेलड़ी०
जल आदि रस पान, दुग्ध घृत तेल सही, साहेलड़ी० ॥६१
खाजा मोदक पकवान, फल आदि खादु वस्त, साहेलड़ी०
लवंग एलाची तंलोल, स्वादकारी द्रव्य प्रशस्त, साहेलड़ी० ॥६२
ए चतुर्विध आहार, रात्रि समय न वि खाइए, साहेलड़ी०
थूल सूक्ष्म जीव घात, अन्धकारें न वि देखीए, साहेलड़ी० ॥६३
दिवस उदय सूर्यमान, घड़ी य दोय चार होइ जव, सालेहड़ी०
तव कीजे स भोजन्न, आहार चार भोकल्या तव, सालेहड़ी० ॥६४
मास एक पर्यन्त, निशा आहार जे नियम करे, सालेहड़ी०
लहे पुण्य विशाल, उपवास पन्नर फल लहे, सालेहड़ी० ॥६५
उपवासें होइ कष्ट, निशा आहारें सो हिल्यो त्यजो, सालेहड़ी०
इम जाणी भव्य लोक, उपवास पुण्य ते तेतलो, सालेहड़ी० ॥६६
मन वच काया ठाम, परिणामें पुण्य ऊपजे, सालेहड़ी०
निशाहार चार त्याग, सुख सन्तोष संपजे, सालेहड़ी० ॥६७
जाव जीव धरे जे नेम, रजनी चहुं आहार तणो, सालेहड़ी०
ते फल वहु उपवास, काल गमे ऊर्ध आपणो, सालेहड़ी० ॥६८
निशाहार-नियमवन्त, जस पुण्य महिमा घणों, सालेहड़ी०
ऋद्धि वृद्धि लहे सौभाग्य, सुख पामे देव पदतणों, सालेहड़ी ॥६९
दिवा करे जे मैथुन, ते नर पशु समान, सालेहड़ी०
दिन अयोग्य यह कर्म, सूर्य साखें कीजे किम, सालेहड़ी० ॥७०
दिवा ब्रह्मचर्यवन्त, ते नर देव समो कहीइ, सालेहड़ी०
दिवा कीजे धर्मकाज, लाज काज कीजे नहीं, सालेहड़ी० ॥७१

इम जाणी भविजन्न, दिवस मैथुन ते परिहरो, साल्हेहडी०
रातें आहार-परित्याग, छट्ठी प्रतिमा अनुसरो, साल्हेहड़ी० ॥७२

दोहा

दिवा ब्रह्मव्रत जे धरें ते नर देव समान। अयोग्य काज किम कीजिए, दिवस खास वदिमान ॥१
लाजे कापड पेहरीए, लाजे दीजे दान। लाजे काज सहू सरे, लाज करो गुणवार ॥२
मन वच कायाइ वश करी, दिने शील पालो सार। रात्रें आहार जे परिहरें, धन धन ते अवतार ॥३
लंपट जे नर कामिनी, अयोग्य करे जे काज। निन्दा अपजस ते लहें, सहें ते दुक्ख समाज ॥४
इम जाणी संतोष धरि, म करो कर्म अयोग्य। शुभ सदाचार संचरो, करो मन मन संतोष ॥५
दर्शन आदि छे स्थान, अनुदिन पाले जे सार। जघन्य श्रावकते जाणिये, धरे जे शुभ आचार ॥६

अथढाल अंबिकानी

प्रतिमा छै विशाल, संक्षेपें भेद मैं भण्यूं ए। हवे कहूँ शील भेद, प्रतिमा सातमी ते तणुं ए ॥१
सर्व नारी परिहार, देव मनुष्य पशु तणी ए। अचेतन जे नार, चार भेद सेवो झणी ए ॥२
मन वयण निज अंग, कृत कारित अनुमोदना ए। नव भेदे त्यजो संग, नारी नरकते नोदना ए ॥३
दृढ़ धरो ब्रह्मचर्य, निज पर स्त्री दूरें त्यजो ए। व्रत सहु माहें ब्रह्मचर्य, शीलरत्न सदा भजो ए ॥४
स्त्री कथा स्त्री गोष्ठ, स्त्री-संगति दूरे करो ए।
स्त्री तणी सेवा निकृष्ट, स्त्री-संगति तम्हों परिहरो ए ॥५
वृद्ध यौवन स्त्री बाल, माता बहिन पुत्री सम ए। चितवो ते सकोमाल, मन मर्कट गुण दमीइ ए ॥६
सुणो नारी निर्क्षेद, स्थूल दोष ते सांभलो ए। जिम उपजे निर्वेद, सहज भाव ते कसमलु ए ॥७
मूर्खपणों बहु होइ, माया मिथ्यात जु बोलीइ ए। सहज अशुचि तजोइ, पाप-साहस घणुं वली ए ॥
सहजें निर्दय परिणाम, लोभ तृष्णा करे घणी ए।
कलंक तणुं ते ठाम, रामा रंग करो धरो घणी ए ॥९
कचपे जुं आवास, मुख अस्थि चरम पंचरो ए।
दुर्गन्ध श्लेष्म कुसास, काम आस्वादे कूकरो ए ॥१०
स्तन ए मांस को पिंड, रस रुधिर पश्रु परु वहे ए।
उदर वृष्टि घडे प्रचंड, कामी काक रागि रहे ए ॥११
कामिनी कलत्र कुस्थान, मूत्र रक्त सदा ए। नरक कुबिलन समान, कामी कीट सेवा करे ए ॥१२
बाह्य देखि चाक चुंब, जिम पतंग दीवे पडे ए।
मरे सेवं रागी सुंब, मदन विरी जीविनें नडे ए ॥१३
अभ्यन्तर भाग अंग, रोग वसे बाहिर जो थाइ ए।
तो उपजे बहु सुंग, काग माखी भक्षी जाइ ए ॥१४
एह वो अंग अपवित्र, रोगी नर रचें सदा ए।
सप्त धातु भरयो विचित्र, डाहो नहीं सेवे सदा ए ॥१५
पुरुष-अंग संयोग, जीव अलब्ध बहु मरें ए। योनि स्थान-उत्पन्न, लिंग संघट्टि हिंसा घणी ए ॥१६
स्त्रीसेवंता एक वार, नव लक्ष जीव मरि ए।
जिम तिल मरी वंसनाल, तातो जिम दंड संचरि ए ॥१७

मैथुन करे जे मूढ, दिन प्रति वहुवार ए।
ते पामें पाव प्रौढ, सहे ते वहु दुःख भार ए ॥१८
काम-अनल महादाह, स्त्री सेवे घणुं बले ए।
तेले जिम थाइ उछाह, संतोष नीर वेगे टले ए ॥१९
इम जाणि भव्य जीव, काम सेवा दूरें त्यजो ए।
मनें धरो संतोष, दिव्य ब्रह्मव्रत सदा भजो ए ॥२०
दृष्टि विष नागिनि जिम्म, देखी वेगे मानव मरे ए।
देखी रागें नारि तिस्म, दूर थकी नर मन हरे ए ॥२१
नर तणों दृढ ब्रह्म व्रत, नारी संगे वेग जाइ ए।
अग्नितापसंयुक्त, पारो जिम दहुं दिस थाइ ए ॥२२
जिन भवनें एक वार, जिनदत्त श्रेष्ठि गयो ए।
देखी नारी चित्राकार, दृढ़ मन पण विह्वल थयो ए ॥२३
संच्यो संठे कालकूट, विष वेदना करे नहीं ए।
तिणें नारी जव दृष्ट, भ्रष्ट व्रत थयो सही ए ॥२४
सांपणि समी विकराल, स्परशी दुख देइ घणुं ए।
राग मूकी विष झाल, शील जीवी हरे नर तणुं ए ॥२५
वाघ सिंघ तणें वासि, सर्प समीप वसो रूरू ए।
पापिणी नारी ताणें वास, साधु रहियों सदा दूरू ए ॥२६
तालगें नर मोटो होइ जालगें नारी थी वेंगलो ए।
जद नारी नेडो सोइ, तष हीणों नार कसमलो ए ॥२७
जिम मांगे रंक अन्न, दीन पणें याचना करे ए।
कामें व्याप्यो जव मन्न, तव नारी शील धनं हरे ए ॥२८
सर्वथा नारी करो त्याग, रागदृष्टि दूरें करो ए।
जिणें न होइ तुम सो भाग, वैरागभावे परि हरो ए ॥२९
नारी अंग सिणगार, रूप-निरीक्षण नवि कीजिए ए।
देखि स्त्रीरूप अंगार, पुरुख पतंग प्राणी त्यजो ए ॥३०
स्त्री आभरण झंकार, रागकारी शब्द त्यजो ए।
मदन पामे विकार, महुअर नादें सांप सज ए ॥३१
स्त्री-संयोगे हुइ राग, वीर्यहानि मल विस्तरि ए।
पाप तणों होइ भाग, पापें किम शिव संचरि ए ॥३२
स्त्री साथे हास्य विनोद, कौतुक क्रीडा जे करे ए।
पामें मदन प्रमोद, भांड वचन वली उचरे ए ॥३३
स्पर्श्यें छोड़ो नारी अंग, नयणें रूप न देखीइ ए।
करणें त्यजो शब्द संग रंग मन नवि पेखीइ ए ॥३४
जिम तिम करीय उपाय, नारी थकी दूरे रहो ए।
मन वच करी वश काम, शील व्रत निर्मल लहो ए ॥३५

नारी तणां कटाक्ष-बाणें जे नवि भेदिया ए।
ते सुभट माहें दक्ष, जिणें शील न छेदिया ए ॥३६
नारी तणा अंगोपांग, तीक्ष्ण बाण जे नवि हण्यां ए।
ते सुभट माहें उत्तुंग, ते धन्य पुण्यवंत भण्यां ए ॥३७
दूरि गज बाघ सिंघ, निज हस्तें नर वश करे ए।
ते हवा भूपति बलवंत, विरला जे शील नवि हरे ए ॥३८
दुर्धर काम कहे बाय, पापी त्रैलोक्य मांहे फिरे ए।
इन्द्र फणीन्द्र नरराय, कामें सहु विह्वल कीया ए ॥३९
सबल शूर जे धीर, काम शत्रु जेणें जीतिया ए।
ते नर गुण गंभीर, नारी रूपें नहीं छीपिया ए ॥४०
सुख शय्यासन चीर, ताम्बूल पुष्प माला गंध ए।
दांतुन स्नान शरीर, सरागें शीलदोष बंधे ए ॥४१
निज अंग मंजण जेह, बहु राग जेणें ऊपजे ए।
चंदण धूपावास देह, सबल काम जेणें संपजे ए ॥४२
एह आदे जे जे वस्तु, तीव्र काम कारी कही ए।
ते द्रव्य छोड़ो समस्त, शील यत्न करो सही ए ॥४३
कूबड़ी काली कुरूप, नेत्र नासिकाथी वेगली ए।
बीभत्स दीसे बहुरूप, हस्त पाद छिन्न दूबली ए ॥४४
एहवी देखि कुनारि, स्त्री रागे मूढ नयर नड्यो ए।
पापी मदन विकार, कामी नर तिहां पड्यो ए ॥४५
करे मास उपवास, पारणें केवल लेई नीर ए।
पामी नारी तणों पास, ततक्षण पड़े ते धीर ए ॥४६
भणंता जे अंग इग्यार, ध्यानी मुनि बैरागिया ए।
सहि नारी संग असार, शील वेगें तिणें त्यागिया ए ॥४७
हुआ रुद्र जे इग्यार, माता-पिता वली तेह तजा ए।
थया भ्रष्ट चारित्र भार, विषम संग लहीं आपका ए ॥४८
एह आदें नर नार, काम रोगे जे घणुं रुल्या ए।
जिन आगम मझार, ते तम्हो सहु सांभल्या ए ॥४९
शील तणें प्रभाव, सुर तणां आसन कंपिया ए।
इन्द्र आदि देवराय, शील धारी गुण जंपिया ए ॥५०
क्रूर बाघ थाइ छाग, सिंघ थाइ भृग समो ए।
पुष्पमाल थाइ नाग, दुर्धर गज भृगाल समो ए ॥५१
अग्नि फीटी जल होइ, विषम विष अमृत थाइ ए।
शत्रु सहु होइ मित्र, समुद्र ते गोष्पद थाइ ए ॥५२
कामधेनु कल्प वृक्ष, शील चिन्ता मणि सम कही ए।
मन वांछित ते लहें सौख्य, शील मोले अवर को नहीं ए ॥५३

शील महिमा जस गुण, एक जीभे किम वर्णव्यूं ए।
देइ सोलमो स्वर्ग, अनुक्रमे ते सिद्ध थाइ ए ॥५४
मन वच काया आणी ठामि, दृढ़, ब्रह्मचर्य पालीइ ए।
प्रतिमा सातमी ते नाम, पंच अतीचार टालीइ ए ॥५५
नारी अंग निरीक्षण, नारी कथा न वि कीजिइ ए।
पूर्व मुक्त अनुस्मरण, कामकारी रस न लीजिइ ए ॥५६
निज सरीर सिणगार, शील तणां त्यजो दूषण ए।
अठार सहस्र प्रकार, पालो शील गुण भूषण ए ॥५७
प्रतिमा आठमी कहुँ भेद, एक मना मित्र सांभलो ए।
सर्व आरंभ निक्षेद, आरति निवृत्ति नाम निर्मलो ए ॥५८
पृथ्वी अप तेज वाय, चार थावर सत्त्व कही ए।
सर्व वनस्पति काय, भूत सत्ता जीव सही ए ॥५९
बे इन्द्री ते इन्द्री चौ इन्द्री, विकलत्रय प्राणि एह ए।
असंज्ञी संज्ञी पंचेन्द्री जीव, जाति संज्ञा तेह ए ॥६०
सत्त्व भूत प्राणी जीव, थावर त्रस काय देखोइ ए।
मन वच काय अतिचार, यत्न सहित दया पेखिये ए ॥६१
छांडि आरंभ षट्कर्म, झूठ चोरी मैथुन त्यजो ए।
परिग्रह थी होइ कर्म, बहु तृष्णा पाप वृक्ष ए ॥६२
छोड़ो दुर्व्यापार, हिंसा काज पाप कारी ए।
क्रोध मान कपट असार, लोभं इन्द्री क्षोभ धारी ए ॥६३
कुविणज थी रुडु विष, एक भव दुःख ते देइ ए।
पाप देइ बहु दुःख, अनेक जन्म कष्ट वेइ ए ॥६४
कुव्यापारे धन्न उपाय, पाप फल एक लो लहि ए।
धन स्वजन सहु खाय, नरक कष्ट एक लो सहि ए ॥६५
तो किम कीजे ते पाप, दुर्व्यापार दूरे करी ए।
उगारीइ निज आप, के किहने न वि उधरो ए ॥६६
जिम जिम छोडि पापारंभ, तिम तिम दुष्कर्म निर्झरि ए।
आलिंगन देइ देव रंभ, मुक्ति नारी वेगे वरि ए ॥६७
से ने खणों पृथिवी काय, नीर अग्नि न विराधिये ए ॥
से नें वालो बहु वाय, तरु त्रस जीव न विराधिये ए ॥६८
वापी कूप तडाग, नदी वेहला न खणाविये ए।
वर हाट आरंभ त्याग, गढ़ गोपुर न चिणाविये ए ॥६९
पर विवाह उपदेश, विषय आरंभ न कराविये ए।
पंच पातक गणि बेश, मन इन्द्री निवारिये ए ॥७०
आरंभ थी जीव हिंस, हिंसा थी पाप विस्तरे ए।
पापे दुर्गति वास, विविध दुःख जीव अनुसरे ए ॥७१

इम जाणिय भव्य जीव, सर्व आरंभ दूरे करो ए।
संतोष धरी मन दिव्य प्रतिमा आठमी अनुसरो ए ॥७२
नवमी कहुँ प्रतिमाय, परिग्रह संख्या कीजिये ए। जिम उपजे वहु पुण्य, संतोषे लीजिये ए ॥७३
संग संख्या दश विध, तेह भेद पेहलां कह्या ए।
कीजे मर्याद प्रसिद्ध, थूल पर्णे तम्हो सर दहो ए ॥७४
वली वली सुं कहुं मित्र, सर्वथा परिग्रह परिहरो ए।
निज मन करिय पवित्र, सन्तोष सुख सदा धरो ए ॥७५
जिम जिम छांडे संग, तिम तिम वाप ते निस्तरे ए।
देव-रंभा धरे रंग, मुक्ति नारी वेगे वरि ए ॥७६
मन वयण निज अंग, कृत कारित अनुमोदना ए।
नव भेदे छांडो संग, नवमी चैत्य गुण नोदन ए ॥७७

दोहा

परिग्रह सव जे परिहरो, सन्तोष धरि निज मन्न।
मन वच काया वश करो, जिम होइ निर्मल पुण्य ॥१
दर्शन चैत्य आदें करी, जे पालें नव शुभ स्थान।
मध्यम श्रावक ते जाणिये, सदाचारी गुण निधान ॥२
इणि परे नव प्रतिमा धरे, संवरि दुर्व्यापार। सोलमें स्वर्गे ते ऊपजें, सौख्य तणों आधार ॥३
अनुदिन जे जन पालसी, मध्य भेद श्रावकाचार। जिनसेवक पदमो कहे, ते तिरसी संसार ॥४

ढाल गुणराजनी

नवमीए प्रतिमा भेद, वेदपणें इम उच्चरी ए।
अनुमणां ए निवृत्त नाम, ठाम दशमी चैत्य वरी ए ॥१
घर हाट ए दुर्व्यापार, हिंसा पाप दूर करो ए।
गृहस्थ ए षट् कर्मधार, ते अनुमोदना परिहरो ए ॥२
निज पर ए सजन परिवार; विवाह काज न कीजिइ ए।
जेह थी ए पाप व्यापार, अणु मन चित्त न दीजिइ ए ॥३
अनुमोदना थीं उपजे पाप, पापें दुःख घणु होइ ए।
शीयाल सावज ए मीन संताप, कष्ट सहे नरक तणों ए ॥४
सोंपिये ए घर तणों भार, निज सहोदरे अथवा पुत्र ए।
आपण पै थइए निश्चिन्त, भालवण देई घर सूत्र ए ॥५
जोग्य जाणि ए निज पुत्र जेह, ते घर भार ज परिहरि ए।
मूढ जीव ए मोहे तेह, पापें अधोगत्ति अवतरे ए ॥६
वहुभार ए जिम डूबे नाव, सर्व वस्तु विनाशक ए।
तिम जीव ए पाप प्रभाव, संसार-सागर वासक ए ॥७
इम जाणि ए छोड़ो घर भार, निज पुत्र पद आपीइ ए।
दूमेहि ए करे परिहार, वैराग्यें मन व्यापोइ ए ॥८

रहीये ए श्री जिनगेह, गुरु सेवा सदा कीजिये ए।
निज पुत्र ए बन्धव गेह, प्रासुक आहार ते लीजिये ए ॥९
सरस विरस ए मिले जो आहार, हरख विषाद ते परिहरो ए।
छांडिये ए ममता असार, अनुमोदना रखे करो ए ॥१०
इष्ट अनिष्ट ए मिष्ट कडुवुं अन्न, राग द्वेष न वि आणीये ए।
शुद्ध वस्तु ए ल्यो मानि मित्र, शुभ-अशुभ न वखाणीये ए ॥११
निज मनि ए धारिय सन्तोष, आहार लेइ मुख शुद्धि करो ए।
उदर ए पूरी निर्दोष, जिह्वा स्वाद ते परिहरो ए ॥१२
मस्तक ए रोम शिखा मात्र, शिर विटणी अल्प धरो ए।
पेहरि ए उज्ज्वल वस्त्र अंग आच्छादो वस्त्रें करी ए ॥१३
रहिये ए श्री जिनगेह, अंग पाय पवित्र करी ए।
वंदिये ए देव गुरु तेह, भक्ति वात्सल्य विनय धरी ए ॥१४
भणिये ए श्री जिनवाणि, कान सहित ते सांभली ए।
कीजिये ए धर्म सु ध्यान, मान मोह थी वेग लो ए ॥१५
इणि परि ए गमा निज काल, साधर्मी सुं चरचा करो ए।
गुणवन्त ए गुण विशाल, निज मुखे ते उच्चरो ए ॥१६
दान पूजा ए तप गुणधार, पुण्य काज सदा कीजिये ए।
पालिये ए शुभ आचार, धर्म अनुमोदना कीजिये ए ॥१७
जिणि जिणि ए उपजे पाप, ते ते काज न कीजिये ए।
मूकीये ए ममता ताप, पाप-अनुमति न दीजिये ए ॥१८
चिन्तवीये ए मनह्भार, धर मोह पास थही ए।
छोड़िये ए जिम वेडी ए चोर गमार, चिन्ते पास किम मोडिये ए ॥१९
करीये आवश्ये ए काल सुलब्ध, जिनदीक्षा कहीये लीजिसी ए।
साधु केरी ए भिक्षा शुद्धि, कही ए पर घर कीजिसे ए ॥२०
इणि परि ए दशमी चैत्य, संक्षेपे मैं वर्णवी ए।
इग्यारसी ए चैत्य सुणो मित्र तेह भेद हवे कहूं ए ॥२१
वंदीइ ए देव गुरु पाय, सजन सहु खमावीइ ए।
निर्मल ए वैराग्य ध्याय, मैत्री भाव धरे बहु ए ॥२२
भव अंग ए भोग वैराग, निज मनमें चिन्तन करो ए।
दश विध ए करि संग त्याग, लीजे संजम क्षुल्लक तणों ए ॥२३
इग्यारसी ए प्रतिमा स्थान, प्रथम भेद ते सांभलो ए।
कौपीन ए तणों परिधान, अखण्ड वस्त्र एक निर्मलो ए ॥२४
निज शिर ए तणां जे रोम, कतर वा मुंडण करे ए।
अथवा ए लोंच उत्तम, वैराग्य दया हेतु धरे ए ॥२५
अल्प वित्त ए राखे जात्र, निन्दा शोक न उपजे ए।
निर्भय ए होइ निज गात्र, शील सन्तोष ते उपजे ए ॥२६

शौच तणों ए राखे पात्र, काष्ठ नालीयर लोह तणों ए।
परिग्रह ए पुस्तक मात्र, ज्ञान अभ्यास कीजे घणो ए ॥२७
पर दीधू ए कौपीन वस्त्र, अखंड अंग तिणें आचरि ए।
प्रतिलेखणि ए लेई पवित्र, कोमल भाव हिये धरी ए ॥२८
चौद घडी ए चड़यां पछी दीस, पात्र पखाली करंधरी ए।
कीजिये ए नगर प्रवेश, भिक्षा काजे ते संचरे ए ॥२९
सोधतो ए ईर्यापन्थ, चार हस्त निरीक्षण करे ए।
जेहवो ए चाले निर्ग्रन्थ, सन्नि सेरीए नीसरे ए ॥३०
कंहि साथे ए करे नहीं वात, वाटें ऊभो रहे नहीं ए।
बोले नहीं ए निज पर क्षात, कपट माया ते नवि कहीइ ए ॥३१
धनवंत ए देखी धनक्षीण, ऊंचा घर देखी करी ए।
लोह हेम ए देखी रत्न, त्रण समता भावे करो ए ॥३२
श्रावक तणां ए देखी घर हार प्रथम धरे जइ रहीये ए।
ऊभो ए अंगण द्वार, नमोकार नव गणों ए ॥३३
दातार ए देखे जव, प्रासुक जल जो लेइ करे ए।
कर्मवशे ए नवि देखे जेम, तव तुं अवर घर जइ ए ॥३४
उदर ए पूरण काज, पांच सात घरे फिरी ए।
न वि कीजिए मान कुलाज, प्रासुक आहार ते लीजिये ए ॥३५
एक बे ए वासी अन्न, रात्रितणुं राध्युं परिहरो ए।
स्वाद हीन ए माने नहीं मन्न, सदोष अन्न ते जाणिये ए ॥३६
तजिये ए सबल आहार, रागद्वेप जेणें होइ ए।
पामे ए मदन विकार, विरुद्ध वस्तु व्रत खोइ ए ॥३७
श्रावक ए रही एक स्थान, हस्त पाप पखालिये ए।
लीजिये ए प्रासुक नीर, ध्यान निज नियम संभालिये ए ॥३८
कीजिये ए तव सुभोजन्न, ममता स्वाद ते परिहरो ए।
कीजिये ए एक आसन्न, पछे मुख शोधन करो ए ॥३९
पालिये ए सप्त मौन धीर, तेह नाम हवे सांभलो ए।
छोड़िये ए संज्ञा शरीर, हुंकारादिक वेगलो ए ॥४०
भोजन ए वमन स्नान, मैथुन मल-मोचन तथा ए।
पूजतां ए श्रीजिन भान, सामायिक मौन यथा ए ॥४१
मौन व्रते ए हुए बहुपुण्य, ज्ञान तणो विनय होइ ए।
अज्ञानें ए होइ अंदीन, मान लाज ते गुण लही ए ॥४२
जे मूढ ए पाले नहीं मौन, ज्ञानावरणी कर्म बांधिए।
मौन मूकीये ए होइ गुण शून्य, दुख दुर्गति ते साधि ए ॥४३
अन्तराय ए पालिये सात, रुधिर चर्म अस्थि देखिये ए।
जीवतणों ए देखी घात, वस्तु नियम भंग पेखिये ए ॥४४

मास तणों ए देखी दर्शन, मद्य गन्ध दूरे त्यजो ए।
सूकातणों ए लही स्पर्शन, आवतो देखी आहार त्यजो ए ॥४५
वहती ए रुधिरनी धार, चार अंगुल अंतर कही ए।
तजिये ए तब आहार, अवर वीभत्स देखी सही ए ॥४६
मांजार ए गंडक जाण, हिंसक पशु जीव-घात ए।
सांमली ए वयण चंडाल, पुष्पवती नार-दर्शन ए ॥४७
एह आदि ए जे देश रूढ, शास्त्र दूषण ते टालिये ए।
मानें नहीं जे मन प्रौढ़, तेह अन्तराय पालिये ए ॥४८
निरदोष ए आहार लेइ तेह, पात्र पखालि यत्नकरी ए।
आवीये ए की जिनगेह, देव गुरु विनय धरी ए ॥४९
आवीये ए सह गुरु पास, आहार-आलोचन कीजिये ए।
धरीये ए अंग उल्लास, अशन प्रत्याख्यान लीजिये ए ॥५०
रुचि नहीं ए जो विधि एह, तो गुरु गोहन विधि करो ए।
गुरु साथे ए श्रावक गेह-प्रासुक आहार ते अनुसरो ए ॥५१
इणि परि ए पेहलो भेद, अंते उद्दिष्ट पालीइ ए।
सावद्य ए कीजे निरवद्य, मन वच काया संभालीइ ए ॥५२
उत्तम ए बीजो प्रकार, तेह भेद हवे सुणो ए।
भामरि ए लेई आहार, उदंड पणे गुण घणो ए ॥५३
परिग्रह ए कौपीन मात्र, कोमल पीछी करधरि ए।
भोजन ए करे करपात्र, एक वार ते पर घरि ए ॥५४
वे त्रण ए गये निज, मास, निज मस्तकें लोच करे ए।
वैराग्य ए ज्ञान अभ्यास, निजवीर्य प्रगट धरे ए ॥५५
संथारो ए भूमि पवित्र, अथवा पाटि पाषाण तणी ए।
वैरागी ए त्रिविध विचित्र, दया क्षमा काजे भणी ए ॥५६
कोमल ए तुलिका गादि, सुख सेज्या सुर नर परिहरो ए।
इन्द्री ए करे उन्माद, तजो मदन विकार कारी ए ॥५७
अखंड ए आवश्यक धार, अनुप्रेक्षा चिन्तन करो ए।
धर्मध्यान ए कीजे भवतार, आर्त रौद्र ने परिहरो ए ॥५८
मन वच काया जाणि, कृत कारित अनुमोदन ए।
उद्दिष्ट ए आहार दोष खाणि, नव भेदे ते तमें त्यजो ए ॥५९
छ काय ए जीव संघार, उद्दिष्ट पणें हिंसा उपजे ए।
तो किम ए ते लीजे आहार, वहु पाप जेणें संपजे ए ॥६०
षट् मास ए करें उपवास, जो उद्दिष्ट आहार लीजिये ए।
तो तेह ए तप विनास, वृथा श्रम गुण दीइ ए ॥६१
आधा कर्मी ए लेइ आहार, तो जति ते होइ नहीं ए।
केवल ए वेष आधार, भोजन काजें ते सही ए ॥६२

उद्दिष्ट ए अभक्ष ज जाणि, जिह्वा स्वादे जे ग्रही ए।
तेह थी ए डसुं विष, एक भव दुख ज लहे ए ॥६३
उद्दिष्ट थी ए बहुविध पाप, बहु जन्म ते दुख दीये ए।
पशु गति ए पामें संताप, कष्ट बहु पर तें लहे ए ॥६४
आवा कर्मि ए लेइ जे आहार, ते मूढा आप वंचिये ए।
परनी ए वाए गमार, पाप तणों भार संचिये ए ॥६५
जप तप ए करे जे ध्यान, सम दम संयम आचरे ए।
ते सहु ए थाइ अज्ञान, जो उद्दिष्ट अनुसरे ए ॥६६
उद्दिष्ट ए अनासमो पाप, हुओ, हुइ छै, होसे नहीं ए।
ते यती ए सहेय संताप, व्रत भंग दूषण लहे ए ॥६७
जे मूढ ए जिह्वा स्वाद, आवा करमी आहार लीये ए।
ते प्राणी ए विषय प्रमाद, निज व्रत ने अंजलि दीइ ए ॥६८
जिणें आहारें ए जाइ चारित्र, निन्दा अपजस बहु विस्तरे ए।
ते अन्न ए छांडो मित्र, भव दुख किम निस्तरो ए ॥६९
गृही तणुं ए लेइ आहार, चार विकथा जे करे ए।
भोजन ए राजा चोर, नार, फोके पाप पिंड भरे ए ॥७०
छांड़िये ए सहु परमाद, पंच इन्द्री मन संवरी ए।
तजिये ए हरख विषाद, समता भाव सदा धरो ए ॥७१
भणिये ए निर्मल ज्ञान, जप तप संजम आचरिये ए।
कीजिये ए धर्म सु ध्यान, आर्त्त रौद्र सहु परिहरो ए ॥७२
अहो रात्रि ए गमीये काल, धर्म ध्यान सदा रहीये ए।
आवश्यक ए विशाल, निज निज काले ते ग्रहीये ए ॥७३
कीजिये ए त्रण प्रतिक्रम, रात्रें गोचरि दिवस तणों ए।
त्रिकाल ए सामायिक परम योगभक्ति वे हि भणो ए ॥७४
लीजिये ए स्वाध्याय चार, स्तवन वन्दना सदा करो ए।
उत्तम ए कायोत्सर्ग धार, निज शक्ति ते अनुसरो ए ॥७५
अनुप्रेक्षा ए चिन्तविये बार, भावना सोल भावो भली ए।
दश लक्षण ए धर्म विचार, अट्ठावीस गुण वली ए ॥७६
संथारो ए चार हस्त मात्र, जोइ पूजी जत्न करी ए।
उपनो ए जे खेद गात्र, ते उपशान्ति निद्रा धरो ए ॥७७
मध्य रात्रि ए समये तुं जाण, एक मुहूर्त निद्रा कही ए।
बहु निद्रा ए करता हाणि, सावधान थई गुण ग्रही ए ॥७८
काल तणी ए कला निज एक, धर्म विना फोकट गमो ए।
इम जाणी ए धरिय विवेक, धरम ध्यान सदा रमो ए ॥७९
दुर्लभ ए मानुष जन्म, श्रावकाचार अति दुर्लभ ए।
जु लाधो ए तो सात्रो परम, निःप्रमादे करो सुलभ ए ॥८०

उत्तम ए पालो आचार, दिन पर ति वृद्ध व्रत ए।
धरिये ए प्रतिमा इग्यार, उत्कृष्ट श्रावक होइ संत ए ॥८१

दोहा

इग्यार प्रतिमा इम कही, संक्षेपें सविचार। विस्तारें आगम जाण जो, जिनशासन अनुसार ॥१
पाक्षिक नैष्ठिक साधक, श्रावक त्रिहु भेद होय। जैन पक्ष सदा धरे, ते पाक्षिक नामें जोय ॥२
श्रावक आचार जे रहे, ते नैष्ठिक गुण नाम। आत्म काज साधे सदा, ते साधक गुण ग्राम ॥३
षट् प्रतिमा जे सदा धरें, जघन्य श्रावक ते जोय। मध्यम पणें प्रतिमा नव, उत्तम एकादश होय ॥४
निज शक्ति को प्रकट करि, प्रतिमा पाले इग्यार।
सोलमां स्वर्ग लगें सुख लहि, पछें पामें मोक्ष दुआर ॥५
सफल जन्म छै तेहना, सफल जीवी जाणों तेह। जिनसेवक **पदमो** कहे, श्रावक आचार पालें जेह ॥६

अथ ढाल रसना देवीनी

प्रतिमा कही इग्यार तो, तप वारह हवे सुणो ए।
वाह्य तप षट् भेद तो, अभ्यन्तर षट् भेद भण्यां ए ॥१
अणसण पेहलो नाम तो, अवमोदर्य वीजो कह्यो ए।
व्रत परिसंख्या त्रीजो तो, चौथो रसत्याग सही ए ॥२
पंचम विविक्त सिज्यासन्न तो, छट्ठी काया तणों क्लेश ए।
जुजुआ कहुँ तरु भेद तो, जिय गुरु उपदेशें सुण्यां ए ॥३
अणसण विधि तप नाम तो, तिथि नक्षत्र वारि ए।
उपवास कीजे तेह तो, जिन शासन अनुसारि ए ॥४
नन्दीश्वर दिन अष्ट तो, आषाढ़ कातकी मास ए।
फाल्गुण विधि सहित तो, कीजिए पाप-नाश ए ॥५
पंचमी श्वेत कृष्ण तो, रोहिणी नक्षत्र माल ए।
पार्श्वनाथ रविवार तो, आठम चौदस सदा करो ए ॥६
श्रावण सातमी मुक्ति तो, मुकुट जिन आगलि धरी ए।
श्वेत दशमी कुंभ नाम तो, पूजा जिन आगल करीं ए ॥७
श्रावण मास कृष्ण पक्ष तो, प्रतिपद दिन आदि ए।
सोल कारण उपवास तो, एकान्तर कीजे सदा ए ॥८
मेघमाला श्रुत स्कन्ध तो, व्रत श्री जिन मुख ए।
दीप धूप फल जे द्रव्य तो, मास लगें कीजे दक्ष ए ॥९
चन्दन षष्ठी लब्धि विधि तो, त्रैलोक्य त्रीज कही ए।
आकाश पंचमी सातमी निर्दोष तो, सुगंधे दशमी सही ए ॥१०
सरस्वती दिन इग्यार तो, पुष्पांजलि दिन पंच ए।
दश लक्षणी दिव्य धर्म तो, कीजे विधि पुण्य संच ए ॥११
श्रावण द्वादशी व्रत तो, अनन्त चौदस चंग ए। रत्नत्रय पवित्र तो, सदा कीजे मन रंग ए ॥१२
मुक्तावली इन्द्र विधान तो, कनकावली रत्नावली ए।
पल्य विधान पुण्यवन्त तो, कीजे एक द्विकावली ए ॥१३

त्रेपन क्रिया उपवास तो, जिन गुण संपत्ति धरो ए।
कल्याणक अष्ट कर्म चूर तो, दुःख हर सुख संपत्ति ए ॥१४
नन्दीश्वर लक्षण पंक्ति तो, मेरु विमान पंक्ति ए।
त्रैलोक्य सार मृजु मध्य तो, सिंह निःक्रीडित मुक्त ए ॥१५
एह आदे बहु तप तो, श्री जिनशासन माहि ए।
शक्ति प्रगट करी निज तो, तप कीजे कर्म दाह ए ॥१६
एकेके तप प्रभाव तो, कर्म अनन्त हणि ए।
समकित वलें भव्य जीव तो, हुआ मुक्ति नारी धणी ए ॥१७
अणसण कही उपवास तो, एक दोय त्रण आदि ए।
अष्ट पक्ष दिन मास तो, कीजे निज शक्ति सारु ए ॥१८
बत्रीस कवल तणो आहार तो, कवल सहस्र तन्दुल तणो ए।
अवमोदर्य बीजे तप तो, एक आदें एक जे लगों ए ॥१९
व्रत परिसंख्या तप तो, पुर घर सेरी भणी ए।
मन चिन्त्या वस्तु संख्य तो, कीजे ते दिन प्रति भणी ए ॥२०
षट रस तणों परित्याग तो, दिन प्रति एक को त्यजो ए।
वैराग्य सन्तोष काज तो, रस त्याग सदा भजो ए ॥२१
जुजुआ सेज्यासन्न तो, जीव तणी बाधा टालो ए।
एकाकी करो नित्य ध्यान तो, तप विविक्त पालो सदा ए ॥२२
परीषह सहो त्रण काल तो, वर्षा शीत उष्ण तणा ए।
सुभट पणें थई धीर तो, काय क्लेश तप घणा ए ॥२३
इणि परे बाह्य छ तप तो, कीजे मन इन्द्री दंड ए।
इच्छा निरोधनी तप तो, ममतानें मोह खंड ए ॥२४
अभ्यन्तर तणा तप तो, षट भेदे ते सांभलो ए।
मन परिणामें होय तो, शुद्ध भावे ते तप भलो ए ॥२५
प्रायश्चित्त तप पेहलो नाम तो, विनय तप बीजो कही ए।
वैयावृत्त त्रीजो होइ तो, चौथो ते स्वाध्याय लही ए ॥२६
पंचमो कायोत्सर्ग तो, छट्ठउ धर्म ध्यान तणों ए।
अभ्यन्तर भावे एह तो, तप करम हणें घणां ए ॥२७
पालतां संजम भार तो, पाप करम वसि ए।
उपजे दूषण व्रत तो, प्रायश्चित्त लीजे तस ए ॥२८
जे देव गुरु सानिध्यतो, दोस आलोचन करि ए।
प्रायश्चित्त लीजे व्रत योग तो, निज निन्दा गर्हा धरि ए ॥२९
आलोचन प्रतिक्रम तो, ते दोय विवेक पणु ए।
व्युत्सर्ग तप छेद तो, परिहार उपस्थापना घणु ए ॥३०
नव भेदे प्रायश्चित्त तो, लीजे निज मन शुद्ध सुं ए।
निर्मल पणें व्रत होय तो, इम कहे गुरु वुद्धि तो ए ॥३१

विनय चहुविध भेद तो, रत्नत्रय तप तणों ए। उपचार विनय तेह तो, ते तप गुणवन्त भण्यु ँ ए ॥३२

निःशंक आदि अष्ट गुण ए, ए दर्शन गुण ऊजलो ए।
व्यंजन अर्थ समग्र तो, ज्ञान अष्ट गुण निलो ए ॥३३
दर्शन ज्ञान चारित्र तो, ते विनय तप वर्णों ए।
उपचार विनय विहु भेद तो, प्रत्यक्ष परोक्ष सुणों ए ॥३४

व्रत समिति गुप्ति तो, तेर भेदे चारित्र ए। द्वादश भेदें तप तो, ए उपचार पवित्र ए ॥३५

प्रत्यक्ष गुरुतणी भक्ति तो, मन वच कायाइ कीजिये ए।
प्रशस्त विनय मन तीज तो, दुर्ध्यान दूरे त्यजिये ए ॥३६
हित मित मीठो वोल भास तो, कठिण करकस टालिये ए।
दुर्वाक्य दूरें छोड़ तो, वचन विनय ते पालिये ए ॥३७
गुरु देखि कीजे अभ्युत्थान तो, प्रणाम करि अंजलि ए।
आसन उपकरण दान तो, सह गुरु वली वीचल ए ॥३८
एह आदें विनय कीजे तो, मन वच काया पणे ए।
गुरु आज्ञा वहे जेह तो, परोक्ष विनय ते भणी ए ॥३९
विनय कीये वहु पुण्य तो, जस गुण अति विस्तरे ए।
.... ॥४०
वैयावृत्त्य दश भेद तो, आचार्य उपाध्याय तपस्वि ए।
शैक्ष्य ग्लाण गण कुल तो, संघ साधु मनोज्ञ पद दश ए ॥४१
मनवचकायाइ भक्ति तो, कीजे श्रावक यत्ति तणो ए।
आहार औषध देइ दान तो, सुश्रूषा कीजे घणी ए ॥४२
जिम किम जाइ जती रोग तो, साम्हों उपाय करो धणों ए।
कीजे साधु समाधि तो, सदा वैयावृत्त धरो ए ॥४३
वैयावृत्त्य फल नन्दिषेण तो, इन्द्री वहुगुण ठव्यो ए।
दशमें जई देवलोक तो, पछें ते वसुदेव हुवो ए ॥४४
द्वारावतीइ श्री कृष्ण तो, मुनिनें औषध करीइ ए।
मतिवर टाल्यो रोग तो, तीर्थंकर पुण्य वरीइ ए ॥४५
इम जाणिय भव्य जीव तो, वैयावृत्त्य जे करी ए।
भोगवी सुरनर सुक्ख तो, शिवपुरी ते संचरी ए ॥४६
स्वाध्याय पंच भेद तो, वाचना पृच्छना आम्नाय ए।
अनुप्रेक्षा धर्म उपदेश तो, सदा ते कीजे स्वाध्याय ए ॥४७
पुस्तक वांचो पूछो अर्थ तो, आम्नाय अनुक्रमें भणो ए।
अर्थ चिंतन अनुप्रेक्ष तो, उपदेश धर्म जिनतणो ए ॥४८
इणि परिकीजे स्वाध्याय तो, इन्द्री मन वच संवरो ए।
अध्ययन परम तप तो, सदा ज्ञान अभ्यास करो ए ॥४९
धरो वहुभेदें कायोत्सर्ग तो, ऊभाने आसन रही ए।
मूकी ममता संग मोह तो, व्युत्सर्ग ति एते कही ए ॥५०

त्यजी दुर्ध्यान आर्त्त रौद्र तो, चहु भेदे आर्त्तध्यान ए।
इष्ट अनिष्ट विरह संयोग तो, पीडा चिन्ता निदान ए ॥५१
निज नारी पुत्र मित्र तो, सुखकारी वस्तु इष्ट ए।
वियोग थाइ ज्यारे तेह तो, परिणाम होइ क्लिष्ट ए ॥५२
दुष्ट नारी दुष्ट पुत्र तो, दुर्जन दुखकारी ए।
अनिष्ट संजोगें जीव तो, होए वहुकष्ट धारी ए ॥५३
वेदनी उदय असाता तो, वहुरोग तें उपजे ए।
पीडा चिंता टालो तेह तो, संवेगें सुख संपजे ए ॥५४
दान पूजा जप तप तो, ध्यान अध्ययन आचरि ए।
निदान वांछे दुर्भोग तो, रागनें द्वेषें करी ए ॥५५
ए हवो त्यजो आर्त्तध्यान तो, पशुगतिनें दुख देखि ए।
भूख तरस सहे वहुभार तो, मार ताड़ कष्ट सहे ए ॥५६
चहुभेदें रुद्रध्यान तो, हिंसा मृषा स्तेयानन्द ए। विषयसंरक्षणानन्द तो, उपजे पाप वृन्द ए ॥५७
जीव-हिंस हिंसानन्द तो, झूठूं वचन मृपानन्द ए।
पर-द्रव्य-चोरी स्तेयानन्द तो, इन्द्री भोग विषयानन्द ए ॥५८
क्रूर मन भावे वहु पाप तो, रौद्रध्यानें नरक मांहे ए।
छेदन भेदन मार मार तो, वहुविध दुःख सहे ए ॥५९
इम जाणि तजो आर्त रौद्रतो, आज्ञा उपाय विचय ए।
विपाक विचय त्रीजो ध्यान तो, चौथो संस्थान विचय ए ॥६०
निज गुरु मानों आंण तो, उपाय कर्मनाश तणो ए।
कर्म उदय फल विपाक तो, त्रैलोक्य संस्थान भणो ए ॥६१
उत्तम चार धर्मध्यान तो, पदस्थ पिंडस्थ कह्यो ए। रूपस्थ रूप-अतीत तो, मन विकल्प ग्रह्यो ए ॥६२
जे जिनवयन विशाल तो, आगम पुराण घणां ए।
चिंतो पद अक्षर मंत्र तो, तेह परस्थ ध्यान भण्यां ए ॥६३
पार्थिवी आग्नेयी मारुती तो, वारुणी तत्त्व रूपवती ए।
पंच धारणा पिंडस्थ तो, ध्यान ध्यावो जिनपती ए ॥६४
पंच परमेष्ठी रूप तो, अरिहन्त सिद्ध सूरी तणों ए।
उपाध्याय साधु सुगुण तो, रूपस्थ रूप आपणो ए ॥६५
विकल्प संकल्प रहित तो, रूप कहि तणुं नहीं ए।
केवल ज्योति स्वरूप तो, रूपातीत ध्यावो सही ए ॥६६
चहुँ भेदे शुक्लध्यान तो, पृथक्त्व वितर्क विचार ए।
एकत्व वितर्क विचार तो, सूक्ष्म क्रिया अप्रतिपाति सार ए ॥६७
व्युपरत क्रिया निवृत्ति नाम तो, शुक्लध्यान सदा ध्याइ ए।
ज्ञान वैराग्ये होइ तो, शुभ भावना भावजो ए ॥६८
ध्यानतणां प्रकार तो, इहाँ संक्षेपें आण्यो ए।
ध्यानामृतरास मझार तो, विस्तारें तिहां जाण जो ए ॥६९

वाह्य अभ्यन्तर तप तो, द्वादश भेद कह्या ए।
संक्षेपे कह्यो सविचारतो, विस्तार आगमें लही ए ॥७०
तप ते वहुअ प्रभाव तो, महिम्रा जस घणों ए।
पंच इन्द्री चंचल मन तो, वशकारी तप सुणों ए ॥७१
तप फले वहु रिद्धि तो, सिद्ध होइ मन तणी ए।
सप्त भेदे महाऋद्धि तो, लब्धि उपजे घणी ए ॥७२
वुद्धि नाम तप रिद्धि तो, विक्रिय ओषध ऋद्धि ए।
वल लब्धि रस रिद्धितो, अक्षीण मानस ऋद्धि ए ॥७३
एह आदें अड़तालीस रिद्धि तो, पंच भेद शुभ ज्ञान ए।
कान्ति कला कोवाद तों, होंइ गुण निघान ए ॥७४
इम जाणि भव्यजीव तो, तप सदा आचरो ए।
कठिण हणी कुकर्म तो, मुक्तिनारी वेगे वेरो ए ॥७५
तप तीव्र अग्निवाले तो, जीव हेम निर्मल थाइ ए।
ध्यान रसायण दीधतो, कर्म दूरे जाइ ए ॥७६
रागद्वेष कीजे दूर तो, हृदय धरि समभाव ए। ते तप साफल्य होइ तो, भव-सागर नाव ए ॥७७
रागद्वेषे करी जे तप तो, ते कष्टकारी काय ए।
रेणु-पीलन, जल-मन्थ तो, जिम श्रम निष्फल थाय ए ॥७८
तप चिन्तामणि कामधेनु तो, तप ते कल्पवृक्ष सम ए।
सुरनर वर सुख होइ तो, अनुक्रमे लहे मोक्ष ए ॥७९

दोहा

जिन गेहमां कीजें नहीं, विकथा विनोद विलास।
खेल सिंहाणय मलमूत्र आदि व्यापार व्यसन उपहास ॥१
काम क्रीड़ा कोप कलि, त्यजो चतुर्विध आहार।
अवर आसादना सहु तजो, जिन प्रासाद मझार ॥२
रीति करी न वि भेटीइ देव, जिनवाणी गुरु धर्म।
विवेक गुण हृदय धरि, विवेकें होइ पुण्य परम ॥३
दिनकर उदये अस्त हते, दिवस घड़ी छो विशाल।
धर्मव्रत काजि ग्रही, अवर नहीं हीन काल ॥४
तिथि पूरी जा लगि मिले, ता न वि कीजे काल।
हीन घड़ी छो मांहि कीजे नहीं, इम कहे श्रीजिनभान ॥५
देव शास्त्र गुरु पूजा तणों, जे जन खाइ निर्माल्य।
वंश छेद रोग पामी ने, नरके दुःख सहे वाल ॥६
निर्माल्य खाइ जे जीव घणुं तेहथी रुडुं विष भक्ष्य।
एक भवे विष दुख देसे, निर्माल्य वहु भव दुःख ॥७
भेदज्ञान भवि मन धरी, सदा धरो आचार। जिन सेवक **पदमो** कहे, सफल करो संसार ॥८

ढाल नरेसुआनी

तप द्वादश इम वर्णवीए, नरेसुआ, हवे कहुँ त्रिरत्न ।
दर्शन ज्ञान चारित्र मय ए, नरेसुआ, सदा कीजे तस यत्न ॥१
त्रिहु भेदे ते सांभलो ए, नरेसुआ, विधान भेद विवहार ।
निश्चय रत्नत्रय निर्मलो ए, नरेसुआ, ते उतारे भवपार ॥२
भाद्रव माघ चैत्र मास ए, नरेसुआ, श्वेत द्वादशी त्रस दीस ।
देव पूजो जात्रा दान देई ए, नरेसुआ, प्रासुक शुद्ध लीजे अन्न ॥३
एक भक्त धारण करी ए, नरेसुआ, लीजे त्रण उपवास ।
गुरु साक्षें पोसा सहित ए, नरेसुआ, कीजो जागरण उल्हास ॥४
दर्शन ज्ञान चारित्रतणा ए, नरेसुआ, हेम आदि त्रण जंत्र ।
विधि अनुक्रमें मंडाविए, नरेसुआ, लिखी ते निज निज मन्त्र ॥५
निःशंक आदि अष्ट अंग ए नरेसुआ, संवेग गुण पवित्र ।
अष्ट मन्त्र तिहां लिखीइ ए, नरेसुआ, पूजो दर्शन जन्त्र ॥६
व्यंजनोर्जित आदि अष्ट गुण ए, नरेसुआ, पूजो निर्मल ज्ञान ।
तेर भेदे चारित्र गुण ए, नरेसुआ, पूजो यन्त्र अभिधान ॥७
देव आगम गुरु पूजी ने ए, नरेसुआ, स्नपन करी वर जंत्र ।
विधि सहित विवेक पणें ए, नरेसुआ, अष्ट द्रव्य पवित्र ॥८
जल गंध अक्षत पुष्प वर ए, नरेसुआ, दीप धूप फल सार ।
अर्घ उतारी जाप स्तवन भणी ए, नरेसुआ, जयमाल भक्ति नमस्कार ॥९
तेरसि चौदसि पूनम दिन ए, नरेसुआ, दिन प्रति त्रण काल ।
बहु भव्य जन सुं परिवर्या ए, नरेसुआ, जंत्र पूजो गुण माल ॥१०
प्रभाते दर्शन पूजा करो ए, नरेसुआ, मध्याह्न समय पूजो ज्ञान ।
अपराह्न वेला चारित्र पूजो ए, नरेसुआ, कीजे वाजित्र नृत्य गान ॥११
त्रण दिन इम पूजीइ ए, नरेसुआ, सुणो, कथा जिनवाणि ।
पारणें स्नपन पूजा करी ए, नरेसुआ, खमावी देव गुरु जाणि ॥१२
साधर्मी साथे जिन घर आवी ए, नरेसुआ, पात्र दीजे शुभ दान ।
पछें पारणुं कीजिइ ए, नरेसुआ, रत्नत्रय कीजे विधान ॥१३
त्रणवार इस कीजिइ ए, नरेसुआ, वरस त्रण पर्यन्त ।
अथवा निज शक्ति करो ए, नरेसुआ, सदा पाक्षिक जन सन्त ॥१४
नैष्ठिक श्रावक तम्हों सुणो ए, नरेसुआ, भावना भावो व्यवहार ।
रत्नत्रय तणी निर्मली ए, नरेसुआ, भावना पुण्य भवतार ॥१५
वैश्रमण भूपें कीयो ए, नरेसुआ, रत्नत्रय विधान ।
त्रीजे भवे तीर्थंकर हुओ ए, नरेसुआ, मल्लिनाथ जिन भान ॥१६
निःशंकित निःकंक्षित अंग ए, नरेसुआ, निर्विचिकित्सा अमूढ ।
उपगूहन स्थिति करण ए, नरेसुआ, वात्सल्य प्रभावना प्रौढ़ ॥१७

निःशंक आदें अष्ट अंग ए, नरेसुआ, संवेग आदे आठ गुण।
उपशम वेदक क्षायिक ए, नरेसुआ, दर्शन पालो निपुण ॥१८
कुज्ञान त्रण दूरे करी ए, नरेसुआ, पालो पंच शुभ ज्ञान।
मतिश्रुत अवधि मनः पर्यय ए, नरेसुआ, केवल बोध निधान ॥१९
त्रण सै छत्रीस भेद ए नरेसुआ, मतिज्ञान तणां होय।
पंचवीस भेदे श्रुत ज्ञान ए नरेसुआ, षट्विध अवधि जोय ॥२०
ऋजु बिपुल मति नाम ए, नरेसुआ, मनपर्यय भेद दोय।
केवल ज्ञान एक निर्मलो ए, नरेसुआ, ज्ञान तो ले नहीं कोय ॥२१
पंच महाव्रत समिति पंच ए, नरेसुआ, तीन गुपति पवित्र।
यतीवर ते सदा धरे ए, नरेसुआ, तेरे भेदे चारित्र ॥२२
सर्वथा जीव दया पालो ए, नरेसुआ, सर्वदा सत्य विशाल।
सर्वदा अचौर्य व्रत भलो ए, नरेसुआ, ब्रह्मचर्य गुणमाल ॥२३
आकिंचन निःस्पृहपणें ए, नरेसुआ, पंच महाव्रत जेह।
ईर्या भाषा एषणा समिति ए, नरेसुआ, आदान निक्षेप प्रतिष्ठापन तेह ॥२४
ईर्या समिति जुगमात्र जोइ ए, नरेसुआ, भाषा समिति बोले सत्य।
दोष त्राणु थी वेगला ए, नरेसुआ, एषणा समिति जीव हित ॥२५
आदान निक्षेपण यत्ने करो ए, नरेसुआ, लेओ मूको यत्ने वस्तु।
जीव जोइ मल नीत चव्यो ए, नरेसुआ, प्रतिष्ठापना ते प्रशस्त ॥२५
मन वचन काया तणी ए, नरेसुआ, परिहरो दुर्व्यापार।
त्रण गुप्ति सदा धरि ए, नरेसुआ, चारित्र तेर प्रकार ॥२७
दर्शन ज्ञान चारित्र रत्न ए, नरेसुआ, पालो मुनि व्यवहार।
भक्ति सुश्रूषा तेहनो करो ए, नरेसुआ, भावना भावे ब्रह्मचार ॥२८
निज योग्य जे दर्शन ए, नरेसुआ, आपण जोग्य जे ज्ञान।
जेह निज योग्य होवे व्रत ए, नरेसुआ, जत्न करो सदा तेह ॥२९
शुद्ध बुद्धमय निर्मलो ए, नरेसुआ, आत्म रुचि दर्शन।
आपें आप सदा धरो रुचि ए, नरेसुआ, ते निश्चय दृष्टि गुण ॥३०
निर्विकल्प निज वेदन ए, नरेसुआ, निश्चय ज्ञान गुण होय।
आपे आप वेदे सदा ए, नरेसुआ, अवर न वेदे कोय ॥३१
सर्व परिग्रह थी वेगलो ए, नरेसुआ, उज्ज्वल सहज स्वरूप।
आपें आप स्थिति जे करि ए, नरेसुआ, ते निश्चय चारित्र रूप ॥३२
निश्चय रत्नत्रय कारण ए, नरेसुआ, पेहलो कह्यो विवहार।
विवहार विना निश्चय नहीं ए, नरेसुआ, व्यवहार निश्चय साधार ॥३३
निश्चय रत्नत्रय होइ ए, नरेसुआ, जो होइ समता भाव।
तेह भणी समता धरो ए, नरेसुआ, भव-सागर जे नाव ॥३४
राग द्वेष सहु परिहरि ए, नरेसुआ, शत्रु मित्र सम जोय।
हेम लोह त्रण रत्न ए, नरेसुआ, सुख-दुख सम जोय ॥३५

क्रोध मान माया लोभ ए, नरेसुआ, छोड़ो कषाय ते चार।
कषाय त्यजे नहीं जा लगे ए, नरेसुआ, त्या नहीं समता भाव ॥३६
क्रोध मान माया टालीये ए, नरेसुआ, आपण परने करे रोष।
गुण तो अंश न उपजे ए, नरेसुआ, अवगुण उपजे लाख ॥३७
मानें निवार्ने ए दुःख तो ए, नरेसुआ, मान लोपे जीव सांन।
मानें केह नें मानें नहीं ए, नरेसुआ, जिम मतवालो अज्ञान ॥३८
माया पिशाची परिहरो ए, नरेसुआ, माया ते दुःख दातार।
कपटें कूडे घणुं नड्या ए, नरेसुआ, रड्या तें भव मझार ॥३९
लोभ क्षोभ करे धर्म तणुं ए, नरेसुआ, लोभी नहीं किहीं सुक्ख।
गुण दोष जाणे नहीं ए, नरेसुआ, लोभी देखे सदा दुक्ख ॥४०
कोपे द्वीपायन दुर्गति गयो ए, नरेसुआ, वशिष्ठ मुनि तप भ्रष्ट।
मधुपिंगल देव दुर्गति गयो ए, नरेसुआ, बाहु दंडक देश नष्ट ॥४१
मानें रावण दुर्गति गयो ए, नरेसुआ, केशव कौरव पीर।
माया करि मरीचि मुओ ए, नरेसुआ, दुर्गति पाम्यो, दुःख भीर ॥४२
लोभें लुब्धदत्त मुओ ए, नरेसुआ, कूप मांहे मधु बिन्दु काज।
नवनीते श्मश्रु वली मूओ ए, नरेसुआ, लोभ करी बहु राज ॥४३
एकेक कषाय वशि बापड़ा ए, नरेसुआ, भमे ते बहु संसार।
चार कषाए जे करे ए, नरेसुआ, तेहना दुःख नो नहीं पार ॥४४
राग राक्षस रल्यां घणुं ए, नरेसुआ, गल्यां ते रागी बहु जीव।
हित अहित क लखे नहीं ए, नरेसुआ, भव-दुख सहे अतीव ॥४५
द्वेष धूतार धूते घणूं ए, नरेसुआ, जीव ने द्ये बहु दुक्ख।
चहुँ गति मांहे प्राणिआ ए, नरेसुआ, द्वेषें नहीं किहां सुक्ख ॥४६
राग द्वेष अग्नि बले ए, नरेसुआ, देह पोला काष्ठ मझार।
समता जल विण जीव कीट ए, नरेसुआ, कष्ट सहे ते गमार ॥४७
इम जाणी राग द्वेष त्यजो ए, नरेसुआ, भजो समता परिणाम।
क्रूर भाव सहु परिहरी ए, नरेसुआ, प्रशस्त करो मन ठाम ॥४८
समता भाव कीजे सदा ए, नरेसुआ, भावना भावो वली चार।
मैत्री प्रमोद करुणापणां ए, नरेसुआ, मध्यस्थ भाव भवतार ॥४९
सर्व प्राणी मैत्री भाव ए, नरेसुआ, प्रमोद करो गुणवन्त।
क्लिष्ट जीव कृपापणुं ए, नरेसुआ, विपरीत देखि मध्यस्थ सन्त ॥५०
सम परिणामनि कारण ए, नरेसुआ, चिंतो त्रिविध वैराग।
संसार भोग शरीर संपन ए, नरेसुआ, मोक्ष तणुं जसुं माग ॥५१
संसार सागर दुःखें भर्यो ए, नरेसुआ, दुःख ते पंच प्रकार।
द्रव्य क्षेत्र काल भव भाव ए, नरेसुआ, परावर्त अनन्ती वार ॥५२
भोग रोग सम जाणिये ए, नरेसुआ, जिम चंचल सन्ध्या-राग।
लव-सम सुख देय करी ए, नरेसुआ, दुख देइ मेरु-सम भाग ॥५३

शुक्र शोणित थी उपज्यो ए, नरेसुआ, सात धातु मय देह ।
सर्व अशुचिनों पोटलु ए, नरेसुआ, डाहो किम करेय सनेह ॥५४
चपल मन गज बांधवा ए, नरेसुआ, वैराग स्तम्भ समान ।
सुमति संकल स्युं सांकल्यो ए, नरेसुआ, अंकुश देय भेदज्ञान ॥५५
पंचइन्द्री विषय संवरो ए, नरेसुआ, स्पर्शन रसननि घ्राण ।
चक्षु करण इन्द्री तणा ए, नरेसुआ, विषय रसनां विष-समान ॥५६
शरीर-विषय गज बांधिया ए, नरेसुआ, जिह्वा-रसें मच्छ एह ।
कमल स्कन्धे भ्रमर मुआ ए, नरेसुआ, वर्ण पतंगज देह ॥५७
कर्ण-विषय मृग बांधियो ए, नरेसुआ, एक एक सेवे इन्द्री जीव ।
पंच इन्द्री-भोग जे सेवसे ए, नरेसुआ, ते सहसी दुःख अनन्त ॥५८
पंच इन्द्री मन तणा ए, नरेसुआ, विषय छोड़ो अट्ठावीस ।
सन्तोष धरि समता भावे ए, नरेसुआ, परिहरि राग नें द्वेष ॥५९
जिम जिम मन भ्रान्ति समि ए, नरेसुआ, तिम तिम उपशम भाव ।
शुद्ध परिणामें ऊपजे ए, नरेसुआ, नीपजे सहज स्वभाव ॥६०
सम परिणामें तप जप ए, नरेसुआ, समता भावें शुभ ज्ञान ।
सुमति संजम सिद्ध करे ए, नरेसुआ, समता सर्व प्रधान ॥ ६१
साधक श्रावक साधे सही ए, नरेसुआ, अन्त संलेखण जेह ।
वृद्ध पणें संन्यास ग्रहो ए, नरेसुआ, क्षीण इन्द्री आयु देह ॥६२
उपसर्ग दुर्भिक्ष आवा पड़े ए, नरेसुआ, अति रोग जु असाध्य ।
व्रत-भंग हो तो जाणीने ए, नरेसुआ, अनशन विधि तव साध ॥६३
सर्व प्राणी क्षमा करी ए, नरेसुआ, आवी गुरु सान्निध्य ।
दोष आलोचि बालक परि ए, नरेसुआ, निःशल्य थई निज बुद्धि ॥६४
हलु हलु आहार हीनुं करो ए, नरेसुआ, निजशक्ति अनुसार ।
आहार त्यजी पय वस्तु भजो ए, नरेसुआ, दुग्ध घोल तक्र सार ॥६५
क्रमि क्रमि तक्र छोड़ीये ए, नरेसुआ, केवल पछे लीजे नीर ।
पछें नर समता मूंकोये ए, नरेसुआ, सुभट थई मन धीर ॥६६
प्रासुक भूमि शिला पर ए, नरेसुआ, कीजे संथारो सार ।
कठिण कोमल समता भावि ए, नरेसुआ, कीजे नहीं खेद विकार ॥६७
वरषा शीत उष्णतणा ए, नरेसुआ, सहो परीषह भार ।
क्षुधा तृषा भय रोग नहीं, नरेसुआ, रहे गुफा गढ़मझार ॥६८
चार आराधना आराधिए ए, नरेसुआ, दर्शन ज्ञान चारित्र ।
व्यवहार निश्चय भेद ज ए, नरेसुआ, तप तपो ते पवित्र ॥६९
मरण-समय मुनि होइ ए, नरेसुआ, भावलिंगी अवतार ।
त्रिधा त्रिविध वैराग्य चित ए, नरेसुआ, अनुप्रेक्षा चिंतो बार ॥७०
शरीर नहीं जो आपणो ए, नरेसुआ, तो आपणों किम होय ।
अति शुद्ध चिद्रूपक चिंतवो ए, नरेसुआ जासें भव-छेद होय ॥७१

जिनवाणी निज मुखे भणो ए, नरेसुआ, करे धर्मध्यान अभ्यास।
नमोकार मंत्र जपि ए नरेसुआ, क्षपें ते पापनी रासि ॥७२
संन्यास तणां जे सावक ए, नरेसुआ, धर्म सखाई रहे पास।
सावधान होइ सुभट पणों ए, नरेसुआ, करे ते ध्यान उल्हास ॥७३
निज मुखें जाप जपि ए, नरेसुआ, जाप तणो नहीं शक्ति।
अन्तर जल्प तव चिंतवी ए, नरेसुआ, परमेष्ठी गुण-भक्ति ॥७४
शुद्ध बुद्ध हुं चिद्रूप ए, नरेसुआ, कर्म-कलंक रहित।
सिद्ध सरीखो निज मन ह्वि ए, नरेसुआ, आपें आप गुण-सहित ॥७५
धर्म ध्याननें निज मन जड़ी ए, नरेसुआ, धर्म सखाई जेह।
जिन वाणी भणतां सुणी ए, नरेसुआ, नवकार मंत्र वली तेह ॥७६
जिम जिम धर्मध्यान करे ए, नरेसुआ, तिम तिम होइ पाप-हाणि।
क्रूर कर्म सहु निर्जरी ए, नरेसुआ, उपराजी पुण्य गुण-खाणि ॥७७
मरण समाधि साधीउ ए, नरेसुआ, परिहरि निज देह प्राण।
संन्यास तणें फल ऊपजे ए, नरेसुआ, सोलमें स्वर्ग गीर्वाण ॥७८
इन्द्र अथवा महर्धिक देव ए, नरेसुआ, संपुट सेज्या मझार।
अन्तमुंहूर्त मांहे सही ए, नरेसुआ, नव यौवन अवतार ॥७९
सलावकसी बैठो थई ए, नरेसुआ, देखे ते स्वर्ण विमान।
विस्मय पामी जव चिंतवे ए, नरेसुआ, तव आवे अवधि सुज्ञान ॥८०
पेहला भव वृत्तान्त सही ए, नरेसुआ, जाणे सयल विचार।
धर्म फले इहाँ उपनो ए, नरेसुआ, धन धन श्रावक धर्म सार ॥८१
देव मन्त्री आवे वीनवे ए, नरेसुआ, स्वर्ग विमान ते एह।
देव देवी सहु तम तणो ए, नरेसुआ, पुण्य फले बहु तेह ॥८२
सहज वस्त्र आभरणें लंकर्यो ए, नरेसुआ, निर्मल वैक्रिय देह।
सात धातुथी वेगलो ए, नरेसुआ, आँख मेष दुख नहीं तेह ॥८३
निज परिवार सुं लंकर्यो ए, नरेसुआ, जाइ श्री जिनगेह।
वापि अकृत्रिम स्नान करी ए, नरेसुआ, धौतवस्त्र पहरी देह ॥८४
अष्ट प्रकारी पूजा लेइ ए, नरेसुआ, पूजे श्री जिनदेव।
गीत नृत्य वाजित्र करी ए, नरेसुआ, विविध भक्ति स्तव सेव ॥८५
पुण्य घणो पोते करी ए, नरेसुआ, आवी ते निज ठामि।
धर्म तणा फल भोगवी ए, नरेसुआ, थाइ ते सयल ऋद्धि स्वामि ॥८६

दोहा

चरमांगी जे मुनि होय, उत्कृष्ट फल संन्यास। कर्म हणी केवल लही, पामे अविचल वास ॥१
चरमांग विण जे गृही लहे, संलेखण फल तेह। ग्रैवेयक नव पंचोत्तर, अहमिन्द्र पद लहे तेह ॥२
उत्तम सावक श्रावक, पाले संन्यास विधि जेह। सोलमां स्वर्ग लगें ते जाइ, पामें इन्द्र पद तेह ॥३
उत्कृष्ट पणें त्रण भव ग्रही, जघन्य पणें भव सात।
सुर नर वर पदवी लही, मन वांछित सुख व्रात ॥४

उत्तम नर पदवी लहि, ग्रही जिन दीक्षा सार। ध्यान बलें कर्म निर्जरी, पामे मोक्ष दुआर ॥५
अष्ट कर्म थी वेगला, अष्ट गुण अनन्त। ज्ञानाकार ते निर्मला, मुक्ति वधूवर कन्त ॥६

इन्द्र आदे जे भोगिया, हुओ हुई छे छसे जेह तेह।
सो सुख थी अनन्तगुण, एक समय लहे, सिद्ध तेह ॥७
वन्धन वन्ध्यो चोर जिम, वन्ध गये जिम सौख्य।
कर्म-वन्ध गये तिम, सौख्य लहे सिद्ध मोक्ष ॥८
श्रावकाचार-महिमा घणी, जस गुण कह्यो किम जाय।
जिन सेवक पदमो कहे, मन वांछित सुख दाय ॥९

इति श्री पदम विरचित श्रावकाचार-रासः सम्पूर्णः।

ग्रन्थकार-प्रशस्तिः। अथ ढाल आनन्दानी

त्रेपन क्रिया इम वर्णवी, आनन्दा, संक्षेपे सविचार तो।
विस्तारें आगम जाण जो आनन्दा, जिनशासन अतिसार तो ॥१
चार ज्ञान सम रिद्धी घणी आनन्दा, गौतम गुण विशाल तो।
श्रेणिक भूप जे पूछियो आनन्दा. ते कह्यो गुण पाल तो ॥२
गौतम स्वामी जे अंग कह्यो आनन्दा, सातमो उपासकाचार तो।
प्रमाण पद भेदें करी आनन्दा, तेह तणों नहीं पार तो ॥३
ते अनुक्रमे सुधर्म सूरी आनन्दा, केवली जम्बुकुमार तो।
पछें पंच श्रुतकेवली हुआ आनन्दा, वली अंग पूरव दशधार तो ॥४
काल दोषें पूर्व हीन थया, आनन्दा, हीन थया अंग इग्यार तो।
अंग पूरव अंश रहिया, आनन्दा, मुनिवर तणें आधार तो ॥५
ते अनुक्रमें परम्परा आनन्दा, श्रीजिन तणो उपदेश तो।
शास्त्रतणी रचना रची, आनन्दा, सह गुरु कियो निवेश तो ॥६
श्रीमूल संघ सरस्वती गच्छ, आनन्दा, वलात्कार गण विशाल तो।
कुन्दकुन्दाचार्य हुआ, आनन्दा, अनुक्रमें गुरु गुणमाल तो ॥७
श्रीजिनसेन गुणभद्र सूरी आनन्दा, अकलंक अमृतचन्द्र तो।
ज्ञानी ध्यानी दिगम्बर जती आनन्दा, परम्परा सूरी प्रभाचन्द्र तो ॥८
श्रीपद्मनन्दी पटि हुआ आनन्दा, सकलकीर्त्ति भवतार तो।
भुवनकीर्त्ति तपमूर्त्ति, आनन्दा, ज्ञानभूषण गुण धार तो ॥९
श्रीविजय कीर्त्ति पाटे उपनां, आनन्दा, भट्टारक श्रीशुभचन्द्र तो।
भव्य कुमुदचन्द्र जसु हुआ आनन्दा, कुवादीगज मृगेन्द्र तो ॥१०
तस चरण कमल नमी आनन्दा, प्रणमी निज गुरु पाय तो।
जस पसाइ मति निर्मली आनन्दा, धर्म कवित बुद्धि थाय तो ॥११॥
आम्नाय गुरु श्रीशुभचन्द्र, आनन्दा, आगम गुरु विनयचन्द्र तो।
अध्यात्म गुरु कर्मश्रीब्रह्म, आनन्दा, शिक्षा गुरु हीर ब्रह्मेन्द्र तो ॥१२

अवर शास्त्र कवित्त गुरु, आनन्दा, ब्रह्मचारि श्रीजिनदास तो ।
.... ॥१३
जेणें धर्म उपदेश दियो आनन्दा, शास्त्र भणों वली जेह तो ।
कोमल अल्पमति छं जेहनी आनन्दा, ते भणों रास भास एह तो ॥१४
ते सहु गुरु हवा मुझ तणा, आनन्दा, कर जोड़ो करूँअ प्रणाम तो ।
गुरु गुण न विलोपिये आनन्दा, लोपे गुरु लोपी पापी नाम तो ॥१५
मुझ हृदय कमल मांहे आनन्दा, गुरु भानु वाणी किरण तो ।
मोह तिमिर दूरे हरे आनन्दा, ते गुरु तारण तरण तो ॥१६
समन्तभद्र सूरी कृत आनन्दा, वसुनन्दी श्रावकाचार तो ।
आशाधर पंडितकृत आनन्दा, सकल कीर्त्ति कृत सार तो ॥१७
ते काव्य गाथा श्लोकरूप आनन्दा, कवि न रचना जाणी तेह तो ।
ते शास्त्रमें सांभल्या आनन्दा, सद्गुरु उपदेशे एह तो ॥१८
मे रचना जाणी वहु आनन्दा, उपनों मन उल्हास तो ।
ते शास्त्र अनुक्रमें कियो आनन्दा, रासरूप देखी भार तो ॥१९
ते ग्रन्थ मांहे जे कह्यो आनन्दा, ते कह्यो रास मझार तो ।
ओ कठिण ऊ कोमल आनन्दा, अवर अन्तर नहीं सार तो ॥२०
वहु वुद्धी ते वहु पढ़ें, आनन्दा, शास्त्र मांहें विस्तार तो ।
ते संक्षेपे ए वर्णव्यु आनन्दा, रासरूपें सारोद्धार तो ॥२१
वहु वुद्धि होइ जेहनी आनन्दा, शास्त्र भणों वली तेह तो ।
कोमल अल्पमति छे जेहनी, आनन्दा ते भणें रास भास एह तो ॥२२
श्रावकाचार समुद्र तणो, आनन्दा, गुणरत्न नहीं पार तो ।
ते भेद जाइ कह्यं किम आनन्दा, हुं अल्पमति श्रुतसार तो ॥२३
पूरव सूरी जे नर कह्यां, आनन्दा, ते किम लाभे पारतो ।
संक्षेपेंमें वर्णव्यो आनन्दा, श्रावक तणो आचार तो ॥२४
देव गुरुमें वंदिया आनन्दा, तेह थी उपनों पुण्य तो ।
पुण्य पसाइमें भेद रच्यो आनन्दा, त्रेपन क्रिया तणों वन्य तो ॥२५
वुद्धिवंत कवि जे हुआ, आनन्दा, तेणें कियो वहुअ प्रकाश तो ।
गुरु वाटें मुझ जाइती आनन्दा, उपजे नहीं आलस तो ॥२६
गुरु भाषे वाटें जाता आनन्दा, उपजे नहीं क्लेश तो ।
जिम विधे हीरा मोती आनन्दा, सहजें सूत्र प्रवेश तो ॥२७
जिणी वाटे गजा संचरे आनन्दा, तिहां मृगति नहीं दुःख तो ।
गगनें जिहां गरुड गमें, आनन्दा, तिहां हँसनें होइ सुख तो ॥२८
वन माहे वहु जीव रहे, आनन्दा, आनन्दा, सवल सिंघ होइ तो ।
तिहां हरणां हरखी रहो आनन्दा, प्रगट शक्ति करी जोइ तो ॥२९
विन्ध्यावन मांहें गज रहे आनन्दा, दीर्घ पणें करे नाद तो ।
देडक निजशक्ति करी, आनन्दा, किम न करे वहु साद तो ॥३०

जिन शासन मांहे तिम आनन्दा, वहु भेदें कवि होइ तो।
हीन अधिक बुद्धि पणें आनन्दा, बुद्धि कर्म सारु जोइ तो ॥३१
रास भास एह सांभलो, आनन्दा, मुझ स्यूं म करस्यो रोष तो।
जांण होइ ते गुण ग्रह ज्यों आनन्दा, अजांण सहे वहु दोष तो ॥३२
सज्जन गुणं सदा ग्रहे आनन्दा, जिम नीर थी क्षीर हँस तो।
दुर्जन पर-दूषण लाए, आनन्दा, जलों रक्त देइ दंस तो ॥३३
श्रावकाचार सागर तणु आनन्दा, वहु भेदें विस्तार तो।
वलहीन हस्ते विहु, आनन्दा, किम करी उतरें पार तो ॥३४
शारदा माय मुझ निर्मली आनन्दा, ज्ञान धन दातार तो।
तुझ पसाये में वर्णव्यूं आनन्दा, रूअडो श्रावकाचार तो ॥३५
पद अक्षर अर्थ वहु, आनन्दा, शब्द गुण चूको छंद तो।
प्रमाद पणें जे वोलियो आनन्दा, हूँ मानवी मतिमन्द तो ॥३६
हीन अधिक जे में कर्युं आनन्दा, जिन आगम विरोध तो।
ते मुझ खमियो शारदा, आनन्दा, हूँ तुझ वोलुं मन्द वुद्धि तो ॥३७
विद्वान्स होइ तो सोवज्यो आनन्दा, मुझ सूँ करी कृपा भाव तो।
जिम हेम अग्नि सोधिये आनन्दा, उपनों जे शुभ ग्राम तो ॥३८
पंडित जे सोवें नहीं आनन्दा, मन धरि जे अहंकार तो।
ते वृथा तस जाण तो, आनन्दा, जस वाजे वंस निसार तो ॥३५
सरोवरे जिम कमल ऊँगे, आनन्दा, सुगन्ध विस्तारे पवन्न तो।
तिम कविसु कवित्त रच्यो आनन्दा, विस्तार पमाडे सज्जन्न तो ॥४०
मूल नदी थोड़ी जिम, आनन्दा, वावे सागर लगें जाण तो।
सज्जन मेह गुण नीर, आनन्दा, जिन शासन प्रमाण तो ॥४१
सज्जन विना ना पुस सदा, आनन्दा, उत्तम श्रावकाचार तो।
ज्यां लगे चन्द्र सूर्य तारा, आनन्दा, त्यां लगें शासन उद्धार तों ॥४२
कोमल पणें सहूँ प्रीछवा आनन्दा, निज पर तणों उपकार तो।
केवल धर्म वृद्धि कीजे आनन्दा, रच्यो में श्रावकाचार तो ॥४३
श्रावकाचार ते रत्नदीप आनन्दा, त्रेपन क्रिया चिन्तारत्न तो।
सुगुण रत्न मूल्य नहीं, आनन्दा, दया करो तस जत्न तो ॥४४
एक चिन्तामणि जे लहे, आनन्दा, जाव जीव सुख होय तो।
एका क्रिया गुण जो पाले, आनन्दा, तो स्वर्ग सुख लहे तेह तो ॥४५
इम जाणी भव्य सदा पालें आनन्दा, सर्व क्रिया रत्न जेह तो।
सोलमां स्वर्ग लगे सुख लहे, आनन्दा, पक्षे मोक्षश्री वरे तेह तो ॥४६
जेणें पाल्यो, पाले छै, पालसे आनन्दा, निश्चल श्रावक धर्म तो।
मन वच काया दृढ़ करी आनन्दा, ते पामें शिव शर्म तो ॥४७
नर नारी भावे करी, आनन्दा, इणि परे पाले आचार तो।
दुष्कर्म सहु हरे करो आनन्दा, ते तरसी संसार तो ॥४८

वाग्वर देश सुहामणों, आनन्दा, सापुर नयर मझार तो।
हाट हारे मन्दिर साली, आनन्दा, प्रजा वसे वर्ण चार तो ॥४९
श्री आदिनाथे तीर्थ तणों आनन्दा, सोहे जिन प्रासाद तो।
शिखर मंडप कलश दीपे आनन्दा, दंड ध्वजा लहिके चंग तो ॥५०
मुनिवर आर्यिका रहे आनन्दा, श्रावक श्राविका गुणधार तो।
दान पूजा जप तप करे आनन्दा, नन्दी संघ विचार तो ॥५१
हरपवंत हूँवड़ न्याती, आनन्दा, निज वंश सरोज हंस तो।
खदिर गोत्रीत गुण निलो आनन्दा, विरीत कुल अवतंस तो ॥५२
आगम अध्यात्मवेदी, आनन्दा, शास्त्रवेदी बहु शुद्ध तो।
निज शक्तें स व्रतधारी, आनन्दा, ते थया रास प्रशस्त तो ॥५३
जेहनी शक्ति जेहवी होइ, आनन्दा, कवित्त करे तेहवा तेह तो।
सुगमपणें में रास कीयो, आनन्दा, श्रावक धर्म तणो एह तो ॥५४
निज-पर-हित उपकार हित, आनन्दा, कीयो शासन प्रभाव तो।
ज्ञान उपयोग विस्तारियो आनन्दा, कृपा वुद्धि स्वभाव तो ॥५५
पर उपकार जे नहि करें, आनन्दा, वृथा जीव्यो नर सोइ तो।
अजाकण्ठे पयोधर, आनन्दा, क्षीर नीर नवि होइ तो ॥५६
इम जाणी पर हित कीजिए आनन्दा, निज शक्ति अनुसार तो।
छती शक्ति हित जे करे नहीं आनन्दा, ते नर कहिये गमार तो ॥५७
छव्वीस भेद भासे भण्यों आनन्दा, श्लोक शत सत्तावीस तो।
पंचास अधिक सही आनन्दा, ग्रन्थ संख्या अशेष तो ॥५८
लिखो लिखावो भावे करी आनन्दा, श्रावकाचार शुभ रास तो।
जिनवाणी विस्तारिये आनन्दा, उपजे पुण्य प्रकाश तो ॥५९
संवत संख्या जिनभाव[१६]ना, आनन्दा, संवच्छर संख्या प्रमाद[१५] तो। (१६१५)
मास माहु सोहामणो आनन्दा, माइ वा सुत मर्याद तो ॥६०
तिथि संख्या चारित्र भेदे, आनन्दा, रस संख्या शुभवार तो।
शुभ नक्षत्रे शुभयोगे, आनन्दा, कीयो में श्रावकाचार तो ॥६१
आपणें पर हितकारी, आनन्दा, गुणकारी गुणवंत तो।
आ रास कियो में संत आनन्दा, हित मित सुगम पणें तो ॥६२
निर्गुण नर थी वृक्ष भला आनन्दा, जे करे पर उपकार तो।
आपणें गरमी दाहिये आनन्दा, छाँह देय फलसार तो ॥६३
पुरुप चिन्तामणि कामधेनु, आनन्दा, कल्प तरु मेघ धार तो।
गुरु आसे हे जे गुण करे, आनन्दा, निज पर करे उपकार तो ॥६४
गुण केडे सहु गुण करे, आनन्दा, एहवो लोक विवहार तो।
अवगुण केडे गुण करे, आनन्दा, एते उत्तम आचार तो ॥६५
निज शक्ति उद्यम करी, आनन्दा, पालो शुभ आचार तो।
जेतलु पले, तेतलु सही, आनन्दा, नहीं तो श्रद्धा भवतार तो ॥६६

जे समकित पाले सदा, आनन्दा, शक्ति नहीं तो करो भाव तो ।
श्रद्धा भावें पुण्य उपजे, आनन्दा, श्रद्धा भवोदधि नाव तो ॥६७

दोहा

अष्टमूल गुण जल गालण, निश भोजन परिहार । वार व्रत चैत्य एकादश, तप द्वादश दान चार ॥१
दर्शन ज्ञान चारित्र गुण, शुभ समता परिणाम । त्रेपन क्रिया मन निर्मली, पालो ते अभिराम ॥२
श्रावकाचार जे आदरे, हृदय थई सावधान । इन्द्र महर्धिक पद लही, अष्टऋद्धि त्रण ज्ञान ॥३
उत्तम नर पदवी लही, राजाधिराज महाराज । मंडलीक महामंडलीक, काम केशव बलराज ॥४
चक्रवर्त्ति षटखंड धणी, तीर्थंकर पद सार । पंच कल्याण नायक, भोगवी सुख संसार ॥५
दीक्षा लेय तप आचरी, करी कर्म विनाश । केवलज्ञान प्रकट करी पामे ते अविचल वास ॥६

वस्तु छन्द

श्रावकाचार तणों श्रावकाचार तणों, में रास कियो मे इणि परें ।
भविजन मन रंजन, भंजन कर्म कठोर निर्भर ।
पंच परमेष्ठी मन धरी, सुमरी शारदा गुरु निर्ग्रन्थ मनोहर ।
अनुदिन जे धर्म पालसी, टाली सर्व अतिचार ।
जिन सेवक **पदमो** कहे, ते पामसे भाव पार ॥१

इति श्रावकाचार रास सम्पूर्णम् ।

ग्रन्थाग्र २७५० श्लोक संख्या । संवत्सर १८५३ कार्तिक सुदि ९ दीतवार
भीलोड़ा चैत्यालयस्थाने श्री चन्द्रप्रभ पार्श्वनाथ प्रसादात् । श्रीरस्तु ।

श्री किशन सिंह कृत क्रिया ोष

मंगलाचरण

दोहा

समवशरण लक्ष्मी सहित, वर्धमान जिनराय। नमो विवुध वन्दित चरण, भविजन को सुखदाय ॥१
जाके ज्ञान प्रकाश में, लोक अनन्त समाव। जिम समुद्र ढिग गाय-खुर, यथा नीर दरसाव ॥२
वृषभनाथ जिन आदि दे, पारसलों तेईस। मन, वच, काया, भाव धर, वन्दो कर धर सीस ॥३
नमो सकल परमातमा, रहित अठारा दोष, छियालीस गुण आदि दे, हैं अनन्त गुण कोष ॥४
वसु गुण समकित आदि जुत, प्रणमों सिद्ध महन्त। काल अनंतानंत तिथि, लोक शिखर निवसंत ॥५
आचारज, उवझाय, गुरु, साधु त्रिविध निग्रंथ। भवि वनवासी जननिको, दरसावैं शिवपन्थ ॥६
जिनवाणी दिव्यध्वनि खिरी, द्वादशांग मय सोय। ता सरस्वतिकों नमतहूँ,मन,वच, क्रम जिन सोय ॥७
देव, सुगुरु, श्रुत कों नमूं, त्रेपन किरया सार। श्रावक की वरणन करूँ, संक्षेपहि निरधार ॥८

चौपाई

जम्बूद्वीप द्वीपसिर जान, मेरु सुदरशन मध्य वखान।
ताको दक्षिण दिस शुभ लसै, भरतक्षेत्र अति सु वसही वसै ॥९
तामैं मगध देश परवान, नगर मटंब द्रोणपुर थान।
वन उपवन जुत शोभा लहै, ताको वरणन कवि को कहै ॥१०
राजगृही नगरी अति वनी, इन्द्रपुरी मानों दिव तनी।
जिनवर भवन शोभ अति लहै, तस उपमा वरणन को कहै ॥११
श्रावक उत्सव सहित अनेक, जिन पूजैं अति धर सुविवेक।
मन्दिर पंकति शोभै भली, गीतादिक पूरवैं मन रली ॥१२
धरमी जन तामें बहु वसैं, दान चार दे चितऊ लसैं।
चहूँ फेर तासके कोट, गोपुर जुत अति वनो निघोट ॥१३
वाड़ी वाग विराजें हरे, सघन दाख दाम्यूं द्रुम फुरे।
और विविध के पादप जिते, फल फुल्लित दीसत हैं तिते ॥१४
तिह नगरी को भूप महन्त, श्रेणिक नाम महागुणवन्त।
क्षायिक समकित धारी सोय, तासम भूप अवर नहिं कोय ॥१५
मण्डलीक भूपति सिरदार, वहुत तासु सेवैं दरवार।
परजा पालन को अति दक्ष, नीतवान धरमी परतक्ष ॥१६
तास चेलना है पटनार, रूपवन्त रम्भा उनहार।
समकित दृष्टि सुमति गुणवती, पतिवरती सीता सम सती ॥१७

देव, शास्त्र, गुरुभक्ति धरेय, वसुविध नित सो पूज करेय।
विधिसों देय सुपात्रे दान, जिम चहुँ विध भाषो भगवान ॥१८
तीन दीन जन करुणा करी, पोखै नित्त प्रति ता सुन्दरी।
भूपति चित मनुहारी सोय, तासम त्रिया अवर नहिं कोय ॥१९
दम्पति सुख नानाविध जिते, पुण्य उदै भोगत हैं तिते।
जिम सुरपति इन्द्रानी जान, तिम श्रेणिक चेलना वखान ॥२०
महामंडलेश्वर को राज, आसन चामर छतर समानु।
भूप चिह्न धरि सभा जु राय, बैठो अब सुनिये जो थाय ॥२१

एक दिवस मध्य वन मांहीं, भ्रमतो वनपालक आंही।
निज सम्बन्धी पर जाय, जिय वैर विरुद्ध जु थाय ॥२२
ते एक क्षेत्र के मांहीं, ढिगे वैठे केलि करांहीं।
घोटक महिष इक जागा, बैठे धरि चित्त अनुरागा ॥२३
मूषा कों हरष विलावै, हिय में गहि प्रीत खिलावै।
अहि नकुल दुहु इकठा ही, मैत्रीपन अधिक करांहीं ॥२४
इत्यादिक जीव अनेरा, निज वैर छांडि ह्वै मेरा।
वैठे लखि कै वनपाला, अचरज चिन्ता धरि हाला ॥२५
मन मांहि विचारै एमे, एह अ शुभ कीधो खेमे।
इम चिन्तत भ्रमण करांहीं, वनपालक बन के मांहीं ॥२६
विपुलाचल गिरि के ऊपर, धरणेश सुरेश मही पर।
बहुविध जुतदेव अपारा, जय जय वच करत उचारा ॥२७
दसहूँ दिश पूरित धाई, अपने चित अति हरषाई।
अन्तिम तीर्थंकर एवा, श्री वर्द्धमान जिनदेवा ॥२८
समवादि शरण लखि हरषित, धारो विचार इम चिन्तित।
इह परस्परे जु चिरकाला, परजाय वैर दरहाला ॥२९
सव मिल वंठे इकठाना, देखे में ऐ अभिरामा।
इस महापुरुष कों जानी, माहातम मन में आनी ॥३०

सवैया इकतीसा

मृगी सुत वुद्धिते खिलावै सिंह वाल कों, वघेरा कों सुपुत्र गाय सुत जान परसै।
हंस सूनक विलाव हित धारकै खिलाव, मोरनी सरप परसत मन हरषै॥
इन सव जन्तुन को जन्मजात वैर सदा, भए मद गलित उखारो दोष जरसै।
सम भाव रूप भए कलुष प्रशमि गए, क्षीण मोह वर्धमान स्वामी सभा दरसै ॥३१

दोहा

जय जय रव को कान सुन, वनपालक तत्काल। षट्रितु के फल फूल ले, कर धर भेट रसाल ॥३२
चल्यौ नृपति दरवार कों, मन में घरत उछाव। जा पहुंचे तिसही धरा, जहँ वैठो नरराव ॥३३
सिंहासन नग जड़ित पर, तिष्ठे श्री भूपाल। महामंडलेश्वर करहि, फलदीने बनपाल ॥३४

चौपाई

वनपति भाषै सुनिहो देव, तुम शुभ पुन्य उदयते एव ।
विपुलाचल पर सनमति जान, समोशरन आयो भगवान ॥३५
ऐसें सुन आसनतें राय, उठ तिहि दिशि सनमुख सो जाय ।
सात पेंड़ अष्टांग नवाय, नमस्कार कीनो हरषाय ॥३६
परम प्रीति पूर्वक मन आन, जिन आगम को उत्सव ठान ।
भूषन वसन भूप तिहिं जिते, वनपालक को दीने तिते ॥३७
ह्वै खुशाल वनपालक जवै, मनमांही इम चिन्तवै तवै ।
इतने सौं कर रीते जान, कवहुं न मिलिवे सांची मान ॥३८
देवथान अरु राज दुवार, विद्या गुरु निजमित्र विचार ।
निमित वैद्य ज्योतिषी जान, फल दीये फल प्रापति मान ॥३९
आनन्द भेरि नगर में थाय, सुन पुरवासी जन हरषाय ।
नगर लोक परिजन जन सवै, नृप श्रेणिक लै चाल्यो तवै ॥४०
विपुलाचल ऊपर शुभ ध्यान, समोशरण तिष्ठे भगवान ।
पहुँचो भूपति हरष लहाय, जिनपद नमि थुति करहि विनाय ॥४१
नयन जुगुल मुझ सफल जु थयो, चरण कमल तुम देखत भयो ।
भो तिहुं लोक तिलक मम आन, प्रतिभास्यो ऐसो महाराज ॥४२
इह संसार जलधि यों जान, आय रह्यो इक चुलुक प्रमान ।
जै जै स्वामी त्रिभुवननाथ, कृपा करो मोहि जान अनाथ ॥४३
मैं अनादि भटको संसार, भ्रमते कवहुं न पायो पार ।
चहुं गति मांहि लहे दुख जिते, ज्ञान मांहि दरशत हैं तिते ॥४४
तातें चरण आइयो सेव, मुझ दुख दूर करो जगदेव ।
जै जै रहित अठारा दोष, जै जै भविजन दायक मोष ॥४५
जै जै छियालीस गुणपूर, जै मिथ्यातम नासक सूर ।
जै जै केवल ज्ञान प्रकाश, लोकालोक करन प्रतिभास ॥४६
जै भविकुमुद विकासन चंद, जै जै सेवितमुनिवर वृंद ।
जै जै निरावाध भगवान, भगतिवंत दायक शिवथान ॥४७
जै जै निराभरण जगदीश, जै जै वंदित त्रिभुवन ईश ।
ज्ञानगम्य गुण लियो अपार, जै जै रत्नत्रय भंडार ॥४८
जै जै सुखसमुद्र गंभीर, करम शत्रु नाशन वर वीर ।
आजहि सीस सफल मो भयो, जब जिन तुम चरणनकों नयो ॥४९
नेत्र युगल आनंदे जवै, पादकमल तुम देखे तवै ।
श्रवण सफल भये सुन धुनी, रसना सफल भवे थुति भनी ॥५०
ध्यान धरत हिरदे धन भयो, करयुग सफल पूजतें थयो ।
कर पयान तुमलों आइयो, पदयुग सफलपनो पाइयो ॥५१

उत्तम वार आज जानियो, वासर धन्य इहै मानियो।
जनम धन्य अवही मो भयो, पाप कलंक सवे भगि गयो ॥५२
भो करुणाकर जिनवर देव, भव भव में पाऊं तुम सेव।
जव लों शिव पाऊँ जगनाथ, तव लों पकरो मेरे हाथ ॥५३
इत्यादिक थुति विविध प्रकार, गद्य पद्य सत सहस अपार।
मुनि गौतम गणधर नमि पाय, अवर सकल मुनिकों सिर नाय ॥५४
जिके अजिका सभा मझार, श्रावक जनहि जु वुद्धि विचार।
यथा योग्य सवको नृप कही, मुनि नर-कोठै वैठो सही ॥५५
जाके देव भगति उत्कृष्ट, तासों ताके गुरु को इष्ट।
जिन भाषी वाणी सरधान, महा विवेकी अति परधान ॥५६
तास महातम को अविकार, अरु ताके गुण को निरवार।
वरणन को कवि समरथ नांहि, वुध जन जानहु निज चितमांहि ॥५७
ता पीछें अवसर को पाय, गौतम प्रति नृप प्रश्न कराय।
देश व्रती श्रावक की जान, त्रेपन क्रिया कहहुं वखान ॥५८

दोहा

होनहार तीर्थेश सुन, इम भाषै भगवंत। त्रेपन किरया तुझ प्रतें, कहूं विशेष विरतंत ॥५९
इह त्रेपन किरया थकी, सुरग मुक्ति सुख थाय।
भविजन मन वच काय शुध, पात्रहु चित हरषाय ॥६०

त्रेपन क्रिया नाम। उक्तं च गाथा—

गुण वय तव सम पडिमा दानं जलगालणं च अणत्थमियं।
दंसणणाणचरित्तं किरिया तेवण्ण सावया भणिया ॥

सवैया इकतीसा

मूल गुण आठ अणुव्रत पंच परकार, शिक्षाव्रत चार तीन गुण व्रत जानिए।
तप विधि वारह और एक सम्यग्भाव ग्यारा प्रतिमा विशेष चार भेद दान मानिए ॥
एक जल गालण अणथमिय एक विधि, दृग ज्ञान चरण त्रिभेद मन आनिए।
सफल क्रिया को जोर त्रेपन जिनेश कहे, अव याको कथन प्रत्येकतें वखानिए ॥६२

आठ मूल गुण। चौपाई

इस त्रेपन किरया में जान, प्रथम मूल गुण आठ वखान।
पीपर, वर, ऊंवर फल तीन, पाकर फल रु कटुंवर हीन ॥६३
मद्य मांस मधु तीन मकार, इन आठों को कर परिहार।
अतीचार जुत तज अणचार, आठ मूल गुण धारी सार ॥६४
त्रस अनेक उपजैं इन मांहि, जिन भाष्यो कछु संशय नांहि।
अरु जे हैं वाईस अभक्ष, इनको दोष लगै परतक्ष ॥६५

अथ बाईस अभक्ष दोष वर्णन । चौपाई

बोरा नाम गडालख जान, अनछाना जलको बंवान ।
घोर वरा कीं विदल कहंत, खातां पंचेंद्री उपजंत ॥६६
निशि भोजन खाये जो रात्त, अरु वासी भखिए परभात ।
बहु बीजा जामें कण घणा, कहिए प्रगट विजारा तणा ॥६७
जिहि फल बीजनकैं घर नाहि, सों फल बहु वीजो कहवाहि ।
वेंगण महापाप को मूर, जे खावैं ते पापी क्रूर ॥६८
संधाणे की विधि सुन एह, जिम जिनमारग भापी जेह ।
राई लूण आदि बहु दर्व, फल फूलादिक में घर सर्व ॥६९
नांखे तेल मांहि जे सही, नाम अथाणौ तासौं कही ।
तामैं उपजे जीव अपार, जिह्वा लंपट खाय गंवार ॥७०
पाप धर्म नहि जाने भेद, ता वसि नरक लहै बहु खेद ।
नींवू लूण मांहि साचिये, वाड़िरा वड़ी अरु रांधिए ॥७१
लूण वाछि जल में फलमार, कैराविक जो खाय संवार ।
उपजैं जीव तासमें घणे, कवि तस पाप कहां लो भणे ॥७२
मरजादा बीतैं पकवान, सो लखि संधाणे मतिमान ।
त्याग करत नहिं ढील करैहु, मन वच क्रम जिन वचहि फलैहु ॥७३
जो मरजादा की विधि वार, भाष्यो जिन आगम अनुसार ।
जिह में जल सरदी नहि रहै, तिस मरजादा लखि भवि इहै ॥७४
सीतकाल मांहे दिन तीस, पन्द्रह ग्रीपम विस्वावीस ।
वरपारितु भापे दिन सात, यों सुनियो जिनवाणी भ्रात ॥७५

उक्तं च गाथा—हीमंते तीस दिणा, गिम्हे पणरस दिणाणि पक्कवणं ।
वासासु य सत्त दिणा, इय भणियं सूय जंगेहि ॥७६

चौपाई—तल्यी तेल घृत में पकवान, मीठे मिलियो ह्वै जो धांन ।
अथवा अन्नतणो ही होय, जल सरदी तामें कछु जोय ॥७७
आठ पहर मरज्याद वखान, पाछें संधाणा सम जान ।
भुजिया वड़ा कचौरी पुवा, मालपुवा घृततल जु हुवा ॥७८
जुमक वड़ी लूचई जान, सीरो लापसी पुरी वखान ।
कीए पीछें सांझलो खाहि, रात वसैं तिन राखे नाहि ॥७९
इनमें उपजैं जीव अनेक, तिनही तजो सु धार विवेक ।
तरकारी पाटो खीचड़ी, इन मरजाद सुसोला घड़ी ॥८०
रोटी प्रात थकीलों सांज, खइये भवि मरजादा मांज ।
पीछें सीला वासी दोष, तजो भव्य जे शुभ वृष पोष ॥८१

छन्द चाल

केते नर ऐसे भापैं, हम नहीं अथाणो चाषैं ।
कैरी नीवू के मांही, नानाविध वस्तु मिलाहीं ॥८२

सरसों को तेल मंगावैं, सव लेकर अगनि चढ़ावैं।
ल्योंजी तस नाम कहाई, जोभ्या लंपट अधिकाई ॥८३
ताको निरदूषण भाषै, निरवुद्धी वहु दिन राखै।
ताके अघको नहीं पारा, सुनिये कछु इक निरधारा ॥८४
सव विधि छोड़ी नहीं जाही, खइये तत्काल कराही।
अथवा सवेर लों मांजे, भखिये चहुं पहर हि मांजे ॥८५
पाछे अथाणा के दोषा, जानो त्रस जीवनि कोषा।
अथाणा को जो त्यागी, याकों छोडै वड़भागी ॥८६

दोहा

किसनसिंह विनती करै, सुनो महा मति मान। याहि तजै सुख परम लहि, भुंजै दुख परधान ॥८७

चौपाई

पंच उदंवर को फल त्याग, करइ पुरुष सोई वड़भाग।
अरु अजाण फल दोष अपार, मांस दोष खाये अधिकार ॥८८
कन्दमूल में जीव अनन्त, ईखू अग्रभाग लखि संत।
माटा माहिं असंखित जीव, भविजन तनिए ताहि सदीव ॥८९
मुहरो आफू आदिक और, खाए प्राण तजै तिहि ठौर।
जिहि आहार कर जो मर जाय, सोऊ विष दूषण को थाय ॥९०
आमिष महापाप को मूर, जीव घात तें उपजो क्रूर।
मन वच काय तजै इह सदा, सुर शिव सुख पावै जिन वदा ॥९१
मधुमाखी उच्छिष्ट अपार, जीव अनन्त तास निरधार।
ताको खावै धीवर भील, सोई हीन नर पाप कुशील ॥९१
संत पुरुष नहिं भेटें वाहि, एक कणातें धरम नसांहि।
लूण्यो दोष महा अविकार, ताहि भखे नहिं भवि सुखकार ॥९३
मदिरा पान किए वेहाल, मात भगनि तियसम तिहिकाल।
मादिक वस्तु भांगि दे आदि, खात जमारो ताको वादि ॥२४
फल अतितुच्छ दन्त तलि देय, ताको दूषण अधिक कहेय।
पालो राति जमावे कोय, अरु ताको खावे वुधि खोय ॥९५
तामें पड़ैं अधिक त्रस जीव, भविजन छाड़ो ताहि सदीव।
केला आंव पालमे देह, नींवू आदिक फल गनि लेह ॥९६
जाके खाये दोष अपार, वुध जन तजैं न लावैं वार।
ए वावीस अभक्ष जिनदेव, भाषै सो भविजन सुनि येव ॥९७
इनहि त्याग कर मन वच काय, ज्यों सुर शिवसुख निहचै थाय।
फूलो धान अवर सव फूल, त्रस जीवन कों जानों मूल ॥९८
शाक पत्र सव निंद्य वखान, कुंथादिक करि भरिया जान।
मांस त्यजन व्रत राखो चहैं, तो इन सवको कवहुं न गहैं ॥९९

वेदल वर्णन

भोजन विदल तणीं विधि सुनो, जिनवर भाषो निहचें मुनो।
दोय प्रकार विदल की रीति, सो भविजन आनो प्रीति ॥१००
प्रथम आ धान तणीं विधि एह, श्रावक होय तजे वरनेह।
सुनहु आ काष्ट तणीं विधि जान, मूंग मटर अरहर अरु धान ॥१
मोठ मसूर उड़द अरु चणा, चौला कुलथ आदि गिन घणा।
इतने नाज तणी ह्वै दाल, उपजै वेलि थकीसा नाल ॥२
खरवूजा काकड़ी तोरई, टींडसी पेठो पलवल लई।
सेम करेला खीरा तणा, वीजा विधि फल कीजे घणा ॥३
तिनको दालथकी मिलवाय, दही, छाछि सो विदल कहाय।
मुखमे देत लाला मिलि जाय, उतरत गलै पंचेन्द्री थाय ॥४
नाज वेलि तो ऊपजै जोय, सो आ काष्ट गनियो भवि लोय।
छाछ तणो फल वीजह जान, तिनकी दाल होय सो मान ॥५
छाछ दही मिल विदल हवन्त, यों निहचै भाष्यो भगवन्त।
चारोली पिसता वादाम, वोल्यो वीज सांगरी नाम ॥६
इत्यादिक तरु फल के माहि, वीज दुफारा मींजी थाहि।
छाछ दही सो मेलि रु खाय, विदल दोष तामें उपजाय ॥७
गलै उतरता मिलि है लाल, पंचेन्द्री उपजै ततकाल।
ऐसो दोष जान भविजीव, तजिए भोजन विदल सदीव ॥८
सांगर पिठोर तोरई तणा, मूरख करै राइता घणा।
तिहका अघ को पार न कोय, जो खाहै सो पापी होय ॥९
तजिहैं विदल दोय परकार, सो निहचै श्रावक निरवार।
ककड़ी पेठो अरु खेलरा, इनको छाछि दही मैं धरा ॥१०
राई लूण मेल जिहि माहि, करे रायता मूरख खाहि।
राई लूण परै निरधार, उपजै जीव सिताव अपार ॥११
राई लूण मिलो जो द्रव्य, ताहि सरवथा तजिहै भव्य।
कपड़ै वांध दही को धरै, मीठो मेल शिखरणी करै ॥१२
खारिख दाख घोल दविमाहि, मीठो मेल रायता खाहि।
मीठो जव दविमांहि मिलाहि, अन्तर्मूहूर्तमें त्रस उपजाहि ॥१३
यामें मीठा जुत जो दही, अन्तर मुहूर्त माहे सही।
खावे भविजन को हित दाय, पीछै सम्मूर्छन उपजाय ॥१४

च गाथा—इक्खुदहीसंजुत्तं, भवंति सम्मुच्छिमा जीवा।
अन्तोमुहूत्त मज्झे, तम्हा भणंति जिणणाहा ॥१५

दोहा—कांजी कर जे खात हैं, जिह्वा लंपट मूढ़। पाप भेद जाने नहीं, रहित विवेक अगूढ़ ॥१६
अव ताको विधि कहत हों, सुणी जिनागम जेह। ताहि सुणत भविजन तजो, मनका सकल संदेह ॥१७

चौपाई—तातौ जल अरु छाछ मिलाय, तामें सौले लूण उराय।
भुजिया वड़ा नाख तिहि माहिं, खावै बुद्धिहीन सो ताहि ॥१८
प्रथम छाछ कांजी के जाहि, तातो जल तामाहि पराय।
अवर नाज को कारन थाय, उपजै जीव न पार लहाय ॥१९
याकी मरयादा अतिहीण, तातें तुरत तजो परवीण।
ठंडी छाछ तास में जाण, तातें विदलहुं दोष बखाण ॥२०
प्रथम ही छाछ उष्ण अति करै, अरु वैसे ही जल कर धरै।
जव दोऊ अति सीतल थाय, तव दुहुंअन को देय मिलाय ॥२१
अगिन चढ़ाय गरम फिरि करै, जब वह सीतलता को धरै।
भुजियादिक तामें दे डार, तसु सर्यादा को इम पार ॥२२

उक्तं च गाथा—चउएइंदी विणिछह-अठ्ठह तिणिणि भणंति दह।
चौरिंदी जीवडा वार वारह पंच भणंति ॥२३

छन्द चाल को ढाल

जव चार महूरत मांही, एकेंद्री जीव उपजाहीं। वारा घटिका जव जाये, वे इन्द्री तामें थाये ॥२४
वीते तव ही दुय जामा, तव होवै ते इन्द्री धामा।
दुय अर्धपहर गति जानी, उपजै चउ इन्द्री प्राणी ॥२५
गमिया दश दोय मुहूरत, पंचेन्द्री जिय करि पूरत।
है है नहिं संसै आणी, यां भाषै जिनवर वाणी ॥२६
वुध जन ऐसो लखि दोषा, जिय ततक्षण अघ को कोषा।
कोई ऐसे कहिवे चाही, खाये विन जन्म गवाही ॥२७
मर्याद न संधि हैं मूला, तजिये व्रत अनुकूला।
खाय को पाप अपारा, छोड़ो शुभ गति है सारा ॥२८

सवैया—मूढ सुहै कुंजिय, भेद गहै मनि खेद धरो विकलाई।
खात सवाद लहै अहलाद महा उनमाद रु लंपट ताई।
पातक जार महा दुख घोर सहै लखि ऐसिय भव्य तजाई
जे मतिवन्त विवेकी सन्त महा गुणवन्त जिनन्द दुहाई ॥२९

इति कांजी निषेध वर्णनम् ॥

●

अथ गौरस मर्यादा कथन

अब गोरस विधि सुन एवा, भाषो श्री जिनवर देवा।
दोहत महिषी जव गाये, तवते मर्याद गहाये ॥३०
इक अन्तर मुहूरत ताईं, जीव न तामें उपजाई। राखे जाको जो खीरा, वैसे ही जीव गहीरा ॥३१
उपजै सम्मूर्च्छन जासे, कर जतन दया धर तासे।
दोहे पीछे ततकाला, धर अगनि उपरि ततकाला ॥३२

फिर तामें जावण दीजे, तब तैं वसु पहर गणीजे।
जब लों दधि खायो सारा, पीछैं तजियें निरधारा ॥३३
दधिको धरिकैं जे मथाणी, मथि हैं जो वणिता खाणी।
मथितैं ही जल जामाही, डारै फिरि ताहि मथाही ॥३४
वह तक्र पहर चहुंताई, खाने को जोग कहाई।
मथिय पीछें जल नाखे, वहु वार लगे तिहि राखे ॥३५
विन छाणों जल जिम जाणों, तैसी ही ताहि बखाणों।
तातें जे करुणाधारी, खावें दधि तक्र विचारी ॥३६
मरयादा उलंघ जु खाहीं, मदिरा दूषण शक नाहीं।
निज उदर-भरण को जेहा, वेचै दधि तक्र जु तेहा ॥३७
वे पाप महा उपजाहीं, या मैं संशय कुछ नाहीं।
तिनको जु तक्र दधि लेई, खावें मतिमंद धरेई ॥३८
अर करहि रसोई जातें, भाजन मध्यम ह्वै तातें।
मरयादाहीण जो खावे, दूषण को पार न लावे ॥३९
इह दही तक्र विधि सारी, सुनिये जो भवि व्रत धारी।
किरया अरु जो व्रत राखे, दधि तक्र न पर को चाखे ॥४०
अव जावण की विधि सारी, सुनिये भवि चित्त अवधारी।
जब दूध दुहाय घर लावे, तब ही तिहि अगनि चढ़ावे ॥४१
अवटाये उतार जु लीजे, रुपया तव गरम करीजे।
डारै पयमांहे जेहा, जमिहैं दधि नहि सन्देहा ॥४२
वांधै कपड़ा के मांहीं, जब नीरन वुन्द रहाहीं। तिहकी दे वड़ी सुकाई, राखे सो जतन कराई ॥४३
जल मांहीं घोल सो लीजे, पयमांहे जांवण दीजे।
मरयादा भाषी जेहा, इह जावण मुं लखि लेहा ॥४४

इति गौरस मर्यादा सम्पूर्णम्।

■

अथ चर्माश्रि वस्तु दोष-वर्णनम्

दोहा—चरम मध्य की वस्तु को, खात दोष जो होय।
ताको संक्षेपहि कथन, कहुँ सुनो भविलोय ॥४५

चौपाई—मूये पशु को चरम जु होय, भीटै नर चंडाल जु कोय।
ता चंडालहि परसत जवैं, छोति गिने सगरे नर तवै ॥४६
घर आये जल स्नान करेय, एती संख्या चितहिं धरेय।
पशू खाल के कूपा मांहि, घिरत तेल भंडसाल करांहि ॥४७
अथवा सिर पर धर कर ल्याय, वेचै सो वाजारहिं जाय।
ताहि खरीद लेय घर मांहि, खावै सवै शंकु कछु नांहि ॥४८

तामें उपजें जीव अपार, जिनवाणी भाष्यो निरधार।
जैसें पशू चाम के मांहि, घृत जल तेल डार हैं तांहि ॥४९
ताही कुल के जीव उपजन्त, संख्यातीत कहैं भगवन्त।
ऐसो दोष जाणिकै संत, चरम वस्तु तुम तजहु तुरन्त ॥५०
कोई मिथ्याती कहै एम, जिय उतपत्ती भाषो केम।
जीव तेल घृत में कहुँ नांहि, चरम धरें कर उपजें कांहि ॥५१
ताके समझावण को कथा, कही जिनेश्वर भाषूं यथा।
दे दृष्टान्त सुदृढ़ता धरी, मिथ्यादृष्टी संशय हरी ॥५२
घृत जल तेल जोगतें जीव, चरम वस्तु में धरत अतीव।
उपजै जैसें जाको चाम, सो दृष्टान्त कहूँ अभिराम ॥५३
सूरज सन्मुख दरपण धरै, रूई ताके आगे करै।
रवि दरपण को तेज मिलाय, अगनि उपजै रूई वलि जाय ॥५४
नहीं अगनि इकली रूमांहि, दरपन मध्य कहूँहै नांहि।
दुहुयनि की संयोग मिलाय, उपजै अगनि न संशै थाय ॥५५
तेई चाम के वासन मांहि, घृत जल तेल धरैं सक नांहि।
उपजें जीव मिलैं दुहूँ थकी, इह कथनी जिनमारग वकी ॥५६
ऐसैं लख कै भील चमार, धीवर रैगर आदि चंडार।
तिनके घर के भाजन तणो, भोजन भखे दोष तिम तणो ॥५७
तैसो चरम वस्तु में दोष, दुरगति दायक दुख को कोष।
चरम वस्तु भक्षण करि जेह, मांस भखी सादृश है तेह ॥५८
तुरत पशू मूए की चाम, करिकै तास भाथडी ताम।
भरै हींग तामें मिल जाय, खातो मांस दोष अधिकाय ॥५९
जाके मांस त्याग व्रत होय, हींग भव्य नहिं खावें कोय।
हींग परै जहि भाजन मांहि, सो चमार वासण सम जाहि ॥६०

सवैया

चामड़े के मध्य वस्तु ताको जो आहार होय, अति ही अशुद्ध ताहि मिथ्यादृष्टी खाय है।
दातार के दीए विन जिन इच्छा होय एसो, असन लहाय नाम जती को कहाय है ॥
तिन वहिरात मांसो कहा कहै और सुनो, वणियो सो भोजन क्रियातैं हीण थाय है।
हरित अनेक जुत मारग धरमवन्त, शुद्धता कहाय भखैं धरैं या गहाय है ॥६१

दोहा

जीमत भोजन के विषे, मूवो जनावर देख। तजै नहीं वह असन को, पुरजन दुष्ट विशेष ॥६२
ए चाख्यों इक से कहे, यामें फेर न सार। अति लम्पट जिह्वा तणो, लोलुप चित्त अपार ॥६३

चौपाई– हटवा तणो चून अरु दाल, व्रतधर इनको खावो टाल।
वींधो अन्न पीस दल ताहि, दया रहित वेचत हैं जाहि ॥६४
जीव कलेवर थानक सोय, चलतेहु तामाहे होय।
परम विवेकी हैं जो मही, मांस दोष लख त्यागै सही ॥६५

नीच लोक घर को घृत दुग्ध, तजहु विवेक जाणि अशुद्ध ।
सांढि दूध दोहत तैं लेय, तातो होय तहां सो देय ॥६६
निन्द्य वस्तु उपमा इसी, कहिये मांस बराबर जिसी ।
आमिषकी उपमा इह वीर, जैसी सांढि तणी है खीर ॥६७
याते सांढि दूध को तजो, मांस तजन व्रत निहचै भजो ।
संख तणो चूनो गौमूत्र, महानिन्द भापो जिन सूत्र ॥६८
कालिगडा घिया तोरई, कद्दू वीलरु जामानिई ।
इत्यादिक फलकाय अनन्त, तिनको तजिये तुरत महन्त ॥६९
फलीय कवांरि कली कचनार, फूल सुहजणा आदि अपार ।
महानिन्द जीवनि का धाम, तजिये तुरत विवेकीराम ॥७०

दोहा

त्रेपन किरिया के विषै, प्रथम मूलगुण आठ । तिन वर्णन संक्षेपते, कह्यो पूर्व ही पाठ ॥७१
जिनवानी जैसी कही, कथा संस्कृत तेह । भाषा तिह अनुसारते, बन्ध चोपाई एह ॥७२
पंच उदम्बर फल त्यजन, मकारादि पुनि तीन । महादोपकर जानके, तुरत तजहु परवीन ॥७३

सवैया

पीपर और वड़फल उंवर कटुम्बरहु पाक परिपांच उदुंवर फल जानिये,
मद्य मांस मधु तीन मकरादि अतिहीन सुनहु परवीन सवै आठए बखानिये ।
इनही के दोष जेते तामें पाप दोष तेते लहैं न सन्तोष तेते नर खात मानियें,
इनिके तजे जो मन वच क्रम भव्य जीव आठ मूलगुण के सधैया मन आनिये ॥७४

चौपाई

जा घरमांहि रसोई दोय, तहाँ तानिये चन्दवो लोय ।
अवर परहिंडा ऊपर जान, उंखल चाकी है जिहि थान ॥७५
फटकै नाज रु वीणै जहाँ, चून छानिवो थानक तहाँ ।
जिस जागह जीमन नित होय, सयन करण जागा अवलोय ॥७६
सामायिक कीजै जिहि वीर, ए नव थानक लख वर वीर ।
ऊपर वसन जहाँ ताणिये, श्रावक चलण तहाँ जाणिये ॥७७
चाकी ऊखल कै परिणाम, ढकणा कीजै परम सुजान ।
स्वान विलाई चाटै नाय, कीजै जतन इसी विधि भाय ॥७८
खोट लिये मूसलतें नाज, धोय इकान्त वरो विन काज ।
छाज चालणा चालणी तीन, चामतणा तजिये परवीण ॥७९
चरम वस्तु को त्यागी होय, इनको कवहुँ न भेटे सोय ।
दिन में कूटे पीसे नाज, सो खाना किरिया सिरताज ॥८०
नाज नजर ते सोव्यो परै, तातें करुणा अति विस्तरै ।
निसिकों जो पीसैं अरु दलैं, जातें करुणा कवहुं न पलै ॥८१

चाकी गालै चून रहाय, चींटी अधिक लगै तसु आय।
निसिको पीस्यो नजर न परै, ताके दोष केम ऊचरैं ॥८२
नाजमांहि ऊपरि तें कोय, प्राणी आय रहे जो होय।
सोई नजर न आवे जीव, यातें दूषण लगै अतीव ॥८३
एते निशि पीसण के दोष, जान लेहु भवि अघ के कोष।
ताके निशि पीस्यो नहि भलो, त्यागो ते किरिया जुत चलो ॥८४
चूनतणी मरयादा कहूं, जिनमारग में जैसे लहूं।
शीतकाल दिन सात वखान, पांच दिवस ग्रीषम ऋतु जान ॥८५
वरसाकाल माहि तिन तीन, ए मरयादा गही प्रवीन।
इन उपरान्त जानिये इसो, दोष चलितरस भाण्यो तिसो ॥८६
निसिको नाज भेय जो खाय, अंकूरा तिन में निकसाय।
जीव निगोद तणों भण्डार, कन्दमूल सम दोष अपार ॥८७
ताते जिते विवेकी जीव, दोष जाणके तजहु सदीव।
श्रावक की है घर जो त्रिया, किरियामांहि निपुण तसु हिया ॥८८
ईंधन सोध रसोई मांहि, लावे तासों असन कराहि।
तातें पुण्य लहै उत्कृष्ट, भव भव में सुख सहै गरिष्ट ॥८९

चौपाई

कोई मान वड़ाई काजै, अरु जिह्वा लोलुपता साजे।
खांड तणी चासणी कराय, दाख छुहारा मांहि डराय ॥९०
नाना भाँति अवर भी जान, करइ मुरव्वा नाम वखान।
कैरो अगनि ऊपरि चढ़वाय, खाण्ड पातमाहे नखवाय ॥९१
कहै नाम तसु कैरी पाक; करवावै तस अशुभ विपाक।
तिनकी मरजादा वसु जाम, व्रत धरकै पीछे नहिं काम ॥९२
जेती ऊण्ण नीरको वार, तेती इन संख्या निरधार।
रहित विवेक मूढ़ता जान, राखे घर में बहु दिन आन ॥९३
मास दुमास छमास न ठीक, वरस अधिक दिन लों तहकीक।
काहू में तो पेस करेय, मांगै तिनको मांगा देय ॥९४
जातें लखै वड़ाई आप, तिस समान कछु अवर न पाप।
मदिरा दोष लगै सक नाहि, ताते भवि तजिये हित जाहि ॥९५
जो मन में खाने को चाव, खावे जीमत वार कराव।
अथवा कीए पाछे ताम, लैनो जोग आठहो जाम ॥९६
साठोंका रसको अवटाहि, राखे नरम चासणी ताहि।
घागर मटकी भरके राख, ताको वहुदिन पीछे चाख ॥९७
ताहू में मदिरा को दोप, महानन्त जीवनिको कोष।
अधिको कहा करौ आलाप, अहो रात्रि खोये वहुपाप ॥९८

याको पटरस नाम जु कहैं, पुन्यवान कवहु न गहैं।
मन वच तन इनको जो तजै, मदिरा त्याग वरत सो भजै ॥९९

दोहा

जे विशुद्ध मदिरा त्यजन, पालै वरत महन्त। मरजादा ऊपर गये, तुरत त्यागिये सन्त ॥२००

चौपाई

होत रसोई थानक जहाँ, खिचड़ी रोटी भोजन तहाँ।
चावल और विविध परकार, निपजै श्रावक के घर सार ॥१
जीमण थानक जो परमाण, तहाँ जीमिये परम सुजाण।
रांधण के भाजन हैं जेह, चौका वाहिर काढ़ि न तेह ॥२
जो काढ़ै तो माहि न लेह, किरियावन्त सो नाहि सनेह।
असन रसोई वाहिर जाय, सो वटवोयी नाम कहाय ॥३
अन्य जाति जो भीटै कोय, जिय भोजन को जीमे सोय।
शूद्रनि मेले जीमे जिसो, दोप वखान्यो है वह तिसो ॥४
अन्य जातिके मेले कोई, असन करै निरवुद्धि होई।
यातैं दूपण लगैं अपार, जिमि परजूठि भखै मतिछार ॥५
निजसुत पिता व भ्राता जान, सांचो मित्रादिक जो मान।
भेलैं तितकैं जीमण जदा, किरियामती वरणो नहि कदा ॥६
तो पर जात तणी कहा वात, क्रिया काण्ड ग्रन्थनि विख्यात।
भाजन निज जीमन को जेह, मांग्यो परको कवहूँ न देह ॥७
अरु परको वासण में आप, जीमेतै अति वाढ़ै पाप।
ग्रामान्तर जो गमन कराय, वसिहैं ग्राम सरायां जाय ॥८
मांगे वासन खावे वाहि, जो सीवो घरहूँ को आहि।
खाये दोप लगै अविकार, मांस वरावर फेर न सार ॥९
गूजर मीणा जाट अहीर, भील, चमार तुरक वहु कीर।
इत्यादिक जे हीण कहात, तिन वासन में भोजन खात ॥१०
ताके घर को वासण होय, ताते तजौ विवेकी लोय।
श्रावक कुल अति लह्यो गरिष्ठ, क्रिया विना जो जानहु भ्रष्ट ॥११
जे वुध क्रिया विपै परवीन, अन्य तणो वासण गहि हीण।
तामें भोजन कवहु न करै, अविको कष्ट आय जो परै ॥१२
जैन धरम जाके नहि होय, अन्यमती कहिये नर सोय।
निपज्यो असन तास घरमाहि, जीमण योग वसाणो नाहि ॥१३
अरु तिनके घरहु को कीयो, खानो जिनमत में वरजीयो।
पाणी छाणि न जाणे सोय, सोधण नाज विवेक न होय ॥१४
ईंधण देख न वालो जिके, दया रहित नर जाणों तिके।
जीव दया पटमत में सार, दया विना करणी सव छार ॥१५

याते जे करुणा प्रतिपाल, असन आन घरि कर तजि चाल।
निजव्रत रक्षक है नर जेह, यों जिनवर भाष्यौ सन्देह ॥१६

छन्द चाल

जे आठ मूल गुण पालै, इतने दोषनि को टालै।
दीजे जिम मन्दिर नींव, गहिरीं चौढ़ी अति सींव ॥१७
तापर जो काम चढ़ावै, बहु दिन लों डिगणे न पावै।
तिम श्रावक व्रत ग्रह केरी, इनि विनि ही नीच अनेरी ॥१८
दरशन जुत ए पलि आवै, व्रत मन्दिर अडिग रहावै।
याते जे भविजन प्राणी, निहचै एह मन मैं आणी ॥१९
प्रतिमा ग्यारा जो भेद, आगे कहि हों तजि खेद ॥२०

अडिल्ल छन्द

किसनसिंह यह अरज करे भविजन सुनो, पालो वसु गुण मूल निजातम को गुणों।
दरशन जुत व्रत त्रिविध शुद्ध मनलाई हो, सुरग सम्पदा भुंजि मोक्ष सुख पाय हो ॥२१

अथ रजस्वला स्त्री की ि लिख्यते

चौपाई

अवर कथन इक कहनो जोग, सो सुन लीज्यो जे भविलोग।
अवै क्रिया प्रगटी वहु हीण, यातें भापूं लखहु प्रवीन ॥२२
ग्रंथ त्रिवर्णाचार जु माहि, वरणन कीयो है अधिकाहि।
मतलव सो तामें इक जान, मैं संक्षेप कहूँ सुखदान ॥२३
रितुवंती वनिता जव थाय, चलण महा विपरीत चलाय।
प्रथम दिवस ते ही ग्रह काम, देय वुहारी सिगरे धाम ॥२४
अवर हाथ मांही ले छाज, फटके सोधै वोणै नाज।
वालक कपडा पहिरा होय, बाहि खिलावै सगरे लोय ॥२५
आपस में तिय हूजे सवै, न करे शंका भींटत जवै।
मांजै सव हँडवाई सही, जीमण की थाली हू गही ॥२६
जिह थाली में सिगरे खांहि, ताही में वा असन कराहि।
जल पीवे को कलस्यो एक, सव ही पीवै रहित विवेक ॥२७
क्रिया कोष ग्रन्थन में कही, रितुवंती जो भाजन लही।
ग्रह चंडार तणा को जिसो, वोहू भाजन जाणो तिसो ॥२८
और कहा कहिए अधिकाय, वह वासण मांहे जो खाय।
ताके दोष तणो नहि पार, क्रिया हीण वहु जाणि निवार ॥२९
निसिर्का पति सोवत है जहां, वाहू सयन करत है तहां।
दुहुं आपस में परसत वेह, यामें मति जाणो संदेह ॥३०
कोऊ विकल महा कुमतिया, दुय तीजे दिन सेवै तिया।
महापाप उपजावै जोर, यासम अवर न क्रिया अघोर ॥३१

महाग्लानि उपजै तिहि वार, चमारणिहूँ तैं अधिकार ।
जाको फल वे तुरत लहाय, जो कहुं उस दिन गरभ रहाय ॥३२
भाग्य हीण सुत बेटी होय, पर तिय नर सेवे बुधि खोय ।
क्रोधित ह्वै कह अति वच ठीक, जद्वा तद्वा कहै अलीक ॥३३
रितुवंती तिय किरिया जिसी, भाषो भवि सुणि करिए तिसी ।
वनिता धर्मं होत जब वाल, सकल काम तजिके तत्काल ॥३४
ठाम एकांत वैठि है, जाय, भूमि तृणा संथारो कराय ।
निसि दिन तिह पर थिरता धरैं, निद्रा आये सयन जु करैं ॥३५
इह विधि निवसे वासर तीन, तव लों एतीं क्रिया प्रवीन ।
प्रथम ही असन गरिष्ठ न करै, पातल अथवा कर में धरैं ॥३६
माटी वासण जल का साज, फिरि वे हैं आवें नहि काज ।
इह भोजन जल पीवन रीति, अवर क्रिया सुनिये धर प्रीति ॥३७

छंदचाल

दिन में नहि सयन कराहीं, हासि न कोतूहल थाहीं ।
तनि तेल फुलेल न लावें, काजल नयना न अंजावे ॥३८
नख को नहीं दूर करावे, गीतादिक कवहु न गावे ॥
तिलक न वे रोली केशर, कर पय नख दे न महावर ॥३९
एक दिवस तीन ली भोग, रितुवंती न करीवो जोग ।
पुरुषनि कों नजर न धारे, निज पतिहुं को न निहारे ॥४०
वनिता ह्वै धरम जु निसिकों, दिन गिण लीजे नहि तिसकों ।
सूरज नजरों जो आवे, वह दिन गिणती में लावे ॥४१
दूजे दिन स्थान कराही, धोवी कपड़ा ले जाही ।
संकोच थकी नखवाई, औरन की नजर न आई ॥४२
तीजे दिन जलसें न्हावे, तनु वसन ऊजले लावे ।
चउथे दिन स्नान करंती, मन में आनंद धरंती ॥४३
तन वसन ऊजले, धारे, प्रथमहि पति नयन निहारे ।
निसि धरै गरभ जो वाम, पति सूरत सो अभिराम ॥४४
निपजावै उत्तम वालक, वड़भाग जनहि प्रतिपालक ।
तातें इह निहचै ज्ञानी, चौथे दिन स्नान जु ठानी ॥४५
पतिवरत त्रिया जो पारे, निज पति को नयन निहारे ।
नर अवर नजर जो आवे, तस सूरत सम सुत धावे ॥४६
शीलहि कलंक को लावे, अपजस लग पटह वजावे ।
यातें सुभ वनिता जें हैं, किरिया जुत चाले ते हैं ॥४७
निजपति विन अवर न देखे, सासू ने नाहि मुख पेखे ।
ताके घर मांही जाणो, लछमी को वाल वखाणो ॥४८

अति सुजस होय जगमाहीं, तासम वनिता कहुँ नाहीं।
इह कथन लखो वुध ठीका, भाषों नहिं कछू अलीका ॥४९

दोहा

क्षत्री ब्राह्मण वैश्य की, क्रिया विशेष वखान। ग्रन्थ त्रिवर्णाचार में, देख लेहु मति मान ॥५०

इति रजस्वला स्त्री क्रिया वर्णनम्।

•

अथ द्वादश व्रत कथन लिख्यते

दोहा

कियो मूल गुण आठ को, वर्णन वुधि अनुसार।
अव द्वादश व्रत को कथन, सुनहु भविक व्रतधार ॥५१
वारा व्रत मांहीं प्रथम, पांच अणुव्रत सार। तीन गुणव्रत चार पुनि, शिक्षाव्रत सुखकार ॥५२

छन्द चाल।

इह व्रत पालै फल ताको, भाषो प्रत्येक सु जाको।
जे अव्रत दोष अपारा कहि हों तिन को निरधारा ॥५३
समकित जुत व्रत फल दाई, तिहकी उपमा न कराई।
विनु दरशन जे व्रत धारी, तुष खंडन सम फलकारी ॥५४

अडिल्ल

जो नर व्रत को धरैं सहित समकित सही, सुर नर और फणिंद्र संपदा को लही।
केवल विभव प्रकाश समवश्रुत लहि सदा, सिद्ध-वधू कुचकुंभ पाय क्रीड़त सदा ॥५५

दोहा

भाग्य हीन ज्यों चहत गुण, धन धान्यादिक नाहिं।
भीत मूर्ति नित ही दुखी, वरत-रहित नर थांहि ॥५६

गीता छन्द

जो शुद्ध समकित धार अति ही नरभव सुखकर कौन है।
संसार में जे सार सारहि भोग सो मुनि व्रत गहैं ॥
सो मुक्ति वनिता के पयोधर हार सम जे रति करैं।
तहँ जनम मरण न लहै कवही सुख अनंता अनुसरैं ॥५७

दोहा

कुवुद्धि भव संसार में, भ्रमत चतुर गति थान। जिन आगम तत्त्वार्थ को, विकल होय सरधान ॥५८

अथ अहिंसा अणुव्रत लिख्यते। चौपाई

त्रस की घात कवहुँ नहि जाण, जो कदाचि छूटै निज प्राण।
थावर दोष लगै तिह थकी, प्रथम अणुव्रत जिनवर वकी ॥५९

थावर हिंसा इतनी तजै, त्रस के घात दोष कौ भजै।
सो धरमी सो परम सुजान, जीवदया पालक प्रतिजान ॥६०

छन्द नाराच

करोति जीव की दया नरोत्तमो मही सही, सुवैर वर्ग वर्जितो निरामयो तनु लही।
तिलोक हर्म्य मध्यरत्न दीप सो वखानिए, वरै विमोक्ष लक्ष्मी प्रसिद्ध शिव को जानिए ॥६१

दोहा

खाद्य अखाद्य न भेद कछु, हिंसा करत न ढील। महा पाप की मूल नर, ज्यों चंडाल अरु भील ॥६२

अडिल्ल छन्द

जीववध कर पाप उपार्जित पाक तें, घोर भवोदधि मांहि परै निज आपते।
नरक तणा दुख सबै बहुत विधितें सहै, फिर-फिर दुर्गति मांहि सदा फिरते रहै ॥६३

दोहा

करुणा अरु हिंसा तणो, प्रगट कह्यो फल भेद। वह उपजावे सुख महा, अदया ते ह्वै खेद ॥६४
ऐसे लखि भविजन सदा, धरो दया चित राग। सुपने हूँ अदया करत, भाव तजहु वड़भाग ॥६५

सवैया

पूरव ही मुनिराय दया पालो पट्काय महा सुखदाय शिव थानज लहायो है,
प्रतिमा धरैया के उपसमकादि केतेहूँ करुणा सहाय जाय देवलोक पायो है।
अजहूँ जीवनि की रक्षा के करैया भवि सुर शिव लहै जिनराज यों बतायो है,
या तें हिंसा टार क्रिया पार चित्त धार जिन आगम प्रमाण कृष्णसिंह ऐसे गायो है ॥६६

अथ हिंसा अतिचार। चाल

बाधे नर पशुयन केई, रज्जू बंधन दृढ़ देई।
लकुटादिक तें अति मारै, पाहन मूठी अधिकारै।
नासा करणादिक छेदै, परवेदन को नहिं वेदे।
पशुवन को भाड़ो करिहै, इतनो हम बोझ जो धरिहै ॥६७
पीछै लादे बहु भार, जाके अघ को नहि पार।
खर बैल ऊँट अरु गाड़ो, मरयाद जितो करि भाड़ो ॥६८
हासिल को भय कर जानी, बोझि भरन अधिक धरानी।
घोटक रथ ह्वै असवारे, चालै निस सांज सवारे ॥६९
तसु भूख त्रिपा नहिं छूजे, ताको पर दुख नहिं सूजे।
काहू नर के सिर दाम, जाकों रोकै निजधाम ॥७०
तिहि खान पान नहिं देई, क्रोधादिक अधिक करेई।
ए अतीचार भनि पांच, अदया को कारण सांच ॥७१
करुणा व्रत पालक जेह, टालैं मन में धर नेह।
विन अतिचार फल सारा, सुखदायक हो अधिकारा ॥७२
वे धन्य पुरुष जगमाहीं, ते करुणा भाव धराहीं।
करुणा सब विधि सुखदायक, पदवी पावै सुरनायक ॥७३

अथवा चक्री धरणेश, देव नृपहुँ हो श्रेणिक वेश।
इन पदवी कर कहा वड़ाई, संसार तणा सुखदाई ॥७४
यातें तीर्थंकर होई, संदेह न आणों कोई।
तातें सुनिये भवि जीव, करुणा चित धार सदीव ॥७५

अथ सत्य अणुव्रत कथन। चौपाई

झूठ थूल वच ना मुख कहै, संकट पड़ै मौन कों गहै।
त्यागें असत्य सर्वथा नहीं, यातें लघु खिर है मुखि कहीं ॥७६
जीवदया पलिहै नहिं तदा, झूठ वचन वोले है जदा।
वह असत्य सांच ही जांण, जहाँ जीव के वचि हैं प्राण ॥७७

छन्द नाराच।

सदीव सत्य भावते अलंध्यते न तास को, पएवि वाच-सिद्धि चार नाद होय जासको।
समृद्धि रिद्धि वृद्धि तीन लोक की लहै इकों, त्रिया जु मोक्ष गेह मांहि तिष्ठ है सुजायकों ॥७८

दोहा

वचन न जाको ठीक कछु, अति लवार मति क्रूर।
तातें फल अति कटुक सुन, महापाप को भूर ॥७९

अडिल्ल छन्द

नष्ट जीभ वच परतें निंदित मानिए, गर्दभ ऊँट विलाव काक सुर जानिए।
जड़ विवेक ते रहित मूकता को धरैं. झूठ वचन ते मनुज इते दुख अनुसरै ॥८०

दोहा

सांच झूठ फल है जिसो, तिसो कह्यो भगवान। सत्य कहो झूठहि तजो, इहै सीख मन आन ॥८१

अथ सत्य वचन अतीचार। छन्द चाल

नित झूठ वचन वहु भाषै, अवरनि उपदेश जु आपै।
परगुप्त वात जो थाही, ताकों ते प्रगट कराहीं ॥८२
पत्री झूठी नित मांड़े, केलवणीं हिय नहीं छांड़े।
लेखी पुनि मांडै झूठी, खतहू लिख है जु अपूठी ॥८३
तासों कर्म जु रूठो, अघ अधिक महा करि तूठो।
को धरि हैं धरो कड़ि आई, जासों जो मुकरि सुजाई ॥८४
साक्षी दस पाँच वुलावै, वस झूठो करि ठहरावै।
इस पाप तणो नहि पारा, कहिए कहुँलो निरधारा ॥८५
दुहुँ पुरुष जुदे वतलावै, तिन मिलती हिए अणावै।
दुहुँ सुख आकार लखाई, परसों सो प्रगट कराई ॥८६
दूखै उनके परिणाम, अघ-दायक है इक काम।
लख अतिचार दई तीन, व्रत सत्य तणा परवीन ॥८७

इनकों त्यागैं जे जीव, शुभ गति लहैं अतीव ।
ए अतिचार पण भाखे, व्रत सत्य जमे जिन आखे ॥८८
शिवभूति भयो द्विज एक, पापी वर मन अविवेक ।
नग पांच सेठ सुत धरिके, पाछे सों गयो मुकर के ॥८९
सत्य घोष प्रगट तनु नाम, नृपतिय झूंठा लखि ताम ।
जूआ रमि करे चतुराई, तसु तिय तें रत्न मंगाई ॥९०
तिह सेठ परीक्षा कारी, जिह लिये निज नग टारी ।
द्विज मरिकैं पन्नग थायो, तत्क्षण असत्य फल पायो ॥९१

अदत्त त्याग अणुव्रत कथन । चौपाई

धरो परायो अरु वीसरो, लेखा में भोलो जो करो ।
मही परो नहिं लेहैं सोय, जो अदत्त त्यागी नर होय ॥९२
चोरी प्रगट अदत्ता सर्व, अणुव्रत धारी तजि है भव्य ।
लगै व्यापारादिक में दोष, एक देश पलि है शुभ कोष ॥९३

छन्द नाराच

तजेहि द्रव्य पारको सुसंनिधि निरंतरं, भवन्ति भूमि-नाथ भोगभूमि पाय हैं परं ।
लहेवि सर्व बोध सिद्ध कांतया सुनैन को, अतीव मूर्ति तासकी सहाय चैन दैन को ॥९४

दोहा

जाकी कीरति जगत में, फैले अति विस्तार ।
उज्ज्वल शशि किरणां जिसी, जो अदत्त व्रतधार ॥९५
सदा हरैं पर द्रव्य को, महापाप मति जोर ।
पड्यो रह्यो भोले धर्यो, गहै सुनिहचै चोर ॥९६

उडिल्ल छन्द

सदा दरिद्री शोक रोग भयजुत रहै, पाप मूर्ति अति क्षुधा त्रिषा वेदन सहै ।
पुत्र कलत्र रु मित्र नहीं कोउ जा सके, चोरी अर्जित पाप उदै भो तासके ॥९७

दोहा

त्यजन अदत्त सुवरत को, अरु चोरी फल ताहि ।
सुनवि गह्यो व्रत को सुधी, चोरी भाव लजाहि ॥९८

अदत्तादान का अतीचार वर्णन । छन्द चाल

चोरी करने की वात, सिखवावै औरनि घात ।
जावो परधन के काज, लावो इस बुधि वलि साज ॥९९
कोऊ चोरी कर ल्यावे, वहु मोली वस्तु दिखावैं ।
ताको तुच्छ मोल जु देई, बहु धन की वस्तु सु लेई ॥१००

कपड़ो मीठो अरुधान, लावे वेचैं ले आन। तिनको हासिल नहिं देई, नृप आज्ञा एम हनेई ॥१
जो कहुं नरपति सुन पावै, तिहि वांध वेग मंगवावे।
घर लूट लेई सव ताको, फल इह आज्ञा हणिवाको ॥२
गज हाथ पंसेरी वाट, जाणो इह मान निराट। चौपाई पाई देवाणी, सोई माणी परमाणी ॥३
इनको लखिये उन मान, तुलिहै मपि है वहु वान।
ओछो दे अधिको लेई, अपनो शुभ ताको देई ॥४
उपजावै वहुते पाप, दुरगति में लहै संताप। केसर कस्तूरी कपूर, नानाविधि अवर जकूर ॥५
घृत हींग लूण वहुंगाज, तंदुल गुड़ खांड समाज।
इन मांहीं भेल कराहीं, हियरे अति लोभ धराहीं ॥६
कपड़ो वहु मोलो लावै, कोऊ कहै आण गहावै। ताके वदले धरि वैसो, अगिला रंग होवै जेसो ॥७
व्रत दान अदत्ता कीजै, पण अतिचार ए लीजे।
तातें सुनिये भवि प्राणी, दुरगति दुखदायक जाणी ॥८
तजिए इनको अव वेग, भवि जीवनि को इह नेग।
त्यागै सुधरै इहलोक, परभव सुख पावै थोक ॥९

अथ ब्रह्मचर्य अणुव्रत कथन। चौपाई

नारि पराई को सर्वथा, त्याग करै मन वच क्रम यथा।
निज वयतें लघु देखे ताहि, पुत्री सम सो गिनिए जाहि ॥१०
आप वरावर जोवन धरै, निज भगिनी सम लख परिहरे।
आप थकी वय अधिकी होय, ताहि मात सम जाण हि जोय ॥११
इम परतिय को गनिहै भव्य, सो सुख सुर-नर के लहि सर्व।
निज वनिता माहिं संतोष, करिये इस विध सुणि शुभ कोष ॥१२
आप व्रती तियको व्रत जवै, दोऊ दिन सील गहै वुध तवै।
आठैं चौदस परवी पाँच, शील व्रत पालै मन साँच ॥१३
भादों मास अठाई पर्व, महा पूज्य दिन लखिये सर्व।
ब्रह्मचर्य पाले इन माहिं, सुर सुख लहियत संशय नाहिं ॥१४

अथ शीलकी नव वाड़ि प्रारम्भः। चौपाई

पुनि व्रत धर इतनी विधि धरे, ताहि शीलव्रत त्रिविध सु परे।
जेहि वनिता को जूथ महन्त, तहां वास नहिं करिये संत ॥१५
रुचि धर प्रेम न निरखे त्रिया, ताको सफल जनम अरु जिया।
पड़दा के अन्दर तिय ताहि, मधुर वचन भाषै नहिं जाहि ॥१६
पूरव भोग केलि की जीत, तिनहिं न याद करे शुभ मीत।
लेइ नहीं आहार गरिष्ठ, तुरत शील को करे जु भ्रष्ट ॥१७
कर शुचितन शृंगार वनाय, किये शीलको दोष लगाय।
जिह पलंग में सोवै नार, सो सेज्या तज वुध व्रतधार ॥१८
मनमथ कथा होय जिहि थान, तहं क्षण रहै नहीं मतिमान।
निज मुखते कवहूँ नहिं कहै, ब्रह्मचर्य व्रत को जो गहै ॥१९

उदर भरो भोजन नहिं करे, ताते इन्द्री वहु बल धरे।
ए नव वाडि पालिये जबैं, शील शुद्ध व्रत पलिहै तबै ॥२०

इति नववाडि संपूर्णम्

शील चरित्र कथन। सवैया

ब्राह्मी सुन्दरनि आदि देके सोला सती भई शील परभाव लिंगछेद सोतेई भई।
तिन माहिं केऊ नृप सोई शिवध्यान लह्यो केऊ मोक्ष जैहैं भूप होय तहाँ ते चई ॥
अनन्तमती तु कारीने आदि केती कहूँ महा कष्ट पाय शील दिढता मई ठई।
शीलते अनन्त सुख लहै कछु संशय नाहिं भंग भ्रमैं नरक महा पई ॥२१

दोहा

सेठ सुदर्शन आदि दे, शीलतणैं परभाव। लहैं अनन्ते मोक्ष सुख, कहांलों करों वढ़ाव ॥२२

नाराच छन्द

सुनो वि सन्त ब्रह्मचर्य पाल वाँधका इसौ, अतीव रूपवान थाय काम को जिसौ।
मनोज्ञ खोजता लहाय पुत्र पौत्र सोभितो, अनेक भूषणादि द्रव्य और पै नहीं इतो ॥२३
गहै वि दीक्षया लहै विज्ञान को प्रकार ही, अनन्त सुख बोध दर्शनादि वीर्य भासही।
सुमोक्ष सिद्ध थाय काल बीच है अपार सो, सुसिद्ध खोजता मुखावलोक ने नगारसो ॥२४

दोहा

लंपट विषयी पुरुषके, निजपर ठीक न होय। दुरगति दुख फल सो लहै, भ्रमिहै भव दधि सोय ॥२५

अडिल्ल छन्द

ह्वै कुरूप दुर्गन्ध निंदि निरधन महा, वेद नपुंसक दुर्ग व्याधि कुष्टहिं गहा।
अङ्ग विकल अति होय ग्रथिल जिमि भासही, परतिय संग-विपाक लही ह्वै इम सही ॥२६

दोहा

व्रत परवनिता त्यजनको, कथन कह्यो सुखकार।
अरु लम्पट विषयी तणो, भाष्यो सहु निरवार ॥२७
शील थकी सुर नर विमल, सुख लहि शिवपुर जाहिं।
दुरगति दुख भव-भ्रमणकों, विषयी लम्पट पाहिं। ॥२८

अथ ब्रह्मचर्य अणुव्रत अतीचार। छन्द चाल

परकी जो करै सगाई, वतलावे जोग मिलाई।
अरु व्याह उपाय बतावै, निज व्रतको दोष लगावै ॥२९
विभिचारिणी जैहैं नारी, परिगृहीत नाम उचारी।
जिनको वेश्यादिक कहिये, तिन को संगम नहीं गहिये ॥३०
हास्यादि कौतूहल कीजे, शीले तव मलिन करीजे।
अपरिगृहीत सुनि नाम, पति परणी है जो वाम ॥३१
तनु महा कुशीला जाणी, जसु संगति करै जु प्राणी।
हास्यादिक वचन सुभाखै, सो शील मलिन अति राखै ॥३२

जे लम्पट विषयी क्रूर, ते पावै भव दुख पूर। अतीचार तीसरो एह, सुनिये अव चौथो जेह ॥३३
क्रीड़ा अनंग विधि एह, हस्त सुपरसत तिय देह।
विकल्प मन मैं ही आने, परतक्ष ते शीलहि भाने ॥३४
इह अतीचार चौथो ही, वुध करै न कवहू यों ही।
पंचम भनिये अतीचार, सुपने में मदन विकार ॥३५
उपजै तिय सेवन काम, विकलपता अति दुख धाम।
औषध के पाक वनावे, वहु विध रस धातु मिलावै ॥३६
अति विकल होय निज तियको, सेवे हरषावे जियको।
वुध जन इह रीति न जोग, पण अतीचार इस भोग ॥३७

दोहा

इनहीं टाल व्रत शीलको, पालो मन वच काय।
इह भवतैं सुर पद लहै, फिरि नृप ह्वै शिव जाय ॥३८

अथ परिग्रह प्रमाण अणुव्रत कथन। चौपाई

क्षेत्र वास्तु आदिक दस जाण, परिग्रह तणों करै परिमाण।
इनको दोष लगावे नहीं, वह देश व्रत पंचम कही ॥३९

छन्द नाराच

करोति मूढ़नां प्रमाण कर्ण सेवनां विषे, त्रिलोक वेदज्ञान पाय श्री जिनेश यौं अपै।
भवन्ति सौख्य सागरो अनन्त शक्ति कौं गहै, त्रिलोक वल्लभो सदा भवन्तरे सिवं तहे ॥४०

दोहा

मन विकल्प सरै अधिक, विभव परिग्रह मांहि। लहै नहीं अघके उदै, फल नरकादि लहाहि ॥४१

अडिल्ल

जन्म जरा पुनि मरण सदा दुखकौं सहै, वहु दूषणको थान रोग अतिही लहै।
भ्रमै जगतके मांहि कुगति दुखमें परै, विषयनि मूर्च्छा मांहि न संवर जे करै ॥४२

दोहा

व्रत परिग्रह प्रमाण नर, कीये लहै फल सार। मनु मुकलावै ठीक तजि, दुख भुगतै नहिं पार ॥४३
याते व्रत धरि भव्य जे, मन विकल्प विस्तार। ताहि तजै सुख भोगवे, यामें फेर न सार ॥४४
जे सन्तोष न आदरै, ते भव भ्रमै सदीव। दुख-कर याकों जानिकै, त्यागै उत्तम जीव ॥४५
दोष लगै या समझ कै, अतीचार पणि जाणि। तिनकौ वरणन भेद कछु, आगै कहों वखाणि ॥४६

अथ परिग्रह प्रमाणका अतीचार वर्णन। चौपाई

क्षेत्र कहावे धरती मांहि, हल खेडन की जो विधि आहि।
वास्तु कहावे रहवातणा, मन्दिर हाट नोहोरा तणा ॥४७
हिरण्य रूपाको परमाण, करै जितो राखै वुधिमाण।
सुवरण सोनो ही जाणिये, ताकी मरज्यादा ठाणिये ॥४८
धन महिषी घोटक अरु गाय, हस्ती वैल ऊँट न थाय।
इत्यादिक चौपद जे सही, तिन सिगरे की संख्या कही ॥४९

सालि मूंग गोधूम अर चिणा, नाज विविध के जे है घणा।
इन सबकी मरज्यादा गहो, बहुत जतन ते राखै सही ॥५०
खरच जितो घर मांहीं होय, तितनो जान खरीदे सोय।
विणज निमित्त जेतो परमाण, जीव पड़ैं नहीं वैसे जाण ॥५१
बहु उपाय करिकै राखि है, ऐसे जिनवाणी भाषि है।
बरस एकमें बींकै नहीं, दूनो बरस आइ है सही ॥५२
मरयादा माफिक थी जितो, अधिक लेय नहिं राखै तितो।
दुपद परिग्रहमें एक है, वनिता दासी दासहू लहै ॥५३
कुप्य परिग्रहमें ये जाण, चावा चन्दन अतर वखाण।
रेसम सूत ऊनका जिता, कपड़ा होय कहा है तिता ॥५४
तिनहूँ की मरज्यादा गहै, यों नायक श्री जिनवर कहै।
रुपया भूषण रतन भंडार, बहुरि सोनइया अरु दीनार ॥५५
इनकी मरयादा करि लेहु, हंडवाई वासण पुनि एहु।
बहु विधि तणा किराणा भणी, अवर खांड गुड़ मिश्री तणी ॥५६
मरयादा ले सो निरवहै, भंग कीये दूषण को लहै।
मन वच काया पाले जेह, भव भव सुख पावे नर तेह ॥५७

सवैया ३१

वरत करैया ग्यारा प्रतिमा धरैया जे जे दोष के टरैया मनमाहीं ऐसे आनिकै,
जैसो है जिह थान जोग तैसो भोग उपभोग चरम तिजोग मांहि कह्यो है वखानिकै।
आदरेत्ति तोही बाकी सहै छांडितेह ग्रंथसंख्या व्रत एह श्रावक को जानिकै,
तद्भव सुरथाय राज ऋद्धि को लहाय पावै शिवथान दुपदानि भव भानिकै ॥५८

मरहटा छन्द

जो परिग्रह राखै दोष न भाखै चित्त अभिलाषै हीन,
विकल्प मुकुलावे विषय बढ़ावे आठ न पावै तीन।
बहु पाप उपावै जो मन भावै आवै बात कहीन,
मूर्च्छा को धारी हीणाचारी नरक लहै सुख छीन ॥५९

छन्दभुजंग प्रयात

कह्यो मूर्च्छना दोष भारी अवपारी, लहै श्वभ्र संसै न जानैं लगारा।
तजै सर्वथा मोक्ष सौख्यं लहंती, यहै जान भव्या न याको गहन्ती ॥६०
इति परिग्रह परिमाण पंचम अणुव्रत सम्पूर्ण।

अथ प्रथम दिग्गुणव्रत कथन लिख्यते। चौपाई

चार दिशा विदिशा पुनि चार, ऊर्ध्व अधो दुहूँ मिलि दस धार।
दिग व्रत पालन नर परवीन, मरयादा लंघै न कदी न ॥६१
जिते कोसलों फिरियो चहै, दिसा विदिसा की संख्या गहै।
अधिक लोभ को कारिज वणै, व्रत धर मरयादा नहि हणै ॥६२

जिम मरयादा की आखदी, तहँ लों जाय काम वसि पड़ी।
घरि वैठा निति धारै ठीक, पाले कवहु न चले अलीक ॥६३

दोहा

दिगव्रत को पाले थकी, उपजै पुण्य अपार। सुरगादिक फल भोगवै, यामें फेर न सार ॥६४
मरयादा लीये विना, फल उत्कृष्ट न होय। हमें पले नहिं इम कहै, वहै विकल मति जोय ॥६५

अव दिग्व्रत के अतिचार पांच लिख्यते। छन्द चाल

मन्दिर निज पर की आड़, चढ़ियो पुनि कोई पहाड़।
ऊरध संख्या सो कहिये, टालै ते दोषहि महिये ॥६५
तहखाना कूप रु वाय, गिरि गुफा माँहि जो जाय।
इह अधो भूमि मरयाद, टालै दूषण परमाद ॥६६
दिसि विदिसि सोह जे लीनी, तिरछो चलवै मति दीनि।
सो तिरयग गमन कहाई, अतीचार तृतीय इह थाई ॥६७
निज खेत भूमि जो थाय, सीमातें अधिक वधाय।
सो खेत वृद्धि तुम जाणो, चौथो अतीचार वखाणों ॥६८
जिह वस्तु तणो परमाण, प्रथम ही कीयो जो जाण।
तिहिकों वीसरि सो जाई, विस्मृति जु अतीचार कहाई ॥६९

इति दिग्गुणव्रत सम्पूर्ण।

अथ देशव्रत लिख्यते। चौपाई

दिशि विदिशा के जे जे देश, जिह पुरलौं जो करिय प्रवेश।
हरै नहीं मरयादा कोई, तिनको पलै देशव्रत सोई ॥७०
मन सैन्य वारण के हेत, मन वच कर मरयादा लेत।
आप जहां दिसि कवहु न जाय, तहातणो वड़ती नहीं खाय ॥७१

दोहा

सो लहिये व्रिन वरत को, नेम न मूल कहाय।
यातें गहिये आखड़ी, ज्यों फल विस्तर थाय ॥७२

अथ देशव्रत अतीचार पांच लिख्यते। छन्दचाल

कीयो जे देश प्रमाण, तिह पार थकी सांस जाण।
कोई नहीं वस्तु मंगावे, कवहूँ न लोभ वढ़ावै ॥७३
जहलों मरयादा ठानी, भांजै नहीं उत्तम प्राणी।
भांजै मरयादा जास, अतीचार कहावै तास ॥७४
मरयादा वारै कोई, नरकों न वुलावै जोई।
अरु आप नहीं वतलावे, वतलाए दोष लगावै ॥७५
निजरूपहि सों हँसिवाई, काहू जो देइ दिखाई।
इह अतीचार चोथो ही, जिनदेव वखानो यों ही ॥७६

मरयाद जिकी जिंहि वारी, तिह वारे करतें डारी ।
कंकरी कपड़ों कछु और, पाहण लकड़ी तिहिं ठौर ॥७७
इत्यादिक वस्तु वहु नाम, वरनन कहाँ लों ताम ।
ऐसी मति समझो कोई, देसांतर ठीक दुहोई ॥७८
चैत्यालय वा घर मांहीं, अथवा देसांतर तांही ।
धरिहै जिम जो मरयाद, पालै तिम तजि परमाद ॥७९
इह देश वरत तुम जाणो, दूजो गुणव्रत परमाणो ।
अव अनरथ दंडज तीजो, वहु विधि तसु कथन सुणीजो ॥८०

इति द्वितीय गुणव्रत ।

अथ अनर्थ दंड तृतीय गुणव्रत कथन । चौपाई

अनरथ दंड पंच परकार, प्रथम पाप-उपदेश असार ।
हिंसादान दूसरो जाण, तीजो खोटो पाप वखाण ॥८१
तुरिय कुशास्त्र कहै मन लाय, पंचम प्रमाद चर्या थाय ।
निज घर कारज विनु ते और, तिनके पाप तणी जे ठौर ॥८२
पसू विणज करवावै जाय, अरु तिह वीच दलाली खाय ।
हिंसा को आरंभ जु होय, ताको उपदेसै जु कोय ॥८३
मीठो लूण तेल घृत नाज, मादिक वस्तु मोम विनु काज ।
धोलि धाहम्या हरडे लाख, आलकमूंभा को अभिलाख ॥८४
नील हींग आफू मोहरो, भांग तमाखू सावण खरो ।
तिल दाणासिण लोह असार, इन उपदेश देहि अविचार ॥८५
कूवा तलाव हवेली वाय, वाड़ी वाग कराय उपाय ।
कपड़ा वेगि धवावेहु मीत, निज ग्रह कारज राखहु चीत ॥८६
परधन-हरण वणी जे वात, सिखवावै वहुतेरी घात ।
इतने पाप तणै उपदेश, कीये होय दुरगति परवेश ॥८७
चाकी ऊखल मूसल जिते, कुसी कुदाल फाहुडी तिते ।
तवो कड़ाही अरु दातलो, ए मांगा देवो नहीं भलो ॥८८
धनुष कृपाण तीर तरवार, जम घर छुरी कुहाड्या टार ।
सिल लोढो दांतण धोवणो, वाण जेवड़ा वेडी गणो ॥८९
रथ गाड़ी वाहण अधिकार, अगनि ऊपलादिक निरधार ।
इत्यादिक कारण जे पाप, मांगें दियें वढ़ै संताप ॥९०
याते व्रत धारी जे जीव, मांग्या कवहु न देय सदीव ।
द्वेष भाव करि वैर लखाय, वध वंधण मारण चित थाय ॥९१
परतिय देखि रूप अविकार, ऐसो चितवन अति दुखकार ।
खोटे शास्त्र वखाणे जदा, सुणत दोष रागी ह्वै तदा ॥९२

हिंसा अरु आरंभ वढाय, मिथ्याभाव उपरि चित थाय।
जामें एते कहै वखाण, सो कुशास्त्र अघकारण जाण ॥९३
विनही कारण गमन कराय, जल-क्रीड़ा औरनि ले जाय।
वाले अगनि काम विनु सोय, छेदै तरु अति उद्धत होय ॥९४
मेला देखण चलिये यार, असवारी यह खड़ी तयार।
गोठि करै निज खरचै दाम, ए सब जाणि पाप के काम ॥९५
वहुजन तणो मन लावै भलो, होला डेंहगी खावे चलो।
सिरा वाजरा अर जुवारि, फलही भाजी सवनि पचारि ॥९६
चले सीधी लैजे हैं खेत, वस्त खवावन को मन हेत।
अनरथ दंड न जाणैं भेद, पाप उपाय लहै वहु खेद ॥९७
सुवो कवूतर मैना जाण, तूती वुलवुल अघ की खाण।
पंखियां और जनावर पालि, राखै वन्दि पींजरै घालि ॥९८
इनि पाले को पाप महंत, अनरथ दंड जाणिये संत।
कूकर वांदर हिरण बिलाव, मींढादिक रखिये घरि चाव ॥९९
पालि खिलावे हरखि धरेय, अनरथ दंड पाप फल लेय।
मन हुलसे चित्राम कराय, त्रस जीवन सूरत मंडवाय ॥१००
हस्ती घोटक मींडुक मोर, हिरण चौपद पंखी और।
कपड़ा लकड़ी माटी तणा, पाखाणादिक करिहै घणा ॥१
जीव मिठाई करि आकार, करै विविध केहीण गवार।
तिणिकौं मोल लेई जण घणा, वाँटै घर घर में लाहणा ॥२
इह प्रमाद चर्या विधि कही, अनरथ दंड पाप की मही।
जो न लगावै इनको दोष, सो धरमी अघ करिहै सोष ॥३

दोहा

जो इस व्रत को पालि है, मन वच काय सुजाण। सो निहचै सुर पद लहै, यामें फेर न जाण ॥४
विनु कारज ही सवनि को, दोष लगावै कोय। जाके अघ के कथन को, कवि समरथ नहि होय ॥५
अघतें नरकादिक लहै, इह जानो तहकीक। अतीचार या वरत को, सुनों पाँच यह ठीक ॥६

छन्द चाल। अथ अतीचार अनरथ दंड का लिख्यते

अती हास कौतूहल कार, मन माहीं सोच विचार।
इह अतीचार एक जानी, जिन आगम कह्यो वखानी ॥७
क्रीड़ा उपजावन काम, वहु कला करै दुख धाम।
नृत्यादिक देखण चाव, वादीगर लखि येह दाव ॥८
मुखते वहु गाली देई, वच ज्यों त्यों ही भाखेई।
इह अतीचार भणि तीजो, वुधि त्यागहु ढील न कीजो ॥९
मनमें चितै को काम, इतनो करस्यो अभिराम।
तातें अधिको जु कराई, दूषण इह चौथो थाई ॥१०

जेती सामग्री भोग, अथवा उपभोग नियोग ।
पर वरजो मोल यहाँ हीं, निज अधिको मोल चढ़ाहीं ॥११
लोलुपता अति ही ठानैं, हठ करिस्यों अपनो आने ।
इह पंचम दोप सुठीक, यामें कछु नाँहि अलीक ॥१२
भणिया ए पण अतीचार, वुधजन मन धरि सुविचार ।
निति ही इनको जो टाले, मन वच क्रम व्रत सो पाले ॥१३
इह कथन सवै ही भाख्यो जिन वाणी माफिक आख्यो ।
जो परम विवेकी जीव, इनको करि जतन सदीव ॥१४
जे अनरथ दण्ड लगावे, ते अघकों पार न पावै ।
अघ महा जगतको दाई, भव भांवर अन्त न थाई ॥१५
वच भाषै लागो पाप, ऐसे हु न करेहु अलाप ।
मन वच तन व्रत जे पालै, ते सुरगादिक सुख भालै ॥१६
अनुक्रमि शिवथानक पावै, कवहूँ नँहि भवमें आवै ।
सुख सिद्ध तणा जु अनन्त, भुगतै जो परम महन्त ॥१७

दोहा

गुणव्रत लखि इह तीसरो, अनरथ दण्ड सुजाणि ।
कथन कह्यो संक्षेपतैं, किशनसिंह मनि आणि ॥१८

इति गुणव्रत कथन सम्पूर्ण ।

अथ प्रथम यिक शि त लिख्यते । चौपाई

सव जीवनिमें समता भाव, संयममें शुभ भावन चाव ।
आरति रुद्र ध्यान विहूँ त्याग, सामायिक व्रत जुत अनुराग ॥१९
प्राणी सकल थकी मुझ क्षांति, वेऊ क्षम मुझ परि करि सांति ।
मेरो वैर नहीं उन परी, वै मुझ तैं कुछ दोष न करी ॥२०
इत्यादिक वच करि वि उचार, जो नर सामायिकको धार ।
पर्जिकासन गाढो तथा, शक्ति प्रमाण थापि है यथा ॥२१
पूर्वाह्निक मध्याह्निक चाल, अपराह्निक ए तीनों काल ।
मरयादा जेती उच्चरै, तेती वार पाठ सो करै ॥२२
दुहुँ आसनके दोषज जिते, सामायक जुत तजि हैं तिते ।
जो विशेष सुणि वाको चाव, ग्रन्थ श्रावकाचार लखाव ॥२३
हूँ एकाकी अवर न कोई, शुद्ध बुद्ध अविचल मय जोय ।
करमातें वेढयो न उ जाणि, मैं न्यारो तिहूँकाल वषाणि ॥२४
इस संसारै मुझको नाँहि, मैं न किसीको इह जगमाँहि ।
वन्ध्यो अनादि करमते सही, निहवै वन्धन मेरे नहीं ॥२५
राग दोष करि मेलो जदा, तिन दुहुइनतें मिलन न कदा ।
देह वसें तो रहत सरीर, चेतन शक्ति सदा मुझ तीर ॥२६

चिंता आठौं मद आरम्भ, चितवन मदन कषाय रु दंभ।
इनिकौं जिस विरियां परिहार, कर यों सुबुध सामायिक धार ॥२७
सीत वसन वरषा पुनि वात, दंसादिक उपजत उतपात।
जिनवर वचन विषै अतिधीर, सहिहै जिके महा वरवीर ॥२८
पूर्वाचार्यनि के अनुसार, जैसु विचक्षन करई विचार।
तीन मुहूरत दो इक जाण, उत्तम मध्यम जघन्य वखाण ॥२९
जैसी शक्ति होय जिहिं पास, करिए ह्वै भव-भ्रमण विनास।
भव्य जीव इहि विधि जै करै, तिनकी महिमा कविको करै ॥३०

दोहा

इह व्रतपालै जे सुनर, मन वच क्रम धरि ठीक। सुरनर के सुख भुंजकर, शिव पावै तहत्तीक ॥३१
जे कुमती जिन नाम को, लैन करै परमाद। सो दुरगति जैहै सही, लहि है दुख विषवाद ॥३२

अथ सामायिक के अतीचार लिख्यते। छंद चाल

मन वचन क्रम के ए जोग, परमादी होय प्रयोग।
परिणाम दुष्टता भारी, राखे नहीं ठीक लगारी ॥३३
सामायिक पाठ करंत, वतलावै परसौं मंत। वोलै फुनि वारंवार, जानों य दूजो अतीचार ॥३४
सामायिक करत अनादर, मनमैं न उच्छाह धरै पर।
विनु लगन भावहू पोट, किनि सिर पर दीजिय मोट ॥३५
आसण को करै चलाचल, तनकुं जु हलावै पल पल।
फैरै मुख चहुं दिसि भारी, तिजहु अतीचार विचारी ॥३६
सामायिक पाठ करंतों, चितमाहें एम धरंतो।
मैं इह पाठ पट्यो अक नांही, पुनि-पुनि छण वीसरि जांही ॥३७
ए अतीचार पण भाखे, जिन वाणी मैं जिम आखे।
जे भवि सामायिक धारी, प्रथम ही है दोष निवारी ॥३८
तिहुं काल करे सामयिक, सव जीवनि कौं सुखदायक।
सामायिक करता प्रानी, उपचार मुनी-सम जानी ॥३९
सामायिक दृगजुत करि है, उत्कृष्ट देव पद धरि है।
अनुक्रम पावै निरवाण, यामैं कछु फेर न जाण ॥४०
मुनि द्रव्यलिंग को धारी, सामायिक वल अनुसारी।
कहां लौ करियै जु वड़ाई, नवग्रीवां लग सो जाई ॥४१
यातैं भविजन तिहुं काल, धरिये सामायिक चाल।
जातैं फल पावै मोटो, जसि जाय करम अति खोटो ॥४२

अथ द्वितीय शिक्षाव्रत प्रोषधोपवास लिख्यते। चौपाई

सामायिक व्रत कर्यो वखानि, अव प्रोषध व्रत की सुनि वानि।
एक मास में परव जु चार, दुइ आठें दुइ चौदस धार ॥४३
इन में प्रोषध विधि विस्तरै, ते वसु कर्म निर्जरा करै।
वै जिनधर्म विषै अतिलीन, वे श्रावक आचार प्रवीन ॥४४

अब प्रोपध की विधि सुनि लेह, भाष्यो जिन आगम में जेह।
सातें तेरसि के दिन जानि, जिनश्रुत गुरु पूजा को ठानि ॥४५
पूजा विधि करि श्रावक सोई, भोजन वेला मुनि अवलोई।
जिन मन्दिर तें तब निज गेह, एक ठाम अण पानी लेह ॥४६
मध्याह्नक समये को धार, करे प्रतिज्ञा सुविधि विचार।
षोड़स पहर लेह मरयाद, चौविहार छोड़ मरयाद ॥४७
खादि स्वाद लेह अरु पेह, अतीचार ते सबहि तजेय।
टटुपट्टी धोवति विविवत लेह, और वस्त्र तन सों तज देह ॥४८
स्नानादि भूपण परिहरै, अंजन तिलक व्रती नहि करै।
जिन मंदिर उपवन वन ठाहि, अथवा भूमि मसानहि जाहि ॥४९
षोड़स जाम ध्यान जो धरै, धरम कथाजुत तहं अनुसरै।
पंच पाप मन वच क्रम तजै, श्री जिन आज्ञा हिरदे भजै ॥५०
धरम-कथा गुरु मुखतें सुनै, आप कहै निज आतम मुनै।
निद्रा अल्प पाछिली रात, ह्वै नौमी पून्यौ परभात ॥५१
मरयादा पूर्वक गुणधार, जिनमन्दिर आवै निज द्वार।
द्वारापेपण परि चित धार, खड़ो रहै निज घरके बार ॥५२
पात्रदान दे अति हरपाई, एकाभुक्त करै सुखदाई।
पारणदिन पिछली छै-जाम, च्यारु अहार तजै अभिराम ॥५३
इह उत्कृष्ट कह्यो उपवास, करे कर्मगण को अतिनाश।
सुर-सुख लहि अनुक्रम शिव लहै, सत्यवाइक इह जिनवर कहै ॥५४
कहूँ मध्यम उपवास विचार, पट्कर्मोपदेश अनुसार।
प्रथम दिवस एकान्त करेय, घरी दोय दिनतें जल लेय ॥५५
जिनमन्दिर अथवा निज गेह, पोषह द्वादश पहर धरेय।
धर्मध्यान में बारा जाम, गमि है घर के तजि सब काम ॥५६
जाविधि दिवस धारणै जानि, सोही दिन पारणै वखान।
तीन दिवस लों पालै शील, सो सुर के सुख पावे लील ॥५७
जघन्य वास भवि विधि सों करौ, प्रथम दिवस इह संख्या धरौ।
पछिली दिवस घड़ी दो रहै, ता पीछे पाणी नहि गहै ॥५८
निशि को शील व्रत पालिये, प्रात समय पोषो ही धारिये।
आठ पहर ताकी मरयाद, धरम ध्यान जुत तजि परमाद ॥५९
दिवस पारणे निशि जल तजै, वासर तीन शील व्रत भजै।
प्रोपध तो उत्कृष्टहि जानि, मध्यम जघन उपवास वखानि ॥६०
त्रिविधि वासकों जो निरवहै, सो प्राणी सुर के सुख लहै।
अब याको जो है अतीचार, कहूँ जिनागम जे निरधार ॥६१

अथ प्रोषधो स ीचार । छन्द चाल

पोसो धरिहै जिहि भूपरि, देखे नहिं ताहि नजर भरि।
इह अतीचार इक जानी, दूजे को सुनो वखानी ॥६२
जेती पोषह की ठाम, प्रतिलेखै नांहि ताम ।
दूषण लागै है जाको, मुनि अतिचारत्ती जाको ॥६३
पोसो धरणे की वार, मोचै न मल-मूत्र विकार ।
मरजादा विन सौं डारै, संथारो जो विसतारै ॥६४
बैठ उठै तजि ठामे, तीजे दूषण को पामें । पोसो धरता मन माहीं, उच्छवको धारें नाहीं ॥६५
विनु आदरही सो ठानैं, मरज्यादा मन मैं आनै ।
चौथो इह है अतीचार, अव पंचम सुनि निरधार ॥६६
पढि है जो पाठ प्रमाण, ठीक न ताको कछु जाण ।
इह पाठ पढ्यो इक नाहीं, अव पढ़िहो एम कहा हीं ॥६७
ए अतीचार भणि पंच, भाषै जिन आगम मंच ।
पोसो जो भविजन धरिहै, इनको टालों सो करिहै ॥६८
फल लहै यथारथ सोई, यामें कछु फेर न जोई ।
प्रोषध व्रत की यह लीक, माफिक जिन आगम ठीक ॥६९
अरु सकलकीर्ति कृत सार, ग्रन्थहु श्रावक आचार ।
तामाहै भाष्यो ऐसे, सुनिये ज्ञाता विधि जैसे ॥७०
उपवास दिवस तजि वीर, छान्यो सचित्त जो नीर ।
लेते दूषण वहु थाई, उपवास वृथा सो जाई ॥७१
पीवे सो प्रासुक करिकै, दुतियो जु द्रव्य मधि धरिकै ।
वैहू विरथा उपवास, लेनो नहिं भविजन तास ॥७२
अरु सकति हीन जो थाई, जलते तन हू थिरताई ।
तौ अधिक उसन इम वीर, बिन हु कम किये जो नीर ॥७३
अन्नादिक भाजन केरो, दूषण नहि लागै अनेरो ।
ऐसो आवै जे पाणी, ताकी विधि एम बखाणी ॥७४
उपवास आठमों वाँटो, वहि है इम जाणि निराटो ।
इनमें आछी विधि जाणी, करिये सो भविजन प्राणी ॥७५
संशय मन इहै न कीजै, प्रोषध में कवहुँ न लीजै ।
पोषह विन जो उपवासे, तामें ऐसी विधि भासै ॥७६
उत्तम फलको जे चाहै, ते इह विधि नेम निवाहै ।
उपवास दिवस में नीर, संकटहू में तजि वीर ॥७७
अव सुनहु कथन इक नीको, अति सुख करि व्रत धरि जीको ।
एकान्त दिवस की सांझ, धरिहु तिय दरव जल मांझ ॥७८
प्रासुक करि पीवै नीर, तामै, अति दोष गहीर ।
एकासण जव सु कराहि, जल असन लेई एक ठांहि ॥७९

जिन आगम की इह रीत, उपरान्त चलण विपरीत।
जल लेन साक्ष ठहरायो, सवही मनि यों ही भायो ॥८०
तो दूजो दरव मिलाई, लैनो नहिं योग्य कहांही।
ताको दूषण इह जानो, भोजन दूजा जिम छानों ॥८१
भोजन जिहि विरियाँ कीजै, पानी तव उसन धरीजै।
वै प्रासुक पानी लीजै, नहीं शक्ति जानि तजि दीजै ॥८२
कुमति ढुँढ्यादिक पापी, जिन मत ते उलटी थापी।
हांडी को धोवण लेई, चावल धोवै जल लेई ॥८३
तिनको प्रासुक जल भाखै, ले जाय सांझ को राखै।
एक तो जल काचौ जानी, अन्नादिक मिलि तसु आनी ॥८४
तामें घटिका दोय मांही, प्राणी निगोदिया थाही।
ताके अघको नहिं पार, मिथ्यामत भाव विकार ॥८५

उक्तं च गाथा—अन्न जलं किंचि ठिई, पच्चक्खाणं न भुंजए भिक्खू।
घड़ी दोय अंतरीया, णिगोइया हुंति वहु जीवा ॥८६

दोहा

जो पोसह विधि आदरै, ते सुख पावैं वीर। प्रमाद सेवैं ते मुगध, किम लहिहै भवतीर ॥८७

इति प्रोषधोपवास त्रिविध वा सामान्य वर्णन सम्पूर्ण ॥



अथ तृतीय भोगोपभोग शिक्षाव्रत कथन लिख्यते।

चौपाई

व्रत भोगोपभोग जे धरैं, दोय प्रकार आखड़ी करैं।
जिम मरयाद मरण परयन्त, नियम सकति माफिक वरि सन्त ॥८८
अन्न पान आदिक तंवोल, अंजन तिलक कुंकुमा रोल।
अतर अरगका तेल फुलेल, ते सहु वस्तु भोग के खेल ॥८९
एक वार ही आवे काम, वहुरि न दीसै ताकौ नाम।
ते सव भोग वस्तु जानिये, ग्रन्थ कथन लखि इम मानिये ॥९०
वस्त्र सकल पहिरन के जिते, निज घरमैं आभूषण तिते।
रथ वाहन डोली सुख पाल, वृषभकूंभ हय गय सुविसाल ॥९१
वनिता अरु सेज्या को साज, भाजन आदिक वस्तु समाज।
वार वार उपभोगवि जेह, सो उपभोग नहीं संदेह ॥९२
तिन दोन्यूं में शकति प्रमाण, जम वा नियम करै जो जान।
जनम पर्यन्त त्याग यम जानि, वरस मास पखि नियम वखानि ॥९३
दिन की पाँच घड़ी मरयाद, करै सदैव तजै परमाद।
किये प्रमाण महाफल सार, विन संख्या फल नहीं लगार ॥९४

दोहा

सुनहु भोग उपभोग के, अतीचार प्रणतेह । इनहिं टालि व्रत पालि है, वरती श्रावक जेह ॥९५

छन्द चाल

मीलै जु सचित जो आंही, भोगनि की वस्तु जु मांही ।
उपभोग वसन भूषण में, कमलादि गहैं दूषण में ॥९६
एह अतीचार भणि एक, दूजो सुनि धरि सुविवेक ।
भोजन पातरि परि आवे, अरु सचित थकी ढकि ल्यावै ॥९७
अथवा वस्त्रादिक जांनी, धरि ढकि अर आणै प्राणी ।
वह दूजो दोष गणीजैं, तीजो अव भवि सुणि लीजे ॥९८
जे सचित अचित वहु वस्त, भेलैं मिलि जाल समस्त ।
जाको लेकै भोगीजै, इह अतीचार गणि लीजै ॥९९
मरयाद भोग उपभोग, कीनो जो वस्तु नियोग ।
तिहतै जो लेय सिवाय, चौथो यह दूषण थाय ॥१००
कछु कोरो कछुयक सीजै, अथवा आस्या गह लीजै ।
लघु भख लेई अधिकाई, अति दुषकारी असन पचाई ॥१०१
दुहु पक्व अहार सु जानी, पंचम अतीचार बखानी ।
भोगोपभोग व्रत पारी, टालौ इनकौं हितधारी ॥१०२

दोहा

कथन भोग उपभोग कौ, कीयो यथावत सार ।
आगैं अतिथि विभाग कौ, सुनियो भवि निरधार ॥१

इति भोगोपभोग शिक्षव्रत ।

•

अथ चतुर्थ शिक्ष अतिथि संविभाग कथन । चौपाई

प्रथम आहार दान जानिये, दुतीय दान औषध मानिये ।
तीजो शास्त्र दान हैं सही, अभय दान फुनि चौथो कही ॥२
लहै अहार थकी वहु भोग, औषध तैं तनु होय निरोग ।
अभय थकी निरभय पद पाय, शास्त्र दान तैं ज्ञानी थाय ॥३
अब पातर कौ सुनहु विचार, जैसो जिन आगम विस्तार ।
पात्र कुपात्र अपात्र हु जाण, दीजै जिम तिम करहु वखाण ॥४
पात्र प्रकार तीन जानिए, उत्तम मध्यम जघन्य मानिये ।
मुनिवर श्रावक दरशन धार, कहै सुपात्र तीन विधि सार ॥५
तीन तीन तिहुँ भेद प्रमान, सुनहु विवेकी तास वखान ।
उत्तम में उत्तम तीर्थेश, उत्तम में मध्यम है गणेश ॥६

मुनि सामान्य अवर हैं जिते, उत्तम मध्यम जघन्य है तिते।
मध्यम पात्र तीन परकार, तिह मांहि उत्तम मुनि सार ॥७
छुल्लक अहिलक दुहु ब्रह्मचार, अरु दसमी प्रतिमा व्रतधार।
मध्यम मांहि उत्तम जानि, मध्यम मांहि मध्यम कहूँ वखानि ॥८
सात आठ नव प्रतिमाधार, मध्यम में मध्यम पातर सार।
पहिली से पष्ठी पर्यन्त, मध्यम में पात्र जघन्य भणि सन्त ॥९
दरसनधारी जघन्य मझार, उत्तम क्षायिक समकित धार।
क्षयोपशमी मध्यम गनि लेहु, जघन्य उपशमी जानों एहु ॥१०

दोहा

उत्तम पात्र सु तीन विधि, तिनहीं भेद नव जान।
पुनि कुपात्र तिहुं भेद को, वरणन कहों वखान ॥११

छन्द चाल

गुन मूल अठाइस धार, चारित्त तेरह प्ररकार।
मुनिवर पद को प्रतिपाल, तप करे कठिन दरहाल ॥१२
समकित शिव वीज न जाकौ, मिथ्यात उदै है ताको।
ऐसो कुपात्र त्रिक माहीं, उत्कृष्ट कुपात्र कहाहीं ॥१३
व्रत धर श्रावक है जेह, मध्यम कुपात्र भनि तेह।
गुरु देव शास्त्र मनि आनै, आपापर कवहुं न जानै ॥१४
वाहिज कहै मेरे ठीक, अन्तर गति सदा अलीक।
ते जघन्य कुपात्र सु जानों, सरधानी मन में आनो ॥१५

दोहा

कह्यो कुपात्र विशेष इह, जिन वायक परमान।
अव अपात्र के भेद तिहुं, सो सुनि लेहु सुजान ॥१६

छन्द चाल

अन्तर समकित नहिं जाके, वाहिर मुनि क्रिया नहिं ताके।
विपरीत रूप नहिं धारी, जिह्वादिक लंपट भारी ॥१७
उतकृष्ट अपात्र के लच्छन, परखै अति परम विचच्छन।
ऐसे ही मध्यम जानों, समकित विनु व्रत मनि आनो ॥१८
तनु स्वेत वसन के धारी, मानै हम हैं ब्रह्मचारी।
दुजो अपात्र लखि योहीं, सुनि जघन्य अपातर जों ही ॥१९
गृहपति सम वसन धराहीं, मिथ्या मारग चलवाहीं।
नर नारिन कों निज पाय, पाड़ै अति नवन कराय ॥२०
वचन आप चिरंजी भाखैं, मन में निज गुरु पद राखै।
मिथ्यात महाघट व्यापी, ए जघन्य अपात्र जे पापी ॥२१

वाहिज अभ्यन्तर खोटैं, नित पाप उपावैं मोटे।
श्रुत देव विनय नहिं जानैं, नव रसयुत ग्रन्थ वखानैं ॥२२
रुलि है भवसागर माहीं, यामें कछु संशय नाहीं।
इनके वन्दक के जीव, दुरगति मंहि भ्रमहिं सदीव ॥२३

दोहा

पात्र कुपात्र अपात्र के, भेद भने सव पाँच। तिनकी साखा पंच दस, विहन कहे सव सांच ॥२४
अव इनको आहार जू, श्रावक जिहि विधि देय। सो वर्णन संक्षेप तें, भवि चित धरि सुनि लेय ॥२५
दोप छियालिस टालिकैं, श्रावक के घर मांहि। वरतो जनि पैं जो असन, सुखकारी सक नाहिं ॥२६

छन्द चाल

दिनपति की घटिका सात, चढ़िया श्रावक हरषात।
द्वाराप्रेक्षण की वार, फासू जल निज कर धार ॥२७
मुनिवर आयो पड़िगाहै, अति भक्तिवन्त उरमाहै। दातार तने गुण सात, ता माहे हैं विख्यात ॥२८
पुनि नवधा भक्ति करेई, अति पुण्य महा संचेई।
निज जनम सफल करि जानैं, वहुविधि मुनि स्तुति वखानैं ॥२९
मुनिवर वन गमन कराई, पीछे अति ही सुखदायी।
भोजन शाला में जाई, जीमें श्रावक सुचि पाई ॥३०
जो द्वारापेक्षण माहीं, मुनिवर नहिं जोग मिलाई।
तो निज अलाभ करि जानैं, चिन्ता मन में अति आने ॥३१
हिय में ऐसी ठहराय, हम अशुभ उदै अधिकाय।
करिहै श्रावक उपवास, अथवा रसत्याग प्रकास ॥३२

सोरठा।

दान थकी फल होय, जो उत्कृष्ट सुपात्र को। सो सुनियो भवि लोय, अति सुखकारी है सदा ॥३३

सवैया।

तीर्थङ्कर देवन को प्रथम आहार देय, वह दानपति तद्भव मोक्ष जाय है,
पीछे दान देनहार दृग को धरैया सार, श्रावक सुव्रतधार ऐसो नर थाय है॥
जो पै मोक्ष जाय तो तामनैं न कहाय, पहुँ निश्चय हूँ नाहिं देव लोक को सिधाय है।
पाय के अनेक रिद्धि नर सुर को, समृद्ध निकट सुभव्य निर्वाण पद पाय है ॥३४
उत्कृष्ट पात्रनिमें उत्कृष्ट तीर्थङ्कर, तिनि दान को तो फल प्रथम वखानियो।
अव उत्कृष्ट त्रिकमाहि रहै मध्य पुनि, जयनि मुनीस दानफल ऐसो जानियो॥
दानी दृगव्रतधारी तिनही असन दिये, कलप वसे या सुर ह्वै है सही मानियो।
अवर विशेष कछु कहनो जरूर इह, तेऊ सुनो भव्य सुखदाई मनि आनियो ॥३५
प्रथम मिथ्यात भावमध्य वन्ध मानव के, परयो पीछैं दृगपाय व्रत धारी लयो है।
पुनि मुनिराजनिको त्रिविधि सुविधिजत, दोष अन्तराय टालि असन सुदीयो है॥
ताहि वंध सेती उत्कृष्ट भोग भूमि जाय, जुगल्या मनुज थाय पुण्य उदै कीयो है।
तहां आयु पूरी कर देवपद पाय अहो, मुनिन को दान देति ताको वनि जोयो है ॥३६

सुख उत्कृष्ट भोग भूमि के कछुक ओजों, कहूं तीन पल्ल तहाँ आयु परमानिये।
कोमल सरल चित्त पाइये कलप निति, दस परकार नानाविधि भोग विधि दानिये॥
जुगल जनम थाय, मातापिता खिर जाय, छींक औ जमाहीं पाय ऐसी विधि मानिये।
निज अंगूठा को सुधारस पान करि, दिन इकीस मांझ तनु पूरनता ठानिये॥३७

दोहा

तीन दिवस वीते पेछै, लघु वदरी परिमाण। लेय अहार सुखी महा, अरु निहार नहिं जाण॥३७
उत्तम पात्र आहार को, दाता फल अति सार। पावै अचरज कछु नहीं, अव सुनियो निरधार॥३८
कृत कारित अनुमोदन, तीनहुं सम सुखदैन। कही भली ताकी कथा, कहौं यथा जिन वैन॥३९

छप्पय छन्द

वज्रजंघ श्रीमती सर्प, सरवर कै ऊपरि। चारण जुगल सुमुनिहि, भक्त जुत दियो असनि परि,
तहाँ सिंह अरु शूर, नकुल वानर चहुँ जीवहि। करि अनुमोदन वंध लियो, सुख युगल अतीवहि॥
सुरहोई भुगत्ति नर सुर सुखहं पत्र वृपभ तीर्थेश के।
हुई वरि उग्र तप को भए सिवतिय पति नव वेस के॥४०
वज्रजंघ नृप आप अवर, श्रीमती त्रिया भनि,
भोग भूमि ह्वै जुगल, भुगति सुर सुखहि विविध नी।
पुनि दिववासी देव नरपति. रिधि भुगति सुखदायक,
दशमैं भव नृप जीव. तीर्थंकर वृपभ सुखदायक॥
श्रीमतीय जीव श्रेयांसहु, ऋपभनाथ को दान दिय।
दुहू पात्र दान पतित पवि मल करि, होय सिद्ध सुख अमित लिय॥४१

दोहा

कृत कारित अनुमोदि की, कही सुनी हित वारि।
अति विशेष इच्छा सुनन, महापुराण मझारि॥४२
इहाँ प्रसन कोऊ करै, मिथ्या दृष्टी लोय। वाहिज श्रावक पद क्रिया, कही यथावत होय॥४३
भाव लिंग मुनि तास घरि, जुगत आहारक नाहि।
सो मुझकूं समझाय कहु, जिम संशय मिटि जाहि॥४४
अथवा श्रावक दृग सहित, किरिया पात्रे सार। द्रव्य लिंग मुनिराज कों, देय कै नहीं आहार॥४५

छन्द चाल

ताकै मेटन सन्देह, अव सुनिये कथन सु एह। जैसे सुनियो जिन वानी, तैसे मैं कहूँ वखानी॥४६
श्रावक की किरिया सार, मिथ्यात न छाडी लार।
चरिया दिरियां मुनि राई, आई जो लेइ घटाई॥४७
मुनि ज्ञानवान जो थोय, निरदोप आहार गहोय।
द्रव्य श्रावक को जानि, ताको नहि दूपन मानि॥४८
मुनि असन नियम नहिं एह, दृग व्रत धारिहि कै लेह।
किरिया सुध जाकौं होई, तहाँ लेई आहार संक खोई॥४९
दरसन जुत श्रावक होई, द्रव्य मुनि आवै कोई।
जानै विनु देय अहार, ताकौं नहीं दोप लगार॥५०

श्रावक जाने जो तेह, मिथ्यादृष्टी मुनि एह।
जाकों मूल न पडिगाही, समकित गुण तामैं नाहीं ॥५१
निज दरशन को भवि प्राणी, दूषण् न लगावै जाणी।
जिनके नित्त इह व्यापार, चालै निज बुद्धि विचार ॥५२
कोऊ बूझै फिर ऐसें, विनु ज्ञान सरावग कैसें।
मुनि केम परीक्षा जानी, यम हिरदै यान समानी ॥५३
ऊत्तर सुनि अब अति ठीक, यामैं कछु नांहि अलीक।
प्रथमहि श्रावक गुण पालै, पातर लखि ले ततकालै ॥५४
अथवा ज्ञानी मुनि पास, सुनि है तिनको परकास।
श्रावक श्रावक निज मांही, लखि पात्र कुपात्र बताहीं ॥५५

छप्पय

अणागार उत्कृष्ट पात्र की जो विधि सारी। कही यथारथ ताहि धार चित्त मैं अति प्यारी ॥
सुन भवि अवधारि करहु अनुमोदन जाको। निश्चय तसु श्रद्धान किये सुरपद है ताको ॥
अब मध्य जघन्य दुहु पात्र को, कहो दान अरु फल यथा।
जिन आगम मध्य कह्यो, तिसो सुनो भवि इह कथा ॥५६

चौपाई

मध्यम पात्र सरावग जान, व्योरो पूरव कह्यो वखान।
इनमें भेद कहे हैं तीन, उत्तम मध्यम जघन्य प्रवीन ॥५७
श्रावक मध्यम पात्र मझार, भेद एकादश सुनहु विचार।
जाहि यथा विधि जोग अहार, त्यों श्रावक देहैं सुखकार ॥५८
इनको दान तणो फल जान, मध्यम भोग भूमि सुख खान।
जनमत मात पिता मरि जाँय, जुगल्या छींक जंभाही पाय ॥५९
तनु निज अमृत अंगुठा थकी, तीस पाँच दिन पूरण वकी।
उचित कोस दु दुदिन जाय, करै आहार निहार न थाय ॥६०
कल्पवृक्ष दशविधि के जास, नाना विधि दे भोग विलास।
दुयपल आयु भुंजि सुर होय, मध्य पात्र फल जानो लोय ॥६१
अरु इह कथन महा सुख कार, ग्यारा प्रतिमा में निरधार।
आगे कहिये प्रथम सुजान, पुनरुक्त को दोष बखान ॥६२

दोहा

मध्य पात्र आहार फल, कह्यो यथावत् सार।
अब जघन्य की पात्र विधि सुनहु दान फल कार ॥६३
क्षायिक क्षय-उपशम तृतिय, उपशम तीन प्रकार।
इनही गृही आहार दे, यथा योग्य सुखकार ॥६४

चौपाई

जघन्य पात्र के दाता जान, जघन्य युगलिया होत प्रमाण।
छींक जंभाई ते पितु माय, मरै आप पूरण तनु पाय ॥६५

दिन गुण चासे कोस प्रमाण, आयु पल्य इक भुगते जाण ।
एक दिवस वीतैं आहार, लेई वहेड़ा सम न निहार ।।६६
कल्पवृक्ष दश विधि सुखकार, नाना विधि दे भोग अपार ।
पूरण आयु करिवि सुर थाय, नाना सुख भुगतैं अविकाय ।।६७

दोहा

जघन्य सुपात्र आहार फल, कह्यो जेम जिन वानि ।
अवैं कुपात्र आहार फल, सुन लो भवि निज कान ।।६८

चौपाई

द्रव्य मुनि श्रावक हू एह, विनु समकित किरिया हूँ तजेह ।
वाहर समकित कीसी रीत, दरशन विनु सरधा विपरीत ।।६९
इन तीनहुं कुपात्र को दान, देहि तास फल सुनहु सुजान ।
जाय कुभोग भूमि के माँहि, उपजैं मनुष्य हीन अधिकाँहि ।।७०
अवर सकल मानव की देह, मुख तिरयंच समान है जेह ।
हाथी घोड़ा, वैंल वराह, कपि गर्दभ कूकर मृग आह ।।७१
लंव करण अरु इक टंगीया, उपजैं युगल वरावर भिया ।
एक पल्य आयुर्वल पूर, माटी मीठा तृण अंकूर ।।७२
तिनहि खाहि निज उदर भरेय, अहै नगन ही मन्दिर केह ।
मरि विन्तर भावन जोतिसी, हो भुगतैं सुख सुरावधि जिसी ।।७३

दोहा

अव अपात्र के दान ते, जैसो फल लहवाय । तैसो कछु वरनन करूँ, सुनहु चतुर मन लाय ।।७४
जो अपात्र को चिह्न हैं, पूरव कह्यो वनाय । दोप लगै पुनरुक्त को, यातें अव न कहाय ।।७५

सोरठा

जो अपात्र को दान, मूढ़ भक्ति कर देय हैं । सो अतीव अघ थान, भव भ्रमि हैं संसार में ।।७६

छन्द चाल

जैसे ऊखर में नाज, वाहै विन उपज न काज ।
मिहनत सव जावै यों ही, कण नाज न उपजैं क्योंही ।।७७
तिम भूमि अपातर खोटी, पावे विपदादिक मोटी ।
दुरगति दुख कारण जाणी, तिन दान न कवहुं ठानी ।।७८
धेनु ने तृण चरवावैं, तामें तो दूधहि पावै ।
अति मिष्ठ पुष्ठ कर भारी, वहुते जिय को सुखकारी ।।७९
तिम पात्रहि दान जो दीजे, ताको फल मोटो लीजे ।
सुरगति में संशय नाहीं, अनुक्रम शिवथान तहांहीं ।।८०
सरपहि जो दूध पियादे, तापे तो विष को खावै ।
सो हरे प्राण तत्काल, परगट जानो इह चाल ।।८१

जिम दान अपात्रहिं देई, वह भवते नरक लहेहि ।
फिरि भव में पंच प्रकार, प्रावर्त्तन करे अपार ॥८२
लखि एक जाति गुण न्यारे, तांवो दुय भांति करारे ।
इकतो गोलो वनवावै, दूजे पातर घडवावै ॥८३
गोलो डालै जल मांही, ततकाल रसातल जाही ।
पातर जलतर है पारे, औरन को पार उतारे ॥८४
तिम भोजन तो इकसाहीं, निपजै गृहस्थ घर माहीं ।
दीजे अपात्र को जेह, ताते नरकादि पडेह ॥८५
वह उत्तम पात्रहिं दीजे, सरधा रुचि भक्ति करीजे ।
इह भवते ह्वै दिववासी अनुक्रम तें शिवगति पासी ॥८६
इक वाय नीर चलवाई, नींम रु सांठा सिंचवाई ।
सो नींम कटुकता थाई, सांठा रस मधुर गहाई ॥८७
तिम दान अपात्र जो केरो, दुखदाई नरक वसेरो ।
भोजन उत्तम पातरको, दीपक सुर शिवगति घर को ॥८८
इह पात्र अपात्रहि दान- भाष्यो दुहवांन को मान ।
सुखदायक ताहि गहीजे, वुध जन अव ढील न कीजे ॥८९
दुख दायक जाण अपार, तत खिण तजिये निरधार ।
फल पात्र अपात्तर ठीक, इनमें कछु नांहि अलीक ॥९०
जो धन घर में वहु तेरो, खरचन को मन है तेरो ।
तो अंध कूप के मांही, नाखै नहिं दोष लहाहीं ॥९१
दीयो अपात्र को सोई, भव भव दुखदायक होई ।
सरपहि पकड़ै नर कोई, कांटे ताको अहि वोई ॥९२
इक वार तजै वहि प्राण, वाको दुख फेर न जाण ।
अरु भक्ति अपातर केरी, तातें फिर है भव फेरी ॥९३
यातें अहि गहिवो नीको, खोटे गुरुतें दुख जीको ।
तातें खोटे परहरिये, नित सुगुरु भक्ति उर धरिये ॥९४

अडिल्ल छन्द

जो पात्तर के तांई दान दे मानते, अरु अपात्र को कबहुं न दे निज जानते ।
पात्र दान फल सुरग क्रमाहि शिवपद लहै, भोजन दिये अपात्र नरक दुख अति सहै ॥९५
दया जान मन आन दुखित जन देखिकै, रोग ग्रसित तन जानि सकति न विशेषकै ।
मन में करुणा भाव विशेष अनाइकै, यथा योग जिह चाहे सुदेह वनाकै ॥९६

फल वर्णन । चौपाई

लहै सम्पदा भूपति तणी । नाना भोग कहां लों भणी ।
उत्तम जाति लहै कुल सार, इह फल पातर दान अहार ॥९७
अति नीरोग होय तन जास, हरै और को व्याधि प्रकास ।
अति सरूपता औषध जान, दियो पात्रको तस फल जान ॥९८

दीरघ आयु लहै सो सदा, जगत मान तिहकी शुभ मदा।
सुर नर सुख की कितियक वात, अभय थकी तद्भव शिव पात ॥९९
शास्त्रदान देवातें सही, भवि अनक्रमते केवल लही।
समवशरण विभवो अविकार, पावै तीर्थंकर पद सार ॥३००
दया दान ते कीरत्ति लहैं, सगरे भले भले यों कहैं।
निज भावां माफिक गति थाय, दान दियो अहलो नहिं जाय ॥१

दोहा

पात्र कुपात्र अपात्र को, पूरो भयो विशेष। अवै अन्य मत दान दस, कहो कथन अवशेष ॥२

सवैया

गऊ हेम गज गेह वाजि भूमि तिल जेह, क्रिया दासी रथ इह दस दान थाय है।
इनको कथन करै याहि सठ जानि लेह, दान को दिवाय नरकादिक लहाय है।
हिंसादिक कारण अनेक पापरूप जाणि, अवर लिवैया दुरगति को सिवाय है।
अति ही कलंक निंद्यवाम पुण्य को न लेस, मतिमान लेन देन दुह को तजाय है ॥३

दोहा

दसौं दान अनमति तणा, जैनी जन जो देह। अघ हिंसादि वढ़ायकै, कुगति तणा फल लेह ॥४

इति चतुर्थ शिक्षाव्रत अतिथि संविभाग कथन सम्पूर्ण।

अथ आहार दान के दोष का व्योरा। छन्द चाल

निपज्यो गृहमध्य आहार, तिह लेय सचित परिहार।
अथवा सचित मिल जाई, इह अतीचार कहवाई ॥५
प्राशुक धरियो जो दर्व, ढांके सचित्तसों सर्व।
दूजो गनिये अतीचार, याहू कूं वुधजन टार ॥६
आपण नहिं देय अहार, औरन को कहै एम विचार।
ये हैं आहार दो भाई, तीजो दूषण इह थाई ॥७
मुनिको कोई देई आहार, चित में ईर्षा इह धार।
हम ऊपर त्वै क्यों देई, चौथो इह दोष गनेई ॥८
द्वारापेपण के कालै, गृह काज करत तहां हालै।
लंघि गए गेह में आवे, पंचम अतीचार कहावे ॥९

दोहा

इह अतिथि-संविभाग के, अतीचार भनि पांच। इनहि टाल भविजन सदा, जिनवच भाषे सांच ॥१०
व्रत द्वादश पूरण भये, पांच अणुव्रत सार। तीन गुणव्रत सार पुनि, शिक्षाव्रत निराधार ॥११
जैंसी मति अवकाश मुझ, कियो ग्रन्थ अनुसार।
किसनसिंह कहि अव सुनो कथन विधि परकार ॥१२

इति अतिथि संविभाग सम्पूर्ण।

अथ सतरा नेमोंका व्योरा। दोहा

जे श्रावक आचार जुत, नित प्रतिपालै नेम। मरयादा दस सात तसु, मन वच क्रम धर प्रेम ॥१३

श्लोक

भोजने षट्रसे पाने कुंकुमादि विलेपने, पुष्पताम्बूलगीतेषु नृत्यादौ ब्रह्मचर्यके ॥१४
स्नानभूषणवस्त्रादौ वाहने शयनासने, सचित्तवस्तुसंख्यादौ प्रमाणं भज प्रत्यहम् ॥१५

चौपाई

भोजन की मरयादा गहै, राखै जेती वारहिं लहै।
पर के घर को जीमण जोई, प्रात समय में राख्यो होई ॥१६
अन्न अवर मीठादिक वस्तु भोजन माहे जान समस्त।
असन चवीनी अर पकवान, गिनती माफिक खाय सुजान ॥१७
षट्रस में जो राखै तजै, तिहि अनुसार सुनिति प्रति सजै।
पानी सर वत दूध रु मही, दरव जिते पीने के सही ॥१८
ता मधि वुव राखे जे दर्व, ता विनु सकल त्यागिये भव्य।
चोवा चन्दन कुंकुम तेल, मुख धोवो रु अरगजा मेल ॥१९
औषध आदि लेप है जेह, संख्या राख भोगिए तेह।
पुष्प गंध सूंघियै तेह, जाप समैं जे राखे जेह ॥२०
कर मुकती जो फल हेतनी, सचित्त मध्य तेऊ राखनी।
सचित्त मांहि राखी नहिं जाय, जिह दिन मूल न करहिं गहाय ॥२१
पान सुपारी डोडा गही, लौंगादिक मुख सोध जु कही।
दाल चीनी जावंत्री जान, जाती फल तंबोल वखान ॥२२
पान आदि सचित्त जु थाय, सचित्त मांहि राखे तो खाय।
सचित्त माहि राखत वीसरै, तो वह दिन खानी नहि परै ॥२३
गीत नाद कोतूहल जहां, जैवो राख्यौ जैहै तहां।
मरयादा न उलंघै कदा, जो उपसर्ग आय ह्वै जदा ॥२४
एक भेद यामे है और, आप आपनी वैठे ठोर।
गावत गीत तिया नीकलीं, सुनकर हरष्यौ चित्त धर रली ॥२५
तामें दोष लगै अधिकाय, मध्यस्थ भाव रहै तिहिं ठाय।
पातर नृत्य अखारे मांहि, नटवा नट जिहि नृत्य करांहि ॥२६
वादीगर विद्या जे वीर, मुकति राखै जावै धीर।
परवनिता को तो परिहार, निज नियमे जिम कर निरधार ॥२७
पाँचो परवी में तो सोह, अवर दिवस जैसी चित गोह।
तजै सरवथा तो परहरै, राखै अंगीकार सु करै ॥२८
सेवत विषय जीव की घात, उपजै पाप महा उतपात।
जिह जागै राखै मरयाद, सो निर वाहै तजि परमाद ॥२९
स्नान करण राखै तो करै, सोह थकी कवहूं नहिं टरै।
आभूषण पहिरे है जिते, घर में और धरे हौं तिते ॥३०
पहरन की इच्छा जो होई, सो पहरै सिवाय नहिं कोई।
भूषण अन्य तने की रीत, राखै मांग पहर कर प्रीति ॥३१

कपडे अगले पहरे होई, वे ही मुखते राखे सोई।
अथवा नये ऊजरे होई, राखे सो पहरे मन दोई ॥३२
सुसुरादिक मित्रन के दिये, नृप आदिक जे वकसीस किये।
मुकते राखे ह्वै सो गहै, निज मरयादा को निर वहै ॥३३
पहरण पांवतणी पाहणो, तेलमस्तुनि माहे गणी।
नई पुराणो निज परतणो, राखै सो पहरै इम भणी ॥३४
इत्यादिक वाहन जे होई, जो असवारी मुकती जोई।
काम परै चढ़ि है तिह परी, और न काम नेम जो धरी ॥३५
सोवे को पलंग जो जान, सोड तुलाई तकियो मान।
जेतो सयन करन को साज, व्रत धर संख्या धर सिरताज ॥३६
खाट पराई इक दुय चार, काम पड़े वैठे सुविचार।
विनु राखै वैठे सो मही, यह जिन आगम सांचो कही ॥३७
गादी गाऊ तकियो जाण, चौको चौकी माटी आण।
सिंहासन आदिक हैं जिते, आसन मांहि कहावें तिते ॥३८
गिलम दुलीचा सतरंजणी, जाजम सादी रुई तणी।
इनहि आदि विछोणा होय, आसन में गिन लीजे सोय ॥३९
निज घर के अघवारे ठाम, मुकते राखे जे जे धाम।
तिनपर वैठे वाकी त्याग, जाको व्रत ऊपर अनुराग ॥४०
सचित्त वस्तु की संख्या जान, धान वीज फल फूल वखान।
पाणी पात्र आदि लख जेह, मिरच सोपारी डोंढ़ा एह ॥४१
सारे फल सगरे हैं जिते, सचित्त मांहि भाखे हैं तिते।
मरजादा मुकती जे मांहि, वाको सवको भेंटै नांहि ॥४२
संख्या वस्तु तणी जे धरे, सकल दरव को गिणती करै।
खिचड़ी लाडू खाठो खीर, औषध रस चूरण गिन धीर ॥४३
वहुत दरव मिल जो निपजेह, गिणती माहि एक गणि लेह।
राखे दरव जिते उनमान, सांझ लग गिणि ले वुधिमान ॥४४
सांझ करै सामायिक जवै, सतरह नेम संभारै तवै।
अतीचार लागै जो कोय, शक्ति प्रमाण दंड ले सोय ॥४५
वहुरि आखड़ी जे निशि जोग, धार निवाह करै भवि लोग।
इह विधि नित्य नियम मरयाद, पालै धरि भवि चित्त अहलाद ॥४६
महा पुण्यको कारण सही, इह भवते शुभ सुरगति लही।
अनुक्रम तें ह्वै है निरवाण, वुध जन-मन संशय नहि आण ॥४७

दोहा

नित्य नेम सत्रह तणो, कथन कियो सुखदाय।
अन्तराय श्रावक तणा, अव भवि सुनि मन लाय ॥४८

इति सत्रह नेम सम्पूर्ण।

अथ सात अन्तरायका कथन । चौपाई

जिनमत अन्तराय जे सात, श्रावकका भाषा विख्यात ।
रुधिर देखिवो नाम सुनेइ, तब बुध जन आहार तजेइ ॥४९
मांस नजर देख सुन नाम, भोजन तजै विवेकी राम ।
नैंनन देखे आलो चर्म, असन तजे उपजै वहु धर्म ॥५०
हाड राध अरु मूवो जीव, नजर निहार श्रवण सुन लीव ।
ततक्षिण अन्न छांडि सो देइ, अन्तराय पालक जन जेइ ॥५१

दोहा

सोह करे जिह वस्तुकों, प्रथमहि सों फिर कोइ । सो ले थालींमें धरे, अन्तराय जो होय ॥५२
श्लोक एकमें सात ए, कह्यो सवनको भेव । तिह सिवाय भासे अवर, सो व्योरो सुनि लेव ॥५३
चंडालादिक नर जिते, हीन करम करम करतार ।
तिनहि लखित वचनहि सुनत, अन्तराय निरधार ॥५४
मल देखत पुनि नाम सुनि, असन तुरत तजि देह ।
सो व्रतधारी श्रावक सही, अन्य दुष्टता गेह ॥५५
जिन प्रतिमा अरु गुरुनकों, कष्ट उपद्रव थाय ।
सुनि श्रावक जन असन तज, उपवासादि कराय ॥५६
पुस्तकादि जल अगनिको, उपसर्ग हूवो जान ।
भोजन तज पुनि करयि भवि, उपवासादि वखान ॥५७
नित प्रति श्रावक कों कहै, अन्तराय तहकीक ।
पालें वे शुभ गति लहैं, यह जिन मारग ठीक ॥५८
इति अन्तराय समाप्त ।

अथ सात प्रकार मौन । दोहा

मौंन जिनागम में कहो, सात प्रकार वखान ।
तिनको वरनन भविक जन, सुन मन वच क्रम ठान ॥५९

चौपाई

प्रथम मौन जल स्नान करन्त, दूजी पूजा श्री अरहन्त ।
भोजन करता वोले नहीं, चौथी सतवन पढ़ते कहीं ॥६०
सेवत काम मौन को गहै, यही वचन जिन आगम कहैं ।
मल मूत्रहि क्षेपै जिहि वार, ए लखि सात मौन निरधार ॥६१

अडिल्ल छन्द

द्वादशांग मय अंक सकल जानो सदा, असन स्थान मल मूत्र अवर तिय संग सदा ।
वरण उचार करण न भाष्यो जैन मैं, यातें गहियै मौन सप्त विरियां समैं ॥६२

चौपाई

मौन वरतके धारक जीव, चेष्टा इतनी न करि सदीव ।
भौंह चढ़ाइ नेत्र टिमकारि, करै जु सैन्या काम विचारि ॥६३

सीस हिलाय करै हुंकार, खांसै खखारे अविकार।
कर अंगुलते सैंन वताय, अथवा अंकोंमें लिखवाय ॥६४
इतनी किरिया करि है सोय, मौन वरतु तसु मेलो होय।
अर जो सैन समस्या करी, मतलव सम जैनहिं तिहि वरी ॥६५
मन मैं अकुलाय रहै क्रोध, क्रोध थकी नासै शुभ वोध।
यातें जे भवि जन मतिमान, मौन धरी आगम परवान ॥६६
अरु तिह समय करै सुभाव, ताते कहै पुण्य वढ़ाव।
पुण्य थकी लहि है सुरथान, यामैं कछु संसै नहीं आन ॥६७
अन्तराय सम्पूर्ण।

अथ संन्यास मरण की विधि। सवैया

दृगधारी श्रावक व्रत पालै पीछे ही, संन्यास सहित अन्तकाल तजै निज प्राण ही।
संन्यास प्रकार दोइ ए कहै कषाय नाम, दुतिय आहार त्याग प्रगट वखान ही॥
आराधना च्यारि, भावै दरसन प्रथम दूजी, ज्ञान तीजी चरण विशेष तप जान ही।
जैसी विधि कषाय संन्यासको विचार जैसे, कहूँ भव्य सुनि मनमांहि ठीक आनही ॥६८

दोहा

सकल स्वजन पर जननितें, मन वच काय विशुद्ध।
शल्य त्यागि किय है क्षमा, करि परिणाम विशुद्ध ॥६९
अति नजीक निज मरन लखि, अनुक्रम तजिय अहार।
पाछैं अनसन लेय कै, नियम असन वहुकार ॥७०
चार आराधन कौं तवै, आराधै भवि सार। दर्शन ज्ञान चारित्र पुनि, तप द्वादश विधि सार ॥७१
देव शास्त्र गुरु ठीकता, तत्त्वारथ सरधान।
निःशंकादि गुण जो सहित, लखि दर्शन मति मान ॥७२

सवैया। ३१

धरम में संका नांहि निसंकित नाम ताहि वांछातैं रहित निकांक्षित गुण जानियै।
ग्लान त्याग निरविचिकित्स देव गुरु श्रुत मूढता तजै यासौं अमोढ्यवान मानिये॥
परदोष ढांकै उपगूहन धरैया सोई भ्रष्टकों स्थापै स्थिति करण वखानियै।
मुनि गृही धर्म को जु कष्ट टारै वात्सल्य है मारग प्रभावना प्रभावत प्रमानियै ॥७३
संन्यास मरण संपूर्ण।

अथ अष्ट प्रकार ज्ञान को आराधना। दोहा

आठ प्रकार सुज्ञान को, आरावैं मति मान। तस वरणन संक्षेपते, कहै ग्रन्थ परमान ॥७४
प्रगट वरण लघु दीर्घ जुत, करि विशुद्ध उपचार। पाठ करे सिद्धान्त को, व्यंजन ऊर्जित सार ॥७५
आगम अरथ सुजाणि कैं, सुद्ध उचार करेहि। अरथ समस्त संदेह विनु, जो सिद्धान्त पढ़ेहि ॥७६
अर्थ समग्र सुनाम तसु, जानि लेहु निरधार। शब्दार्थोभय पूरण को, आगे सुनहु विचार ॥७७
व्याकरणादि अरथकों, लखिवि नाम अभिधान। अंग पूर्व श्रुत सकल को, करे पाठ जे जान ॥७८

पूर्वाह्निक मध्याह्न पुनि, अपराह्निक तिहुं काल।
विनु आगम पढ़िये नहीं, कालाध्ययन विसाल ॥७९
सरस गरिष्ठ अहार को, तज करि आगम पाठ। गुण उपथान समृद्धि इह, महा पुण्य को पाठ ॥८०
प्रथम पूज्य श्रुत भक्ति युत, पढ़ि है आगम सार।
सुखकर जानो नाम तसु, प्रगट विनय आचार ॥८१
गुरु पाठक श्रुत भक्ति युत, पठत विना संदेह। गुर्वोच्चित पल्लव प्रगट, सत्यनाम सुसंदेह ॥८२
पूजा आसन मान वहु, चित धरि भक्ति प्रसिद्ध।
श्रुत अभ्यास सुकीजिये, सो वहु मान समृद्ध ॥८३
इति अष्ट प्रकार ज्ञान को आराधन संपूर्ण।

अथ पंच महाव्रत तीन गुप्त पाँच सुमिति ये तेरह विध चारित्र का वर्णन। अडिल्ल

वरत अहिंसा अनृत अचौर्य तीसरो, ब्रह्मचर्य व्रत पंचम आकिंचन खरो।
मन वच तन तिहुं गुपति पंच सुमिति जु सही, ए साधन आराधन तेरा विधि कही॥८४
अनसन आमोदर्य वस्तु संख्या गनी, रस परित्यागी एं विविक्त शय्यासन भनी।
काय क्लेश मिलि छह तप वाहिज के भये, षट् प्रकार अभ्यन्तर आगम वरणये ॥८५
प्रायश्चित्त अरु विनय वैयावृत जानिये, स्वाध्याय रु व्युत्सर्ग ध्यान परमाणिये।
मिलि वाहिज अभ्यन्तर वारा विधि लिखी, तप आराधन एह जिनागम में अखी ॥८६

दोहा

दरसन ज्ञान चारित्र तप, आराधन व्यवहार। अंति समय भावे व्रती, सुर-सुख शिव-दातार ॥८७
इति तप १२ चारित्र १३ संपूर्ण ॥ व्यवहार आराधना संपूर्ण ॥

निश्चय आराधना लिख्यते। दोहा

अब निश्चय आराधना, वरणौ चार प्रकार। आराधक शिव पद लहै, यामें फेर न सार ॥८८

सवैया ॥ ३१

आतम के ज्ञान करि अष्ट महागुण धर, दरशन ज्ञान सुख वीरज अनन्त है।
निश्चय नयेन आठ करमनि सो विमुक्त ऐसी आत्मा को जानि कहिये महंत है ॥
ताहि सुधी चेन उपरि श्रद्धा रुचि परतीत चित अचल करत जे वे सन्त हैं।
निश्चय आराधना कही है दरशन याहि भावै अन्त समय सुकेवल लहंत है ॥८९
निज भेद ज्ञान कारि शुद्धातम तत्त्वनिकों चेतन अचेतन स्वकीय परमाणी है।
सप्त तत्त्व नव पदारथ षट् द्रव्य पंचासति काय उतर प्रकृति मूल जानी है ॥
इनको विचार वारवार चित अवधार ज्ञानवान सुध चेतना को उरि आनि है।
संन्यास समये अन्तकाल ऐसे भाई ऐतो निश्चय आराधना सुबोध यों बखान है ॥९०
पुनः प्रथमहि अठाईस मूलगुण वार पंच प्रकार निरग्रन्थ गुण हिय धारिये।
सताईस पंच इन्द्रिन के विषयोंको त्याग वाहिज अभ्यन्तर परिग्रहको टारिये ॥
संकल्प विकल्प मनते सकल तजि आतमीक ध्यानते शुद्धात्मा यों धारिये।
पर करमादि सेती जुदो यासो कर्म जुदो निश्चय चारित्र यों आराधना विचारिये ९१

अडिल्ल

जो कोऊ नर मन में इच्छा धरतु है, फिरि परिणाम संकोच निरोधहि करतु है।
सो आराधन निश्चय नय परमानिये, तप इच्छादि निरोध यही मन आनियो ॥९२

दोहा

निश्चय चहुं आराधना, ग्रन्थ प्रमाण वखान। किसनसिंह धरिहैं सूधी, सो शिव लहैं निदान ॥९३
ए चहुं विधि आराधना, धरै कौन प्रस्ताव।
सो भविजन सुन लीजिए, मन वच वुध करि भाव ॥९४

अहिल्ल छन्द

जो कोऊ उपसर्ग मरण सम आया है, कै दुरभिक्ष पड़े कछु कारण पाय हैं।
जरा अधिक वल जर-जर सक्ति न सहै तवै, कै तनु रोष अपार मृत्यु सम दुख जवै ॥९५
इतने जोग मिलाय उपाय न कछु वहै, मरण निकट निज जानि विचारै मन तहै।
ध्याय आराधन धर्म निमित्त तिनकों तजै, सो नर परम सुजान स्वर्ग शिव सुख भजै ॥९६

आराधना के अतीचार। छंद चाल

संलेषण की जो वारे, जीवन की आसा धारे।
लोगनि कै मुख अधिकाई, निज महिमा लखि हरषाई ॥९७
निजकों लखि दुख अर लोक, करिहै न प्रतिष्ठा थोक।
महिमा कछु सुनय न कांनि, मरसी जव ही मन आंनि ॥९८
मित्रनि सों करि अति नेह, पूरव क्रीडा की जेह।
करि यादि मित्र जुत रागै, अतिचार तृतीय सु लागै ॥९९
भुगत्या सुख इह भवमाहीं, निज मन ही याद कराही।
चौथो अतीचार सुजानी, पंचम सुनिये भवि प्रानी ॥७००
संलेषण धारि जान, मन में इम करिय निदान।
हूं इंद्र तणो पद पाऊँ, मस्तक किनहीं न नवाऊँ ॥१
चक्रवर्ती संपदा जेती, त्रिय सुत जुत ह्वै मुझ तेती।
ऐसो जो करिय निदान, तप सुरतरु देहीं दान ॥२
संलेषण पण अतिचार, भाष्यां इनको निरधार।
ए टालि संलेषण कीजै, ताकौ फल सुर शिव लीजै ॥३

सवैया। ३१

अनसन तप नाम उपवास कीजै जाको आमोदर्य तप लघु भोजन लहीजिए।
वस्तु परिसंख्या जे ते द्रव्यनि की संख्या कीजे रस पारत्याग तेरस छांडि दीजिए॥
विविक्त शय्यासन व्रत धारि भवि मुनि काय क्लेश उग्रतप मन कों गहीजिए।
एई षट्तप कहे वाहिज के आगम में सुर शिव सुख दाई भवि वेग कीजिए ॥४
प्रायश्चित्त वहै दोष गुरु परवमाय तव विनय तप गुण वृद्धि को जोवनो कीजिए।
वैयावृत्त तप गुण धारी वैय्यावृत्त कीजै स्वाध्याय जिनागम त्रिकाल में पढ़ीजिये।

व्युत्सर्ग खडा होय ध्यान धरिवे को नाम ध्यान निज आतमीक गुण निरखीजिये।
वाहिज अभ्यन्तर के तप भेद जानि पालि अनुक्रमनि यातैं गुणथानक चढ़ीजिये ॥५

दोहा

द्वादश तप वरनन कियो, जिनवर भाष्यो जेम। कछु विशेष सम भावको, कहूं यथा मति तेम ॥६

इति द्वादश तपः।

•

अथ भाव कथन। सवैया

अनंतानुवंधी क्रोध पाषाण की रेखा सम, मान थंभ पाहन समान दुख दाय है।
बंस विडावत माया, लोभ-लाख रंग जांनि, इनके उदैतैं जीव नरक लहाय है।
जव लग अनंतानुवंधी चौकड़ीकों धरै जनम पर्यंत जाको संग न तजाय है।
याके जोर सेती जीव दर्शन सुधताकौ लहै नांही ऐसें जिनराज जी बताय है ॥७
क्रोध जो अप्रत्याख्यान हल रेखावत जानि मान अस्थिथंभ मांनि दुष्टता गहाय है,
माया अजा शृंग जानि लोभ है मजीठ रंग इनके उदैतैं जीव तिरयंच थाय है।
जव ही अप्रत्याख्यान चौकड़ी को उदै होय जाकै एक वरस लों थिरता रहाय है,
तो लो याको वल जोलों श्रावक के व्रतनिकों धर सकै नांहि जिनराज जी वताय है ॥८
प्रत्याख्यान क्रोध धूलि रेखा परमान कह्यो, मान काठ थंभ माया गोमूत्र समान हैं,
लोभ कसुम्भको रंग ए ई चार यौ प्रत्याख्यान, इनके उदैतें पावै मनुज पद थान हैं।
प्रत्याख्यान कषाय प्रगट उदै होत संतै च्यारि मास परजंत रहै जानो जान है,
याही को विपाक सो न सकति प्रकट होत मुनि राज व्रत धरि सकै न प्रमान है ॥९
संज्वलन क्रोध जल रेखावत कह्यौ जिन, मान वेतलता किसी नवनि प्रधान है,
माया है चमर जैसी लोभ हरदी को रंग इनके उदैते पावै सुरग विमान है।
चौथोहु कषाय चौकरी को उदै पाय ताकै च्यार पक्ष ताँऊ जाकै प्रवल महान हैं,
यथाख्यात चारित्र कों धरि सकै नाहि मुनि तीर्थंकर गोत्रहू जो वांधै यौं वखान है ॥१०

चौपाई

सोलह कषाय चोकरी च्यार, नौ कषाय नव नाम विचार।
हासि अरति रति सोक वखान, भय जुगुप्सा ए षट् जान ॥११
वनिता पुरुष नपुंसक वेद, ए नव मिले पचीस जु भेद।
इनको उपसम करिहै जवै, समकित हियै सुभ किरिया तवै ॥१२

इति समभाव संपूर्ण।

•

अथ एकादश प्रतिमा वर्णन लिख्यते। चौपाई

अव एकादश प्रतिमा सार, जुदो जुदो तिनको निरधार।
सो भाष्यौ आगम परवान, सुनि चित धारो मरम सुजान ॥१३

दर्शन व्रत सामयिक कही, पोसह सचित्त त्याग विध गही।
रयनि-असन त्यागी ब्रह्मचार, अष्टम आरंभ को परिहार ॥१४
नवमी परिग्रह को परिमान, दशमी आद्य उपदेश न दान।
एकादशमी दोय परकार, क्षुल्लक दुतिय ऐलक व्रत धार ॥१५
श्रेणिक पूछै गौतम तणी, दरसन प्रतिमा की विधि भणी।
गौतम भाष्यो श्रेणिक भूप, दरशन प्रतिमा आदि सरूप ॥१६
एकादश की जो विध सार, जुदी जुदी कहिहों निरधार।
याहि सुनि करि धरि है जोय, श्रावक व्रत धारी है सोय ॥१७
प्रथमहि दरशन प्रतिमा सुनो, त्यों निज आतम सहजै मुनो।
दरशन मोक्ष बीज है सही, इह विधि जिन आगम में कही ॥१८
दरशन सहित मूल गुण धरे, सात विसन मन वचन परिहरे।
दरशन प्रतिमा को सुविचार, कछु इक कहौं सुनो सुखकार ॥१९
देव न मानै विनु अरहन्त, दस विधि धर्म दयाजुत सन्त।
तपधर मानै गुरु निर्ग्रन्थ, प्रथम सुद्ध यह दरशन पंथ ॥२०
संवेगादिक गुण जुत सोय, ताकी महिमा कहि है कोय।
धरम धरम के फल को लखै, सो संवेग जिनागम अखै ॥२१
जो वैराग भाव निरवेद, गरहा निन्दा के दुइ भेद।
निज चित निंदै निंदा सोय, गरहा गुरुढिग जा आलोय ॥२२
उपसम जे समता परिणाम, भक्ति पंच गुरु करिए नाम।
धरम रु धरमी सो अतिनेह, सो वाछल्ल महा गुण गेह ॥२३
अनुकंपा नित ही चित रहै, ए वसु गुण जो समकित गहै।
दरशन दोप लगै पणवीस, सुनिये जो कहिया गणईश ॥२४
तीन मूढ़ता मद वसु जान, अर अनायतन षट्‌विधि ठान।
आठ दोष शंकादिक कही, दोष इते तजि दरशन गही ॥२५
भो श्रेणिक सुन इस संसार, जीव अनंत अनंती वार।
सीस मुडाय कुतप वहु कीयो, केस लोंच अरु मुनि पद लीयो ॥२६
कीये अनन्तकाल वहु खेद, आतम तत्त्व न जानेउ भेद।
जब लो दरशन प्रतिमा तणी, प्रापति भई न जिनवर भणी ॥२७
तातै फिरियो चतुर्गति माँहि, पुनि भवदधि भ्रमिहै सक नाँहि।
प्रावर्त्तन कीये वहु वार, फिर करिहै जिसके नहि पार ॥२८
आठ मूल गुण प्रथम ही सार, वरनन कीयो विविध प्रकार।
तातैं कथन कियो अब नाहि, कहै दोप पुनरुक्त लगाँहि ॥२९
कुविसन सात कह्यों विस्तार, जूआ मांस भखिवो अविचार।
सुरापान चोरी आखेट, अरु वेश्या सों करियों भेंट ॥३०
इनमें मगन होइ करि पाप, फल भुगते लहि अति सन्ताप।
तिनके नाम सुनो मतिमान, कहिहों यथा ग्रन्थ परिमाण ॥३१

पाण्डु-पुत्र जे खेले जुआ, पाँचों राज्य-भ्रष्ट ते हुआ।
बारह वरष फिरे वनमाँहि, असन-वसन दुख भुगते ताँहि ॥३२
मांस-लुब्ध राजा वक भयो, राजभ्रष्ट ह्वै नरकहिं गयो।
तहाँ लहे दुख पंच प्रकार, कवि ते न कहि सकै विसतार ॥३३
प्रगट दोप मदिरा ते जान, नाश भयो यदुवंश वखान।
तपधर अरु हरि-वलि नीकले, वाकी अगनि द्वारिका जले ॥३४
वेश्या लगन केरि हित लाय, चारुदत्त श्रेष्ठी अधिकाय।
कोड़ि वत्तीस खोई दीनार, द्रव्य-हीन दुख सहै अपार ॥३५
षट्खंडी सुभूमि मतिहीन, विसन अहेडा में अतिलीन।
पाप उपाय नरक सो गयो, दुख नानाविधि सहतो भयो ॥३६
पर-वनिता की चोरी करी, रावण मति हरि निज मति हरी।
राम रु हरि सों करि संग्राम, मरि करि लह्यों नरक दुख धाम ॥३७
पर-युवती को दोष महन्त, द्रुपदसुता सों हास्य करंत।
कीचक फल पायो तत्काल, रावणनेहु गनिये इह चाल ॥३८
आठ मूल गुण पालै तेह, विसन सात को त्यागी जेह।
अरु सम्यक्त जु दृढ़ता धरै, पहिली प्रतिमा तासों परै ॥३९

दोहा

प्रथम प्रतिज्ञा इह कही, श्रावक के मुख जान।
अब दूजी प्रतिमा कथन, कछु इक कहों वखानि ॥४०

छंद चाल

तह पाँच अणुव्रत जानो, गुणव्रत पुनि तीन वखानो।
शिक्षाव्रत मिलि कै च्यारी, दूजी प्रतिमा को धारी ॥४१
वारा व्रत वरनन आगे, कीनो चित धरि अनुरागे।
पुनरुक्त दोष तैं जानी, दूजा नहिं कथन कथानी ॥४२
तीजी प्रतिमा सामायिक, भविजन को सुर शिवदायक।
आगे वारा व्रत माहीं, वरनन कीनो सक नाहीं ॥४३
चौथी प्रतिमा तिहि जानो, प्रोपध तसु नाम वखानो।
वरनन सुनिवे को चाव, द्वादश व्रत मधि दरसाव ॥४४
पंचम प्रतिमा वड़भाग, सुनि सचित करो परित्याग।
काचो जल कोरो नाज, फल हरित सकल नहीं काज ॥४५
सव पत्र शाक तरु पान, नागर वेलि अघ थान। सहु कंद मूल हैं जेते, सूके फल सारे तेते ॥४६
अरु वीज जानिये सारे, माटी अरु लूण विचारे।
करि त्याग सचित व्रत धारी, पंचम प्रतिमा तिहि पारी ॥४७
दिन चढ़े घड़ी दोय सार, पछिलो दिन वाकी धार।
इतने मधि भोजन करिहै, छट्ठी प्रतिमा सो धरि है ॥४८

मरयादा धरवि आहार, चारों को करि परिहार।
तियको सेवे दिन नाहीं, छट्ठी प्रतिमा सो धराँही ॥४९
प्रतिमा छह तो जो जीव, समकित जुत धरैं सदीव।
तिह श्रावक जघन्य सुजाणि, भाषै इम जिनवर वाणि ॥५०
श्रेणिक नृप प्रसन कराहीं, श्री गौतम गणधर पाहीं।
ब्रह्मचर्य नाम प्रतिमा की, कहिये प्रभु कथन सु ताको ॥५१
सुनिये अब श्रेणिक भूप, सप्तम प्रतिमा को सरूप।
मन वच क्रम धारि त्रिशुद्ध, नव विधि जो शील विशुद्ध ॥५२
निज पर वनिता सब जानी, आजनम पर्यन्त तजानी।
अब नव विधि शील सुनीजे नित ही तसु हृदय गणीजे ॥५३
मानवणी सुर-तिय जाणी, तिरयंचणी त्रितय वखाणी।
ये तीनों चेतन वाम, मन वच क्रम तजि दुख धाम ॥५४
पाषाण काठ चित्राम, तजिये मन वच परिणाम।
नव विधि ब्रह्मचर्य धरीजे, सप्तम प्रतिमा आचरीजे ॥५५
निज घर आरम्भ तजेई, परकों उपदेश न देई।
भोजन निज पर घर माहीं, उपदेश्यो कबहु न खाहीं ॥५६
व्यापार सकल तजि देई, सो स्वर्गादिक सुख लेई।
प्रतिमा इह अष्टम नाम, आरम्भ-त्याग अभिराम ॥५७
नवमी प्रतिमा सुनि जान, नाम जु परिगह परिमान।
निज तनपै वसन धराहीं, पठने को पुस्तक ठाहीं ॥५८
इन बिन सब परिग्रह त्याग, मध्यम श्रावक बड़ भाग।
दिव लांतव अर कापिष्ठ, तह लों सुख लहै गरिष्ठ ॥५९
प्रतिमा अनुमति तस नाम, दशमी दायक सुख धाम।
उपदेश न निज घरि परि-गेह, ले जाय असन को जेह ॥६०
तिनके सो भोजन लेहैं, उपदेश्यो कबहु न खै है।
निज जन अरु परजन सारे, उपदेश न पाप उचारे ॥६१
जाको परिग्रह मुनि लेई, पीछी कमंडल सु धरेई।
कोपीन कणगती जाके, छह हाथ वसन पुनि ताके ॥६२
एती परिगह मरजाद, गहि है न अवर परमाद।
एकादश प्रतिमा धारैं, भाखै जिन दुय परकारैं ॥६३
प्रथमहि क्षुल्लक ब्रह्मचार, उत्कृष्ट ऐलक निरधार।
क्षुल्लक संख्या परमाण, कपडो पट हाथ सुजाण ॥६४
इकपटो न सीयो जाकै, कोपीन कणगती ताकै।
कोमल पीछी कर धारै, प्रति लेखि रु भूमि निहारै ॥६५
शौचादि निमित्त के काजै, कमंडल ताकै ढिग वाजै।
आहार निमित्त तसु जानी, मुकते घर पंच वखानी ॥६६

उत्कृष्ट ऐलक व्रत धारी, जिनकी विधि भाष्यो सारी।
मठ मंडप वन के माहीं, निश दिन थिरता ठहराहीं ॥६७
कोपीन कणगती जाके, पीछे कमंडल है ताके।
परिगह एतो ही राखै, इम कथन जिनागम भाखै ॥६८
भोजन सो करिय उदंड, घर पंच तणी थिती मंड।
चित धरम ध्यान में राखै, आतम चितवन रस चाखे ॥६९
सुनिये श्रेणिक भूपाल, दर्शन प्रतिमान विसाल।
तिह विनु दस प्रतिमा जानी, निरफल भाषी जिन वाणी ॥७०
वासन की वोलि करीजे, उपरा उपरीज धरीजे।
नीचे हुई जर जर वासन, ऊपर ले भाजन की आसन ॥७१
सव फूट जाय छिन माहीं, समरथ विनु कवन रखाहीं।
प्रथमहिं दर्शन दिढ़ कीजे, पीछे व्रत और धरी जे ॥७२
एकादश प्रतिमा सारी, ताकी गति सुन सुखकारी।
जावे षोड़शमें स्वर्ग, भव दुइ तिहुँ लहि अपवर्ग ॥७३
दशमो प्रतिमा को धारी, क्षुल्लक अरु ऐलक विचार।
उत्कृष्ट सरावक एह, भाषे जिनमारग तेह ॥७४

दोहा

प्रतिमा ग्यारा को कथन, जिन आगम परमाण।
परि पूरण कीनों सवै, किसन सिंघ हित जाण ॥७५

इति प्रतिमा ग्यारा को कथन।

•

अथ दानादिकार। दोहा

आहार औषध अभय पुनि, शास्त्रदान ये चार। श्रावक जन नित दीजिये, पात्र-कुपात्र विचार ॥७६
आगें अतिथि विभाग में, वरनन कीनों सार। इहाँ विशेष कीनों नहीं, दूषण लगै दुवार ॥७७
जो इच्छा चित सुननिकी, पूरव कह्यो वृत्तन्त। देखि लेहि अनुराग धरि, तातें मन हरषन्त ॥७८

अथ जल-गालन-कथन। दोहा

अव जल-गालण विधि प्रगट, कही जिनागम जेम।
भाषों भविजन सांभलो, धारो चित धरि पेम ॥७९
दोय घड़ी के आंतरै, जो जल पीवै छान। परम विवेकी जुत दया, उत्तम श्रावक जान ॥८०

छन्द चाल

नौतन वस्तर के मांही, छानो जल जतन कराही।
गालन जल जिहिं वारै, इक वूँद मही नहिं डारै ॥८१
कोहू मतिहीन पुराने, वस्तर माहीं जल छानें।
अर वूंद भूमि पर नाखैं, उपजै अघ जिनवर भाखैं ॥८२

तिन मांही जीव अपार, मरि हैं संसै नहिं वार।
जाके करुणा न विचार, श्रावक नहिं जानि गंवार ॥८३
धीवर सम गिनिये ताहि, जल को न जतन जिहि पाहि।
द्वय द्वय घटिका में नीर, छाणै मतिवंत गहीर ॥८४
अथवा प्रासुक जल करि के, राखै भाजन में धरि के।
गृह-काज रसोई माहै, प्रासुक जल ही वरता है ॥८५
अनछाण्यौ वरतै नीर, ताकौ सुनि पाप गहीर।
इक वरषि लगे जो पाप, धीवर कहि है सो आप ॥८६
अरु भील महा अविवेक, दौं अगनि देय दस एक।
दौंवनि को अघ इक वार, कीये ह्वै जो विस्तार ॥८७
अनछाण्यौ वरतै पानी, इस सम जो पाप वखानी।
ऐसो डर धरि मन धीर, विनु गालें वरते न नीर ॥८८

उक्तं च—

संवत्सरेण मेकत्वं चैवर्त्तकस्य हिंसकः। एकादश दवादाहे अपूत-जल संग्रही ॥८९
लूतास्यतन्तुगलिते ये विन्दौ सन्ति जन्तवः। सूक्ष्मा भ्रमरमानापि, नैव मान्ति त्रिविष्टपे ॥९०

अडिल्ल

मकड़ी का मुख थकी तंत निकसै जिसौ, तिहि समान जलविन्दु तणौ सुनि एक सौ।
तामें जीव असंख उड़ै ह्वै भ्रमर ही, जम्बूद्वीप न मांय, जिनेश्वर इम कही ॥९१

तथा चोक्तम्

षट्त्रिंशदङ्गुलं वस्त्रं चतुर्विंशतिविस्तृतम्। तद्वस्त्रं द्विगुणीकृत्य तोयं तेन तु गालयेत् ॥९२
तस्मिन्मध्यस्थिताञ्जीवान् जलमध्ये तु स्थाप्यते। एवं कृत्वा पिबेत्तोयं, स याति परमां गतिम् ॥९३

अडिल्ल

वस्तर अंगुल छत्तीस सुलीजिये, चौड़ाई चौईस प्रमाण गहीजिये।
गुढ़ी विना अतिगाढ़ौ दोवड़ कीजिये। इसे नातणै छांणि सदा जल पीजिये ॥९४
तामें हैं जे जीव जतनि करिकै सही, छांणा जलतें अधर नीर में खेपही।
करुणा धरि चित नीर एम पीवे जिके, सुर पद संशय नांहि, लहै शिवगत्ति तिके ॥९५

चौपाई

ऐसी विधि जल छाण्या तणी, मरयादा घटिका दुइ भणी।
प्रासुक कियो पहर दुय जाणि, अधिक उसण वसु जाम वखाणि ॥९६
मिरच इलायची लौंग कपूर, दरव कषाय कसे लौ चूर।
इन तें प्रासुक जल कर वाय, ताको भाजन जुदो रहाय ॥९७
इतनौ प्रासुक कींजे नीत, जाम दोय मध्य होइ व्यतीत।
मरयादा ऊपर जो रहाय, तामें सम्मूर्छन उपजाय ॥९८

अरु वे फिरि छान्यो नहिं परै, वांके जीव कहां लौं धरै।
प्रासुक जलके भाजन मांहि, जो कहुं नीर अगालत आहि ॥९९
ताके जीव मरै सब सही, उनकौ पाप कोई न इच्छही।
तातें बहुत जतन मन आनि, प्रासुक करि वरतौ सुख दानि ॥८००
छाण्यौ जल घटिका द्वय मांहि, सम्मूर्च्छन उपजैं सक नांहि।
आज उसन की विधि सवठौर, व्यापि रहो अति अवकी दौर ॥१
व्यालू निमित असन करि धरै, ता पीछै खीरा ऊवरै।
तिनमें जल तातौ करवाय, निसि सवार लौं सो निरवाहि ॥२
मरयादा माफिक नहिं सोय, ताकों वरतो मति भवि लोय।
कीजे उसन इसी विधि नीर, जो जिन-आज्ञा-पालन वीर ॥३
भात वोरिये जिह जल मांहि, वैसो जल जो उसन करांहि।
आठ पहर मरयादा तास, सम्मूर्च्छन पीछे ह्वै जास ॥४
जो श्रावक-व्रत को प्रतिपाल, तिहको निास जलकी इह चाल।
छाण्यौ प्रासुक तातौ नीर, मरयादा में वरतो नार ॥५

छन्द चाल

वींछे कपड़े जो नीर, छानें श्रावक नहीं कीर।
मरयाद जिती कपड़ा की, तासों विधि जल छणवाकी ॥६
यातें सुनिये भवि प्राणी, जलकी विधि मनमें आनी।
वहु धरि विवेक जल गालै, मन वच तन करुणा पालै ॥७
पंचनिमें सो अति लाजै, अर जिन-आज्ञा सो त्याजै।
सो पाप उपावै भारी, जाणौ तसु हीणाचारी ॥८
यातें ल्यो वसन सुफेद, छानो जल किरिया वेद।
औरनि उपदेश जु दीजे, विनु छाणे कवहूं नहिं पीजे ॥९
श्रावक-वनिता घर मांही, किरिया जुत सदा रहाहीं।
वह जतन थकी जल छानै, ताको जस सकल वखानै ॥१०
लघु त्रिया प्रमाद प्रवीन, जलकी किरियामें हीन।
तापै न छणावै पानी, वनिता सों जाण्यों स्यानी ॥११
तजि आलस अरु परमाद, गालै जल धरि अहलाद।
औरनिसों नहिं वतरावै, जल-कण नहिं पड़िवा पावै ॥१२
जल बूंद जु तनुमें परि है, अपनी निन्दा वहु करि है।
ले दंड सकति-परमाण, पालै हिरदै जिन-आण ॥१३

दोहा

जिह निवाण को नीर भरि, घरमें आवे ताहि।
छानि जिवाणी भेजियो, वाहि निवाणजि मांहि ॥१४

इह जल-छालण विधि कहीं, जिन-आगम-अनुसार।
कहि हों कथा अणथमी, सुनियो भवि चितवार ॥१५

इति जल-गालण-विधि।

•

अथ अणथमी-कथन। दोहा

घड़ी दोय जब दिन चढ़ै, पछिलो घटिका दोय।
इतने मध्य भोजन करै, निश्चय श्रावक सोय ॥१६

सोरठा

सुनिये श्रेणिक भूप, निशि-भोजन त्यागी पुरुष।
सुर-सुख भुगति अनूप, अनुक्रमि शिव पावैं सही ॥१७
दिवस अस्त जब होय, ता पीछें भोजन करै।
ते नर ऐसे होंय, कहूँ सुनों श्रेणिक नृपति ॥१८

नाराच छन्द

उलूक काक औ बिलाव, गृद्ध पक्षि जानिये,
बघेरु डोडु सर्प सर सांवरौ वखानिये,
हवंति गोहरो अतीव पाप रूप थाइये,
निशी आहार दोप तें कुजोनिकों लहाइये ॥१९

दोहा

निशि वासरको भेद बिन, खात नृपति नहिं होय। सींग पूंछतें रहित ही, पशु जानिये सोय ॥२०
दिन तजि निशि भोजन करै, महापापि मति मूढ।
बहु मोल्यो माणिक तजै, काच गहै धरि रूढ़ ॥२१

छन्द चाल

निशि माहैं असन कराही, सो इतने दोष लहाही।
भोजनमें कीड़ी खाय, तसु बुद्धि-नाश हो जाय ॥२२
जूँ उदर-मांहि जो जाय, तिह रोग जलोदर थाय।
माखी भोजनमें खैहै, तत्छिण सो वमन करैं है ॥२३
मकड़ी आवे भोजनमें, तो कुष्ट रोग ह्वै तन में।
कंटक रु काठ को खंड, फंसि है सो गले प्रचण्ड ॥२४
तसु कंठ विथा विसतारैं, ह्वै है नहिं ढील लगारैं।
भोजनमें खैहै वाल, सुर-भंग होय ततकाल ॥२५
अरु अशन करत निशि मांही, वज्जादिकमें उपजाहीं।
इनि आदि अशन निशि दोप, सबही हों है अघकोप ॥२६

सोरठा

निशि भोजनमें जीव, अति विरूप मूरति सही।
तिनमें विकल अतीव, अलप आयु अर रोग-युत ॥२७

दोहा

भाग्य-हीन आदर-रहित, नीच-कुलहि उपजाहि।
दुख अनेक लहै हैं सही, जो निशि भोजन खांहि ॥२८

चाल छन्द

एक हस्तिनागपुर ठांम, तस जसोभद्र नृप नाम।
रानी जसभद्रा जानों, श्रेष्ठी श्रीचन्द वखानों ॥२९
तिय लिखमी मति तसु एह, नृप-प्रोहित नाम सुनेह।
द्विज रुद्रदत्त तसु तीया, रुद्रदत्ता नाम जु दीया ॥३०
हरदत्त पुत्र द्विज नाम, तिन चरित सुनो दुख-धाम।
वीतो भादोंको मास, आसोज प्रथम तिथि जास ॥३१
निज पितृ-श्राद्ध दिन पाय, द्विज पुरका सकल बुलाय।
वाह्मण जीमणकों आये, वहु अशन थकी जुअ थाये ॥३२
द्विज पिता नृपतिके तांई, पोपै वहु विनो धराई।
पोछें नृप-मन्दिर आयो, राजा वहु काम करायो ॥३३
तसु राज-काजके मांही, भोजन की सुधि न रहांही।
वहु क्षुधा थकी दुख पायो, निशि अर्ध गयां घरि आयो ॥३४
निशि पहर गई जब एक, तसु वनिता धरि अविवेक।
रोटी जीमन कूँ कीनी, वेंगण करणें मन दीनी ॥३५
हांडी चूल्हें जु चढ़ाई, पाड़ोसी हींगको जाई।
इतनेमें हांडी मांही, मींढक पड़ियो उछलाहीं ॥३६
तिम वेंगणा छौंकै आय, मींढक मूवो दुख पाय।
तव हांडी लई उतारी, रोटी ढकणो परि धारी ॥३७
कीड़ी रोटीमें आई, घृत सनमधितें अधिकाई।
निशि वीत गई दो जाम, जीमण वैठो द्विज ताम ॥३८

दोहा

निशि अँधियारी दीप विनु, पीड़ित भूख अपार।
जो निशि भोजी पुरुष हैं, तिनके नहीं विचार ॥३९
रोटी मुखमें देत ही, चींटी लगी अनेक।
विप्र होंठ चटकौ लियो, वड़ो दोष अविवेक ॥४०
वैंगण को लखि मींढकौ, विस्मय आण्यो जोर।
तातें अघ उपज्यो अधिक, महा मिथ्यात अघोर ॥४१

अडिल्ल

कालान्तर तजि प्राण भयौ घूघू जबै, तहाँ मरण लहि सोई नरक गयो तबै।
पंच प्रकार अपार लहै दुख ते सही, निकलि काक मर जाय ठई दुख की गही ॥४२
तिह वायस चउपद अनेक जु सताइया, विष्टादिक जे जीव चित्त ते पाइया।
प्रचुर आयुतें पाप उपाय मूवा जदा, नरकि जाय वहु आयु समुद भुगतै तदा ॥४३
तिहतैं निकसि बिलाव भयौ पापी घनौ, मूंसा मींडक आदि भखै कहलौं गनौ।
नरक जाय दुख भुंजि ग्रद्ध पक्षी भयौ, प्राणो भखे अनेक नरक फिर सो गयौ ॥४४
निकसि नरकतें पाप उदै संवर भयौ, तिहँ भखो जोव अपार नरक पंचम गयौ।
निकलि सूर है जीव भखै तिनकों गिनै, अव उपाय मरि नरक जाय सहि दुख घनै ॥४५
अजगर लहि परजाय मनुप तिरयग ग्रसे, नरक जाय दुख लहै कहे वाणी इसे।
निकलि वघेरो थाय जीव वहु खाइया, पाप उपाय लहाय नरक दुख पाइया ॥४६
गोवा तिरयग जमति निकसि तहँतै भयो, वहुत जंतुकों भखि नरक पुनि सो गयो।
मच्छ तणी परजाय लई दुख की मही, लघु मच्छादिक खाय उपाये अघ सही ॥४७
सो पापी मरि नरक गयो अतिघोर में, स्वासति निमिप न लहै कहूं निशि भोर में।
तहं भुगते दुख जीव याद जो आवही, निशि न नींद दिन नीर अशन नहि भावहीं ॥४८

चौपाई

निशि-भोजन-लंपट द्विज भयो, महापाप को भाजन थयो।
दस भव तिरयग गति दुख लह्यो, तिम दस भव दुख नरक निसर्यो ॥४९
नरक थकी नींकलिकैं सोई, देस नाम करहाट सुजोई।
कौसल्या नगरी नरपाल, है संग्रामसूर गुणमाल ॥५०
तसु पटतिया वल्लभा नाम, राजा-सेठ श्रीधर है ताम।
श्रीदत्ता भार्या तिह तणी, राजपुरोहित लोमस भणी ॥५१
प्रोहित-वनिता लाभा नाम, महादत्त सुत उपज्यो ताम।
सात विसन लंपट अधिकानी, रुद्रदत्त द्विज कोवर मानी ॥५२
महीदत्त कुविसनतैं जास, पिता लक्ष्मी सब कियौ विनास।
जूवा वेश्या रमि अधिकाय, राजदंड दे निरधन थाय ॥५३
घर में इतो रह्यो नहि कोय, भोजन मिलिये हूं नहि जोय।
तब द्विज काढ़ि दियो घर थकी, गयो सोपि मामा घर तकी ॥५४
मामैं तसु आदर नहि दियो, वहु अपमान तास कौ कियो।
भाग्य हीन नर जहँ जहं जाय, तहँ-तहँ मान हीनता थाय ॥५५

सवैया

जा नरके सिर टाट सदा रवि-ताय थकी दुख जोरी लहै है,
पादप चील तणी तकि छांइ गये सिर चीलकी चोट सहै है।
ता फलतें तसु फाटि है सीस वेदनि पाप उदै जु गहै है,
भाग्य विना नर जाय जहाँ, तहँ आपद थानक भरिही रहै है ॥५६

मातुल तास महीदत्त सीस नवाय दियो अब ही।
पूरव पाप क्रिये मैं कौन सुभाषिये नाथ वहै सब ही ॥५७

दोहा

कौन पापतें दुख लह्यो, सो कहिये मुनि नाह। सुख पाऊं कैसे अबै, उहै बतावो राह ॥५८

सवैया तेईसा

सो मुनिराज कह्यो भो वत्स सुपूर बे पाप कहां तज याहीं,
प्रोहित नाम यो रुद्रदत्त महीपति के हथनापुर माहीं।
सो निशि-भोजन लंपट जोर पिपीलक कीट भखै अधिकाहीं,
सो जन रात-समय इक मींढक बैंगण साथ दियो मुख मांहीं ॥५९

अडिल्ल

तास पाप के उदय मरिवि घूघू भयो, नरक जाय पुनि काग होय नरकहिं गयो।
ह्वै बिलाप लहि नरक जाय संबर भयो, नरक जाय ह्वै ग्रद्धपक्षि नरकहिं लह्यो ॥६०
निकलि सूकरो होय नरक पद पाइयो, ह्वै अजगर लहि नरक बघेरो थाइयो।
स्वभ्र जाय फिर गोधा तिरयग गति पाई, नरक जाय हो मच्छ नरक पृथिवी लई ॥६१
नरक महीतें निकल महीदत्त थाइयो, उलूकादि दस तिरयग भव दुख पाइयो।
नरक बार दस जाय महा दुख तें सह्यो, निसि भोजन के भखैं स्वभ्र दुख अति लह्यो ॥६२

दोहा

महीदत्त फिर पूछवे, निसि भोजनतें देव। नरभवमें दुख किम लहे, सो कहिये मुझ भेव ॥६३
मुनि भाषैं द्विज-पुत्र सुण, निसि में भोजन खात। जीव उदरि जैहै तबै, बहुविधि है उत्पात ॥६४

सवैया इकतीसा

माखीतें वमन होय, चींटी बुद्धि नाश करे, जूकातें जलोदर होय, कोड़ी लूत करि है,
काठ फांस कंटकतें गलेमेव धावै विथा, बाल सुर-भंग करै कंठ हीन परि है।
भ्रमरीतें सूना होय, कसारीतें कम्पवाय, विन्तर अनेक भांति छल उर धरि हैं,
इन आदिक कथन कहाँ लौं कीजे वत्स, सुन नरक तिर्यंच थाम कहे जो ऊपार हैं ॥६५

दोहा

जो कदाचि मर मनुष ह्वै. विकल अंग विनु रूप।
अलप आयु दुर्भग अकुल, विविध रोग दुख कूप ॥६६
इत्यादिक निशि-अशन तें, लहि है दोष अपार।
सुनवि महीदत्त मुनि प्रतें, कहै देहु व्रत सार ॥६७
मुनि भाषैं मिथ्यात्व तजि, भजि सम्यक्त्व रसाल।
पूरव श्रावक व्रत कहे, द्वादश धरि गुणमाल ॥६८
दर्शन व्रत विधि भाषिये, करुणा करि मुनिराज।
मुझ अनन्त भव-उदधितें, तारणहार जहाज ॥६९

सोरठा

दोष पच्चीस न जास, संवेगादिक गुण-सहित । सप्त तत्त्व अभ्यास, कहै मुनीश्वर विप्र सुन ।।७०

दोहा

इस दरशन सरधान करि, निश्चै अरु व्यवहार । पूरव कथन विशेषतैं, कह्यौ ग्रन्थ अनुसार ।।७१
सात व्यसन निशि-अशन तजि, पालो वसु गुण मूल ।
चरम वस्तु जल विनु छण्यो, त्यागं व्रत अनुकूल ।।७२

चौपाई

इत्यादिक मुनि-वचन सुनेइ, उपदेश्यो व्रत विधिवत्त लेइ ।
हरषित आयो निजधर मांहि, तासु क्रिया लखि सब विसमांहि ।।७३
अहो सात विसनी इह जोर, अरु मिथ्याती महा अघोर ।
ताको चलन देखिये इसो, श्रीजिन आगम भाष्यो तिसो ।।७४
मात-पिता तसु नेह करेइ, भूपति ताकों आदर देइ ।
नगरमांहि मानैं सब लोग, विविध तणें बहु भुंजै भोग ।।७५
पुण्य थकी सब ही सुख लहैं, पाप उदै नाना दुख सहै ।
ऐसो जान पुण्य भवि करो, अवतें डरपि सबै परिहरो ।।७६
महीदत्त बहुधन पाइयो, ततछिन पुण्य उदै आइयो ।
पूजा करै जपै अरहंत, मुनि श्रावक को दान करंत ।।७७
जिनमन्दिर जिनविम्ब कराय, करी प्रतिष्ठा पुण्य उपाय ।
सिद्ध क्षेत्र वंदे बहु भाय, जिन आगम सिद्धान्त लिखाय ।।७८
आप पढ़ै औरनिकों देय, सप्त क्षेत्र धन खरच करेय ।
निशि-दिन चालै व्रत अनुसार, पुण्य उपायो अति सुखकार ।।७९
कितेक काल गया इह भांति, अन्त समय धारी उपशांति ।
दरशन ज्ञान चरण तप चार, आराधन मनमांहि विचार ।।८०
भाईं निश्चै अरु व्यवहार, धारि संन्यास अन्तकी वार ।
शुभ भावनितें छाड़े प्रान, पायो षोड़श स्वर्ग विमान ।।८१
सिद्धि आठ अणिमादिक लही, आयु बीस द्वय सागर भई ।
पांचों इन्द्री के सुख जिते, उदै प्रमाण भोगिये तिते ।।८२
समकित धरम ध्यान जुत होय, पूरण आयु करइ सुर लोय ।
देश अवन्ती मालव जाण, उज्जैनी नगरी सुबखाण ।।८३
पृथ्वी तल तसु राज करेह, प्रेमकारिणी तिय गुण गेह ।
समकित दृष्टी दंपति सही, जिन-आज्ञा हिरदै तिन गही ।।८४
स्वर्ग सोलमें ते सुर चयो, प्रेमकारिणी के सुत भयो ।
नाम सुधारस ताको दियो, मात-पिता अति आनन्द कियो ।।८५
दियो दान जाचक जन जितो, मापै कथन होय नहिं तितो ।
विधिसों पूजै जिनवर देव, श्रुत-गुरु वंदन करि बहु सेव ।।८६

अधिक महोत्सव कीनो सार, जैसो श्रावक को आचार।
वस्त्रादिक आभरण अपार, सब परिजन संतोषे सार ॥८७
अनुक्रम वरस सातकों भयो, पंडित पास पठन कों दयो।
शास्त्र कलामें भयो प्रवीन, श्रावक व्रत जुत समकित लीन ॥८८
जोवनवंत भयो सुकुमार, व्याहन कीनो धरम विचार।
एक दिवस वन क्रीड़ा गयो, वड़ तरु विजरीतें क्षय भयो ॥८९
देख कुमर उपजो वैराग, अनुप्रेक्षा भाई वड़ भाग।
चन्द्रकीर्ति मुनि के ढिग जाय, दीक्षा लीनी तव सुखदाय ॥९०
वाहिर आभ्यन्तर चौवीस, तजे ग्रन्थ मुनि नाये सीस।
पंच महाव्रत गुप्ति जु तीन, पंच समिति धारी परवीन ॥९१
इम तेरा विध चारित सजे, निश्चय रत्नत्रय सु भजे।
सुकल ध्यान-वल मोह विनास, केवल ज्ञान ऊपज्यो तास ॥९२
भवि उपदेशे वहुविधि जहां, आयु करम पूरण भयो तहां।
शेष अघातिय को करि नास, पायो मोक्षपुरी सुख वास ॥९३

ैया

मोह कर्म नास भये प्रसमत्त गुण थये, ज्ञानावर्ण नास भये ज्ञान गुण लयो है,
दंसण आवरण नास भयो दंसण, सु अन्तराय नासतें अनन्तवीर्य थयो है।
नाम कर्म नास भये प्रगट्यो सुहुमत्त गुण, आयु नास भये अवगाहण जु पायो है,
गोत्रकर्म नास किये भयो है अगुरुलघु, वेदनीके नासें अव्यावाघ परिणयो है ॥९४

दोहा

विवहारे वसु गुण कहे, निश्चै सुगुण अनन्त। काल अनन्तानन्त तिते, निवसैं सिद्ध महन्त ॥९५

चौपाई

इह विधि भवि दर्शन जुत सार, पालै श्रावक व्रत-आचार।
अर मुनिवरके व्रत जो धरै, सुर नर सुख लहि शिव-तिय वरै ॥९६
निशि-भोजनतें जे दुख लये, अरु त्यागे सुख ते अनुभये।
तिनके फलको वरनन भरी, कथा अणथमी पूरण करी ॥९७

छप्पय

दिवस उदय द्वय घड़ी चढ़त पीछें ते लेकर,
अस्त होत द्वय घड़ी रहै पिछलौ एते पर।
भोजन जे भवि कर तजैं निशि चार अहार ही,
खादिम स्वादिम लेप पान मन वच कर वारही॥
सो निशि भोजन तजन वरत नित प्रति जो जिनराज वखानियो।
इह विधि नित्त प्रति चित्त धरि श्रावक मन जिहि मानियो ॥९८
चित्रकूत्र गिरि निकट ग्राम मातंग वसै तहैं,
नाम जागरी जान कुरंग चंडार तिया तहै।

तिहि निसि-भोजन तजन वरत सेठणि पै लियो,
मन वच क्रम व्रत पालि मरण शुभ भावनि कियो ॥
वह सेठ तिया उरि ऊपनि सुता नागश्रिय जानिये।
जिन कथित-धर्म विधि जुत गहिवि सुरग तणा सुख तिन लिये ॥९९
तिरथग एक सियाल सुणिचि मुनि-कथित धरम पर,
रख निसि-भोजन तजन वरत दियो लखि भविवर।
त्रिविध शुद्ध व्रत पालि सेठ सुत ह्वै प्रीतिकर,
विविध भोग भोगए नृपति-पुत्री परणवि वर ॥
मुनिराज पास दीक्षा लई, उग्र घोर तप ध्यान सजि।
वसु कर्म क्षेपि पहुंचे मुकति, सुख अनन्त लहि जगत महि ॥१००
याही व्रतको वारि पूर्व ही वहुत पुरुष तिय,
तद्-भव सुर पद लहैं त्रिविध पालिउ हर्षित हिय।
अनुक्रमि मोक्षहि गये वरिसु दीक्षा जिनि वारी,
सुख अनन्त नहि पार, सिद्ध पदके जे वारी ॥
नर-नारी अजहुं व्रत पालि हैं मन वच काय त्रिशुद्धि कर।
लहि धर्म देवगतिका अधिक, क्रम तैं पहूँचैं मुकति वर ॥१

इति अणथमी कथन।

•

अथ दर्शन-ज्ञान-चारित्र-कथन

दोहा

त्रेपन किरिया के विषें, दरसण ज्ञान प्रमाण।
अवर त्रितय चारित तणों, कछु इक कहों वखाण ॥२

निज आतम अवलोकिये, इह दर्शन परवान। तस गुण जाणपणों विविध, वहै ज्ञान परवान ॥३
तामें थिरता रूप रहै सु चारित होय। रत्नत्रय निश्चय यहै, मुकति-बीज है सोय ॥४
अब विवहार वखाणिये, सप्त तत्त्व परवान। निःशंकादिक आठ गुण, जुत दर्शन सुख-दान ॥५

ज्ञान अष्ट विध भाषियो, व्यंजन ऊजिति आदि।
जिन आगम को पाठ वहु, करै त्रिविध अहलादि ॥६

पंच महाव्रत गुप्ति त्रय, समिति पंच मिलि सोय। विध तेरा चारित्र है, जाणों भविजन लोय ॥७
इनको वर्णन पूर्व ही, निश्चय अरु व्यवहार। मति-प्रमाण संक्षेपते, कियो ग्रन्थ अनुसार ॥८

चौपाई

त्रेपन किरिया की विधि सार, पालो भवि मन वच तन धार।
सो सुर-नर-सुख लहि शिव लहै, इम गणधार गौतम जी कहै ॥९

इति त्रेपन क्रिया-कथन सम्पूर्ण।

•

अथ और वस्तु हैं तिनकी उत्पत्ति वगैरे कथन। अथ गोंद की उत्पत्ति

दोहा

गूंद हलद अरु आँवला, निपजन विधि जे थाहि।
क्रियावान पुरुषनि प्रतें, कहूँ सकल समझाहि ॥१०

चौपाई

गूंद खैरकें लागो होय, भील उतार लेतु हैं सोय।
अरु अंगुलीकें लार लगाय, इह विधि गूंद उतारत जाय ॥११
कीड़ी माछर आहि अतीव, लागा रहै गूंद के जीव।
भील विवेक हीन अति दुष्ट, करुणा-रहित उतारैं भ्रष्ट ॥१२
दूना में धरते सो जाय, जीव कलेवर तामें आय।
इह विधि जाण लेहु जन दक्ष, नर-नारी सब खात प्रतक्ष ॥१३
भील-जूठ यह जाणों सही, क्रियावान नर खावै नहीं।
जो खैहै सो क्रिया नसाय, अवर वरतकों दोष लगाय ॥१४

अथ अफीम की उत्पत्ति

अरु उतपत्ति अफीम जु तणी, जूठी दोष गूंदहिं जिम भणी।
इह अफीम में दोष अपार, खाये प्राण तजै निरधार ॥१५

अथ हल्दी की उत्पत्ति

हलद भील निज भाजन-मांहि, अपने जलतें ते औंटाहि।
ता पीछें सो देंय सुखाय, हलद विकै ते सब ही खाय ॥१६
कन्दमूलतें उपज्यो सोय, भाजन भील नीरमें जोय।
यामें है इतनौ लखि दोष, धरम भ्रष्ट शुभ क्रिया न पोष ॥१७

आँवला की उत्पत्ति

वरडि मांझ आँवला अपार, हीण क्रिया तामें अधिकार।
हरयो आँवला भील लहाय, अपने भाजन मांहि डराय ॥१८
निज पाणीमें ले लौटाय, जमीं मांहि फिर डारैं जाय।
पहरि पाहनी तिन पर फिरैं, फूटत तिन गुठरी नीसरैं ॥१९
अरु भीलन के बालक ताम, तिनकी गुठली वीनत जाय।
लूण साथि ले खाते जांहि, झूठ होत तामें सक नांहि ॥२०
जल भाजनको दोष लहन्त, पाटा पाहनी से खूदन्त।
ऐसी उत्पत्ति वुध जन जान, धर्म फलै सोई मन आन ॥२१

अथ पान की उत्पत्ति

काथ खात हैं पानहि मांहि, तिसके दोष कहे ना जांहि।
प्रथम पान साधारण जान, राखै मास वरसलों आन ॥२२

सरद रहै तिनमें अति सदा, त्रस उपजैं जिनवर यों वदा ।
हिन्दु तुरक तंबोली जान, नीर निरन्तर जिन छिटकान ॥२३
जल भाजन अशुद्ध अति जान, सारा नर मूतें तिह थान ।
पूँगी लौंग गरु गिरी विदाम, डोड़ादिक पुनि लावैं ताम ॥२४
चूर्नों क्वाथ इत्यादि मिलाहि, सर्व मसालो पाननि माँहि ।
धरकै वीड़ा बाँधैं सोय, सब जन खात खुशी मन होय ॥२५
धरम पाप नहि भेद लहन्त, ते ऐसे वीड़ा जुग हन्त ।
अरु उत्पत्ति क्वाथ की सुनों, अघ-दायक अति है तिम गुणों ॥२६

क्वाथ (कत्था) की उत्पत्ति

विन्ध्याचल तहँ भील रहन्त, खैर रूख की छाल गहन्त ।
औंटावें निज पानो डार, अरुण होय तब लेय उतार ॥२७
तामें चून जु मंडवा तणों, तन्दुल ज्वार सिंघाड़ा तणों ।
नाख खैर जल-मांही जोय, रांध रावड़ी गाढी सोय ॥२८
ताहि सुखावैं कुंडा माँहि, उत्पति क्वाथ कहि सकैं नाहि ।
कहूँ कहा लौं वारंवार, होय पाप लख करि निरधार ॥२९
सुख-दायक सिख गहिये नीर, दुखद पापकी छांड्यो वीर ।
छांडें मन वच सुख सो लहै, विनु छांडें दुर्गति कों गहै ॥३०
तातैं सब वरणन इह कियो, सुनहु भविक जन दे निज हियो ।
जिह्वा-लंपटता दुखकार, संवरते सुरपद है सार ॥३१

दोहा

व्रत धारी जे पुरुष हैं, अवर क्रिया-धर जेह ।
तजहु वस्तु जो हीण है, त्यों सुख लहो अछेह ॥३२

अथ वरनोडी खीचला कूरेडी फली हरी वर्णन

चौपाई

क्रियावान श्रावक है जेह, वस्तु इती नहि खैहैं तेह ।
रांधै चून वाजरा तणों, और ज्वारि चावलकों भणों ॥३३
वरनोडी रु खीचला करै, कूरेडी फूलैं हरि धरै ।
भाटैं शुद्र सुखावैं खाट, सीला वट वायौं सुनि राट ॥३४
इह विधि वस्तु नीपजैं सोई, ताहि तजो व्रत धरि अब लोई ।
अरु ले जाइ रसोई माँहि, सेकैं तलैं क्रिया तस जाँहि ॥३५

अथ भड़भूंज्यां के चवैणों [illegible] ताका कथन

भड़भूंज्यो सेंकै जो धान, तास क्रिया सुनिये मतिमान ।
रांधा चांवल देय सुखाय, तस चिवड़ा मुरमुरा बनाय ॥३६

गेहूँ वाजरा की घूघरी, रांध मुरमुरा सेकैं धरी।
मका जवार उकालैं जाण, फूला कर वेंचैं मन आण ॥३७
कर भूंगड़ा सैकैं चणा, मूंग मोंठ चौलालिक घणा।
इत्यादिक नाजहिं सिकवाय, विकै चवैणो सव जन खाय ॥३८
शूद्र तुरक भुंज्या न्हालि, तिनके भाजन में जल घालि।
करै चवैणा ताजा जानि, सवै खाय मन भ्रान्ति न आनि ॥३९
जो मन होय चवैंणो परै, तो खइये इतनी विधि करै।
निज वरतें लीजे जल नाज, विनहिं सिकावै व्रत धरि साज ॥४०
पीतल लोह चालणी मांहि, छांनि लेय वालू कड़वाहि।
इह किरिया नीकी लखि रीति, खाहु चवैणो मन धर प्रीति ॥४१

अथ चौंला की फली, कैर करेली सांगली आदि को कथन

चौल हरी चौंला की फली, आवैं गांव गांव तें चली।
तिनको शूद्र सिजाय सुखाय, वैंचें सो सगरे जन खाय ॥४२
जल-भाजन शूद्रन को दोष, वासी वटवोयो अघ कोष।
वहु दिन राखैं जिम उपजाय, तिनहिं विवेकी कवहुँ न खाय ॥४३
कैर करेली अरु सांगरी, शूद्र उकालैं ते निज घरी।
पड़ैं कुंथवा वरषा काल, यह खैवो मति-हीनी चाल ॥४४
अंवहलि कैरी की जो करै, जतन थकी राखै निज धरै।
जल वरसै अरु नाहीं मेह, तव लों जोग खायवो तेह ॥४५
वरषा काल मांहि निरधार, उपजैं लट कुंथवा अपार।
इन परि चौमासो जव जात, ताहि विवेकी कवहुं न खात ॥४६
नई तिली तिल नींपजै जवै, फागुण लो खाइये सवै।
सो मरजाद तेल परमाण, होली पीछै तजहु सुजान ॥४७
होली पछिलौ ह्वै जो तेल, तिनमें जीव-कलेवर-मेल।
यातैं होली पहिलो गही, ले राखैं श्रावक घर मही ॥४८
सो वरते कातिक लों तेल, तिन भवि सुनके लखिवो मेल।
चरमतणी जो ह्वै ताखड़ी, वुधजन घर राखै नहिं घड़ी ॥४९
तामें तोलै चून रु नाज, चरम वस्तु है दोष समाज।
कागद काठ वांस अर घात, राखै किरियावन्त विख्यात ॥५०
सिंघाड़ा अति कोमल आंहि, होली गये जीव उपजांहि।
ताकी होय मिठाई जिती, खैवो जोग न भाखी तिती ॥५१
केऊ करिवि घूघरी खाय, केउक सीरो पुड़ी वनाय।
होली पहिली तो सव भली, खैवो जोग कही मनरली ॥५२
पीछैं उपजै जीव अपार, क्रिया दया पालक नर सार।
तव इनकौं तो भीटै नांहि, कहीं धर्म सावै तिन खांहि ॥५३

दूध गिदौड़ी कै गूजरी, दोहै पीछैं जाय वहु घरी।
निज वासण में घर ले जाहि, करै गिदौड़ी मावो ताहि ॥५४
दोष अधिक काचा पयतणों, ताकौ कथन कहांलों भणों।
अविवेकी समझैं नहिं ताहि, समझाये हम तिन ही आहि ॥५५
इतनी तो निजस्यां लखि लेहु, मावो करतां पयमें तेहु।
पड़ै जीव उसमें लघु जाय, अरु फिर रात तणीका वात ॥५६
ताहू में पुनि वरषा काल, पड़ै जीव तिहि निसि दर हाल।
माँछर डांस पतंगा आदि, मावो इसो खात शुभवादि ॥५७
सदा पाप-दायक है सही, पाप-थकी दुरगति-दुख लही।
लंपट भख छूटै नहि जदा, निसिको कियो न खइये कदा ॥५८
जो खैवो विनु रह्यो न जाय, तो पय जतन थकी घर ल्याय।
मरयादा वीते नहिं जास, क्रिया-सहित मावो करि तास ॥५९
जिह्वा-लंपटता वशि थाय, तो ऐसी विधि करि कै खाय।
कोऊ छलप करैगो एम, उपदेश्यो आरंभ वहु केम ॥६०
वामें काचा पयको दोष, अरु त्रस जीव-कलेवर-कोप।
यातैं जतन थकी जो करै, जतन साधि भाख्यों है सिरै ॥६१
जतन थकी किरिया हूँ पलै, जतन थकी अदया हूँ घटै।
जतन थकी सवि है विधि धर्म, जतन मुख्य लखि श्रावक-कर्म ॥६२

शोध के . की मर्यादा

दोहा

मरयादा सब शोध की, कहीं मूल गुण-मांहि।
जिहिं व्रत में भोजन करै, धिरत शोध को खाहि ॥६३

छन्द चाल

घर में तो निपजै नांही, विकलपता लखि मोल गहाहीं।
तिह शोध वखाणै कूर, शुभ क्रिया न तिनकें मूर ॥६४
वास्या लघु ग्रामावास, जल आदि क्रिया नहिं तास।
तिनके घर को जो धीव, धर भाजन मलिन अतीव ॥६५
ले आवै शहर मझार, वेंचेउ लोभ विचार।
ड्योढ़ा दुगुणा ले दाम, लखि लाभ खुशी ह्वै ताम ॥६६
तौलत परिहैं तहँ माखी, करतैं काढै दे नाखी।
जीवत मूई अहि जानै, तिहि जतन न कबहूं ठानै ॥६७
परगाँव तणी इह रीति, सुन शहर तणी विपरीति।
वेचै दधि छाछ विनाणी, तिनके घरकौ घृत आणी ॥६८
खावत हैं जे मति-हीण, तसु सकल क्रिया व्रत क्षीण।
निसि सो तिय दूध मंगावें, तुरतहिं नहिं अगनि चढ़ावैं ॥६९

इह तें अघ उपजै भारी, पुनि तिह महि घृत वहु डारी।
दे जामण दही जमावै, दधि मथि कै घीव कढ़ावै ॥७०
लूणी वहु वेला राखै, उपजौ अघ वाणी भाखै।
वेचे ले वहुत पईसा, पुनि पाप जिही नहिं दीसा ॥७१
जो धिरत शोध को माँनें, व्रत में जो खैवो ठाने।
दूषण ऐसो लखि ताम, जैसो घृत धरिये चाम ॥७२
सुनिये अव अघकर वात, जानत जन सकल विख्यात।
निरमाय लखे है माली, भो जग सुनि लेहु विचारी ॥७३
तिन पास मंगावे घीव, अरु शोध गिनै जे जीव।
तिनकी छुई जो वस्त, दोषीक गिणों जु समस्त ॥७४
आचार कहो शुभ भाय, तिनकों जो वस्तु मिटाय।
आचरिये कवहूँ नाहीं, जिनवर भाष्यो श्रुत माहीं ॥७५
लघु ग्राम कोस दस वास, निज समधी तहां निवास।
किंकर भेजै तापाई, व्रत जोग धिरत मंगवाई ॥७६
जाता आता वहु जीव, विनसैं मारगमें अतीव।
त्रस घात मंगावत होई, सो शोध कहो किम जोई ॥७७
कोई प्रश्न करै इह जागैं, श्रावक होते जे आगैं।
घृत खाते अक कछु नांहीं, हम मन इह शंका आंही ॥७८
ताके समझावन लायक, भाखैं अति ही सुखदायक।
श्रावक जु हुते व्रत धारी, तिन घृत विधि सुनि यह सारी ॥७९

चौपाई

जाके घर महिषी या गाय, पके ठाम तिन हीं वंधवाय।
सरद रहै न हि ठाम मझार, वालू रेत तहां दे डार ॥८०
किंकर एक रहै तिन परै, सो तिन की इम रक्षा करै।
देय वुहारी सांझ-सवार, उपजै नहीं जीव तिन ठार ॥८१
दोय-तीन दिन वीतें जवै, प्रासुक जलहिं न्हवावै तवै।
परनाली राखै तिह ठांहि, वहै मूत्र तिनके ढिग नाहि ॥८२
वासन धर राखै तिहि तले, तामें परै मूत्र जा टले।
सूके ठाम नाखि है जाय, जहाँ सरद कवहूँ न रहाय ॥८३
गोवर तिनको ह्वै नित सोय, आप गेह थापै नहि कोय।
औरनिको मांग्यो न हि देय, त्रस सिताव तामें उपजेय ॥८४
वालू रेत नाखी जा मांहि, करड़ो करि सो देय सुखांहि।
चरवे को रोन[1] न खिदाय, जल पीवे निवाण नहि जाय ॥८५

---

१. अरण्य जंगल।

घरि वांधे राखै तिन सही, हरयो घास तिन नीरे नहीं ।
सूको घास करव खाखलो, पालो इत्यादिक जो भलो ॥८६
ले राखै इतनों घर मांहि, दोष-रहित नहि जिय उपजांहि ।
नीरे झाडि उपरि जो वीर, अरु विधि तें जो छांण्यो नीर ॥८७
पीवै वासन धातु-मझार, सरद न राखै माजै मार ।
इंधन कुंडि वाल तो जाय, रांधि कांकडा खली जु मिलाय ॥८८
खीर चरमूं विरिया जेह, देव खवाय जतन तें तेह ।
स्यालै तापर जूठ डराय, जतन करै जिम जीव न थाय ॥८९

छन्द चाल

जव महिषी गाय दुहावै, जल तैं कर थनहि धुवावै ।
कपड़ौ चरई-मुख राखै, दोहत पय तापर नाखै ॥९०
ततकाल सु अगनि चढ़ावै, लकड़ी वालिर औंटावै ।
सखरौ जामण जहँ होई, तहँ दवि करै नहि सोई ॥९१
पय करणें की जो ठाम, सीलौ करि है पय ताम ।
भाजन जु भरत का मांही, जामन दे वेग जमाहीं ॥९२
जामण की जु विधि सारी, भाखी गुण-मूल मझारी ।
वैसे ही जामण दीजै, वहै टालि न और गहीजै ॥९३
इह प्रात तणी विधि जाणूं, अव सांझ तणी सु वखानूं ।
सव किरिया जानों वाही, इह विधि सुध दही जमाही ॥९४
जांवणीय वरणे की जागैं, तहँ हाथ न सखरो लागै ।
सो भी विधि कहहूँ वखाणी, सुणिज्यो सव भविजन प्राणी ॥९५
खिड़की इक जुदी रहाही, तिह धारि किवाड़ जड़ाही ।
ह्वै प्रात जवै दधि आनी, मथि है सो मेलि मथानी ॥९६
सो सगली किरिया भाखी, गोरस-विधि आगे आखी ।
लूण्यो निकलै ततकाल, औटावै सो दरहाल ॥९७
वासण में छानि धराहीं, ह्वै खरच जितौ ढकवाहीं ।
कहां वरत, कहां सुद्ध भाय, घृत गृही सोवि को खाय ॥९८
ऐसो घृत खैवे वालो, अन्तराय सुनीति प्रतिपालो ।
यह कथन कियो सव सांच, यामें न अलीकी वाँच ॥९९
ऐसी विधि निपजै नाहीं, गांवन तें हूँ न मंगाही ।
माखन लूणी वह राई, घृत खाय सु देय दताई ॥१०००
विधि वाही जेम सुल्यावै, किरिया जुत ताहि जमावै ।
दधि छांछ विरत पय लूनी, विधि कही करिय न वि ऊनी ॥१
निज घर जो घृत निपजाहीं, व्रत धरि श्रावक सो खाहीं ।
कर छ्वै न माली व्यास, हिंसा त्रस ह्वै नहि तास ॥२

प्राणी न परै जिह मांहीं, सो तो घृत सोधि कहाहीं।
घृत सो निज घर निपजइये, घृत धरि सो व्रतमें पइये ॥३
निज घर घृत विधि न मिलाहीं, व्रत धरि तव लूखौ खाहीं।
अरु घिरत सोधिको खावैं, व्रतमें वहु हरी मंगावैं ॥४
इह सोधि न कहिये भाई, जामें करुणा न पलाही।
करुणा-जुत कारज नीको, सुखदाई भवि सव ही को ॥५

दोहा

घिरत सोधिका की सुविधि, कही यथारथ सार।
अच्छी जाणि गहीजिये, वुरी तजहु निरधार ॥६

चौपाई

अव कछु क्रिया-हीन अति जोर, प्रगट्यो महा मिथ्यात अघोर।
श्रावक सों कवहूं नहिं करैं, आनमती हरषित विस्तरैं ॥७
जैनधर्म कुल-केरे जीव, करे क्रिया जो हीण सदीव।
तिन के संचय अघ की जान, कहै तासकी चाल वखाण ॥८
तिहको तजै विवेकी जीव, करवे तें भव भ्रमें अतीव।
अव सुनियो वुधिवंत विचार, क्रिया हीन वरणन विस्तार ॥९

इति सोधिका घृत-मर्यादा कथन सम्पूर्ण।



अथ मिथ्यामत कथन। दोहा

मिथ्यामति विपरीत अति, ढूंढ़ा प्रकटा जेम। तिनि वरन संक्षेपते, कहों सुनौ हो नेम ॥१०

चौपाई

स्वामी भद्रवाहु मुनिराय, पंचम श्रुतकेवलि सुखदाय।
मुनिवर अवर सहस चौवीस, चउ प्रकार संघ है गणईश ॥११
उज्जयनी में जिनदत सार, ताके भद्रवाहु मुनि तार।
चारिया कौं पहुंचै तहँ गणी, झूलत वालक वच इम भणी ॥१२
गच्छ-गच्छ विधि नहीं आहार, वारे वरष लगैं निरधार।
अंतराय मुनिवर मनि आन, पहुँचे संघ जहां वन थान ॥१३
स्वामी निमित लख्यो ततकाल, पड़िहै वारा वरष दुकाल।
मुनिवर-धर्म सधै नवि सही, अव इहां रहनो जुगतौ नहीं ॥१४
कितेक मुनि दक्षिण को गये, कितेक उज्जैनी थिर रहे।
तहाँ काल पड़ियो अति घोर, मुनिवर क्रिया-भ्रष्ट ह्वै जोर ॥१५
मत श्वेतांवर थापियो जान, गही रीत उलटी जिन वान।
तिनको गच्छ वध्यो अधिकार, हुंडाकार दोष निरधार ॥१६
तिन अति हीण चलन जो गह्यो, चरित जु भद्रवाहु में कह्यो।
ता पीछे पनरासे साल, कितेक वरष गए इह चाल ॥१७

लुंकामत प्रगट्यो अति घोर, पाप रूप जाको नहिं ओर।
तिन तें ढूँढ़ा मत थाप्यो, काल दोष गाढ़ो ह्वै वाढ्यो ॥१८

छन्द चाल

पापी नहिं प्रतिमा माने, ताकी अति निन्दा ठाने।
जिनगेह करन की वात, तिनको नहिं मूल सुहात ॥१९
जात्रा करवो न वखानै, पूजा करिवो अवगानै।
जिन-विम्व प्रतिष्ठा भारी, करिवो नहिं कहै जगारी ॥२०
जिन भाष्यो तिम अनुसारी, रचिया मुनि ग्रन्थ विचारी।
तिनकों निंदै अधिकाई, गौतम वच ए न कहाई ॥२१
ऐसे निरवुद्धी भाषै, कलपित्त झूठे श्रुत आषै।
सवको विपरीत गहावै, निज षोटे मारग लावे ॥२२
जिय उत्पत्ति भेद न जाने, समकितहू कों न पिछाने।
गुरु देव शास्त्र नहिं ठीक, किरिया अति चलै अलीक ॥२३
निजको मानैं नहिं गुणथान, छट्ठो मुनि पंद सरधान।
जामैं मुनि गुण नहिं एक, मिथ्या निज मति की टेक ॥२४
मुनि नगन रूप को धारै, चारित तेरह विधि पारै।
षटकाय दयाव्रत राखे, नित वचन सत्य जुत भाखै ॥२५
आदान अदत्तहि टारे, सीलांग भेद विधि पारे।
त्यागे परिग्रह चौवीस, गोपें तिहुँ गुपति मुनीस ॥२६
ईर्यापथ सोधत चालै, हित मित भाषाहि संभालै।
श्रावक घरि असन जु होई, विधि जोग जेम निपजोई ॥२७
भोजन के दोष छियाली, निपजावे श्रावक टाली।
चरिया को मुनिवर आही, श्रावक तिन ले पडिगाही ॥२८
मुनि अंतराय चालीस, ऊपर छह ठालीज तीस।
पावे तो लेहि अहार, इम एषणा समिति विचार ॥२९
आदान निक्षेपण धारे, पंचम समिति विध पारे।
इम चारित तेरह भाषे, जैसे जिन-वानी आषे ॥३०
गुण मूल अट्ठाइस धारी, उत्तर गुण लख असि चारी।
गिरि शिखर कंदरा थान, निरजन धरिय सुध्यान ॥३१
ग्रीषम गिरि सिर रवि-ताप, सिलाऊ परि ठाढ़े आप।
वरषा रितु तरु-तल ठाढ़े, उपसर्ग सहैं अति गाड़े ॥३२
हिम नदी तलाव नजीक, मुनि सहहिं परीषह ठीक।
निज आतम सों लव लागी, पर वस्तु सकल परित्यागी ॥३३
पूजक निंदक सम जाके, तृण कनक समान जु ताके।
इत्यादिक मुनि गुणधार, कहतें लहिये नहिं पार ॥३४

इनतें उलटी जे रीत, धारै ढूंढ़िया विपरीत। आहार जु सीलो वासी, रोटी रावड़ी सगरासी ॥३५
कांजी दुय तिय दिन केरी, वहु त्रस जीवनि की वैरी।
तरकारी हरित अनेक, ले पापी धरि अविवेक ॥३६
आदो कंदो अर सूरण, मूला त्रस थावर पूरण। ए लेय अहार मझारी, वहु केम दया विन पारो ॥३७
आथाणो त्रस जिसधाम, फासू गिनि लेहे ताम। फुनि काचो दूध महाई, वहु वार लगै रखवाई ॥३८
दुय घड़ी गए तिह माहीं, पंचेंद्री जिय उपजाहीं।
महिषी मौतणो जु खीर, तैसे ह्वै जीव गहीर ॥३९
इह भेद मूढ़ नहि जानें, अघ-वाल अघ न वखानें। पंचेंद्री तामें थाई, सुलों फांसू गणवाई ॥४०
जिय अन्नतणी दुय दाल, दधि छांछि मांहि दे डाल।
सो भोजन विदल कहांही, खाये ते पाप वढ़ाही ॥४१
अन्न दाल छाछि दधि जेह, मुख-लाल मिले तव तेह।
उतरता गला मंझारी, पंचेन्द्री जिय निरधारी ॥४२
उपजै तामाहे जानो, मन में संशय नहि आनो।
सो खैहै ढूंढ्यो पापी, करुणा तिन निश्चैं कांपी ॥४३
कव खादि अखादि विचारी, उंठ्या समझे न गवारी।
अघ उपजे वस्तु जु माहीं, भाष्यो सुनि लेहु तहांहीं ॥४४
ऐसो पापी मुख देखे, ह्वै पाप महा सुविशेखे। ऐसे कर अघ आचार, तिन माने मूढ़ गवार ॥४५
धोवण चावल हांडी को, तिन ले गिन फासू नीको।
सीलैं जल अन्न मिलाई, तामें वहु जीव उपजाई ॥४६
रवि उदय होत तिह वार, घरि घरि भटकै निरधार।
जल ल्यावें फासू भाखै, तिह सांझ लगे धरि राखै ॥४७
उपजै ता माहे जीव, घटिका दुइ मांहि अतीव।
सो वरतै पीवे पानी, करुणा न तहां ठहरानी ॥४८
घृत जल धरि तेल सुचाम, सो वहु जीवन को धाम।
तिनते निपज्यो जु अहार, सो मांस-दोष निरधार ॥४९
ऐसो दोष न मन आने, तिनको हो नरक पयाने। ढूंढा अघकेरी मूरत, इन माने पापी धूरत ॥५०
झूठी को सांच वखानै, उपदेश सु झूठो ठाणै। झूठो मारग जु गहावै, सो झूठ दोष को पावै ॥५१
शीलांग हजार अठारा, लागै तिन दोष अपारा।
परिग्रह को ठीक न कोई, कपड़ा पात्रादिक होई ॥५२
ऐसो धरि भेष जु हीन, मानें तिन मूरख दीन।
ग्यारा प्रतिमा प्रतिपालक, कोपीन कमण्डल धारक ॥५३
कोमल पीछे हैं जाके, श्रावक व्रत गिनिये ताके।
परिग्रह तिल तुस सम होई, मुनिराज धरै जो कोई ॥५४
वह जाय निगोद मझारी, जिन वाणी एक उचारी।
सो कपड़ा की कहां रीत, चौथो पात्र विपरीत ॥५५

ए भ्रमैं जगत के माहीं, दुख को नहिं अन्त गहाहीं।
तिन कहै महाव्रत धारी, ते पापी हीणाचारी ॥५६
इन माने ते संसार, भ्रमिहै न लहै कहुं पार।
मन वच तन गुपति न गोपै, पापी मुनि धरमहिं लोपै ॥५७

पिरथी जिम प्रान लहाहीं, चालै तिम भागे जाहीं।
ईर्या समिति जु किम पाली, प्राणी हिंसा किम टाली ॥५८
हित मित वच कबहूं न भाखै, जिन मत में उलटी आखै।
सम जिन भाषा न पलै है, अदया कबहूं न टलै है ॥५९

किम एषण समिति सधै है, जिनके इम पाप वंधै है।
जो दोष रहित आहार, नवि जानें वसु विध सार ॥६०
मुनि अन्तराय जे होई, तिन नाम न समझै कोई।
कुल ऊँच नीच नहिं जाणे, शूद्रन के असन जु आणें ॥६१

तंबोली जाट कलाल, गूजर अहीर वनपाल।
खतरी रजपूत रु नाई, परजापति असन गहाई ॥६२
तेली दरजी अर खाती, छिपादिक जाति बहु भांती।
मदिरा हू को जो पीवें, आमिष हु भखे सदीव ॥६३

भोजन मित भाजन केरो, ल्यावें अतिदोष घनेरो।
तिन मींटो भोजन खैहै, ते मांस दोष को पैहै ॥६४
तो भोजन की कहं वात, जाने सब जगत विख्यात।
जिहं भाजन अशन कराहीं, आमिष तिह मांझ धाराहीं ॥६५

जिन मारग एम कहाहीं, वासन जिह मांस धराहीं।
सो शुद्ध न ह्वै चिरकाल, गहिहैं सो भील चंडाल ॥६६
तिनके घर को जु आहार, पापी ल्यावे अविचार।
अरु मुनिवर नाम धरावें, सो घोर पाप उपजावे ॥६७

ते नरक निगोद मझारी, भ्रमिहै संसार अपारी।
अपने श्रावक तिन भनि है, कुल ऊँच नीच नवि गिनिहै ॥६८
तिनको कुछ एक आचार, कहिए विपरीत विचार।
निजको मानै गुणथान, पंचम श्रावक परधान ॥६९

दोहा

खत्री, ब्राह्मण, वैश्य, फुनि, अवर, पौण बहतीस। धरम गहै ढूंढा निको, अरु तिन नावे सीस ॥७०
ढूंढा तिन श्रावक गिने, आप साधु पद मान। छहों काय रक्षा सबनि, उपदेशे इह वान ॥७१
दुहुने दया छह काय की पलै नहीं तहकीक। जीव थान फासू गिनें, वस्तु गहै तहकीक ॥७२
कथन कियो ऊपर सबै, लखहु विवेकी ताहि। दुहुन चलन ह्वै एक से, इहि मारग नहि आहि ॥७३
शुद्र करम करता जिके, निज-निज कुल अनुसार। पेट-भरन उद्यम सफल, करै दया किम धार ॥७४

चौपाई

गूजर, जाट, अहीर, किसान, खेती सींचे निर निरवान।
हलवाहै त्रस को ह्वै घात, कहुं वह श्रावक पद किम पात ॥७५
पवे अहाव प्रजापति गेह, अगनि निरंतर वालत तेह।
होत घात सव जीवनि तनी, तिनकों कैसे श्रावक भनी ॥७६
अवर हीन कुल है अवतार, ढूंढ्या मत चाले निरधार।
मदिरा पीवे आमिष भखे, धरम पलति तिनके किम अखे ॥७७
विण्या विन वीवो जो नाज, घृत गुल लूण तेल वहु साज।
होय घात त्रस जीव अपार, तिनकों श्रावक कहै गँवार ॥७८
हीन करम करि पेट जु भरे, तिनपे कहुं करुणा किम परे।
जैसी जात हीन निज तणी, मानैं आप साव पद भणी ॥७९
तैसे ही श्रावक तिन तणे, कुकरम पाप उपावे घणें।
ऐसे मत को सांचो गिणे, ते पापी इम आगम भणे ॥८०

दोहा

सांचे झूठे मत तणी, करिवि परीक्षा सार। सांचो लखि हिरदय धरो, झूटो दीजे टार ॥८१

अथ श्री प्रतिमा जी की महिमा वर्णन

दोहा

श्री जिनवर प्रतिमा तणी, महिमा जो अतिसार।
सुन्यो जिनागम में कथन, मत्ति वरण्यो निरधार ॥८२

चौपाई

मिथ्यादृष्टी एक हजार, तिनकी जो महिमा निरधार।
एक मिथ्याती जैनाभास, सवही सरभर करै न तास ॥८३
जैनाभास सहस इक जोई, तिन सवही की प्रभुता होई।
सम्यक दृष्टी एक प्रमाण, तिसहि वरावर ते नहिं जान ॥८४
सम्यग्दृष्टी गिनहु हजार, एक अणु-व्रत धारी सार।
महिमा गिनहु वरावर सही, इह जिन मारग मांहे कही ॥८५
देशव्रती इक सहस सुजान, मुनि प्रमत्त गुणथान प्रमाण।
एक वरावर महिमा धार, आगे सुनहु कथन विस्तार ॥८६
मुनि प्रमत्तधर एक हजार, तिनको जो प्रभुत्व विस्तार।
इक सामान केवली सही, होय वरावर संशय नहीं ॥८७
ह्वै सामान्य केवली तेह, महिमा एक सहस्र की जेह।
समवसरन धारी जिन देव, तीर्थंकर इकसम गिणि एव ॥८८
परतखि समवसरण जुत होय, तीर्थंकर पद धारी सोय।
एक हजार प्रमाण वखान, एक प्रतिमा समानता ठान ॥८९

कोई प्रश्न करै इह जाण, तीर्थंकर इक सहस प्रमाण ।
प्रतिमा एक बराबर कही, इह महिरहै छेहरत नहीं ॥९०
ताके सम झावन को वैन, कहिये है अति ही सुखदैन ।
त्यों प्रतिमा पूजन सरधान, अति गाढ़ौ राखो प्रतिमान ॥९१

छन्द चाल

जिन समवसरण जुत राजै, मूरत उत्कृष्ट सुछाजै ।
निरखत उपजै वैराग, ह्वै शान्त चित्त अनुराग ॥९२
परतक्ष तिष्ट भगवान, समवादि सरन-जुत थान ।
पेखत हुलास वढ़ावै, भविजन हिरदय न समावै ॥९३
तिनकी वाणी सुनि जीव, तरिहै भव उदधि अतीव ।
जिनवर जब मोक्ष लहाई, तब जिन प्रतिमा ठहराई ॥९४
निरखत प्रतिमा को ध्यान, बुधजन हिय उपजै ज्ञान ।
तिनकों निमित्त भविजीव, जग में लहिहै जु सदीव ॥९५
प्रतिमा आकृति लखि धीर, उपजै वैराग गहीर ।
मन वीतरागता आनै, तप व्रत संयम को ठानै ॥९६
दरसन प्रतिमा निरधार, भविजन को नित उपगार ।
जिन मारग धरम वढ़ावै, महिमा नहि पार न पावै ॥९७
जे प्रतिमा दरशन करिहै, पूरव संचित अघ हरिहै ।
कहिये का अधिक वखान, दायक भविजन सिरथान ॥९८
ऐसी प्रतिमा जुत होई, भविजन निश्चै चित सोई ।
मन वच क्रम धरिहै ध्यान, ज्यों ह्वै सब विधि कल्यान ॥९९
कोऊ पूछै फिर येह, कहु साखि ग्रन्थ की जेह ।
तिनको उत्तर ये जानी, सुनियो तुम कहूँ वखानी ॥११००
साधर्मी द्विज सुखधाम, सहदेव नाम अभिराम ।
पूरव दिशि सेती आयो, सो सांगानेर कहायो ॥१
पढ़ियो जो ग्रन्थ अनेक, जिन मत धरे चतुर विवेक ।
गाथाबंध सततरि हजार, महाधवल ग्रन्थ अतिसार ।२
तिहकी टीका सुखदाई, लख साढ़ा तीन कहाई ।
ते श्लोक संस्कृत सारै, तिन कंठ भलीविधि धारै ॥३
तिह कथन कियो सब पाहीं, महाधवल थकी मुकहांहीं ।
ताकी लखि वा परतीत, पूछो जिनमत वहुरीत ॥४
जिहनी सांकरी विधि सेती, आगम प्रमाण कहि तेती ।
जैनी पंडित जु वखानी, परतखि ए भवि प्रानी ॥५
प्रतिमा दरसन सम लोक-मधि अवर न दूजो थोक ।
प्रतिमा पूजा जे कारक, ते होइ करम ते फारक ॥६

प्रतिमा की निन्दा करिहै, ते नरक निगोदे परि है।
प्रावर्त्तन पंच प्रकार, पूरण करिहै नहि पार ॥७
श्रावक मत जैन दिगम्बर, कुलधर्म कह्यो जिम जिनवर।
मन वच क्रम ताहि गहै है, सुर ह्वै अनुक्रम शिव पैहे ॥८
पूजा जिन प्रतिमा कीजे, पात्रनि चहुँ दान जु दीजै।
तप शील भाव-जुत पारै, अरु कुगुरु कुदेवहि टारै ॥९
विनु जैन अवर मतवारे, वातुल सम गनिए सारे।
गहलो नर जिस तिम भाखै, कुमती जिम झूठी आखै ॥१०
श्रावक कुल जिहि अवतार, जिन धर्महि तजहि गंवार।
ढूंढ्या मतको जौलैहैं, ते नरक निगोद परै हैं ॥११
सांचो झूठो न पिछाणै, अविवेक हिये में आणे।
प्रतिमा-निंदक जे जीव, तिनको उपदेश गहीव ॥१२
ताके पोतै संसार, वाकी कुछ वार न पार।
चहुँ गति दुख विविध भरन्तो, रुलिहै वहु जोनि धरन्तो ॥१३
यातें जे भविजन धीर, ढूंढामत पाप गहीर।
छांड़ौ लखि अति दुखदाई, निहचै जिनराज दुहाई ॥१४
जिनमत हिरदय अवधारो, जप तप संयम व्रत पारो।
तातें सुख लहौ अपार, थामें कछु फेर न सार ॥१५

इति श्री प्रतिमाजी की वर्णन तथा ढूंढ्या को मत निषेधन संपूर्ण।

चौपाई

अव कछु क्रिया-हीन अति जोर, प्रगटयो महा मिथ्यात अघोर।
श्रावक लां कवहूँ नहि करै, आन मती हरषित विस्तरै ॥१६
जैन धरम प्रतिपालक जीव, कर क्रिया जे हीन सदीव।
तिनके सम्वोधन को जान, कहीं क्रियातें हीन वखांन ॥१७
तिनको तजै विवेकी जीव, कर तन भव भ्रमै अतीव।
अव सुनियो वुधिवन्त विचार, क्रियाहीन वरणन विस्तार ॥१८

अथ मिथ्यामत निषेध। चौपाई

भादव गए लगै आसोज, पडिवा दिवसतणी सुनि मौज।
लड़की वहुमिलि गोवर आनि, सांझी मांडैं अति हित ठानि ॥१९
पहर आठ लौं राखै जाहि, फिर दूजे दिन मांडे ताहि।
मांडै दिन नव नव रीति, तेरसका दिन लौं धरि प्रीति ॥२०
चौदस अमावस दस दिन जाहि, सांझी वड़ी जु नाम धराहि।
मिलै पांच दस प्रौढ़ा नारी, मांडै ताहि विचारि विचारी ॥२१
हाथ पांव मुख करि आकार, गोवर का गहना तनवार।
ऊपर चिरमी जल पोस लगाय, कौड़ी फूल लगावै जाय ॥२२

इम विपरीत करैं अधिकाय, तास पापको कहैं बनाय।
खोड्यो बांभण सांझी लेन, आयो भावै वनिता वैन ॥२३
राति जगावै गावै गींत, ऐसी महा रचै विपरीत।
करि गुलधाणी दे लाहणा, आवै सो गावै पर तणा ॥२४
सुदि पड़िवा कों ताहि उतारि, नदी ताल माहे दे डारि।
ऐसी प्रभुता देखी जास, देव मान पूजत है तास ॥२५
अरु सांझी किसकी है धिया, को पोड्यो द्विज कुण की तिया।
गोवर की मांडै किम तिया, वरसा वरसी कहुं समजिया ॥२६
परगट लखि निज रां इह रीति, मांने ताहि धरैं वहु प्रीति।
पापी भेद लहे तसु नांहि, गोवर सरद रहै जा मांहि ॥२७
घटिका दोय वीत है जवै, तामें त्रस उपजत हैं तवै।
तिनके पाप तणों नहि पार, भव भव में दुख को दातार ॥२८
महा मिथ्यात तणो जे गेह, नरक तणौ दायक है जेह।
छेदन भेदन तापन जहाँ, ताडन सूलारोहण तहां ॥२९
दुख भुगतै तहं पंच प्रकार, इस मिथ्यात थकी निरधार।
जिन मत के धारी हैं जेह, सो मेरी विनती सुनि एह ॥३०
नहीं मांडि मत पूजि लगार, इह संसार बढ़ावन हार।
आन मती पूजन मन लाय, तिनसौं कछु कहनो न वसाय ॥३१

सोरठा

दिन पनरे के मांहि, मरण दिवस पित-मात को। श्रावक जे हरषांहि, ते जिन मारगतें विमुख ॥३२

छंद चाल

पित मात तृपति के हेत, भोजन वहुजन कों देत। कैसे तृपति ह्वै, तेह जिन आगम भाख्यो एह ॥३३

मुए हुए वरष घनेरे, सुख दुख भुगतै भव केरे।
तहां ते वहुरि केम वह आवै, जिन मत में इह न समावै ॥३४
सुत असन करै पितु देखे, तृपति न ह्वै परतछ पेखै।
तौ आन जनम कहा वात, जानो ए भाव मिथ्यात ॥३५
दुय कोस थको निज वाग, सींचै चित धरि अनुराग।
रूख न वढ़वारी पावै, परभव किम तृपति लहावै ॥३६
तातैं जिनमत में सार, ऐसो कह्यो न आचार।
इह घोर मिथ्यात सुजाणी, तजिए भवि उत्तम प्राणी ॥३७

आठे आसोज उजारी, अरु पूजे चेत दिहारी। करि कै घूघरी कसार, वांटै तसु घर घर वार ॥३८
गुड घिरत सुपारी रोक, नालेर धरै दे ढोक। निज वहिन भुवा कों देहै, धरि लोभ हिए वे लेहै ॥३९
लेने देने को पाप, मिथ्यात वढ़ै सन्ताप। तातैं जैनी है जेह, पूजौ न चढ्यौ कछु लेह ॥४०

सतियन की राति जगावै, पित्रनहूँ कौ जु मनावे।
वीजासण सोकि आराधै, जागरण करै हित साधे ॥४१

संजोड़ा अवर कंवारा. गोरणीय जिमावै सारा ।
तिनके करि तिलक लिलाट, पायनिदे ढोक निराट ॥४२
पैसादिक तिनकों देई, वे हरषि हरषि चित लेई ।
इह किरिया अति विपरीति, छांडौ बुध जांणि अनीति ॥४३

अडिल्ल

वीजासण को कर विझालरो डरि धरे, सो किउ घडत घडाल पातरी हिय परे ।
मूढ मान तिन पूजे घर लछमी जवै, उदै असाता भयै वेचि खाहै तवै ॥४४

दोहा

सकलाई तिन में इसी, अविवेकीन लखांहि । मुरभख में वहु मानता, उर वख सो विक जांहि ॥४५
खेत पालकी थापना, एम वनावे कूर । जिसा तिसा पाषाण परि, डारे तेल सिंदूर ॥४६

छन्द चाल

वैशाख में घर के वारे, पूजे दे जात विचारे ।
तेल वटरुवां कला तेल, ऐसे पूजा विधि मेल ॥४७
दस वीस त्रिया धरि प्रीति, गावें जु गीत विपरीति ।
सेवें तिह मानें हेव, सो जान मिथ्याती एव ॥४८
वहुते खेडा पुर गाम, इकसे न कही तसु नाम ।
तातें सकलाई माने, सुखदाता एम वखाने ॥४९
दीया सुत जो उपजांही, सुत विन तिय कोंनि रहांही ।
इह झूठ थापणो जांणी, तजिये भवि उत्तम प्राणी ॥५०
पाहण लघु धरें इक ठाहीं, पथवारी नाम कहांही ।
तिनको पूजत धरि नेह, कवहु न सुखदाता तेह ॥५१
मिथ्यात तणौ अधिकार, नरकादिक दुख दातार ।
जिन-भाषित परचित दीजै, खोटी लखि तुरत तजीजे ॥५२
आसौज है आठे स्वेत, घोटक पूजे धरि हेत ।
जिन राज एम वखानी, तिरयंच है पूजे प्रानी ॥५३
सो पाप अधिक उपजावे, कहते कछु और न आवे ।
तातैं जैनी जो होय, पसु पूजि न नरभव खोय ॥५४
दुसरा हाकादिन माहीं, लाडू पीहर ले जाहीं ।
इह रीति तजो भवि जीव, जिन-वच धरि हृदय सदीव ॥५५
जिन चैत्यन वन कें माहीं, पून्यो दिन सरद कराहीं ।
आगम में कहुँ न वखानी, विपरीत तजौ तिह जानी ॥५६
मंगल तेरसि दिन न्हावै, वसतर तन उजले ल्यावैं ।
आवे जव दिवस दिवाली, दीवा भरे तेल हवाली ॥५७

निज मन्दिर ऊपर धरि है, अति ही शोभा सो करि है।
तिन में वहु त्रस को घात, अघ घोर महा उतपात ॥५८
दीवा थाली में धरिकै, मिल है तसु घर घर फिर कै।
तिन में कछु नाहिं वड़ाई, प्राणी मरिहैं अधिकाई ॥५९
पापी कछु भेद न जानें, मन में उच्छव अति टानें।
सो पापी महा दुख पावे, भव भामरि अन्त न आवे ॥६०
भरि तेल काकडा वाले, वालक हींडहि कर वाले।
घर-घर लीये सो डोले, वालक हींडहि वच वोले ॥६१
वो देय पईसा रोक, ढिग करे एकसा थोक।
मरयाद भटै ता माहीं, ताकी तो कहा चलाहीं ॥६२
वहु हींडमाहि त्रस जीव, जलि हैं नहि संख्या कीव।
इह पाप न मन में आवे, सुत लखि दम्पति सुख पावे ॥६३
ते पापी जानो जोर, पड़िहै जो नरक अघोर।
भविजन जो निज हितदाई, किरिया इह हीण तजाई ॥६४
काती सुदि एकैं जानी, गोधन को गोवर आनी।
सांथ्यो निज वार करावे, गोर्धन तसु नाम धरावे ॥६५
जव सांझ वैल घर आवे, पूजैं तिन अति हरपावे।
सांथ्यो निज पाय खुदावे, मिथ्यात महा उपजावे ॥६६
इन हीन क्रिया को वारी, जैहै सो नरक मंझारी।
पकवान दिवाली केरो; करिहैं वरि हरप घनेरो ॥६७
दुय चार पुत्र जे थाई, तिनको दे जुदी वनाई।
हांडीय भरे पकवान, पितु मात हरप चित्त आन ॥६८
पुत्रन सिर तिलक करावें, तिनपै तो हाट पुजावें।
सिर नाय तवै दे धोक, किरिया इह अघ की कोक ॥६९
व्यापारी वहीं वणावै, पूठा चमड़ा का ल्यावै।
तिनको पूजत है जेह, लखि लोभ नहीं तसु एह ॥७०
तिथि चौथि महाव्रदि मानी, व्रत पाप उदय को ठानी।
दिन में नहि लेय अहार, निशि शशि ऊगे तिहि वार ॥७१
ले मेवो दूध मिठाई, देखों विपरीत वड़ाई।
जे चौथ मास सुदि होई, करिहै जे विवेकहिं खोई ॥७२
इम पाप थकी अधिकाई, दुरगति में वहु भटकाई।
पंदरह तिथि में इह जानी, तसु कहि संकट की रानी ॥७३
पद देव मान करि पूजै, सो अति मूरखता हूजै।
जैनी जन को नहि काम, मिथ्यात महा दुख धाम ॥७४
संकरांति मकर जव आवे, तव दान देय हरषावे।
तिल घाणी मांहि भराई, द्विज जनकों देय लुटाई ॥७५

मूला का पिंड मँगावे, ब्राह्मण के घरहि खिनावैं।
खीचड़ी बाँट हरसावैं, गिन है हम पुन्य वढ़ावै ॥७६
जहँ त्रस थावर ह्वै नाश, तहँ किम ह्वै शुभ परकाश।
अति घोर महा मिथ्यात, जैनी न करैं ए बात ॥७७
फागुण वदि चौदस दिन को, बारह मासन मैं है तिनको।
शिवरात तनो उपवास, कीए मिथ्या परकास ॥७८
होली जालै जिहि वारैं, पूजै सब भाग निवारैं।
जाको देखन नहिं जइये, कर जाप मौन ले रहिये ॥७९
पीछै वह छार उड़ावे, जल तें खेले मन भावे।
छाण्या अणछाण्या की नहीं ठीक, लंपट न गिने तहकोक ॥८०
करि चरम पोटली डोल, राखै मन करत किलोल।
यदवा तदवा मुख भाखे, लघु वृद्ध न शंका राखे ॥८१
जल नाखै आपस मांही, नर तिय नहीं लाज गहांही।
न्हावण के दिन सब न्हावै, कपड़ा उजरे तन भावै ॥८२
सनबंधी गेह जुहार, करिहै फिरिहै हित धार।
विपरीत लवण लखि एह, तामैं कछु नहिं संदेह ॥८३
मिथ्यात तणी परि पाटी, क्रिया लागे जिन वाटी।
सो भव-भव की दुखदाई, मानो जिनराज दुहाई ॥८४

दोहा

चैत्र-सित आठै दिवस, जाय सीतला थान।
गीत विविध वादित्र जुत, पूजै मूढ अयान ॥८५
भाष्यो रोग मसूरिया, जिन श्रुत वैद्यक माँहि।
करनि कांकरा एकठा, धरी थापना आंहि ॥८६

सोरठा

लखौ वड़ाई एह, वाहन गदहो तासको।
लहै हीन पद जेह, जो लघु नर हि चढ़ाइये ॥८७

दोहा

बालक याही रोग ते, मरै आव जिह छीन।
जाकी दीरघ आयु है, सो सारै नकि सीन ॥८८

सोरठा

प्रगट भई कलिकाल, इह मिथ्यात कि थापना। जे जैनी सुविशाल, याहि न मानै सर्वथा ॥८९
मेलै जे नर जाँहि, नहीं गीत सुनिकै खुसी। टका गांठि का खांहि, पाप उपावे अधिक वे ॥९०

गीताछन्द

जे चैत वदि पड़वा थकी गण-गौरि की पूजा सजै।
परभाति लड़की होय भेली गीत गावै मन रुचै ॥

मालीतणी-वाड़ी पहूँचर फूल दो वहलैं करी ।
हरपाय मन उछाह करती आसह ते निज वरी ॥९१
पूजे तहाँ तिह दिवस सो ले फूल दोय चढ़ाय के ।
पाछे वनावे हेत धरि गण-गोरि गोरि अणायके ॥
ईश्वर महेसुर करे मूरति आँखि कोंड़ी की करे ।
देखो वड़ाई नजर इमहो चित्र की थापना वरे ॥९२

नाराच छन्द

वणाय तीज कों गुणो चढ़ाई पूजि कै सही । वड़ी तियारु कन्यकाइ कंत व्रत्त को गही ॥
करें मिठान्न भोजना अनेक हर्ष मानि है । सुहाग भाव वर्त्त नाम जोषिता वखानि है ॥९३

गीता छन्द

गणगोरि की पूजा किए जो, आयु, पति की विस्तरै ।
तो लखहु परत्तछि आयु छोटी प्राय मानव क्यों मरै ॥
कन्या कुँवारीपणा ही तें तास पूजा आ चहैं ।
वारह वरष की होय विधवा क्यों न तसुकी रक्षा करै ॥९४
साहिव तणी जा करै, सेवा दिवसि निशि मन लायकै ।
धिक्कार तसु साहव पणो, कछु दिना सेव कराय कै ।
दायक सुहागनि विरद को गहि, सकति तसु अति हीनता ।
सेवा करंती वाल विधवा होय लहि पद-हीनता ॥९५

तोटक छन्द

सिगरी नर नारि इहै दर से, धरि मूरखता फिरि कै पर से ।
कछु सिद्ध लहै नहिं तास थकी, तिहतैं तजिए तनु पूजन की ॥९६

गीता छन्द

भूपन वसन पहिराय, वहुविधि अधिक तिय मिलिकै गही ।
ले जाइ पुर से निकसि वाहर पहुंचि है जल तीर ही ॥
गावे विनोद अनेक विनरी नीर में तसु डारही ।
अति हरप धरती हरष करती आय गेह सिधारही ॥९७

दोहा

इह प्रभुता सहु देखि कै, गौरी ईश महेश । वाकूं जल में खेयतें, डर न कियो लव-लेश ॥९८
रहत सकत तिह देखिये, करिविथापना मूढ़ । महा मिथ्याती जान तिन, धारे दोप अगूढ़ ॥९९

सोरठा

इत पूजैं फल येह, कुगति अधिक फल भोगवे । यामें नहिं सन्देह, जैनी को इह योग्य नहिं ॥१२००
दुर्लभ नर भव पाय, जैन धरम आचार जुत । ताको चित विसराय, पूज करै गण-गौरिकी ॥१

सो मिथ्यात को मूल, त्रिविधि तजौ तिन सुखद लखि।
होय वरम अनुकूल, ताते भव-भव सुख लहै ॥२

सवैया ३१

चांवड़ा वराही खेतपाल दुरगा भवानी पंथवार देव ईंट थापना वखानिये।
सत्तनामी नाभिगं ललितदास पंथी आदि नाना परकार भव प्रगट जानिये॥
झाझाकलवानी डाल भेव दीप वो मुवा की मंत्र ते उतारै भूत डाकिनी प्रमानिये।
एती विपरीत घोर थापना मिथ्यात जोर अहो जैनी इन्हें कष्ट आए हू न मानिये ॥३

सोरठा

पीपर तुरसी जान, एकेंद्री परजाय प्रति। इन्हें देव पद ठान, पूजे मिथ्या दृष्टि जे ॥४

सवैया

ख्वाजे मीर साह अजमेर जाकी जाति वोलै पुत्र के गले में बाँधी घालै चाम पाटकी।
मेरे सुत जीवै नाहिं याते तुम पाय अहो सात वर्ष भए नीत पायनते वाटकी॥
जलालदीय पंच पीर और वड़ी परिरनै जाय करे चूरिमो कुवुद्धि जिनराटकी।
फातिहा पढ़वावैं जिंदा दरवेश को जिमावैं इह कलिकाल रीति मिथ्यात के थाट की ॥५

दोहा

तुरक आन के देव को, मानत नाहिं लमार। हिन्दू जैनी मूढ़मती, सेवैं वारम्वार ॥६
या समान मिथ्यात जग, और नहीं है कोय। दुखदायक लखि त्यागिहै, महाविवेकी सोय ॥७

स ३१

भादों वदि नौमी दिन गारिको वनाय घोड़ो तापरि चढ़ावै चहुँ वाण गोगो नाम ही।
वावड़ी में मेलि कुम्भकारि तिय कर धर लोभते पुजावत फिरै है धाम धाम ही॥
ताको सुखदाई जानि मूढमती मानि ठानि देत दान पाय नमि सेवे गाम गाम ही।
मिथ्यात्व की रीति एह करै निरवुद्धी जेह कुगति लहै है जेह वांका दुख पावही ॥८
भादों वदि वारस दिवस पूजै वछ गाय राति को भिजोवे नाज लाहण के काम ही।
निकसैं अंकूरा तिनि मांहि जे निगोदरासि हरप अधिक वाँटैं ठाम ठामही।
जीवनि को नाश होय मानत तिवहार लोय कैसे सुख पावे सोय पशू पूजे नाम ही।
महा अविचारी मिथ्यावुद्धीचारी नर नारी ऐसी क्रिया करे श्वभ्र लहै दुख धाम ही ॥९

दोहा

हलद माहिं रंग सूत को, गाज लेत है तेह। सुणै कहानी खोलते. रोट करत है तेह ॥१०
धोक देय पूजैं तिसे, कहि सुखदाई एह। नाम ठाम नहिं देवकौ, भव भव में दुख देह ॥११

चाल छन्द

नारी जो गर्भ धरे है, वालक परसूत करे है।
जनमें वालक जिहि वार, तसु औतिह लेत उतार ॥१२

केउन के ऐसी रीति, गावैं त्रिय मन वर प्रीति ।
गाडैं चित अति हरपाई, ते ओलि हाट ले जाई ॥१३
केऊ रोटी के मांही, गाडूं के देत नखाहीं ।
तामाही जीव अपार, गाड़े सो हीणाचार ॥१४
ते अदया के अधिकारी, पावैं दुरगति दुख भारी ।
जिनके करुना मन मांहीं, ताकों दे दूरि नखाहीं ॥१५
दस दिन को ह्वै जव वाल, सूरज पूजें तिह काल ।
लागैं तसु दोप मिथ्यात, जिन मारग ए नहीं घात ॥१६
तीन्है जव न्हवण करै है, जलथानिक पूजन जैहै ।
जल जीवन को भंडार, एकेंद्री त्रस अविकार ॥१७
जैनी जिनके घर मांही, संकाचित मांहि धराहीं ।
जलथानक जाय न दूजे, घरमाहि परहंडी पूजे ॥१८
ताको है दोष महंत, ततक्षिण तजिए गुणवंत ।
दिन तीस तणो ह्वै वाल, जिन मारग में इह चाल ॥१९
वसु दरव मनोहर लेई, चैत्याले गमन करेई ।
ते वालक अंक मझारी, तिह साथ चलैं वहु नारी ॥२०
गावैं जिन गुण हरपंती, इय मंदिर जिन दरसंती ।
भगवंत चरण सिरनाय, पुनि नृत्य रचैं वहु भाय ॥२१
वाजित्र विविधि के वाजे, जामाँ घन अंवर गाजे ।
जिन भाव हरखि धरि सेवैं, तसु जनम सफलता लेवैं ॥२२
श्रुत गुरु पूजें वहु भाई, जिनकी युति मैं मन लाई ।
भाषै अति उत्तम वैन, सव जन मन कों सुख दैन ॥२३

दोहा

जिन श्रुत गुरु पूजा पढ़ै, आवे अपने गेह । यथा सकति अरथी जनहि, दान हरपतें देय ॥२४
सनमानें परिवार कों, यथायोग्य परवान । जैनी इह विध पुत्र कों, जनम महोछो ठाम ॥२५
आठ वरष लों पुत्र जो, करत पाप विस्तार । तास दोप पितु मातु को, ह्वै है फेर न सार ॥२६
यातें सुनि निज कार मैं, राखै जे मति मान । ताहि पढ़ावै लाभ लखि, ह्वै तव विद्यावान ॥२७

चाल छन्द

अव व्याह करन की वार, किरिया जे ह्वै अविचार ।
प्रथमहि जव लगन लिखावै, सज्जन दस वीस वुलावै ॥२८
चावल ह्वै जिन कर मांहीं, पूजा सव लगन कराहीं ।
करि तिलक विदा तिन कीजे, मिथ्यात महा सु गिनीजे ॥२९
मांडै फिरि भीत विनायक, कहि सिद्ध सकल सुखदायक ।
नर देह वदन तिरयंच, सो तो सिधि देय न रंच ॥३०

तातें जैनी जो होइ, ए जैन विनायक सोई।
साजी अवटावे जेह, पापड़ करण को तेह ॥३१
जल तीन चार दिन ताईं, राखै नहीं संक धराहीं।
वसु पहर गये तिन माहीं, सनमूर्छन जे उपजाहीं ॥३२
मंग्यो घर घर पहुंचावे, वहुतो सो पाप वढ़ावै। वसुजाम मांहि वह नीर, वरतैं जे वुद्ध गहीर ॥३३
उपरांति दोष अति होई, मरयाद तजो मति कोई।
अरु वड़ी करण कैं ताईं, भिजवावै दालि अथाहीं ॥३४
सो दालि धोय सव नाखे, वहुविरियां लगन न राखे।
घटिका दुय मैं उस माहीं, सन्मूर्च्छन जीव उपजाहीं ॥३५
यातें भविजन मन लावे, तस तुरतहि ताहि सुकावे।
धोवण को पानी जेह, नाखे वहु जतन करेय ॥३६
वसु सरद रहै नहीं जातै, वीखरिवानांसै यातैं।
सांझै जो दालि पिसावैं, वासन भरि राति रखावै ॥३७
उपसावैं अधिक खटावैं, उपजै त्रस वारन पावै।
फुनि लूण मसाला डारैं, करतै मसलैं वहुवारैं ॥३८
इम जीवनि नास करंती, मनमाँहीं हरष धरंती।
निज परतिय वहुत वुलावे, तिनपै ते वड़ी दिवावे ॥३९
सो पाप अनेक उपावे, कहते कछु ओर न पावै।
करुणा जाके मनि आवे, सो इह विधि वड़ी निपावे ॥४०
उनहैं जलदालि भिजोवे, प्रासुक जल तैं फिर धोवे।
किरिया को दोष न लावे, सों दिन में कली करावे ॥४१
ततकाल वड़ी तसु देह, उपजावे पुण्य न छेह।
स्याणों जन अवर अयाणो, दुहुं व्याह करे इह जाणो ॥४२
किरिया में भेद अपार, इक सुख दे इक दुखकार।
जाके करुणा मनमाँही, अविवेक न क्रिया कराहीं ॥४३
छाणां की गाडो आने, अविवेक की पूजा ठाने।
लकड़ी को थम वनाव, ताकों तिय पूजण आवे ॥४४
गावंती गीत घनेरा, जो जो जिह थानक केरा।
माटी पूजैं करि टीकी, कारण लखि सवही को ॥४५
संकडी राखी दिन ऐ है, तिर्यंचाकि पूजणो जै हैं।
तिसि को डोरे वंधवावैं, परियण सज्जन मिलि आवैं ॥४६
तह पूज विनायक करिके, रोली पूजैं चित धरिके।
अरु वार वार विनायक, पूजे जाना सुखदायक ॥४७
इन आदि क्रिया विपरीति, करिहैं मूरख धरि प्रीति।
मिथ्यात भेद नहि जाने, अघ को उर मन नहि आने ॥४८

अध तैं ह्वै नरक वसेरा, वोर न आवे दुख केरा।
यातैं सुनि वुध जन एह, मिथ्यात क्रिया तजि देह ॥४९
तातैं भव भव सुख पावै, आगम जिन राज वतावै।
यातैं सुख वांछक जीव, आज्ञा जिन पालि सदीव ॥५०
करि है जे क्रिया विवाह, सिव मत माफिक यह राह।
मिथ्यात दोप इह जाते, जैनी को वरजी यातैं ॥५१
पूरव दिस ज्योतिस जैन, कछुयक उद्योत सुख दैन।
रहियो दिन माफिक व्याह, जैनी वरि करे उछाह ॥५२
तामें मिथ्या नहि दोप, सिवमत विधि हूँ नहीं पोष।
जैनी श्रावक जो पंडित, जिनमत आचार जु मंडित ॥५३
ते व्याह करावैं आई, मन में शंका न वराई।
तिन हूँ स्यों आप समाही, सुत वेटी सगपन थाहीं ॥५४
प्रथमहि जो व्याह सँचैहै, जिन मंदिर पूज रचै है।
वाजित्र अनेक वजावें, युवती जन मंगल गावें ॥५५
कन्या वर कों ले जाँही, जिन चरणनि नमन कराहीं।
जिन पूजि रुआवे गेहै, पीछे विधि एम करे है ॥५६
सज्जन परिवार संतोष, रूपित भूषित जन पोषे।
जिन मत विधि पाठ प्रमाणैं, अपराजित मंत्र वषाणैं ॥५७
वर कन्या दोहुँ कर जोड़, फेर कराय वरी कोड़।
समवीजन असन करावे, दुहूँ तरफहि हरप वढ़ावे ॥५८
देवो निज सकति प्रमाण, कन्या वर भूपण दान।
इह विधि जे व्याह करांही, मिथ्यात न दोष लगाहीं ॥५९
गुरु देव धरम परतीत, वारो जन की इह रीति।
तिनको जस है जगमाहीं, दूपण मिथ्यात तजाहीं ॥६०

दोहा

श्री हणवन्त कुमार की, मूढ़नि घरि चित प्रीति। गांम गांम की थापना, महाघोर विपरीत ॥६१

चाल छन्द

मूरति पाषण घड़ावै, तसु ऐसे अङ्ग वनावे।
मानुप कैसे कर पाय, वन्दर को सो मुख थाय ॥६२
लंबी पूंछ जु अधिकाई, मूरति इस भाँति रचाई।
कहु इक क्षत्री जु चुणावै, कहुं मढि रचिकै पधरावै ॥६३
कहुँ चौड़े निकटाहि गाम, कहुं कांकड़ दूरहि वाम।
तिनतेल लगावे पूर, चरचै कों वीरू सिन्दूर ॥६४॥
कहिहै तसुखेड़ा देव, वहु जन तिह पूजैं एव।
पापी जन भेद न जानैं, जिह आगे अदया ठानैं ॥६५

चौपाई

जात्री दूर दूर का घणा, आवै पायनि में तिह तणा।
जीव वद्ध करि तास चढ़ाय, निह्चैते नरकहि जाय ॥६६
कामदेव हणमन्त कुमार, विद्याधर कुल में अवतार।
तीर्थंकर विनु जग नर जिते, तिह-सम रूपवान नहिं तिते ॥६७
वन्दरवंशी खगपति जान, धुजा मांहि कपि चिह्न वखान।
माता अंजनी जाकी जानी, पवनंजय तसु पिता वखानी ॥६८
दादी खगपति नृप प्रह्लाद, जैनधर्म धरि चित अह्लाद।
पालै देव गुरु श्रुत ठीक, महाशीलधारी तहकीक ॥६९
हणुकुमार दीक्षा धरि सार, मोक्ष गये सुख लहै अपार।
ताको भाषै कपि को रूप, ते पापी पड़िहैं भवकूप ॥७०
आनमती सों कछु न वसाय, जैनी जन सों कहुं समझाय।
जिनमारग मैं भाष्यों यथा, तिह अनुसार चलौ सरवथा ॥७१
गंगा नदी महा सिरदार, जाको जल पवित्र अधिकार।
जिन पषाल पूजा तिह थाकी, करिये जिन आगम में बकी ॥७२
जैनी श्रावक नाम धराय, हाड रु लावे तिह पितु माय।
धन्य जनम मानै जग आप, गंगा घालै माय रू वाप ॥७३
आनमती परशंसा करे, तिन वच सुनि चित हरषहि धरे।
मूढ़ धरम अघ भेद न लहैं, वातुल-सम जिम तिम सरदहै ॥७४
पदमद्रह हिमवन ऊपरी, ताइहतें गंगा नीकरी।
विकल त्रस जल में नहीं होय, वहुदिन रहै न उपजै वोय ॥७५
जिस पर जाय तजै ततकाल, और ठाम उपजै दरहाल।
हाड रु लाए गंगा माहिं, कैसे ताकी गत्ति पलटाहि ॥७६
जैनी जन तिन शिक्षा एह, जैन विरुद्ध कीजे है तेह।
ते करिये नहीं परम सुजान, तिम उत्तम गति लहै पयाण ॥७७

अथ मरण की क्रिया को कथन

दोहा

मरण समय कीजै क्रिया, आगमते विपरीत।
पोषक मिथ्यादृष्टि की, कहूँ सुनहुँ तिन रीत ॥७८

चौपाई

पूरी आयु करवि जे मरे, मेल्हि सनहत्ती ए विधि करे।
चून पिण्ड का तीन कराय, सो ताके कर पास धराय ॥७९
भ्रात पुत्र पोता की वहू, धरि नालेष्ट धोक दे सहू।
पान गुलाल कफन पर धरै, एम क्रिया करि लें नीसरै ॥८०

दग्ध क्रिया पाछे परिवार, पानी देय तवै तिह वार।
दिन तीजो सो तीयो करे, भात सरा इम ताके घरे ॥८१
चाँदी सात तवा परिडारि, चन्दन टिपकी दे नर नारि।
पानी दे पत्थर खटकाय, जिन दर्शन करिकै घर आय ॥८२
सव परिजन जीमत तिहिं वार, वांवां करते गास निकार।
सांझ लगै तिहि ढांकरि खाय, गाय वछाक देय खुवाय ॥८३
जिह थानक मूवो जन होय, लीपै ठाम करै सुख होय।
फेरे ता ऊपरि के रडी, ए मिथ्यात क्रिया अति वड़ी ॥८४
ए सव क्रिया जैन मत माँहि, निंद सकल भाषै सक नाहि।
अवर क्रिया जे खाटी होय, सकल त्यागिए वुध जन सोय ॥८५
जव जिय निज तजि कै परजाय, उपजै दूजी गति मैं जाय।
इक दुय तिन समये के मांहि, लेइ आहार तहां सक नाहि ॥८६
गति माफ़िक पर्यापति धरै, अन्त मुहूरत पूरो करै।
जिह गति ही में मगन रहाय, पिछलो भव कुण याद कराय ॥८७
पिंड मेल्हि तिहि कारण लोय, धोक दिये जै लै नहीं सोय।
पाणी देवे की जो क़हे, मूए को कवहुं न पहुँचिहैं ॥८८
भात सराई काकै हेत, वह तो आय आहार न लेत।
जाकै निमित्त काढ़िये गास, पहुंचै वहै यहै मन आस ॥८९
सो जाणै मूरख की वाणि, मूवो गास लेय नहिं आणि।
गउ के रडी गास ही खाहि, अरे मूढ किम पहुँचै ताहि ॥९०
मृत्यकभूमि फिरै के रडी, सो मिथ्यात भूल अति वड़ी।
उलटी किरिया ते ह्वै पाप, जो दुरगति दुख लहै संताप ॥९१
यातैं जैन धरम प्रति पाल, जे शुभ क्रिया अझूठी चाल।
तिनहिं भूलि मति करियो कोय, जो आगम हिरदै दृढ़ होय ॥९२
पूरी आयु करिवि जिय मरै, ता पीछे जैनी इम करे।
घड़ी दोय मैं भूमि मसान, ले पहुँचे परिजन सव जान ॥९३
पीछे तास कलेवर माहिं, त्रस अनेक उपजै सक नाहिं।
मही जीव विन लखि जिह थान, सूकौ प्रासुक ईंधण आन ॥९४
दगध करिवि आवै निज गेह, उसनोदक स्नान करेह।
वासर तीन वीति है जवै, कछु इक सोक मिटण को तवै ॥९५
स्नान करिवि आवे जिन-गेह, दर्शन करि निज घर पहुँचेह।
निज कुल के मानुप जे थांय, ताके घर तैं असन लहाय ॥९६
दिन द्वादश वीते हैं जवे, जिन मन्दिर इम करिहै तवे।
अष्ट द्रव्य तैं पूज रचाय, गीत नृत्य वाजित्र वजाय ॥९७
शक्ति जोग उपकरण कराय, चंदोवादिक तासु चढ़ाय।
करिवि महोछव इह विधि सार, पात्र दान दे हरप अपार ॥९८

परिजन पुरजन न्योति जिमाय, यथाशक्ति इम शोक मिटाय।
अरु परिजण सूतक की वात, सूतक विधि में कही विख्यात ॥९९
ता अनुसार करे भवि जीव, हीण क्रिया को तजो सदीव।
इह विधि जैनी क्रिया करेय, अवर कुक्रिया सवहि तजेय ॥१३००

अथ सूतक-विधि लिख्यते। उक्तं च मूलाचार उपरि भाषा

त्रोटक छन्द

इम सूतक देव जिनिन्द कहै, उतपत्ति विनास वि भेद लहै।
जन में दस वासर को गनिए, मरिहै जव वारह को भनिए ॥१
कुल में दिन पंच लगी कहिये, जिन पूजन द्रव्य चढ़े नहि ये।
परसूत भई जिह गेह मही, वह गाम भलो दिन तीस नहीं ॥२

चौपाई

चेरी महिषी घोड़ी गाय, ए घर में परसूतिज थाय।
इनको सूतक इक दिन होय, घर वारे सूतक नहिं कोय ॥३
महिषी क्षीर पक्ष इक गए, गाय दूध दिन दस गत भये।
छेली आठ दिवस परमाण, पाछे पय सवको सुध जाण ॥४
जनम तणो सूतक इह होय, मरण तणौ सुनिये अव लोय।
दिन वारह इह सूतक ठानि, पीढ़ी तीनि लगै इक जानि ॥५
चौथी साखि दिवस दस आय, पंचम पीढ़ी षट दिन जाय।
षष्ठी साखि चार दिन कहे, साख सातमी तिहु दिन रहे ॥६
अष्टम साखि अहो निसि सोग, नवमी जामहि दोय नियोग।
दसमी हीन मात्रही जाणि, सूतक गोत्रनि गहे वखाणि ॥७
करि संन्यास मरे जो कोय, अथवा रण में जूझै सोय।
देशांतर में छोड़ै प्रान, वालक तीस दिवस लों जान ॥८
एक दिवस इनको ह्वै सोग, आगे अवर सुनो भवि लोग।
पीढ़ो वालक दासी दास, अरु पुत्री सूतक सम भास ॥९
दिवस तीन लों कह्यों वखान, इसकी मरयादा में जान।
वनिता गरभ पतन जो होय, जितना मास तणी थिति सोय ॥१०
जितने दिन को सूतक सही, पीछे स्नान शुद्धता लही।
पति का मोह थकी तिय जरे, अथवा अपघातक जु करे ॥११
अरु निज परि मरि है जो कोय, इन तिनहूँ की हत्या होय।
पखवारा सूतक ता तणों, आगे अवर विशेष जो भणों ॥१२
जाके घर के असन रु नीर, खाय न पीवै वुद्ध गहीर।
अरु श्री जिन चैत्यालय मही, द्रव्य न चढै रु आवै नहीं ॥१३
वीति जाय जव ही छह मास, जिन पूजा उच्छव परकास।
जामैं पंच तासु के गेह, जाति मांहि तव आवै जेह ॥१४

मरयादा ऐसी को छांड, और भांति करवा नहिं मांड ।
जो जिन आगम भाखी रीत, सो करिए नित मन धर प्रीत ॥१५

कुंडलिया

सूतक क्षत्री गेह पंच वासर कह्यो, ब्राह्मण गेह मझारि दिवस दस ही लह्यो ।
अहो रात्रि दस दोय वैश्य घर जाणियैं, सब सूद्रनि के सूतक पाप वखानिये ॥१६
ऋतुवंती तिय प्रथम दिवस चंडालणी, ब्रह्मघातिका दिवस दूसरा में भणी ।
त्रितिय दिवस के यांहि निंदिसम रजकणी,
वासर चोथे स्नान क्रियासों सुव भणी ॥१७
जाके घर में नारि अधिक है दुष्टणी, जाकै किरिया हीण सदा पूरव भणी ।
व्यभिचारणि पर-पुरुष रमण मति है सदा,
ताके घर को सूतक निकसै नहिं कदा ॥१८

सोरठा

को कवि कहै वनाय, ताके अवगुण को कथन ।
प्रायश्चित न समाय, जिहि दिन दिन खोटी क्रिया ॥१९

कुंडलिया

अरु जाकै घर त्रिया दया व्रत पालनी, सत्य वचन मुख कहै अदत्तहिं टालिनी ।
ब्रह्मचर्य को धरै सती सव जन कहै, पतिवरता पति भक्ति रूप नित ही रहै ॥२०
जिनवर की सो पूज करै नित भाव सों, पात्रनि को दे दान महा उच्छाह सों ।
सूतक पातक ताके घर नहिं पाइये, प्रायश्चित तिय तिहि कों केम वताइये ॥२१

दोहा

इह सूतक वरनन कियो, मूलाचार प्रमान ।
तिह अनुसार जु चालिहै, ता सम और न जान ॥२२

सोरठा

भाषा कीनी सार, जो मत संशय ऊपजै ।
देखो मूलाचार, मन संशयो भाजै सही ॥२३

इति सूतक विधि

अथ तमाखू भांग निषेध वर्णनम्

चाल छन्द

सुनियै वुध जन कलिकाल, प्रगटी होणी दोय चाल ।
इक प्रथम तमाखू जानो, दूजी विजियाहि वखानो ॥२४
सुनिलेहु तमाखु दोष, अदया कारण अघ कोप ।
निपजन की विधि है जैसें, परगट भाषत हौं तैसें ॥२५

तसु हरित तोडि कै पान, सांजी जलतै छिड़कांन।
गदहा को मूत्र जु नांखै, बांधिरु जुडाधरि राखै ॥२६
दिन वहुत सरदता जामैं, त्रस जीव ऊपजैं तामैं।
तिनकी अदया है भूरि, करुणा परि है नहिं मूरि ॥२७
पिरथी में आगि डराहीं, तिनिके जिय नास लहांही।
धूवां मुखसेती निकसै, तबवाय जीव वहु विनसै ॥२८
थावर की कौन चलावैं, त्रस जीव मरण वहु पावै।
दुरगन्ध रहै मुख मांहीं, कारे कर ह्वै अधिकांहीं ॥२९
उत्तम जन ढिग नहिं आवै, निंदा सब ठाम लहावै।
दुरगतिहिं दिखावे बाट, सुरगति कौं जांणि कपाट ॥३०
अतिरोग वढावे स्वास, ऐसैं नरकी का आस।
दोषीक जानि करि तजिए, जिन आज्ञा हिरदय भजिए ॥३१
उपवास करै दे दान, किरिया पालै धरि मान।
पीवै हैं तमाखू जेह, ताके निरफल ह्वै एह ॥३२
अघ-तरु सिंचन जल-धार, शुभ पादप-हनन कुठार।
वहु जनकी झूटि घनेरी, दायक गति नरकहि केरी ॥३३
इह काम न वुधजन लायक, ततक्षिण तजिये दुखदायक।
के सूंघे कैऊ खेहैं, तेऊ दूषण को लैहैं ॥३४

दोहा

भांग कसूंभो खात ही, तुरत होत वै रोस।
काम वढ़ावन अघ करन, श्री जिनवर पद सोस ॥३५
अतीचार मदिरा तणों, लागै फेर न सार।
जग में अपजस विस्तरे, नरक लहै निरधार ॥३६
लखहु विवेकी दोष इह, तजहु तुरत दुखधाम
षट मत में निन्दित महा, हनै अरथ शुभ काम ॥३७

मरहटा

इह जगमाहीं अति विचराहीं क्रिया मिथ्यात जु केरी।
अदया को कारण शुभगति-वारण भव-भटकावन फेरी ॥
करिहै अविवेकी ह्वै अति टेकी तजिकै नेकी सार।
धरि मन चित आनै अघही जानै कौन वखानै पार ॥३८
तामैं रमि रहिया ग्रह ग्रह गहिया तिय वच सहिया तेह।
मन में उर आनै कहैं सु वखानै वचन वखानै जेह ॥
नरपद जिन पायो वृथा गमायो पाप उपायो भूरि।
अस मन में रमिहै कुगुरुन नमि है भव-भव भ्रमिहै कूर ॥३९

किरिया लखि ऐसी भाषी तैसी तजिय वैसी वीर।
ताते सुख पावे अघ नसि जावे जो मन आवें वीर॥
जिनभाषित्त कीजें निज रस पीजे कुगति हे दीजें नीर।
भव भ्रमणहि छांड़ो सकतिह मांड़ो उतरो भवदधि तीर॥४०

अथ ग्रहशांति जोतिष वर्णन लिख्यते

चौपाई

जोतिस चक्रतणी सुनि व्रात, जम्बूद्वीप माहि विख्यात।
दोय चन्द सूरिज दो कहे, जैनी जिन आगम सरदहे॥४१
इक रवि भरत उदै जब होय, दूजो ऐरावति में जोय।
दुहुनि विदेह माहि निसि जाणि, जोतिस चक्र फिरे इह्वाणि॥४२
भरत अरु ऐरावति निसि जबै, दुहुन विदेह दुहू रवि तबै।
इक पूरब विदेह रवि जान, अपर विदेह दूसरो मान॥४३
फिरते रवि शशि को इह भाय, आदि अन्त थिरता नहि थाय।
एक चन्द्रमा को परिवार, आगम भाष्यो पंच प्रकार॥४४
शशि रवि ग्रह नक्षत्र जाणिये, पंचम सहु तारा ठाणिए।
तिनकी गिनती इह विधि कही, एक चन्द्रमा इक रवि सही॥४५
ग्रह अठ्यासी अवर नक्षत्र, भाषै अट्ठाईस विचित्र।
छासठ सहसरु नव सय सही, ऊपरि पचहत्तरिकों गही॥४६

अडिल्ल छन्द

पंच अंक इन ऊपर चौदह सुनि हिये, अंक भये उगणीस सकल मेले किये।
छासठ सहसरु नव सय पचहत्तर भणे, कोड़ा कोड़ी तारा इतने गण गणे॥४७

चौपाई

एक चन्द्रमा को परिवार, तैसो दूजा को विस्तार।
मेरुतणी परदिक्षणा देई, थिरता एक निमिष ना लेई॥४८
जिन आगममें इह तहकीक, आनमतीकै सो नहि ठीक।
जिन मत जोतिष विच्छिति भई, अट्ठासी ग्रह भेद न लई॥४९

दोहा

प्रगट्यो शिवमत जोर जब, पंडित निजबुधि धार।
ग्रन्थ कियो जोतिष तणों, तिम फेल्यो विस्तार॥५०
आदित सोम रु भूमि-सुत, बुध गुरु शुक्र सुजान।
राहु केतु शनि ए सकल, नव ग्रह कहे बखान॥५१
चौथो अष्टम बारहों, अरु घातीक बनाय।
साड़े साती शनि कहैं, दान देहु समथाय॥५२

चालछन्द

तंदुल रूपो सित वास, रवि शशि को दान प्रकास।
रातो कपड़ो गोधूम, तांवो गुल्द्यौ सुत भूम ॥५३
वुध केतु दुहूँ इकसेही, मूंगादि कर्ख्यो इत देही।
गुरुज वसन द्यौ हेम, अरु दालि वनन करि प्रेम ॥५४
जिम कहे शुक्र को दान, तिमही दे मूढ़ अयान।
शनि राहु श्याम भणि लोह, तिल तेल उड़द तद्योह ॥५५
हस्ती अरु घोटक श्याम, जुत्त श्याम विलरथ नाम।
इत्यादिक दान वखानै, ग्रह शान्ति निमित मन आनै ॥५६
नवग्रह सुरपद के धारी, तिनके नहिं कवल अहारी।
किह काज नाज गुल दैहै, सुर किम हि तृपतिता लैहै ॥५७
हाथी घोड़ा असवारी, तिनि निमित देह उर धारी।
वन के विमान अतिसार, सुवरण नग जड़ित अपार ॥५८
भूपरि कछु पाय न चालै, किह कारण दानहि झालै।
तातें ए दान अनीति, शिवमत भाषै विपरीति ॥५९
वालक जनमें तिय कोई, मूला असलेखा होई।
दिन सात वीस परंभाणे, वनिता नहिं स्नान जु ठानै ॥६०
पति पहिरै वसन मलीन, वालक निज स्वाद नवीन।
सिर दाढ़ी केस न ल्यावें, स्नानहुँ करिवो नहिं भावै ॥६१
दिन ह्वै सव जाय वितीत, किरिया वहु रचै अनीति।
द्विज को निज गेह वुलावे, वह मूला शांति करावे ॥६२
तरु जाति वीस पर सात, तिनके जु मंगावे पात।
इतने ही कूवा जानी, तिनको जु मंगावे पानी ॥६३
इतने ही छाहि जु केरा, सो फूस करै तस भेरा।
अरु सताईस कर टूक, सीधा इतने ही अचूक ॥६४
दक्षिणा एती जु मंगावे, सामग्री होम अनावै।
करि अगिनि वाल अगियारी, घृत आदिक वस्तु जु सारी ॥६५
होमें करि वेद उचारे, इह मूल शांति निरधारे।
पाछे फिर एम कराई, वह फूस जो देय जलाई ॥६६
वालक पग तेल जु माहीं, परियण को देहि वुलाई।
सवहीनें वालक कै पाय, कहि ढोल द्योह सिरनाय ॥६७
सव मुख वच एम कहावे, हमते तू वड़ो कहावे।
ऐसी विधि शिवमत्त रीति, जैनी करिहै धरि प्रीति ॥६८
धरम न अर्थ भेद लहाहीं, किम कहिए तिन शठ पाहीं।
ते अघ उपजावे भारी, तिनके शुभ नहीं लगारी ॥६९

गुरुदेव शासतर प्रीति, धरिहै जे मन धरि प्रीति।
तें ऐसी क्रिया न मंडै, अघ-कर लखि तुरतहि छंडै ॥७०
सतवीस नक्षत्र जु सारे, बालक ह्वै सकल मझारे।
जाके शुभ पूरब सार, सो भुगतै विभव अपार ॥७१
जाके अघ ह्वै प्राचीन, सोइ यहै दलिद्री हीन।
ए दान महादुख दाई, दुरगति केरे अधिकाई ॥७२
मिथ्यात महा उपजावे, दर्शन सिव-मूल नसावे।
निज हित वांछक जे प्रानी, ए खोटे दान वखानी ॥७३
जिनमारग भाष्यौ एह, विधि उदै आय फल देह।
तैसो भुगते इह जीव, अधिको ओछो न गहीव ॥७४
जाके निश्चय मन माहीं, विकलप कवहूं न कराहीं।
मन मांहि विचारै एह, अपनो लहनो विधि लेह ॥७५

दोहा

निमित तास चित पूजसी, अधिका जे द्रव्य लाय।
कोटि जनम करतो रहो, ज्यों को त्यों ही थाय ॥७६
ग्रह की शांति निमित जो, विकलप छूटै नाहि।
भद्रवाहु कृत श्लोक में, कहो जेम करवांहि ॥७७

अडिल्ल

नमसकार कीरति न जगत गुरु पद लही,
सद गुरु मुखतै कथन सुण्यो जो होहि सही।
लोक सकल सुख निमित कह्यो शुभ वैन कों,
नवग्रह शांतिक वर्णन सुनिये चैनकों ॥७८

नाराचछन्द

जिनेंद्र देव पासेव खेचरीय लाय है, निमित्त तासु पूजि जैन अष्ट द्रव्य लाय है।
सुनीर गंध तंदुलै प्रसून चारु नेवजं, सुदीप धूप औ फलं अनर्घ सिद्धदं भजं ॥७९

चालछन्द

सूरज क्रूर जव थाय, पदमप्रभ पूजै पाय।
श्री चंद्रप्रभु पूजा तैं, सिद्ध दोष न लागै तातैं ॥८०
जिन वासुपूज्य पद पूजत, भाजै मंगल दुख धूजत।
वुध क्रूर पण जव थाय, वसु जिन पूजै मन लाय ॥८१

अडिल्ल

विमल अनन्त सुधर्म शान्ति जिन जानिए, कुन्थु अरह नमि वर्धमान मन आनिए।
आठ जिनेसुर चरण सेव मन लाय है, वुद्धतणो जो दोष तुरत नसि जाय है ॥८२

रिषभ, अजित, संभव, अभिनन्दन वंदिए, सुमति, सुपारस, शीतल मन आंनदिए।
श्री श्रेयांस जिनंद पाय पूजत सही, विसपत्ति दोष नसाय यही आगम कही ॥८३
सुवुधनाथ पद पूजित शुक्र नसाय है, मुनिसुव्रत कों नमत दोष शनि जाय है।
नेमनाथ पद वंदत राहु रहै नहीं, मल्लि रू पारस भजत केतु भजिहै सही ॥८४
जनम लगन के समैं कूर ग्रह जो परै, अथवा गोचर मांहि अशुभ जे अनुसरै।
तिनि तिनि ग्रह कै काजि पूजि जिनकी कही, जाप करै जिन नाम लिए दुष ह्वै नहीं ॥८५
नवग्रह सांतिह काज जिनेस्वर सों मणी, घडो होय सिरनाय करै सो थुति घणी।
वार एक सो आठ जाप तिनको जपै, ग्रह नक्षत्र की वात कर्मं बहुविधि खपै ॥८६
भद्रवाहु इम कही तासु ऊपरि भणी, जो पूरव विद्यानुवाद श्रुति ते मणी।
इह नवग्रह शान्ति वखाणी जैन मैं, करिवि श्लोक अनुसार किसनसिंध पै नमैं ॥८७
आन धरम के मांहि उपाय इम कहत हैं, विपरीत बुद्धि उपाय न मारग लहत हैं।
चंडारनि के दान दियाँ ह्वै शुद्धता, कल्प्यो एम विपरीत ठाणि मति मुग्धता ॥८८
चंद दोय दोय रवि दोय जिनागम में कहै, मेरु सुदरसन गिरिद सदा फिर लेत है।
शशि विमान तल राहु एक योजन वहै, रवि कै नीचें केतु एम भमतो रहैं ॥८९
पखि अंधियारे मांहि कला शशि की सही, एक दवावति जाय अमावस लों कही।
शुकल पक्ष इक कला उघरती है, पूरणमासी दिन शशि निरमल थाय है ॥९०
नित्यहि ग्रह कों मिलन इहां होय न सवै, पूज्यूं विन विपरीति राहु उलटै जावै।
देवे शशि जव दान ग्रहण जव ठान ही, जिन मत मैं सो दान कवहूँ न वखानहीं ॥९१
रवि शशि चारयों तणौ ग्रहण चतुं जानियो, ऐरावत अरु भरत मांहि परमानियो।
छठै महीने अंतर पड़े आकाश में, फेरि चाल कूं लहै दवावैं तास में ॥९२
तिह विमान की छाया अवर न मानिए, जिन मारग के सूत्रनि एक वखानिए।
भरत माहि एक ऐरावत में भी सही, इक ऐरावत माहि भरत तिहुँही लही ॥९३
भरत माहि ऐरावत चहूँ में ना कहीं, ऐरावत हे च्यारि भरत पै ए नहीं।
दोय दोय दुहुँ थान होय तो नहिं मनैं, इह ग्रहण की रीत अनादि थकी वनै ॥९४

उक्तं च गाथा त्रैलोक्यसारे नेमिचन्द-सिद्धान्ति-कृते।

राहु अरिट्ठविमाणं किंचूणा किं पि जोयणं अधोगंता।

छम्मासे पव्वन्ते चन्द रवि छादयदि कमेण ॥९५

चालछन्द

ससि राहु केतु रवि जाण, आछादहं है जु विमान।
विपरीत चाल षट् मास, पावत है जव आकास ॥९६
चारयो सुर पद के धार, तिह के कछु नहिं व्यापार।
देणो लेहणो को करि है, फिरि है जोजन अंतर है ॥९७
चहूँ को मिलिवो नहीं कवही, निज थानकि साहिव सवही।
औरनि की दोयो दान, लहैणी नहीं उतरे आन ॥९८
शशि राहु चाल इक वारी, शशि वढ़े घटै निरधारी।
षटमास विना लहि दावे, रवि को नहिं केतु दवावे ॥९९

दोहा

एह कथन सुनि भविक जन, करि चित में निरधार।
कथित आन मत दान जे, तजहु न लावौ वार ॥१४००
पाप वढ़ावन दुःखकरन, भव भटकावन हार।
जास हृदय सत जैन दृढ़, त्यागै जानि असार ॥१

इति नवग्रह शान्ति विधिः।

अथ निज तन संवंधी क्रिया कथन

चौपाई

निज तन संवंधी जे क्रिया, करहु भव्य तामें दे हिया।
शयन थकी जव उठिये सवार, प्रथमहि पढ़ै मन्त्र नवकार ॥२
प्रासुक जल भाजन कर-मांहि, त्रस-भूपित जो भूमि तजाहि।
वृद्धि नीति को जैहै जवै, अवर वसन तन पहरै तवै ॥३
नजरि निहारि निहारि करंत, जीव-दया मन मांहि धरंत।
होत निहार पछै जल लेइ, वामां करतै शौच करेइ ॥४
फिरि मांटी वामा कर मांहि, वार तीन ले धोवै ताहि।
अर तहतें आवै घर करी, वस्त्रादिक सपरस परिहरी ॥५
कर धोवण कों ईंटा खोह,लेह तदा पद मर्दित सोह।
वालू अरु भसमी करि धारि, हाथ धोइ नागरि नर-नारि ॥६
वांवो हाथ फेरि तिहुंवार, धोवै जुदो गारि करि धार।
हाथ दाहिणो हूँ तिहुं वार, धोवै जुदो वहै परकार ॥७
माटी ले दुहुं हाथ मिलाय, धोवै तीन वार मन लाय।
पच्छिम दिशि मुख करिकै सोइ, दातुण करिय विवेकी जोइ ॥८
स्नान करन जल थोड़ो नाखि, कीजे इह जिन आगम साखि।
करुणा कर मन मांहि विचारि, कारिज करिए करुणा धारि ॥९
प्रथमहि महि देखिए नैन, जहँ त्रस जीव न लहै अचैन।
रहै नहीं सरदी वहु वार, स्नान जहाँ करिहै वुध वार ॥१०
पूरव दिसि सन्मुख मुख करै, उजरे वसन उत्तर दिसि धरै।
जीमत वार धोवती वार, अवर सकल ही वसन उतारि ॥११
सिर डाढी सव राखै जवै, स्नान करै किरिया जुत तवै।
लोकाचार उठै किहि तणैं, तवहू स्नान करत ही वणैं ॥१२
तिय सेवै पीछै इह जाणि, परम विवेकी स्नानहि ठाणि।
शयन जुदी सेज्या परि करै, इम निति ही किरिया अनुसरै ॥१३
राति सुपन मैं मदन द्रवाय, धातु विषै को कारण पाय।
कपड़े दूरि डारि निरधार, जल तैं स्नान करै तिहि वार ॥१४

निसि सोवन कों सेज्या-थान, पलंग करै दक्षिण सिरहान ।
अरु पश्चिम दिसहू सिर करै, उठत दुहुं दिसि निज रिजु परै ॥१५
पूरव अरु उत्तर दुहुं जाणि, उत्तम उठिए हरषहि ठाणि ।
इह विधि क्रिया अहो निसि करै, सो किरिया विधि को अनुसरै ॥१६

इति तन-संबंधी क्रिया ।

अथ जाप्य पूजा की विधि लिख्यते

चौपाई

जाप-करण पूजा की वार, जो भाषी किरिया निरधार ।
ताको वरणन भवि सुन लेह, श्लोकनि में वरणी है जेह ॥१७
पूरव दिसि मुख करि वुधिवान, जाप करै मन वच तन जानि ।
जो पूरव कदाचिटरिजाय, उतर संमुख करि चितलाय ॥१८
दक्षिण पश्चिम दुहु दिसि जथा, जाप-करन वरजी सरवथा ।
तीन सास-उसास मझारि, जाप करै नवकार विचारि ॥१९
प्रथम जाप अक्षर पैंतीस, दूजी सोलह वरण वत्तीस ।
तृतीय अंक छह अरहंत सिद्ध, अ सि आ उ सा तुरी परसिद्ध ॥२०
पंच वरण च्यारि अरहंत, षष्ठम दुय जपि सिद्ध महंत ।
वरण एक जोवों ऊंकार, जाप सताईस जपिए सार ॥ २१
कही द्रव्यसंग्रह में एह, सात जाप लखि तजि संदेह ।
और जाप गुरु-मुख सुनि वाणि, तेऊ जपिए निज हित जानि ॥२२
मेरु विना मणिया सौ आठ, जाप तणा जिन मत इह पाठ ।
स्फटिक मणि अरु मोती माल, सुवरण रूपो सुरंग प्रवाल ॥ २३
जीवा पोतारे सम जाणि, कमल-गटा अरु सूत वखान ।
ए नौ भाँति जाप के भेद, भाव-सहित जपि तजि मन खेद ॥ २४

दोहा

दिसि विशेष तिनिको कह्यौ, जिन मंदिर विनु थान ।
चैत्यालय में जाप करि, सन्मुख श्री भगवान् ॥ २५

चौपाई

पूजा निमित्त स्नान आचरै, सो पूरव दिसि को मुख करै ।
धौत वस्त्र पहिरै तनि तवै, उत्तर दिसि मुख करिहै जवै ॥ २६

उक्तं च श्लोक

स्नानं पूर्वामुखी भूप, प्रतीच्यां दन्त-धावनम् ।
उदीच्यां श्वेतवस्त्राणि, पूजा पूर्वोत्तरामुखी ॥२७

चौपाई

पूरब उत्तर दिसि सुखकार, पूजक पुरुष करै सुख सार।
जिन प्रतिमा पूरब जो होइ, पूजक उत्तर दिसि कों जोइ ॥२८
जो उत्तर प्रतिमा मुख ठाणि, तो पूरब मुख सेवक ठाणि।
श्री जिन चैंत गेह मै एम, करै भविक पूजा धरि येम ॥२९
निज मंदिर में प्रतिमावाम, करै तास विधि सुनि अभिराम।
वर मांहि पौंलि प्रवेश करंत, वाम भाग दिसि स्वयं महंत ॥३०
मंदिर उपलेखणकी मही, ऊँचो हाथ जोड़ कर सही।
जिन प्रतिमा पदरावन गेह, परम विचित्र करै धरि नेह ॥३१
प्रतिमा मुख पूरब दिसि करै, अथवा उत्तर दिसि मुख धरै।
पूजक तिलक रचै नव जाणि, सो सुनि बुधजन कहूँ बखान ॥३२
सीस सिखादिक करिए एह, दूजो तिलक ललाट करेह।
कंठ तीसरो चौथो हिए, कांनि पांचमो ही जानिए ॥३३
छठो भुजा कूखि सातवों, अष्टम हाथि नाभि परि नवों।
एह तिलक नव ठामि वनाय, अरु गहनो तरु विविध बनाय ॥३४
मुकुट सीस परि धारै सोय, कंठ जनेउ पहिरै सोय।
भुज बाजूहि विराजत करै, कुंडल कानह कंकण धरै ॥३५
कटि-सूत्र रु कटि-मेखल धरै, क्षुद्र घंटिका सबदहि करै।
रतन जड़ित सुवरण मय जाणि, दस अंगुलनि मुद्रिका ठाणि ॥३६
पाय साकला घुंघुरु धरै, मधुर शब्द वाजै मन हरै।
भूषण भूपित करिवि शरीर, पूजा आरम्भै वर वीर ॥३७

पद्धड़ी छन्द

पूर्वादिक पूजा जो करेइ, वसु दरव मनोहर करि धरेइ।
मध्याह्न पूज समए सु एह, मनु हरण कुसुम बहु पेखि देह ॥३८
अपराह्न भविक जन करिह एव, दीपहि चढ़ाय बहु धूप खेव।
इहि विधि पूजा करि तीन काल, शुभ कंठ उचारिय जयह माल ॥३९
जिन वाम अंगि धरि धूप दाह, खेवै सुगंध सुभ अगर ताह।
अरहंत दक्षिणा दिसि जु एह, अति ही मनोज्ञ दीपक धरेहु ॥४०
जप ध्यान धरै अति मन लगाय, जिन दक्षिण दिसि मौन लाइ।
प्रतिमा वंदन मन वचन काय, करि दक्षिण भुज दिसि सीस नाय ॥४१
इह भाँति करिय पूजा प्रवीण, उपजै बहु पुन्य रु पाप क्षीण।
पूजा माहे नहिं जोगि दर्व, तिनि नाम बखानैं सुनहु सर्व ॥४२

द्रुत विलंबित छन्द

प्रथम ही पृथ्वी परि जो धर्यो, अरु कदा करतें खिसि के पर्यो।
जुगल पायनि लागि गयो जदा, दरवसे जिन-पूजन ना वदा ॥४३

करिन तैं फिरियो सिर ऊपरै, वसन हीण मलीन नहीं धरै ।
कटि तलै परसै जय अंग ही, दरवसे जिन पूजन लौ गही ॥४४
वहु जनां करतैं कर संचस्यों, मनज दुष्टनि भीटि करै धर्यो ।
त्रसन दुखित दर्व सबै तजौ, भगति तैं जिन पूज सदा सजौ ॥४५

दोहा

असन पहरि भोजन करै, सो जिन पूजा मांहि ।
तनु धारे अघ ऊपजै, यामैं संशय नांहि ॥४६

कुंडलिया छन्द

कवहु संधिहीं वसन तैं, भगति वंत तन होइ ।
मन वचन तन निहचै इहै, पूजा करै न सोइ ॥
पूजा करै न सोइ, दगध फटियौ है जातैं ।
पहर्यो अवर नितणौ, कटिहि वंधियो पुनि तातैं ॥
करी वृद्ध लघु नीति, धारि सेई तिय जवही ।
करहि नाहि भवि सेव, वसन संधिततै कवही ॥४७

चौपाई

जो भविजन जिन पूजा रचै, प्रतिमा परसि पखालहिं सचै ।
मौन सहित मुख कपडो करै, विनय विवेक हरष चित वरै ॥४८
पूजा की विधि ऊपर कही, करिवै पुण्य ऊपजै सही ।
नर को करवो पूजा जथा, आगम में भाषी सरवथा ॥४९
जिन पूजा वनिता जो करै, सो ऐसी विधि को अनुसरै ।
प्रतिमा-भीटण नाही जोग, ऐसें कहे सयाणै लोग ॥५०
स्नान क्रिया करिकै थिर होइ, धौत वसन पहरै तनि सोइ ।
विना कंचुकी सो नहिं रहै, पूजा करै जिनागम कहै ॥५१
वड़ी साखि मैना सुन्दरी, कुष्ट व्याधि पति-तनुकी हरी ।
लै गंधोदक सींची देह, सुवरण वरण भयो गुण-गेह ॥५२
अनंतमती उर्विल्या जाणि, रेवतीय चेलना वखानि ।
मदनसुंदरी आदिक घणी, तिन कीनी पूजा जिन-तणी ॥५३
लिंग नपुंसक धारी जेह, जिनवर पूजा करिहै तेह ।
प्रतिमा-परसण कौ निरवार, ग्रंथनि मैं सुणि लेहु विचार ॥५४
नर वनिता रु नपुंसक तीन, पूजा-करण कही विधि लीन ।
अव जिनिकौं पूजा सरवथा, करण जोगि भाषी नहिं जथा ॥५५
औंढेरो काणों भणि अंध, फूलोधूधि जाति चखि वंध ।
प्रतिमा-अवयव सूझै नहीं, जाकौं पूजा करन न कही ॥५६
नासा कान कटी अंगुरी, हुई अगनि दाझे वांकुरी ।
षट् अंगुलिया कर अरुपाय, पूजा करणी जोगि न थाय ॥५७

खोडो दुऊ पायन पांगलौ, कुवज गूंगौ वचन तोतलौ।
जाकै मेद गाठि तनि घणो, ताकौं पूजा करत न वणी ॥५८
काछ दाद पुनि कोड़ी होइ, दाग-सुपेद सरीरहि जोइ।
मंडल फोड़ा पाव अदीठ, अर जाकी वाकी ह्वै पीठि ॥५९
गोसो वधै आंत नीकलै, ताकौं पूजा विधि नहिं पलै।
होइ भगंदर कानि न सुणैं, सून्य पिंड गहलो वच सुणैं ॥६०
खयनी ऊर्द्धस्वास ह्वै जास, सरै नासिका श्लेपम तास।
महा सुस्त चाल्यौ नहिं जाय, पूजा तिनहि जोग नहिं थाय ॥६१
द्यूत विसन जाकै अविकार, अर आमिष-लंपट चंडार।
सुरा-पान तैं कवहु न हटै, सो पापी पूजा नहि थटै ॥६२
वेश्या रमहै लगनि लगाय, अवर अहेडा सौं न अघाय।
चोरी करै रमै पर-नारि, पूजा जोगि नहीं हिय धारि ॥६३

दोहा

इत्यादिक पापी जिके, तिनकौ नरक नजीक।
वह पूजा कैसे करैं, परी कुगति की लीक ॥६४
जो जिन पूजक पुरुष है, ते दुरगति नहिं जाय।
तिनकी मूरति सवनि कों, लागैं अति सुखदाय ॥६५

चालछन्द

जिन पूजा तै ह्वै इंद्र, ताकों सेवैं सुर वृंद।
अरु चक्री पद को पावै, पट खंडहि आणि फिरावै ॥६६
धरणेंदन्र है पद जीको, स्वामी दश भुवनपती को।
हरि प्रति हरि पदई थई, जलभद्र मदन मुसकाय ॥६७
पूजा फल को नाहिं पार, अनुक्रम हो तीर्थंकर सार।
पदवी पावैं सिव जाइ, किसनेस नमैं सिर नाइ ॥६८

छप्पय छन्द

दोप अठारह रहित तीस चउ अतिसय मंडित,
प्रातिहार्य युत आठ चतुष्टय च्यारि अखंडित।
समवशरण विभवादिल्ढ त्रिभुवन पति नायक,
भविजन कमल प्रकास करन दिनकर सुखदायक।
देवाधिदेव अरहंत मुझ भगति-तणौं भव-भय हरौ,
जयवंत सदा तिहुँ लोक में सकल संघ मंगल करौ ॥६९
अठाईस गुण मूल लाख चौरासी उत्तर धरै,
करै तप घोर सुद्ध आतम अनुभो परै।
ग्रीषम पावस सीत सहै वाईस परीसहि,
भवि भावहि शिवपंथ ज्ञान द्रग चरण गसीरहि।

निज तिरहिं भविन तारहिं सदा इहै विरद तिन पै खरौ,
ऐसे मुनीश जयवंत जग सकल संघ मंगल करौ ।।७०
तीर्थंकर मुख थकी दिव्य ध्वनि तै जिनवाणी,
स्याद्वादमय खिरी सप्त-भंगी सुखदानी ।
ताकौ लहि परसाद गए शिवथानक मुनिवर,
अज हौ याहि सहाय पाप तिरिहै भवि धरि उर ।
तसु रचिय देव गणधरनि जो द्वादशांग विधि श्रुतधरी,
भारती जगत जयवंत निति सकल संघ मंगल करी ।।७१

अथ श्री चैत्यालयजी में ए चौरासी काम कीजे तो अ ना लागै तिस कौ कथन प्रत्येक होजैछै

दोहा

श्री जिन श्रुत गुरु कों नमों, त्रिविधि शुद्धता ठानि ।
चौरासी आसादना, कहूं प्रत्येक वखान ।।७२
श्री जिन चैत्यालय विषैं, क्रिया हीण है जेह ।
कीयै पाप अति ऊपजै, ते सुणि भवि जिन देह ।।७३

चालछन्द

मुखतैं खंखार निकारै, हास्यादि केलि विसतारै ।
पुनि विविध कला जु वणावै, पात्र्यादिक नृत्य करावै ।।७४
अरु कलह करै रिसधारी, खैहै तंवोल सुपारी ।
जल पीवै कुरला डारै, पंखा तैं पवन हिडारै ।।७५
गारी वच हीण उचरिहैं, मल मूत्र वावनहि सरिहैं ।
कर पद धोवै अरु न्हावै, सिर डाढी कच उतरावै ।।७६
कर पगके नख ही लिवावै, कारी तैं रुधिर कढावै ।
औषध वणवावै खांही, नांख पसेव उतरांही ।।७७
तनु व्रण की तुचा उतरावै, कर वमन कफादिक डारै ।
दांतिण पुनि सिलक करांहीं, हालैं दंतन उपराही ।।७८
वांधै चौपद तनधार, पुनि करिहै जहाँ आहार ।
आँखन के गीडहि डारै, कर पग नख मैलि उतारै ।।७९
जह कंठ कान सिर जांनी, नासा कौ मैल डरांनी ।
जो वस्तु शरीर की थाय, वाँटै निज थानक जाय ।।८०
मित्रादिक समधी कोऊ, मिलि जांहि जिनालय दोऊ ।
ठंडे मिलि भेंटवि देही, पुनि हरष चित्त धरि लेई ।।८१
परधान जु भूपति केरे, वय गुरु धनवान घनेरे ।
आए उठि करि सन मानौ, इह दोप वड़ौ इक जानौ ।।८२
पुनि व्याह करन की वात, मिलि कै जह जन वठलात ।
जिन श्रुत गुरु चरन चढावै, ताकौं भंडार रखावै ।।८३

निज घर कौ माल रखीजै, पद परि पद धरि बैठीजै।
कोऊ भयतैं जाय छिपीजै, काहू दुख दूर न करीजै ॥८४

चौपाई

कपड़ा धोवै धूपति देई, गहणारा व घडावै लोई।
ले असलाख जंभाई छींक, केस संवारि करै तिन ठीक ॥८५
धोवै दालि वडी दै जहाँ, पापड़ सोंज वणावै तहाँ।
मैदा छानन छपर वंधान, करन कढाई तैं पकवान ॥८६
राज असन तिय तसकर तणी, चारोंविकथा कौं भाखणी।
करण सीधादिक सींवणो, कर नासिका कौं वींधणो ॥८७
पंछी डारि पिंजरो धरै, अगनि जारि तन तापन करै।
सुवरण रज तप हर ही जोई, छत्र चमर सिर धारै कोई ॥८८
वंदन आवैं ह्वै असवार, पुनि तनकौ धारैं हथियार।
तेल अर गजादिक मिलवाय, वैठ करै पसारैं पाय ॥८९
बांधै पाग पेंच फुनि देई, आवै तुररादिक ढांकेय।
जूवा खेलै होड वदेय, निद्रा आवै शयन करेय ॥९०
मैथुन करै तथा तिसवात्त, चालै झोग शरीर खुजात।
वात करण व्यापार हि तणी, चौपाई परि वैठ न गिणी ॥९१
पान द्रव्य ले जेहैं ज़ोय, जलतैं क्रीडा करिहै कोय।
सवद जुहार परसपर करै, गींडू प्रमुख खेलि चित धरै ॥९२
जिन मंदिर परवेस जो करै, सवद निसही त्र वि ऊचरै।
पुनि कर जोड़ै विनु जो जोय, ए दोन्यौं आसादन थाय ॥९३
ए चौरासी अघ कर क्रिया, करनी उचित नहीं नर त्रिया।
जिन मन्दिर श्रुत गुरु लखि जांनि, रहनौ अधिक विनय उर आंनि ॥९४

दोहा

किसनसिंघ विनती करै, सुनौ भविक चित आनि।
क्रिया हीण जिन-ग्रहि तजो, सजौ उचित सुखदान ॥९५

इति पूजा विधि-आसातना वर्णन संपूर्णम्।

अथवा त्रेपन क्रिया तथा अवर क्रिया को वर्णन कीयो तिण को मूल कथन।

दोहा

त्रेपन किरिया की कथा, लिखी संस्कृत जेह।
गौतम-कृत पुस्तक महै, मंडो नाम सुनि एह ॥९६
ता उपरि भाषा रची, विविध छंदमय ठांनि।
श्रावक कों करनी किरिया, किरिया कही वखान ॥९७
अतीचार द्वादश वरत, लगैं तिनहि निरधार।
सूत्रनिमैंतें पाय कें, करी भाष विस्तार ॥९८

कछू त्रिवरणाचारतैं, जो धरिवे कौ जोग।
सुणी तेम भाषी तहां, चाहिए तिसो नियोग ॥९९
कछू श्रावकाचार तैं, नियम आदि बहु ठाम।
कहीं जेम तस चाहिए, धरी भाष अभिराम ॥१५००
जगत मांहि मिथ्यातकी, भई थापना जोर।
क्रिया हीण तामैं चलन, दायक नरक अघोर ॥१
ताहि निषेधनको कथन, सुन्यो जिनागम जेह।
जिसो बुधि अवकास मुझ, भाषा रची मैं एह ॥२
मूलाचार थकी लिखी, सूतक विधि विस्तार।
श्लोक संस्कृत ऊपरै, भाषा कीनी सार ॥३
विद्यानुवाद पूरव थकी, भद्रवाहु मुनिराय।
कथन कियो ग्रहशान्ति कौ, तिह परिभाष वनाय ॥४
निज तन निति प्रति की क्रिया, अरु पूजा परबंध।
श्लोकनि परिभाषा धरी, जहं जैसो सम्बन्ध ॥५

भुजंगी प्रयात छन्द

कथा में कह्यो पंचेन्द्री निरोधं, कथा में कह्यो पंच पापं विरोधं।
कथा में मध्य वाईस भाषे अभक्षं, कथा में कह्यो गोरसं भेद भक्षं।
कथा मध्य कांजी निषेधी प्रत्यक्षं, कथा में कह्यो मुरव्बादि लक्षं ॥६
कथा मध्य मूलं गुणं अष्ट भेदं, कथा मध्य रत्नत्रयं कर्म खेदं।
कथा मध्य शिक्षा व्रतं भेद चारं, कथा मध्य तीन्यो गुणाव्रत्तधारं ॥ ७
कथा मध्य भाषी प्रतिज्ञा सु ग्यारा, मध्य भाषे तपो भेद वारा।
कथा मध्य भाषै बहुदान सारं, कथा मध्य भाषे निशाहार ढारं ॥८
कथा मध्य संलेषणा भेद भाख्यो, कथा मध्य सुद्धं समं भाव आख्यो।
कथा मध्य पानी क्रिया कौ विशेषं, कथा मध्य त्यागी कह्यो राग द्वेषं ॥९
कथा में कह्यो नेम सत्रा प्रमाणं, कथा में क्रिया जोषिता धर्म जाणं।
कथा में कही मौन सप्तं निकायं, कथा मध्य भाषे जिके अन्तरायं ॥१०
कथा मध्य भाषी ग्रहा की जु शांति, कथा में कह्यो सूतकं दोइ भांति।
कथा मध्य देही क्रिया को प्रमाणं, कथा मध्य पूजा विधानं वखानं ॥११

दोहा

कलौ काल कारण लही, जगत मांहि अधिकार।
प्रगटी क्रिया मिथ्यात की, हीणाचार अपार ॥१२
तिनहि निषेधन को कथन, सुन्यो जिनागम माहि।
ता अनुसारि कथा महै, कह्यो जथारथ आहि ॥१३

अथ मनोक्त व्रत निषेध कथन लिख्यते।

दोहा

श्री जिन आगम में कहे, वरत एक सौ आठ।
श्रावक को करणै सही, इह सब जागा पाठ ॥१४
इनि सिवाय विपरीति अति, चलण थापियो मूढ।
सुगम जाणि सो चलि पड्यो, सुणहु विशेष अगूढ ॥१५

चाल छन्द

वनिता लखिकै लघु वेस, तिनिको इम दे उपदेस।
दिन में जीमो दुय वार, जल की संख्या नहि धार ॥१६
एकंत वरत धरि नाम, आगमि न वखांण्यो ताम।
खखल्यो एकंत करांही, सिर-खंड सुनाम धरांही ॥१७
तंदुल केसर दधि मांही, करि गोली वरत कहांही।
टीकी व्रत नाम सुलेई, वनिता सिर टीकी देई ॥१८
अरु तिलक वरत को धारै, वहु तिय सिर तिलक निकारै।
करि देइ टको इक रोक, लेहै तिनकै अघ कोप ॥१९
कोथलीय व्रत धर नाम, वांटै तिन तीसहि ठाम।
मधि सोंठ मिरच धरि रोक, प्रभुताह्वै भाषै लोक ॥२०
अर व रत खोपरा भाषै, एकन्त तीस अभिलाषै ॥२१
नारेल वरत को लेह, वाँटै घर घर धरि नेह।
खीर जु व्रत नाम धरावै, निज घर जो दूध मंगावै ॥२२
चावल ता माँही डारी, निपजावै खीर जु नारी।
भरि ताहि कचोला माहीं, वाँटै वहु घरि हरषाहीं ॥२३
काचली व्रत तिय धरि है, कांचली दस वीस जु करि है।
निज सगपण कीजे नारी, तिनको दे हेत विचारी ॥२४
तिन पहिरे जूं उपजाही, त्रस-घात पाप अधिकाहीं।
जिनको व्रत नाम धरावै, सो कैसे शुभ फल पावै ॥२५
व्रत करि वृत नाम वखानो, वृत दे घर घर मन आनो।
वांटत माखी तहँ परिहै, उपजाय पाप दुःख भरिहै ॥२६
चूड़ा व्रत नाम धराही, करिकैं मन में हरषाईं।
वांटत मन धरि अति राग, इसते मुझ वढ़ै सुहाग ॥२७
विन न्योतो पर घर जाई, निज करते असन गहाई।
भोजन कर निज घर आवै, व्रत नाम विगानो पावै ॥२८
भरि खांड रकेवी तीस, वांटै ते घर दस वीस।
व्रत नाम रकेवी तास, करिहैं मूरखता जास ॥२९
वनिता चैत्यालय जाही, पाछे विधि एम कराही।
धरि अशन थाल इक माहीं, इक जल दुहुँ टाक धराहीं ॥३०

तिय चैत्यालय ते आवै, इक थाली आय उठावै ।
जो असन उभारे तीय, भोजन करि जल वहु पीय ॥३१
जल थाल उघाड़े आयी, जल पीवे वैठि रहाही ।
इम वरत करम पति वन्यो, सूत्रनि में नवीं बखान्यो ॥३२
इत्यादि कहाँलों ठीक, आगम ते अधिक अलीक ।
करिके शुभफल को चाहे, हियरे तिय अधिक उमाहै ॥३३
जो कलपित वरत जु मान, भाषै तेते अघवान ।
जो सकल वस्तु ले आवै, निज पूजा माहिं चढ़ावै ॥३४
निज सगपन गेह मिलाय, बांटै घर घर फिरि आय ।
भादों के मास जु माहीं, तप करन सकति ह्वै नाहीं ॥३५
इम कहि एकन्त कराही, जिन-उक्त व्रत सो नाही ।
बांटै जो वस्तु मंगाई, सोई व्रत नाम धराई ॥३६
जिनमत व्रत विनु मरयाद, करिये मन उक्त प्रमाद ।
जिन सूत्रनि में जैनी है, सुखदायक व्रत आही है ॥३७
जिन आज्ञा को जे गोपै, ते निज कृत सव शुभ लोपै ।
यातें सुनिये नरनारी, मन में तिस तें अवधारी ॥३८
जिन-भाषित जे व्रत कीजे, उक्त न कवहूं लीजे ।
आज्ञा विधिजुत व्रत धार, सुरपद पावे निरधार ॥३९

॥ ३१ ॥

त्रेपन क्रिया ने आदि देके नाना भेद भांति क्रिया को कथन साखि ग्रन्थन की आनिकै ।
अवर मिथ्यात कलिकाल भई थापना जे तिनको निषेध कीयो आगम तें जानिकै ॥
व्रत मन उकति सुगम जानि चालि परै कहै नहिं नते जिते दुःख वृथा मानिकै ।
अवै नर नारी मन लाय जो वरत धरै यहि समय शील तप व्रत जीय सानिकै ॥४०

छप्पय ।

वहुविधि क्रिया प्रसंग कही इह कथा मझारी,
अव उछांह मन मांहि आनि इह वात विचारी ।
क्रिया सफल जव होइ वरत विधि यामें आए,
मन्दिर शोभा जेम शिखर पर कलश चढ़ाए ।
इह जान वास व्रत विधिनि की, सुनो जेम आगम भनो,
दरशन विशुद्ध जुत धरहु भवि इह विनती किसना-तनो ॥४१

चाल छन्द

समकित जुत व्रत सुखदाई, अनुक्रम ते शिव पहुँचाई ।
कछु नाम वरत के कहिए, भवि जन जे जे व्रत गहिए ॥४२

अथ अष्टाह्निक व्रत कथन । चौपाई

अष्टाह्निक महाव्रत सार, रहै अनादि जाको नहिं पार ।
जो उत्कृष्ट भए नर तेह, तिन पूरव व्रत कीन्हो एह ॥४३

व्रत करन की है विधि जिसी, जिन आगम में भाषी तिसी।
तीन वार इक वरष मंझार, आसाढ़ कातिक फागुण वार ॥४४
जो उतक्रिष्ट वरत को करै, आठ-आठ उपवास जु धरै।
दूजो भेद कोमली जाँन, जिन मारग में करो वखान ॥४५
आठैं दिन कीजे उपवास, नौमी एक भुक्त परकास।
दसमी दिन कांजी करि सार, पाणी भात एक ही वार ॥४६
ग्यारस अल्प असन कीजिए, दुयवट तजि इकवट लीजिए।
मुख सोध्यो वारस विधि एह, त्रिविधि पात्रकों भोजन देय ॥४७
अंतराय तिनकों नहि थाय, तो वह व्रत धरि असन लहाय।
अंतराय तिनिकों जो परे, तो उस दिन उपवास हि करे ॥४८
तेरसि दिन आँविल कीजिए, ताकी विधि भवि सुन लीजिए।
एक अन्न षटरस विनु जानि, जल में मूँकि लेइ इक ठाँनि ॥४९
चउदस चित्त वेलडी थाय, भात नीर जुत मिरच लहाय।
पूरणवासी को उपवास, किए होय चिर को अघ नास ॥५०
इह कोमली की विधि कहीं, जिन आगम में जैसी लही।
आदि अंत करिए एकंत, दस दिन धरिये शील महंत ॥५१
जाके जिम चउदस उपवास, चौदस पंदरस वेलो तास।
तेरस आँविल के दिन जेह, रहित विवेक आँवली लेह ॥५२
सदा सरद जाकी नहि जाय, उपजै जीव न संसै थाय।
चउदस दिवस वेलडी करे, तादिन इम अनीति विसतरे ॥५३
खाँहि खलरा अर काचरी, तथा तोरई निज मतहरी।
तिनमें उपजै जीव अपार, सो व्रत जिन लेवो नहि सार ॥५४

दोहा

कांजी के दिन नीर में, नाखि कसेलो लेह।
तंदुल जल विनु अवर कछु, द्रव्य न भाषो जेह ॥५५

चौपाई

तीजी विधि जु आठई जान, आठें तें चउदसहि वखान।
वारस असन पछैं तिहुँ वास, इहै भेद लखि पुण्य निवास ॥५६
दशमी तेरस जीमण होइ, वेला तीन करहु भवि लोय।
चौथो भेद यहै जानिए, शीलव्रत ताको ठानिये ॥५७
आठैं दशमी वारस तीन, प्रोषध धरिये भाव प्रवीन।
चउदस पंदरस वेलो करे, पंचम विधि वुधजन उच्चरे ॥५८
आठैं ग्यारस चौदस जान, तीन दिवस उपवास वखान।
अथवा दोय करे नर कोय, एकासन पण छइ दिन जोय ॥५९

यह व्रत संवर धरि मन लाय, सवरी हरी तजिए दुखदाय।
दस दिन शील वरत पालिये, सँवरहू इह विधि धारिये ॥६०
वसु एकासण, विधि जुत करे, पाँच पाप व्रत धरि परिहरे।
धरि आरम्भ तजै अघ-दाय, दिवस आठलों शुभ उपजाय ॥६१
अब मरयादा सुनि भवि जीव, धरि त्रिशुद्धता सों लखि लीव।
सत्रह वरष साखि इक जान, करिये बावन साख प्रवान ॥६२
अथवा आठ वरष लों जान, वीस चार तसु साख बखान।
पंच वरष करि पंदरा साख, धरि मन वच तन शुभ अभिलाख ॥६३
तीन वरष नो साख प्रमाण, एक वरष तिहुं साख सुजाण।
जैसी सकति छइ अवकास, सो विधि आदर करि भवि तास ॥६४
सकति प्रमाण उद्यापन करे, सँवर तै कबहूँ नहिं टरे।
मैंना सुन्दरि अरु श्रीपाल, कियौ वरत फल लह्यो रसाल ॥६५
कोड़ अठारह रहते जास, सबै गए सुवरण परकास।
और जहूँ ते सात सै वीर, तिनके निर्मल भए शरीर ॥६६
चक्री भयों नाम हरषेण, व्रत त्रिशुद्ध आराध्यो तेण।
तिन फल पायौ सुख दातार, करम नासि पहुँचे भव-पार ॥६७
अंतराय पारो भवि सार, मौन सहित करिए आहार।
व्रत में हरी जिके नर खाय, सँवर तास अकारथ जाय ॥६८
तातें व्रत धारी नर नार, मन वच क्रम हियरे अवधार।
विधि माफिकते भविजन करो, सुर नर सुख लहि शिव-तिय वरौ ॥६९
सकल वरष के दिन मैं जान, परव अठाई भूषित मान।
खग भूमीस मिले नरेस, तिनकरि पूज जेम चक्रेस ॥७०
चक्री की जो सेवा करे, सो मनवांछित सुख अनुसरे।
आज्ञा-भंग किए दुख लहै, ऐसे लोक सयाणे कहै ॥७१
तिन जो इम दिन सँवर धरे, तास पुण्य वरनन को करे।
जो इन दिन में अघ उपजाय, संख्यातीत तास दुख थाय ॥७२

दोहा

इहे अठाही व्रत धरो, प्रगट वखाण्यौ मर्म।
सुरगादिक की वारता, लहै सास्वतो सर्म ॥७३

अथ सोलह कारण, दश लक्षण, रत्नत्रय व्रत विधि-कथन

चौपाई

सोलह कारण विधि सुनि लेह, जिन आगम में भाषी जेह।
भादों माघ चैत तिहुँ मास, मध्य करे चित धारि हुलास ॥७४
वास इकंतर विधि जुत धरे, बीच दोय जीमण नहिं करे।
सोलह वरस करे भवि लोय, उद्यापन करि छांडे सोय ॥७५

सकति नहीं उद्यापन-तणी, करै दुगुण व्रत श्री जिन भणी।
दश लक्षण याही परकार, उत्कृष्टी दश वासहि वार ॥७६
दूजो विधि छह वासह तणी, करै इकन्तर भाण्यो गणी।
मरयादा दश वरषहि जान, वरष मद्धि तिहुँ वारहि ठान ॥७७
अवर सकल विधि करिहै जिती, संवर माहिं जानिये तिती।
रत्नत्रय की विधि ए सही, वरपावधि तिहुँ वारह कही ॥७८
भादौं माघ चैत पखि सेत, वारसि करि एकन्त सुहेत।
पोसह सकति प्रमाण जु धरै, अति उच्छाहतै तेलो करै ॥७९
पडिवा दिन करिहै एकन्त, पंच दिवस धरि सील महंत।
वरस तीन मरयादा गहै, उद्यापन करि पुनि निरवहै ॥८०
सकति-हीन जो नर तिय होय, संवर दिवस न छांडै सोय।
जाको फल पायो सो भणौं, नृप वैश्रवण विदेहा तणौं ॥८१
मल्लिनाथ तीर्थंकर होय, ताके पद पूजित तिहुँ लोय।
वाल ब्रह्मचारी तप कियो, केवल पाय मुकति पद लियो ॥८२
अजहूं जे या व्रत को धरे, दरसन त्रिविधि शुद्धता करै।
ताको फल शिव है तहकीक, श्री जिन आगम भाष्यो ठीक ॥८३

अथ लब्धि विधान । चौपाई

भादौं माघ चैत विध जान, वदि पंदरसि एकन्तहि ठान।
पडिवा दोयज तीज प्रवान, थापै तेला करि विधि जान ॥८४
सकति प्रमाण जु पोसह धरै, चौथ दिवस एकासण करै।
पाँचौ दिवस सीलको पाल, तीन वरस व्रत करहि सम्हाल ॥८५
पुत्री तीन कुटुम्वी तणी, जिन व्रत लियो एम मुनि भणी।
विधिवत करि उद्यापन कियो, तियपद छेदि देवपद लियो ॥८६
वह द्विज-सुत ह्वै पंडित नाम, गौतम भर्ग रु भार्ग रु नाम।
महावीर के गणवर भए, तिनके नाम इन्द्र ए दिए ॥८७
इन्द्रभूति गौतम को नाम, अग्निभूत दूजो अभिराम।
वायुभूत तीजे को सही, वरत तणो तीनों फल लही ॥८८
इन्द्रभूत तदभव शिव गयो, दुहूँ तिहूँ उत्तम पद को लयो।
याते तें नवि परम सुजान, करो वरत पावो सुखथान ॥८९
दूजो विधि आगम इम कहै, पडिवा तीजहि प्रोपध गहै।
दोयज दिवस करे एकन्त, इस मरयाद वरप छह सन्त ॥९०
परिवा तीज एकान्त करेय, दोयज को उपवास वरेय।
मरयादा भाषी नव वर्ष, करिये भवि मन में धरि हर्ष ॥९१
पंच दिवस लों पालै शील, सुरगादिक सुख पावै लील।
पुनि उत्तम नर पदवी लहै, दीक्षा धर शिव-तिय-कर गहै ॥९२

अथ अक्षयनिधि । चौपाई

व्रत्त अक्षयनिधि को उपवास, श्रावण सुदि दशमी करि तास ।
भादों वदि जब दशमी होय, तिनहूँ के प्रोषध अवलोय ॥९३
अवर सकल एकंत जु धरै, सो दश वर्षहि पूरो करै ।
उद्यापन करि छाड़ैं ताहि, नांतर दुगुणो करिहै जांहि ॥९४

अथ मेघमाला व्रत । चौपाई

वरत मेघमाला तसु नाम, भादव मास करे सुखधाम ।
प्रोषध परिवा तीन वखान, आठैं दुहुँ चौदसि दुहुं जान ॥९५
सात वास चौईस इकंत, त्रिविधि शील जुत करिए संत ।
वरष पाँच लों तसु मरयाद, सुर-सुख पावे जुत अहलाद ॥९६॥

अथ जेष्ठ जिनवर व्रत । चौपाई

वरत जेष्ठ जिनवर भवि लोइ, ज्येष्ठ मास में करिये सोय ।
किशन पक्ष पड़वा उपवास, एकासण चौदा पुनि तास ॥९७
प्रोषध शुकल प्रतिपदा करै, पुनि एकन्त चतुर्दश धरै ।
ज्येष्ठमास के दिवस जु तीस, तास सहित व्रत करे गरीस ॥९८
वृषभनाथ जिन पूजा रचै, गीत नृत्य वाजित्र सुसवै ।
अति उछाह धरि हिये मझार, मरयादा लखि कथा विचार ॥९९

अथ षट्रसीव्रत । अडिल्ल

दूध दही घृत तेल लूण मीठी सही, तजै पाख दोय दोय सकल संख्या कही ।
करे असन इक वार व्रती इम व्रत सजे, पख वारह मरयाद षट्रसी व्रत भजै ॥१६००

अथ पाख्या व्रत

लूण दीत ससि हरी मंगल मीठो हरै, विरत वुद्ध गुरु दही दूध भृगु परिहरै ।
तेल तैल सनि इहै वरत पाण्या गहै, मरयादा जिम नेम धरे जिम निरवहै ॥१

अथ ज्ञानपचीसी उपवास लिख्यते

प्रोषघ चौदह चौदसि के विधि जुत करे, तैसें ग्यारा ग्यारसि के प्रोषध धरे ।
सव उपवास पचीस शील व्रत जुत धरे, ज्ञान पचीसी व्रत जिनागम इम कहैं ॥२

अथ सुखकरण व्रत

एक वास एकंत एक अनुक्रम करैं, मास चार पख एक इकन्तर इम धरैं ।
देव शास्त्र गुरु पूज सजैं व्रत धरि सदा, नाम तास सुख-करण हरण दुख जिन वदा ॥३

अथ समवशरण व्रत । दोहा

श्वेत किशन चौदसि तणी, प्रोषध वीस रु चार ।
शील-सहित भविजन करै, समोशरण व्रत धार ॥४

अथ आ पंचमी व्रत । चौपाई

भादव सुदि पंचमि उपवास, करे व्रत पंचमि आकाश ।
वरष पंच मरयादा जास, शील सहित प्रोषध धरि तास ॥५

अथ अक्षय दशमी

श्रावण सुदि दशमी कों सही, अक्षय दशमि व्रत कों जन गही ।
प्रोषध करे शील जुत सार, तसु मरयाद वरष दश वार ॥६

अथ चंदन षष्ठी व्रत

भादव वदि छठि दिन उपवास, चंदन षष्ठी व्रत-वर तास ।
मन वच काय शील व्रत पाल, तसु परमाण वरष छह वार ॥७

अथ निर्दोष सप्तमी

भादों सुदि सातें निर्दोष, वरत करै प्रोषध शुभ कोष ।
संख्या सात वरष लों जाहि, उद्यापन करि तजिए ताहि ॥८

अथ सुगंध दशमी

व्रत सुगन्ध दशमी को जान, भादों सुदि दशमी दिन ठान ।
प्रोषध करे वरष दश सही, शील सहित मर्यादा गही ॥९
अष्ट द्रव्य सों पूजा करे, धूप विशेष खवे अघ हरे ।
धीवर-सुता हुंती दुरगंध, व्रत-फल तस तन भयो सुगन्ध ॥१०

श्रवण द्वादसी व्रत

भादों सुदी द्वादशि व्रत नाम, श्रवण द्वादशी जो अभिराम ।
वारह वरष लगे जो करै, शील सहित प्रोषध अनुसरे ॥११

अथ अनन्त चतुर्दशी

भादौं सुदि चौदस दिन जानि, व्रत अनंत चौदसि को ठानि ।
तीर्थंकर चौदहौ अनंत, रचै पूज सों जीव महंत ॥१२
प्रोषध करे शील जुत सार, चौदह वरष लगे निरधार ।
उद्यापन विधि करि वह तजै, सो जन स्वर्ग-तणा सुख भजै ॥१३

अथ नवकार पैंतिस व्रत । चौपाई

अपराजित मंत्र नवकार, अक्षर तसु पैंतीस विचार ।
करि उपवास वरण परमानि, सातैं सात करो बुध मानि ॥१४
पुनि चौदा चौदसि गनि साँच, पाँचै तिथि के प्रोषध पाँच ।
नवमी नव करिये भवि संत, सब प्रोषध पैंतीस गणंत ॥१५
पैंतीसी नवकार जु एह, जाप्य मन्त्र नवकार जपेह ।
मन वच तन नर नारी करै, सुर नर सुख लहि शिव तिय वरे ॥१६

अथ त्रेपन क्रि

त्रेपन किरिया की विधि जिसी, सुणिए वुध भाषी जिन तिसी।
आठैं आठ मूल गुण तणी, पाँचै पाल अणुव्रत भणी ॥१७
तीन तीन गुणव्रत की धार, शिक्षाव्रत की चौथ जु सार।
तप वारह की वारसि जानि, तिसका प्रोषध वारह ठान ॥१८
सामि भाव की पड़िवा एक, ग्यारसि प्रतिमा की दश एक।
चौथ चार चहुं दानहि तणी, पड़िवा एक जल-गालन भणी ॥१९
अणथमीय पड़िवा अघ-रोध, तीनहुं तीज चरण दृग बोध।
ए त्रेपन प्रोषध जे करै, शील-सहित तप को अनुसरै ॥२०
सो नर तिय सुर-नृप-सुख पाय, अनुक्रमते शिव-थान लहाय।
उद्यापन विधि करिए सार, सकति जेम हीननि विस्तार ॥२१

अथ जिनेंद्र गुण संपत्ति । चालछन्द

जिनगुण संपत्ति व्रत धार, सुनिए तिनकों अवधार।
दस अतिसै जिन जनमत ही, लीये उपजै लखि सति ही ॥२२
उपज्यौ जव केवल ज्ञान, दस अतिसै प्रगटे जान।
इम अतिसय वीस जु करी, करि वीस दसै सुखवरी ॥२३
देवाकृत अतिसय जाँणो, चौदस चौदह तिह ठांणो।
वसु प्रातिहार्य जिन देव, वसु आठैं करिए एव ॥२४
भावन सोलह कारण की, पड़िमा षोडश करि नीकी।
पाँचों कल्याणक जाकी, पाँचों पाँचे करि ताकी ॥२५
प्रोषध ए त्रेसठि जाणो, जुत सील भविक जन ठांणो।
उत्तम सुर-नर सुख पावै, अनुक्रमते शिव पहुँचावै ॥२६

अथ पंचमी व्रत । चौपाई

फागुण आसाढ कातिक एह, सित पंचमि तैं व्रत को लेह।
पैंसठ प्रोषध करिए तास, वरष पाँच पाँच परि मास ॥२७
श्वेत पंचमी को व्रत धार, कमलश्री पायो फल सार।
भविसदत्त तव मिलियो आय, तिनहूँ व्रत कीनो मन लाय ॥२८
तास चरित माहे विसतार, वरनन कीयो सव निरधार।
अजहूँ नर तिय करिहै सोय, त्रिविध सुधी तैसों फल होय ॥२९

अथ शीलकल्याणक व्रत । दोहा

शील कल्याणक व्रत तणो, भेद सुनो जे संत।
मन वच काय त्रिशुद्धि करि, धारौ भवि हरषंत ॥

चालछन्द

तिरयंचणि सुर तिय नारि, चौथी विनु चेतन सारि।
पंचइन्द्रिनिते चहुं गुणिए, तिनि संख्या वीसज मुणिये ॥३१
मन वच तन तें ते वीस, गुणतैं ह्वै तीस रु तीस।
कृत कारित अनुमोदन ते, गुणिए पुनि साठहि गनते ॥३२
एक सौ असी हुई जोई, प्रोपध करु भवि धरि सोई।
इक वरप मांहि निरवार, करिए पूरण सव व्रत सार ॥३३
इक दिन उपवास जु कीजै, दूजी दिन असन जु लीजै।
तीजै दिन फिर उपवास, इस करहु इकंतर तास ॥३४
एक सो अस्सी एकंत, इतने ही वास करंत।
दिन साढ़े तोन सै वीर, पालै निति शील गहीर ॥३५
इह शील कल्याणक नाम, व्रत है वहुविवि सुख-धाम।
ह्वै चक्री काम कुमार, हरि प्रति हरि वल अवतार ॥३६
तीर्थंकर पदवी पावै, समकित जुत व्रत जो ध्यावै।
ऐसें लखि जै भवि जांण, करिए व्रत शील कल्याण ॥३७

अथ शीलव्रत। चालछन्द

अव सुनहु शील व्रत सार, जैसो आगम निरवार।
वैशाख सुकल छठि लीजै, प्रोपध उपवास करीजै ॥३८
अभिनन्दन जिनवर मोपं, कल्याणक दिन शिव पोषं।
शुभ शीलवरत तसु नाम, करि पंच वरप सुखवाम ॥३९

अथ नक्षत्रमाला व्रत। गीताछन्द

अश्विनी नक्षत्र की जु वासर च्यार अधिक पंचास ही,
तिहि मध्य एकासन सताईस वीस सात उपवास ही।
जुत शील मन वच तन त्रिशुद्धहि करि विवेकी चाव स्यों,
माला नक्षत्र सुनाम व्रत तैं छूटिये विधि-दाव स्यों ॥४०

अथ सर्वार्थसिद्धि व्रत

कातिक सुकल अष्टम दिवस तैं अष्ट वास जु कीजिए,
तसु आदि अंत इकंत दस दिन सील सहित गनीजिए।
जिनराज श्रुत गुरु पूज उत्सव सहित नृत्यादिक करै,
सर्वार्थसिद्धि जु नाम व्रत इह मोक्ष सुख कों अनुसरै ॥४१

अथ तीन चोविसी व्रत। दोहा

व्रत चौवीसी तीन की, सुकल भाद्रपद तीज।
प्रोपध कीजै शील जुत, सुर-सुख शिव को वीज ॥४२

अथ श्रुत-स्कन्ध

श्रुत-स्कन्ध व्रत तीन विधि, उत्तम मध्य कनिष्ट।
षोड़श प्रोषध तीस दुय, वासर माँहि गरिष्ट॥४३
दस प्रोषध दिन वीस में, मध्य सुविधि लखि लेह।
वसु प्रोषध इक वास में, है कनिष्ट व्रत एह॥४४
कथन विशेष कथा-मही, द्वादशांग के भेद।
त्रिविध जिनेश्वर भाषियो, करके कर्म उछेह॥४५

अथ जिनमुखावलोकन व्रत

जिन मुखावलोकन व्रत, करिये भादों मास।
जिन मुख देखे प्रति उठि, अवर न पेखै तास॥४६

चाल छन्द

प्रोषध इक मास इकन्तर, कांजो जुत करिये निरन्तर।
अथवा चन्द्रायण करिहै, लघु सकति इकन्त जू धरिहै॥४७
संख्या धरि वस्तु जु केरी, तातें अधिक ले नहि केरी।
इह वरत महा सुखदाई, चहुँ गति-भव-भ्रमण नसाई॥४८

अथ लघु सुख-संपत्ति व्रत

सुख-संपत्ति व्रत दुय भेद, तिनकी विधि भवि सुनि एव।
षोड़श तिथि प्रोषध पट दश, लहुंही सुखदाय अनेकश॥४९

वड़ा सुख-संपत्ति व्रत

पडिवा इक दोयज दोई, तिहुँ तोज चौथ चहुँ जोई।
पाँचै पण छठ छह जाणो, सातैं पुनि सात वखाणो॥५०
आठै के प्रोषध आठ, नवमी नव आगम पाठ।
दसमी दस ग्यारस ग्यारै, वारसि के प्रोषध वारै॥५१
तेरसि तेरा गनि लीजै, चौदसि के चौदह कीजै।
पंदरसि पंदरह शिवकारी, मीसरु सो प्रोषध धारी॥५२
इह सुख-संपत्ति व्रतनिको, भव भव सुखदायक जी को।
मन वच काया शुध कीजे, भविजन नर-भवफल लीजै॥५३

अथ वाराव्रत। चौपाई

वारा व्रत तणी विधि जिसी, वारा भांति वखाणो तिसी।
प्रोषध कीजे वारा भाँति, अरु वारा ही करिए एकन्त॥५४
वारा कांजी तंदुल लेय, निगोरसे गोररस तजि देय।
अलप अहार असन इक भाग, लेहै करिहै दुय वट भाग॥५५

इकठाणी भोजन जल सवै, ले पुरसाय वार इक तवै ।
मूँग मोट चौला अरु चिणा, लेहि इकौण वीणी तत छिणा ॥५६
पाणी लूण थकी जो खाय, नयड नाम ताको कहवाय ।
घिरत छांड़िये सव परकार, सो जाणो लूखौ जु अहार ॥५७
त्रिविधि पात्र साधरमी जाण, ताहि आहार देय विधि जाण ।
ले मुख सोधि निरन्तर थाय, पाछै व्रत धर असन लहाय ॥५८
अंतराय हुए उपवास, करै नाम मुख सोध्यो तास ।
घर के लोक वुलाय कहेई, विन जाँचै भोजन जल देई ॥५९

धरै थाल माहीं जो खाय, किरिया जैन अयाची थाय ।
लूण सर्वथा त्यागे जदा, भाँति अलुणा की ह्वै तदा ॥६०
जिन पूजा सुन शास्त्र वखान, एक गेह कों करि परिमाण ।
जाय उडंड तास के वार, भोजन लेहु कहैं नर नार ॥६१
ठाम असन जल को जो गहै, वरतमान निरमान जु कहै ।
वारा वरत भाँति दस दोय, अनुक्रमि सेत पक्ष भवि लोय ॥६२
समकित-सहित जु व्रत को धरै, त्रिविध शुद्ध शीलहि आचरे ।
करिहै पूरण वरष मंझार, सो सुर पद पावे नर नार ॥६३

अथ एकावली । अडिल्ल

सुनहु भव्यक एकावली विधि है जिसी, सुकल प्रतिपदा पंचम अष्टम चउदसी ।
कृष्ण चतुरथी आठैं चउदसि जाणिए; चउरासी उपवास वरष-मधि ठाणिये ॥६४
वीर्य कान्ति नृप प्रौषध विधि है तिसी, उद्यापन की रीति करी आगम जिसी ।
दीक्षा धरि मुनि होय घोर तप को गह्यो, केवल ज्ञान उपाय मोक्ष पदवी लह्यो ॥६५

अथ दुकावली व्रत । दोहा

विधि दुकावली वरत की, श्री जिन भाषी ताम ।
वेला सात जु मास में, करिए सुनि तिय नाम ॥६६

चाल छन्द

पक्षि श्वेत थकी व्रत लीजै, पडिवा दोयज वृद्धि कीजै ।
पुनि पाँचै पष्टी जाणो, आठै नवमी छठि ठाणो ॥६७
चौदसि पूण्यौ गिन लेह, वेला चहुँ पखि सित एह ।
तिथि चौथी पांचमी कारी, आठै नौमो सुविचारी ॥६८
चौदसि मावस परवीन, पखि किसन करै छठ तीन ।
इम सात मास इक माहीं, वारा मासहि इक ठाहीं ॥६९
चौरासी वेला कीजे, उद्यापन करि छांडीजे ।
इस व्रत ते सुर शिव पावे, सुख को तहाँ वोर न आवै ॥७०

अथ रतन गी । चाल छन्द

रतनावलि व्रत इम करिये, प्रोषध सुदि तीजहि धरिये ।
पंचम अष्टम उपवास, सित पक्ष तिहूँ प्रोषध तास ।।७१
दोयज पंचम अँधियारी, आठैं प्रोषध सुखकारी ।
इक मास माहि छह जानो, वरष सतरि दुय ठानों ।।७२
उद्यापन सकति समान, करिके तजिए मतिमान ।
दृग-जुत धरि शील धरीजै, तातें उत्तम फल लीजै ।।७३

कावली व्रत

कनकावलीय व्रत जैसे, आगम भाष्यो सुणि तैसे ।
सितपक्ष थकी उपवास, करिये विधि सुनिए तास ।।७४
प्रोषध सित पडिवा कीजै, पुनि वास पंचमी लीजै ।
सुदि दशमी पुनि होय जबहीं, वदि छठ बारस व्रत सजहीं ।।७५
छह मास मास इक माहीं, करिए भवि भाव धराहीं ।
उपवास बहत्तरि जास, इक वरष मध्य कर तास ।।७६

अथ मुक्तावली व्रत

मुक्तावली व्रत लघु एम, करिहैं भवि करि प्रेम ।
भादौं सुदि सातैं जाणों, पहिलो उपवास वखाणो ।।७७
आसोज किसन छठि तेरस, उजियारी करिये ग्यारस ।
कातिक वदि बारस ताम, सुदि तीज रु ग्यारस ठाम ।।७८
मगसिर वदि ग्यारसि जानो, प्रोषध सुदि तीजहि ठानो ।
नव नव प्रति वरष गहीजै, प्रोषध इक असी करीजै ।।७९
पूरो नव वरष मझारी, जुत शील करहु नर नारी ।
तातें फल पावें मोटो, मिटि है विधि उदय जु खोटो ।।८०

अथ मुकुटसप्तमी व्रत । दोहा

सावण सुदि सप्तमी दिवस, प्रोषध को नर वाम ।
सात वरष तक कीजियै, मुकुट सप्तमी नाम ।।८१

अथ नंदीश्वर पंक्ति व्रत

नंदीश्वर पंकति वरत, सुनहु भविक चित लाय ।
किये पुण्य अति ऊपजै, भव-आताप मिटाय ।।८२

चौपाई

प्रथमहि चार इकंतर वीस, करहु पछैं तेलो इकतीस ।
ता पीछैं जु एकंतर करै, द्वादश प्रोषध विधि जुत धरै ।।८३

पुनि वेलो करिये हित जानि, वारा वास इकंतर ठानि ।
पाछै इक वेलो कीजिए, इक अंतर दश दुय लीजिए ॥८४
फिरि इक वेलो करि धरि प्रेम, वसु उपवास एकंतर एम ।
सव उपवास आठ चालीस, विचि वेलो चहुं गहे गणीस ॥८५
दधिमुख रतिकरके उपवास, अंजनगिरि चहुँ वेला तास ।
दिवस एक सो आठ मंझार, वरत यहै पूरणता धार ॥८६
छप्पन प्रोषध भवि मन आन, करे पारणा वानन जान ।
लगत करें ना अंतर परै, अघ अनेक भव-संचित हरै ॥८७

अथ लघु मृदंग-मध्य । अडिल्ल

दोय वास फिर असन फिर तिहुं चउ करैं, पांच वास धरि चार तीन दुय अनुसरैं ।
दिवस तीस में वास कहे तेईस हैं, लघु मृदंग मधि सात पारणा जुत गहैं ॥८८

अथ वड़ो मृदंग-मध्य व्रत । गीता छन्द

उपवास इक करि दोय थापे तीन चहु पण छह धरै,
पुनि सात आठ रु चढ़ै नवलों फेरि वसु सात जु करै ।
छह पांच चार रु तीन दुय इक वास इक्यासी गहै,
मिरदंग मधि जु नाम दीरघ पारणा सत्रह लहै ॥८९

अथ धर्मचक्र व्रत । अडिल्ल छन्द

एक वास करि दोय तीन पूनि चहुँ धरे, ता पीछैं करि पांच एक पुनि विस्तरे ।
दिन वाईस मझार वास षोडश कहे, धरम चक्र व्रत धारि पारणा छह गहै ॥९०

वड़ी मुक्तावली व्रत

एक वास दुय तीन चार पण थापई, चार तीन दुय एक धार अघ कांचई ।
सवैं वास पणवीस पारणा नव गही, गुरु मुक्तावली व्रत दिवस चौतीसही ॥९१

अथ भावना-पचीसी व्रत

दसमी दस उपवास पंचमी पंच है, आठैं वसु उपवास प्रतिपदा दुय गहै ।
सव प्रोषध पच्चीस शील युत कीजिए, ए भावना-पचीसी वरत गहीजिए ॥९२

अथ नवनिधि व्रत

चौदा चौदसि चौदा रतन तणी करै, नव निधि की तिथि नवमी नव प्रोषध धरे ।
रतनत्रय तिहुं तीज ज्ञान पण पंचमी, नवनिधि प्रोषध एक तीस करि अघ गमी ॥९३

अथ श्रुतज्ञान व्रत । दोहा

प्रोषध व्रत श्रुत ज्ञान के, जिनवर भाषे जेम ।
सकल आठ ने एक सौ, वुधि सुणि भवि धर प्रेम ॥९४

चौपाई

सकल पाप मैं व्रत लीजिए, पोड़स तिथि ताकी कीजिए।
सोला पडिवा प्रोषध सार, सित मित करि पख मैं निरधार ॥९५
और कहूँ तिथि तिन कर तीज, चौथ चार पण पांच लीज।
छह छठ्ठि सातैं सात वखाणि, आठै आठ नवमी नव जाणि ॥९६
वीस दसैं ग्यारा ग्यारसी, प्रोषध करि वारा वारसो।
तेरसि तेरस वास वखाणि, चौदसि चौदह प्रोषध ठाणि ॥९७
पून्यो पन्दरह करि उपवास, अमावस पन्दरह करि तास।
शील सहित प्रोषध सव करे, भव भव के संचित अघ हरे ॥९८

अथ सिंहनिःक्रीडित व्रत। दोहा

सिंहनिः क्रीडित्त तप तणो, कहुँ विशेष वखाण।
विधि सों कीजे भावजुत, करम निरजरा ठाण ॥९९

चालछन्द

प्रथम हि करि इक उपवास, पुनि दोय एक तिहुं जास।
दोय चारि तीन पणि कीजै, चव पाँच थापि करि दीजै ॥१७००
चहुं पाँच तीन चहुं दोई, तिहुं एक दोय इक होई।
सव वास साठि गण लीजैं, तसु वीस पारणा कीजैं ॥१
अस्सी दिन में व्रत एह, करि कह्यों जिनागम जेह।
इह तप शिव-सुख के दायक, कीन्हों पूरव मुनि-नायक ॥२

अथ लघु चौतीसी व्रत। दोहा

अतिशय लघु चौतीस व्रत, तास तणो कछु भेद।
कथा-मांहि सुनियो जिसो, किये होय दुख छेद ॥३

अडिल्लछन्द

दस दसमी जनमत के अतिसय दस तणी, फिरि दस केवल ज्ञान ऊपजै दस भणी।
चौदसि चौदह अतिशय देवाकृत कही, चार चतुष्टय चौथ चार इह विधि गही ॥४
षोडश आठैं प्रतिहार्य की वसु भणी, ज्ञान पाँच की पाँचै पाँच कही गणी।
अरु षष्ठी छह लही सवं प्रोषध सुनो, पाँच अधिक भवि सांठ कीए फल वहु गुणो ॥५

अथ वारासै चौतीसी को व्रत

दोयज पाँचैं आठैं ग्यारस चउदसी, इनके प्रोषध करै सकल अघ जैन सी।
प्रोषध सव वारह सौ अरु चौतीस ही, नाम वरत वारासै चौतीसी कही ॥६

अथ पंचपरमेष्ठी का गुणव्रत। उक्तं च गाथा

अरहंता छैयाला सिद्धा अट्ठेव सूरि छत्तीसा।
उवज्झायापणवीसा साहुणं हुंति अडवीसा ॥७

दोहा

कहूं पंच परमेष्ठि के, जे जे गुण सगरीस ।
छयालीस वसु तीस छह, अरु पचीस अडवीस ॥८

अरहंत के गुण वर्णन

कहूं छियालीस गुण अरहन्त, दस अतिसय जनमत ह्वै सन्त ।
केवलज्ञान भये दश थाय, दुहुं की वीस दसें करवाय ॥
प्रातिहार्य को आठें आठ, चौथि चतुष्टय चहुं ए पाठ ।
सुरकृत अतिशय चवदह जास, चौदहस चौदसि गनिए तास ॥१०

सिद्ध के गुण वर्णन

अव सुनिए वसु सिद्धन भेद, करिए वास आठ सुणि तेह ।
समकित दूजो णाण वखाण, दंसण चौथो वीरज जाण ॥११
सूक्षम छट्ठो अवगाहण सही, अगुरुलघु सप्तम गुण गही ।
अव्यावाध आठमो धरै, इन आठों की आठें करै ॥१२

' के छत्तीस गुण

आचारिज गुण जेह छतीस, तिनकी विधि सुनिए निसि दीस ।
वारसि वारा तप दश दोय, षडावश्यकी छठि छह होय ॥१३
पांचैं पांच पांच आचार, दश लक्षण की दशमी धार ।
तीन तीज तिहुँ गुप्त जो तणी, प्रोषध ए छह तोस जो भणी ॥१४

उपाध्याय के पच्चोस गुण

गुण पचीस उवझाया जानि, चौदह पूरव कहे वखान ।
ग्यारा अंग प्रकाशै धीर, ए पचीस गुण लखिये वीर ॥१५
चौदा चौदस के उपवास, ग्यारां ग्यारसि प्रोषध तास ।
उपाध्याय के गुण हैं जिते, वास पचीस वखाणें तिते ॥१६

साधु के अट्ठाईस गुण

साधु अठाईस गुण जाणिये, तिनि प्रोषध इनि विधि ठाणिए ।
पंच महाव्रत समिति जु पंच, इन्द्री विजय पंच गणि संच ॥१७
इनिकी पंद्रह पक्षे करे, षडआवसिकी छठि छह धरे ।
भूमि सयन मज्जन को त्याग, वसन-त्यजन कचलोंच विराग ॥१८
भोजन करे एक ही वार, ठाड़ो होइ सो लेइ अहार ।
करे नहीं दांतण की वात, इनि सातों को पडिवा सात ॥१९
सव मिलि प्रोषध ए अठवीस, करिहै भवि तरिहै शिव ईस ।
पंच परम गुरु गुण सव जोड़, सौ पर तियालीस धरि कोड ॥२०

करिए प्रोषध तिनके भव्व, सुरपद के सुखदायक सव्व।
अनुक्रम शिव पावै तहकीक, जिनवर भाष्यो है इह ठीक ॥२१

अथ पुष्पांजलि व्रत। अडिल्ल

भादौं तें वसु चैत मास परयंत ही, तिनके सित पख मैं व्रत पुष्पांजलि कही।
पंचम तें उपवास पांच नवमी लगैं, किये पुण्य उपजाय पाप सिगरे भगैं ॥२२
अथवा पांचै नवमी वास दुय ही करै, छठि सातैं दिन आठे तिहुं कांजी करै।
छठि आठैं एकन्त वास तिहु कीजिए, दोय वास एकंत तिनहूँ लीजिये ॥२३
पांच वरष लौ वरत इह, करि त्रिशुद्धता धार।
तातैं फल उतकिष्ट ह्वै, यामैं फेर न सार ॥२४

अथ शिवकुमार का वेला। चौपाई

शिवकुमार का वेला जान, सुनी कथा जिन कहूँ वखान।
चक्रवर्त्ति का सुत सुखधाम, शिवकुमार है ताको नाम ॥२५
घर में तप कीनो तिह सार, वेला चौसठि वर्ष मझार।
त्रिया पांच सै कै घर मांहि, करै पारणै कांजी आहि ॥२६
पूरण आयु महेन्द्र सुर थयो, तहंतें जंवू स्वामी भयो।
दीक्षा धर तपकरि शिव गयो, गुण अनंत सुख अंत न पयो ॥२७
वरष हजार एक प्रति एक, वेला चौसठि धरि सुविवेक।
करै आयु लघु जानी अवै, शील सहित धारो भवि सवैं ॥२८
लगतै कारण सकति को नाहि, आठैं चौदस कर सक नाहि।
इनमें अंतर पाड़ै नहीं, सो उतकिष्ट लहै सुखग्रही ॥२९

अथ तीर्थङ्करों का वेला। दोहा

ऋषभ आदि तीर्थेश के, वेला वीस रु चार।
आठै चौदस कीजिए, अंतर भूर न पार ॥३०

चौपाई

सातै आठमि वेलो ठांन, नौमी दिवस पारणों जान।
तेरसि चौदसि दुय उपवास, मावस पूर्ण्यों भोजन तास ॥३१
अव पारणा की विधि जिसी, सुणो वखाणत हों मैं तिसी।
वेला प्रथम पारणै एह, तीन आंजली शर्वत लेह ॥३२
अरु तेईस पारणा जान, तीन आंजली दूध वखान।
इम वेला कीजे चौवीस, तिन तैं फल अति लहै गरीस ॥३३

अथ जिनपूजा पुरंदर व्रत

गीताछन्द

वरत जिन पूजा पुरंदर सुनहु भवि चित्त लाय कै,
वारा महीना मांझ कोई मास इक हित दायकै।

ताकी सुकल पडिवा थकी ले अष्टमी लौं कीजिए,
प्रोषव इकंतर आठ दिन में पूज जिन शुभ लीजिए ॥३४

दोहा

वरत यह दिन आठ को, वार एक करि लेह।
मन वच तन तिरकाल जिन, पूजै सुरपद देह ॥३५

अथ रोहिणी व्रत

व्रत अशोक रोहणि तनो, करिहै जे भवि जीव।
सात वीस प्रोषध सकल, धरि त्रिशुद्धता कीव ॥३६

अडिल्ल छन्द

जिह दिन मांह्ये नक्षत्र रोहिणी आय है, ताको प्रोपध करै सकल सुखदाय है।
अनुक्रमते उपवास सताईस जानिए, वरष सवा दुय मांहि पूर्णता मानिए ॥३७

अथ कोकिला पञ्चमी व्रत। दोहा

अबैं कोकिला पञ्चमी, वरत कहो विधि सार।
शील सहित प्रोपध किये, सुरपति को दातार ॥३८

द्रुत विलंवित छन्द

पक्ष अंवयारे मास असाढ ही, करिये प्रोषध कातिक लौं सही।
तिथि मु पंचमी के उपवास ही, प्रति सुकोकिल पंचमि कौं लही ॥३९

दोहा

मरयादा या वरत की, सुनहु भविक परवीन।
पांच वरष लौं कीजिए, त्रिविध शुद्धता कीन ॥४०

अथ कवल चंद्रायण व्रत

वरत कवल चंद्रायणा, वारह मास मंझार।
एक महीना में करै, एक वार चित धार ॥४१

चौपाई

करहि अमावस को उपवास, पाछैं तैं इक चढ़ता ग्रास।
पडिवा दिवस ग्रास इकलीन, दोयज दोय तीज दिन तीन ॥४२
चौथ चार पण पांचै सही, छट्ठि छह सातैं सत लही।
आठैं आठ नवमि नो टेक, दशमी दस ग्यारहि दस एक ॥४३
वारसि वारह तेरसी जान, तेरसि चौदस चौदह ठांन।
पून्यो दिवस लेई दस पांच, सुकल पक्ष की ए विधि सांच ॥४४

कृष्ण पक्ष की पडिवा जास, चौदह गास तणौ परगास।
दोयज तेरह बारह तीज, चौथ ग्यार पंचमी दस लीज ॥४५
छह नव सातैं आठ वखाण, आठैं सात नवमि छह जाण।
दसमी पाँच ग्यारसी चार, बारसि तिहुं तेरसि दुय धार ॥४६
चौदस दिनहि गास इक जाण, माँवस दिवस पारणौ ठाण।
एक मास को व्रत है एह, गास लीजिये तिम सुणि लेह ॥४७
गास लैंन कों ऐसी करै, मुख में देत न करतैं परै।
वीच पिवो पाणी न गहाय, अंतराय गल अटकै थाय ॥४८
जिन पूजा विधि जुत दिन तीस, करै वन्दना गुरु नमि सीस।
शास्त्र वखाण सुणै मन लाय, धरम कथा मैं दिवस गमाय ॥४९
पालै शील वचन मन काय, इह विधि महा पुण्य उपजाय।
यातैं सुरपद होवै ठीक, अनुक्रम शिव पावै तहकीक ॥५०

अथ मेरु पंक्ति व्रत

वरत मेरु पंकति जो नाम, तास करन विधि सुनि अभिराम।
दीप अढ़ाई मध्य सुजाण, पंचमेरु जो प्रकट वखाण ॥५१
जंवूद्वीप सुदर्शन सही, विजय सु पूरव धातकी सही।
अपर धातकी अचल प्रमान, प्राची पोहकर मंदर मान ॥५२
पुहकर अपर जु विद्युन्मालि, पंच मेरु वन बीस सम्हालि।
तिन में असी चैत्यगृह सार, तिनके व्रत प्रोषध निरधार ॥५३
सुनहु सुदरशन भूधर जेह, भद्रसाल वन चहुँ दिसि तेह।
जिन मंदिर तिह चार वखाण, प्रोषध चार इकंतर ठाण ॥५४
पाछैं बैलो कीजे एक, वन सौमनस दूसरो टेक।
चार जिनेश्वर भवन प्रकाश, चार वास पुनि वेलो तास ॥५५
नंदन वन जिन प्रोषध चार, पीछै ताके वेलो धार।
पांडुक वन चउ जिनवर गेह, ताके चहु प्रोषध धरि एह ॥५६
पुनि बेलो धारो भवि सार, मेरु सुदरसन इह विसतार।
प्रोषध सोलह वेला चार, व्रत दिन चहु चालीस मंझार ॥५७
चार वीस उपवास वखाण, वीस जु तास पारणा जाण।
ऐसे अनुक्रम करिए भव्व, पंच मेरु व्रत विधि सों सव्व ॥५८
ध्यावत मेरु सुदरशन नाम, तेई नाम सवनि सुख धाम।
वाही विधि सव वरत जु तणी, जाणों सही जिनागम भणी ॥५९
इनमें अन्तर पाडे नहीं, लगते प्रोषध बेला गही।
सव प्रोषध को ऐसे जोड़, वेला वास करे चित कोड़ ॥६०
वास सकल एक सौ वीस, करे पारणा सत्तर तीस।
सात महीना दिन दस माँहि, सकल वरत इम पूरण थाहि ॥६१

सकल वास वेला विच जाण, वीस इकंत जु कहे वखाण।
ऐसे वीस दिवस जानिए, वरत मेरु पंकति मानिए ॥६२
शील सहित शुभ व्रत पालिये, हीण उदै विधि के टालिए।
सुरपद पावै संशय नाहि, अनुक्रम भव लहि शिवपुर जाहि ॥६३

दोहा

वरत मेरु पंकत इहै, वरन्यो सुख-दातार।
करहु भविक समकित-सहित, ज्यों पावै भाव पार ॥६४
पंचमेरु के वीस वन, तहाँ असी जिन गेह।
तिनके व्रत की विधि सकल, पूरण कीनी एह ॥६५

अथ पल्य विधान व्रत। दोहा

सुनहु पल्य विधान व्रत, जिन आगम अनुसार।
वरष वहत्तर कीजिए, वारा मास मझार ॥६६

चाल छन्द

आसोज किसन छठि तेरस, सुदि वेलो ग्यारस वारस।
चौदसि सित प्रोषध धरिये, कातिक वदि वारस वरिए ॥६७
प्रोषव सुदि तीजरु वारसि, मगसिर वदि वारसु ग्यारसि।
सुदि तीज अवर करि वारसि, वदि पोसहु दुतिया पंदरसि ॥६८
सुदि पाँचैं सातैं कीजे, पून्यूं को वास धरीजै।
वदि माघ चौथ सातैं गनि, चौदस उपवास धरो मनि ॥६९
सुदि सातैं आठैं वेलो, दशमी करि वास अकेलो।
फागुण पाँचै छठि कारी, वेलो सुणि तिथि उजियारी ॥७०
पुनि पडिवा ग्यारसि लीजे, दोनों दिन भेली कीजे।
वदि पडिवा दोयज वेलो, चैत की करो इकेलो ॥७१
चौथ छठि इकादस अठमी, सुदि सातें को अर दसमी।
वैशाख चौथ वदि धारी, दशमी वास पुनि कारी ॥७२
सित दोयज तीज धरीजे, नौमी तेरसि दुहुँ लीजे।
दसि प्रोषध तेरसि ठान, चौदस मावस तेलो जान ॥७३
सुदि आठैं दसमी पंदरस, उपवास करो करि मन वस।
अव सांवण मधि जे वास, कहि हों भवि सुनियो तास ॥७४
छठि चौथि अष्टमी सावण, पुनि चोदसि सित्त तृतीया भण।
वारसि तेरस को भेलो, पून्यूं को वास अकेलो ॥७५
भादों वदि दोयज वास, छठि सातैं वेलो तास।
वारस उपवास धरीजैं, सित्त पाखज एक करीजै ॥७६

तेलो पांचैं छठि सातें, सुत नौमी वास क्रियातैं।
ग्यारस वारस तेरस कों, प्रोषध तेलों पन्दरस कों ॥७७
उपवास आठ चालीस, तेला चहु कहे गरीस।
वेला छह जिनवर भाखे, जिन आगम में इह आखे ॥७८
ए वरष एक में वास, सत्तरि दुय आगम में भास।
धारणे पारणों सन्त, करिये एकन्त महन्त ॥७९
धरि शील त्रिविधि नर नारी, व्रत करहु न ढील लगारी।
सुर ह्वै अनुक्रम शिव जाई, विधिपल्यतणी इह गाई ॥८०

अथ रुक्मिणी व्रत

स इकतीसा

लक्ष्मी मती का भव वाहिं व्रत कीनों इह श्वेत भाद्र पद आठैं प्रोषध अदाय कै।
दोय जाम धरणे और चार उपवास दिन पूजा रचै दोय याम पारणो बनायकैं ॥८१
कीनों आठ वरष लौं शुद्ध भाव देह त्यागि अच्युत सुरेश इंद्राणी पद पायकै।
भई रुक्मिणी कृष्ण वासुदेव पटतिया रुक्मिणी नाम व्रत जाणो चित्त लायकै ॥८२

अथ विमानपंक्ति । दोहा

व्रत विमान पंकति तणे, विधि सुनिये भवि सार।
मन वच क्रम करिए सही, सुर सुरेश पद धार ॥८३

अडिल्ल

सौधर्म रु ईशान स्वर्ग दुहुं तैं गही, पंच पिचोत्तर लगै पटल त्रेसठ कही।
तिनकी चहुंदिस माहिं वद्ध श्रेणी जहां, जैन भवन हैं,अनेक अकृत्रिम हो तहां ॥८४

दोहा

तिनके नाम विधान को, वरत इहै लखि सार।
जहां जहां जेते पटल, सो सुनिये विस्तार ॥८५

चौपाई

दुय सुर गनि इकतीस विख्यात, सनत कुमार महेंद्रहि सात।
चार ब्रह्म ब्रह्मोत्तर सही, लांतवं कापिष्ठ है द्वय सही ।८६
एक सुक्र महासुक्रह धार, एकहि शतार अरु सहसार।
आणत प्राणत आरण तीन, अच्युत लगै छह पटल प्रवीन ॥८७
नव नव ग्रैवेयक जानिये, नव नवोत्तर इक मानिये।
पंच पंचोत्तर पटल जु एक, ए त्रेसठ मुणि धरि सुविवेक ॥८८
अवै वरत प्रोषध विधि जिसी, कथा प्रमाण कहों सुनि तिसी।
एक पटल प्रति प्रोषध चार, करै एकंतर चित अवधार ॥८९

प्रोपध लगते वेलो एक, करि भविजन मन धरि सुविवेक।
ता पीछैं प्रोपध चहुंजान, तिनके पीछैं वेलो ठान ॥९०
चहुं प्रोपध वेलो चहुं वास, छट चहु अनसन पुनि छठ तास।
इह विधि त्रेसठ वार विधान, चहुं प्रोपध छठ अनुक्रम जान ॥९१
त्रेसठ वार जु पूरण थाय, इक लगतो तेलो करवाय।
वीच इकंतर असन जु करै, एक भुक्त अंतर नहीं परै ॥९२
इनके वेला अरु उपवास, अनसन दिवस रु तेलो जास।
अरु सव दिन इकठे कर जोड़, सो सुणल्यौं भवि चित धरि कोड़ ॥९३
इह सौ दिवस सताणवैं जाण, वरत दिवस मरयाद वखाण।
वास इकन्तर दुइसे जाण, तिन ऊपर वावन परवान ॥९४
त्रेसठ छठ तेलो इक जान, अव सव वास जोड़ इम मान।
वास इक्यासी पर सय तीन, असन तीन सैं सोला जान ॥८५
इह व्रत तीन भवन में सार, विधिजुत किए देवपद वार।
अनुक्रम शिव जैहै तहकीक, अवधारहु भवि चित धरि ठीक ॥९६

अथ निर्जर पंचमी

इकतीसा

प्रथम असाढ़ सेत पंचमी को वास करे कातिकलो मास पांच प्रोपध गहीजिये।
आठ परकार जिनराज पूजा भावसेती उद्यापन विधि करि सुकृत लहीजिये॥
कीयो नागश्रिय सेठ सुता एक वरप लों सुरगति पाय विधि कथातें पाईजिये।
निर्जर पंचमी को व्रत इह सुखकार भाव शुद्ध कीए दुःख को जलांजलि दीजिये ॥९७

अथ निर्जरणी व्रत

दरसण के निमति चौदसि आसाढ़ सुदि, सावण की चौदस सुज्ञानकाज कीजिये।
भादों सुदि चौदस को प्रोपध चारित केरो तपजोग चौंदसि असौज सित लीजिये॥
एई चार प्रोपध वरप मांहि विधि सेती कर्म निर्जरनी वरत सुन लीजिये।
धनश्रीय सेठ सुता करि सुरपद पायो अजों भवि भावि करिवे को चित दीजिये ॥९८

अथ आदित्य वार

दोहा

सुणो वरत आदित्यकी, विधि भापी है जेम।
कथा प्रमाण सु कहत हों, दायक सव विधि क्षेम ॥९९

चौपाई

प्रथम एक माहे आसाढ, आठइ पून्यूं विचि आठ।
सांवण मांहि करे पुनि चार, चार वास कर भादों मझार ॥१८००

तजै चकार मकार विचार, वरष एक माहें नव वार।
करैं वरष नवलों निरधार, उजुमण करो सकति संमार ॥१
उत्तम प्रोषध की विधि जाण, आमिल दूजी जगत वखाण।
तृतीय प्रकार कह्यो इकठान, एक भुक्ति विधि चौथी जान ॥२
संयम शील सहित निरधार, वरष जु नव को इह विसतार।
वरष एक में कीयो चहै, दीत आठ चालीस जु गहै ॥३
विधि वाही चहुं वार वखाण, पार्श्वनाथ जिन पूजा ठाण।
कीजे उद्यापन चहूँ सार, पीछैं तजिए व्रत निरधार ॥४
उद्यापन की शक्ति न होय, दूणों व्रत करिये भवि लोय।
सेठ नाम मति सागर जाण, त्रिया गुणवती जास वखाण ॥५
तिह इह व्रत को फल पाइयौ, विधि तैं कथा माँहि गाइयौ।
इह जाणी कर भविजन करौ, व्रत फल तैं शिवतिय कूं वरो ॥६

अथ कर्म-चूर व्रत

कर्म चूर व्रत की विधि एह, आठ भांति भाषत हों जेह।
आठैं आठ आठ मैं करै, चौसठि आठें पूरा परै ॥७
प्रोषध आठ करै विधि सार, इक ठाणा वसु एक ही वार।
एक गास ले इक दिन मांहि, आठहि नयेड करे सक नाहि ॥८
करहि इक फल्यो हरित तजेय, सीत दिवस तन्दुल इक लेय।
लाडू तिथि इक लाडू खाय, कांजी आठ करैं सुखदाय ॥९

दोहा

वरष दोय वसु मास में, व्रत पूरो ह्वै एह।
शील सहित व्रत कीजिये, दायक सुर शिवगेह ॥१०

अथ अनस्तमित व्रत

चौपाई

अनस्तमित व्रत विधि इम पाल, घटिका दुय रवि अथवत टालि।
दिवस उदय घटिका दुय चढै, तजि आहार चहु विधि व्रत वढै ॥११
याकी कथा विशेष विचार, भाषी त्रेपन क्रिया मझार।
याते कहीं नहीं इह ठाम, निसि भोजन तजिये अभिराम ॥१२

अथ पंचकल्याणक व्रत

दोहा

व्रत कल्याणक पंचमी, प्रोषध तिथि विधि जाण।
आचारज गुणभद्रकृत, उत्तर पुराण प्रमाण ॥१३
तीर्थंकर चौवीस के, गरभकल्याणक सार।
तिथि उपवास तणी सुनो, करिये तिस मन धार ॥१४

गर्भ कल्याणक । पद्धड़ी छन्द

दोयज असाढ वदि वृषभवीर, छठि वासुपूज्य सुदि छठि जु वीर।
मुनिसुव्रत सांवण दुतीय श्याम, दसम करी जिन कुंथुनाम ॥१५
सित दोयज सुमति सुगरभ एव, भादौं वदि सातैं सांति देव।
सुदि छठि सुपारस उदर-मात, नमि वदि कुवारि दोयज विख्यात ॥१६
कातिक वदि पड़िवा जिन अनन्त, सुदि छठि नेमि प्रभु सूर महंत।
पद्मप्रभु वदि छठि माघमास, फागुणवदि नौमी सुविधि तास ॥१७
अरहनाथ सुकल त्रितिया वखाण, आठैं संभव उर मात ठाण।
शसि प्रभ वदि पांचै चैत एव, आठैं सीतल दिन गरभमेव ॥१८
सुदि एकैं जिनवर मल्लि जानि, वदि तीज पार्श्व वैशाख मानि।
सुदि छठि अभिनन्दन गरभवास, जिन धर्मनाथ तेरसि प्रकाश ॥१९
श्रेयांस जेठ वदि छठि गरीस, दशमी दिन उच्छव विमल ईश।
जिन अजित अमावसि उदरमात, चौवीस गरभ उत्सव विख्यात ॥२०

दोहा

वीस चार जिनवर गरभ, वासर कहे वखान।
अबैं जनम दिन तिथि सकल, सुनि भवि चित हित आन ॥२१

जन्म कल्याणक । पद्धड़ी छन्द

आसाढ दसमी वदि नमि जिनेश, सावण वदि छठि नेमीश्वरेश।
कातिक वदि तेरस पदम संत, मगसिर सुदि नौमी पुष्पदंत ॥२२
ग्यारसि मल्लिनु जनमावतार, अरहनाथ जनम चौदसि सु सार।
पूरणमासो सम्भव सुदेव, शसिप्रभ वदि ग्यारसि पौष एव ॥२३
ग्यारस दिन पारश नाथ जान, शीतल जिन वारसि किसन मान।
सित चौथ विमल नाम जु उछाह, दसमी सित उच्छव अजित नाह ॥२४
वारसि अभिनन्दन जनम लीय, तेरसि जिन धर्म प्रकाशकीय।
ग्यारसि फागुण श्रेयांसस्वामि, जिन वासुपूज्य चौदसि प्रणामि ॥२५
वदि चैत नवमि रिसहेस स्वामि, दसमी सुनि सुव्रत पय नमामि।
सुदि तेरस जन्मे वीरनाथ, सुमति दसमी वैशाख श्याम ॥२६
सुदि पड़िवा जनमें कुंथुवीर, वारसि वदि जेठ अनन्त धीर।
चौदसि श्री शांति कियो प्रकाश, सित वारसि जनमें श्री सुपाश ॥२७

तप कल्याणक

नमि नाथ दशमी आसाढ श्याम, सावण सुदि छठ तप नेमिनाथ।
कातिक वदि तेरस वीर धीर, मगसिर वदि दशमो पद्म वीर ॥२८
सुदि एकैं दीक्षा पुहुप दन्त, दशमी दिन अरह जिन तप महन्त।
जिन मल्लि तजो ग्यारसि सुगेह, सुदि पून्यों शंभव तप गनेह ॥२९

चन्द्रप्रभ वारस कृष्ण पौष, ग्यारसि पास तप्यो उ पखि पोष।
सीतल जिन वदि द्वादसीय माह, सुदि चौथ विमल तप लियहु नाह ॥३०
नवमी दिन दीक्षा अजित देव, बारस अभिनन्दन सु तप भेव।
तेरस जिन धर्म तपो प्रशंस, फागुण वदि ग्यारसि श्री श्रेयांस ॥३१
प्रभु वासु पूज्य चौदस सुजान, वदि चैतर नवमी रिसहमान।
सुव्रत दशमी वैशाख श्याम, सुदि पडिवा कुन्थु जिनेस ताम ॥३२
सित नवमी लियो तप सुमति वीर, तिन शांति जेठ वदि चौथ धीर।
वदि बारसि तप जिनवर अनंत, बारस सुपार्श्व सित जेठ सन्त ॥३३

दोहा

तप कल्याणक को कथन, उत्तर पुराणह माहिं।
काढ़ि कियो अव ज्ञान को, सुनिहुँ चित्त इक ठाहिं ॥३४

कल्याणक। पद्धड़ीछन्द

जिन नेमीश्वर पड़िवा कुंवार, संभव जिन चौथहि ज्ञान धारि।
कातिक सुदि दोयज पुहपदन्त, लहि केवल बारस अर महंत ॥३५
मगसिर सुदि ग्यारस मल्लि सुबोध, ग्यारस नमि हणिया कर्म जोध।
शीतल वदि चौदसि पौष ज्ञान, सुदि दसमी सुमति केवल महान ॥३६
सुदि ग्यारसि अजित सुबोध पाय, चौदस अभिनन्दन ज्ञान पाय।
पून्यों लहि केवल धर्म वीर, श्रेयांस अमावस माघ धीर ॥३७
सुदि वासुपूज्य दोयज प्रकाश, छठि विमल नाथ केवल विभास।
फागुण वदि छट्ठी सुपार्श्व ईश, सातैं चन्द्रप्रभु नमूँ सीश ॥३८
फागुण वदि ग्यारस वृषभ जान, वदि चैत चौथ पारश बखान।
अमावस श्री जिनवर अनंत, सुदि तीज कुंथु केवल लहंत ॥३९
सुदि ग्यारस सुमति जु बोध पाय, पदम प्रभु पून्यों ज्ञान थाय।
सुव्रत नौमी वैशाख श्याम, सुदि दसै वीर जिन बोध पाम ॥४०

दोहा

ज्ञान कल्याणक वर्णयो, उत्तर पुराण में जेम।
अव निर्वाण प्रमाण तिथि, सुनहु भविक धर प्रेम ॥४१

निर्वाण कल्याणक। पद्धड़ी छन्द

आसाढ विमल आठें असेत, सुदि सातें शिव नेमी सहेत।
सावण सुदि सातैं पार्श्वनाथ, पून्यों श्रेयांस लहि मोक्ष साथ ॥४२
भादों सुदि आठें पुहपदंत, जिन वासुपूज्य चौदस नमंत।
सीतल जिन आठें सित कुमार, कातिक मावस भव वीर पार ॥४३
वदि महा चतुर्दशि वृषभनाम, पद्म प्रभु फागुन चौथ श्याम।
सातैं सुपार्श्व शिव लहीय धीर, चंद्र प्रभु सातैं त्रिजग तीर ॥४४

वदि वारसि मुनि सुव्रत वखाण, सुदि पाँचैं मल्लि जिनेस जाण।
वदि चैत मावसी नंत नाथ, अमावस अर जिन मोक्ष साथ ॥४५
सुदि पाँचै शिव जिन अजित पाय, सुदि छठ संभव निर्वाण थाय।
सुदि ग्यारसि सुमति सु मोक्ष वीर, नमि वदि चौदसि वैशाख तीर ॥४६
सुदि एकै शिव-दिन कुंथु जाण, अभिनंदन छठ निर्वाण ठाण।
वदि चौदसि जेठ सु शांतिनाथ, सुदि चौथ धर्म शिव कियो साथ ॥३७

दोहा

कल्याणक निर्वाण की, तिथ चौवीस विचार।
कही जेम भाषी तिसी, उत्तर पुराण मझार ॥४८
ह्वै सम्पूरण व्रत जवै, कर उद्यापन सार।
आगम मैं जिन भाषियो, सो भवि सुन निरधार ॥४९

उद्यापन की विधि। चौपाई

पाँच कीजिये जिनवर गेह, पाँच प्रतिष्ठा कर शुभ लेह।
झालरि झांझ कंसाल, ताल, छत्र चमर सिंघासन सार ॥५०
भामंडल पुस्तक भंडार, पंच-पंच सब कर निरवार।
घंटा कलश ध्वजा पण थाल, चंद्रोपक वहु मोल विशाल ॥५१
पुस्तक पाँच चैत गृह धरैं, तिन वाँचैं भवि जन भव तरैं।
चार संघ को देय आहार, जिन आगम भाषी विधि सार ॥५२
इतनी विधि जो करी न जाय, सकति प्रमाण करै सो आय।
सकति उलंघन न करनी कहीं, सकति वान कर परहै नहीं ॥५३
काहू भाँति कछू नहि थाय, तो दूणो व्रत कर चित लाय।
अवैं वरत करिहै नर नार, करै दान सुन हिये अवधार ॥५४
गरभ कल्याणक की दत्त जान, मैदा का करि खाजा आन।
वांटै सवको घर अहलाद, करे इसी विधि हर परमाद ॥५५
जनम कल्याणक दत्त विस्तरै, चिणा भिजोय रु विरहा करै।
मैदा फल घर वाटै नार, चित्त माहि अति हित अवधार ॥५६
तप कल्याणक दत्त अवधार, वाजर पापर खिचड़ी धार।
जिन आगम ही वखाणी नहीं, युक्ति मान मानस विधि गही ॥५७
ज्ञान कल्याणक पूरा थाय, जवैं दान दे मन चित लाय।
पाठ मंगाय वांटै तिया, मन में हरष सफल निज जिया ॥५८
करके कल्याणक निर्वाण, तास दान को करै वखान।
मोतीचूर रु मगद कसार, लाडू कर वांटै सव ठार ॥५९
वीस चार घर की मरयाद, दे अति मान हिये अहलाद।
मन की उकति उपावै घणी, जिन शास्त्रनि माहें नहीं भणी ॥६०

यातें सुनिये परम सुजान, जिन आगम भाष्यो परमान ।
थोड़ो किये अधिक फल देय, भाव-सहित कर सुर-पद लेय ॥६१

अडिल्ल

जिम निज आगम कह्यो दान तिम दीजिये,
निज मन युक्ति उपाय कवहु नहिं कीजिये ।
कलीकाल नहिं जोग संग नहिं पाइये,
जास वरावर धर्म तिनहि चित लाइये ॥६२

भोजनादि निज सकति जुत, दानादिक विधि सार ।
करि उपजावै पुण्य वहु, यामें फेर न सार ॥६३
एकासन कर धारणे, अवर पारणें जान ।
शील सहित्त प्रोषध सकल, करहु सुभवि चित आन ॥६४

मरहटा छन्द

कल्याणक सारं पंच प्रकारं गरभ जनम तप णाण,
पंचम निर्वाणं वरत प्रमाणं कहियो महापुराण ।
तिनकी विधि भाखी जिम जिन आखी किए लहै सुर गेह,
अनुक्रम शिव पावै जे मन भावै ते सव जानी एह ॥६५

निर्वाण कल्याणक का वेला । चौपाई

जे जे तीर्थङ्कर निर्वाण, गए तास दिन की तिथि ठाण ।
तिह दिन को पहिलो उपवास, लगतो दूजो वास प्रकाश ॥६६
इह विधि वारह मास मझार, वेला करिये वीस रु चार ।
वेला कल्याणक निर्वाण, वरत नाम लखिये वुध माण ॥६७

लघुकल्याणक को व्रत । दोहा

गरभ जनम तप ज्ञान शिव, तीर्थङ्कर चौवीस ।
वरस मांहि तिथि सवन की, करै एक सो वीस ॥६८

छप्पय

रिषभ गरभ वदि दुतिय गर्भ छठि वासु पूज गन,
आठैं विमल सुज्ञान दशमी नमि जनम रु तप मन ।
वर्धमान छठि सुकल गरभ माता के आए,
सुदि सातैं जिन नेमि करन हणि मोक्ष सिधाए ।
आसाढ़ मास माहे दिवस, छह मांहे ही जांणियो,
छह कल्याणक सातमो, छह जिनवर को ठाणियो ॥६९

मुनि सुव्रत जिन देव गरभ वदि दोयज वासर,
कुंथु गरभ वदि दसे सुमति सित वीज गरभ वर ।
नेमनाथ सित छठी जनम दिन तप पुनि वरियो,
साते पारशनाथ मोक्ष लहि भव दधि तरियो ।
श्रेयांसनाथ निरवान पद, पून्यूं के दिन सरदही ।
सावण सुमास छठि दिन विषै, सात कल्याणक है सही ॥७०

वदि भादों जिन शांति गरभ सातैं माता उर,
सुदि छठि गरभ सुपास अष्टमी मोक्ष सुविधि पर ।
वासुपूज्य निर्वाण चतुर्दसि भादों जाणो,
वदि दोयज आसोज गरभ नमि जिनवर मानो ।
लहि मोक्ष नेमि एकैं सकल, आठैं शीतल शिव गए ।
दुह मास मांहि दिन सात मैं, कल्याणक सातहि भए ॥७१

गरभ अनन्त जिनेश प्रतिपदा कातिक करियो,
संभव केवल चौथ त्रयोदसि पद्म जनम लियो ।
तप पुनि तेरसि पद्म मोक्ष नमति जु अमावस,
सुविधि ज्ञान सित वीज नेमि छठि मात गरभ वस ।
अरनाथ चतुष्टय विधि हणिवि, केवल ज्ञान उपानियो ।
दिन सात कल्याणक आठ सव, काती मांहि सुजानियो ॥७२

सन्मति तप वदि दसें सुविधि सुदि एकै तप गन,
पुहपदन्त नय जनम दसम तप अरहनाथ मन ।
मल्लि जनम तप ज्ञान कल्याणक चिहुं सित ग्यारस,
नमि तिस ग्यारसि ज्ञान जनम अरनाथ सु चौदस ।
संभव जु कल्याणक जनम तप, दुहूं पूरणवासी थए ।
दिन सात कल्याणक, एकदस मगसिर माहीं वरणए ॥७३

पारशनाथ सु जनम अवर तप ग्यारसि कारी,
जनम चन्द्र प्रभ तास दिवस दिक्षाहू धारी ।
चौदस शीतल ज्ञान शांति सुदि दशमी विधि तसु,
ग्यारस केवल अजित जिनेश्वर प्रगट भयो जसु ।
प्रभु अभिनन्दन चौदसि दिवस, लोकालोक प्रकासियो ।
दिन पाँच कल्याणक आठ जुत, पौष महीनो भासियो ॥७४

दोहा

फागुण दिन ग्यारसि विषे, कल्याणक जिनराय ।
पंदरह किये त्रिजगत-पति, नमै किसन सिर नाय ॥७५

छन्द त्रिभंगी

अष्टाह्निक धारण सोलह कारण व्रत दशलक्षण रतनत्रयं,
शुभ लब्धि विधानं अखय निधानं मेघ सु मालो षडरसयं।
ज्येष्ठादिक जिनवर रसपाध्यावर ज्ञान पचीसी अखय दसै,
समवादिक सरणं व्रत सुख करणं सुखं पंचम आकास लसै ॥७६
खंडेलीवालं वंसविसालं नागर वालं देस धियं,
रामापुर वासं देव निवासं धर्म प्रकासं प्रकट कियं।
संघ ही कल्याणं सब गुण जाणं गोत्र पाटणी सुजस लियं,
पूजा जिनरायं श्रुत गुरुपायं नमैं सकति जिन दान दियं ॥७७
तसु सुत दोय एवं गुरु सुखदेवं लहुरो आणदसिंघ सुणो,
सुखदेव सुनंदन जिनपद वंदन ज्ञान मान किसनेस मुणो।
किसनै इह कीनी कथा नवीनी निज हित चीनी सुरपदकी,
सुखदाय क्रिया भनि इह मन वच तन शुद्ध पलें दुरगति रदकी ॥७८

दोहा

मधुर राय वसन्त को, जाने सकल जहान।
तस प्रधान सुत कौन जू, किसन सिंह मनमान ॥७९

अडिल्ल

क्षेत्र विपाकी कर्म उदै जब आइयो, निज पुर तजि कै सांगानेर वसाइयो।
तह जिन धर्म प्रसाद गनै दिन सुखलही, साधरमी जन सजन मान दे हित गही ॥८०

दोहा

इह विचार मन आनियो, क्रिया कथन विधिसार।
होय चौपई बंध तो, सब जन कुं उपगार ॥८१
सब ही जन बांचो पढौ, सुणौ सकल नर नार।
सुखदाई मन आणिये, चलौ क्रिया अनुसार ॥८२

छन्दचाल

व्याकरण न कबही देख्यो, छन्द न नजरां अवलेख्यो।
लघु दीरघ वरण न जाणूं, पद मात्रा हू न पिछाणूं ॥८३
मति-हीन तहां अधिकाई, पटुता कबहूँ नहि पाई।
मनमांही वोहि आई, त्रेपन किरिया सुख दाई ॥८४
इह कथा संस्कृत केरी, भाषा रचिहों शुभ वेरी।
कछु अवर ग्रंथ ते जानी, नानाविध किरिया आनी ॥८५
धर क्रियाकोष तिस नाम, पूरण करिहो अभिराम।
जिम मूढ़ समुद्र अवगाहै, जिन भुजतें उतरो चाहै ॥८६
गिरि परि तरु को फल जानी, कुवजक मनि तोरन ठानी।
शशि नीर कुंड के मांहीं, करतें शशि-विम्ब गहाही ॥८७

तिम सज्जन मुझको भारी, हंसिहै संशय नहिं कारी।
वुधजन मो क्षिमा करीजे, मेरो कछु दोष न लीजे ॥८८
जो अशुद्ध होय पद याही, शुध करि पढियो भवि ताही।
अधिको नहिं कहनो जोग, वुधजन को यही नियोग ॥८९

अडिल्ल

किसन सिंह इह अरज करै सव जन सुनो,
कर मिथ्यात को नाश निजातम पद सुनो।
क्रिया सहित व्रत पाल करण वश कीजिये,
अनुक्रम लहि शिव थान शास्वता जीजिए ॥९०

॥ सवैया इकतीसा ३१ ॥

सत्रह सौ सम्वत् चौरासी यासु भादौं मास वर्षारितु स्वेत तिथि पून्यो रविवार है।
शतिभिषा रवि धृतनाम जोग कुम्भ ससि सिंधको दिनेस मुहूरत्त अति सार है॥
ढुंढाहर देस जान वसे सांगानेर थान जैसिंह सवाई महाराज नीत्ति धार है।
ताके राज-समय परिपूरण की इह कथा भव्यनि को हिरदय हुलास देनहार है ॥९१
द्वैसे चौवन पैंतीस इकतीसा मरहटा पचास पाँच से वीस ठाने हैं।
सातसै छाणवे सु चौपई छवीस छप्पै पद्धड़ी पैंतीस तेरा सोरठा वखाने हैं॥
अडिल्ल वहत्तर नाराच आठ गीता दस कुण्डलिया तीन छह तेईसा प्रमान है।
द्रुत विलंवितं चार आठ हे भुजगी तीन त्रोटक त्रिभंगी नव छन्द ऐते आने हैं ॥९२

॥ सवैया तेईसा २३ ॥

छन्द कहे इस ग्रन्थ मझार लीए गनि जे उक्तं च धराई,
दोय हजार मही लखि घाट पंचसीय एह प्रमान कराई।
जो न मिलै तुक अक्षर मात तदा पुनरुक्त न दोष ठराहीं,
तो मुझको लखि दीन प्रवीन दसो मति में तुम पाय पराही ॥९३
ग्रन्थ लिखै इह लेखक को इक है मरयाद सिलोक किता है,
छन्दनि के सव अक्षर जोरि रूप ध्वनि अंक जु मांथि तिठी है।
ते सव वर्ण वतीस प्रमाण श्लोकनि की गणती जुड़ती हैं,
दोय हजार परी नवसे लखि लेहु जिके भवि शुद्धमती है ॥९४

छप्पय छन्द

मंगल श्री अरिहंत सिद्ध मंगल सिव-दायक,
आचारज उवझाय साधु गुरु मंगल-लायक।
मंगल जिनमुख खिरी दिव्य धुनि मय जिनवाणी,
मंगल श्रावक नित्य समकिती मंगल जानी।
मंगल जु ग्रन्थ इह जानियो, वक्ता-मुख मंगल सदा।
श्रोता जु सुनै निज गुण मुनैं, मंगल कर तिनको सदा ॥९५

दोहा

किसनसिंह कवि वीनती, जिन श्रुत गुरु सों एह ।
मंगल निज तन सुपद लखि, मुझहि मोक्ष पद देह ॥९६

चौपाई

जब लों धर्म जिनेश्वर सार, जगत मांहि वरतै सुखकार ।
तब लों विस्तारो यह ग्रन्थ, भविजन सुर-शिव-दायक पंथ ॥९७

इति श्री क्रियाकोष भाषा मूल त्रेपन क्रिया ते आदि दे
और ग्रन्थों की साख का मूल कथन ऊपर व्रत सम्पूर्णम् ॥

श्री दौ तराम ृत क्रियाकोष

मंगलाचरण

दोहा

प्रणमि जिनन्द मुनिद को नमि जिनवर-मुख वानि।
क्रियाकोष भाषा कहूं, जिन आगम परवानि ॥१
मोक्ष न आतम-ज्ञान विन, क्रिया ज्ञान विन नाहिं।
ज्ञान विवेक विना नहीं, गुन विवेक के मांहि ॥२
नहिं विवेक जिनमत विना, जिनमत जिन विन नाहिं।
मोक्ष मूल निर्मल महा, जिनवर त्रिभुवन माहिं ॥३
तातैं जिनको वन्दना, हमरी वारंवार।
जिनतैं आपा पाइये, तीन भुवन में सार ॥४
द्वीप अढाई के विषैं, आरज क्षेत्र अनूप।
सौ ऊपर सत्तरि सवे, व्रतभूमि शुभरूप ॥५
जिनमें उपजे जिनवरा, व्रतविधान निरूप।
कवहूं इक इक क्षेत्र में, इक इक ह्वै जिनभूप ॥६
तव सत्तरि सौं ऊपरें, उत्तकिष्टे भुवनेस।
तिनमें महा विदेह में, अस्सी दूण असेस ॥७
भरतैरावत क्षेत्र दस, तिनके दस जिनराय।
ए दस अर वे सर्व ही, सौ सत्तरि सुखदाय ॥८
घटि ह्वै तौ जिन वीसतें, घटै न काहू काल।
पंच विदेह विषै महा, केवल रूप विशाल ॥९
चलै धर्म द्वय सासता, यति श्रावक व्रतरूप।
टलै पाप हिंसादिका, उपजें पुरुष अनूप ॥१०
कालचक्र की फिरणि विन, कुलकर तहां न होय।
नाहिं कुलिगम वरति है, तातैं रुद्र न जोय ॥११
तीर्थाधिप चक्री हल, हरि प्रतिहरि उपजन्त।
इन्द्रादिक आवें जहां; करें भक्ति भगवन्त ॥१२
तीर्थंकर अर केवली, गणधर मुनि विहरन्त।
जहां न मिथ्यामारगी, एक धर्म अरहन्त ॥१३
तात मात जिनराज के, अर नारद फुनि काम।
परगट पुरुष पुनीत वहु, शिवगामी गुण वाम ॥१४
हूवैं विदेह मुनिवर जहां, पंच महाव्रत धार।
तातें महाविदेह में, सत्यारथ सुखकार ॥१५

भरतैरावत दस विषें, कालचक्र है दोय ।
अवसर्प्पिणी उतसर्प्पिणी, षट् षट् काला सोय ॥१६
तिनमें चौथे काल ही, उपजें जिन चौवीस ।
द्वादश चक्री नव हली, हरि प्रतिहरि अवनीस ॥१७
त्रिसठि सलाका पुरुष ए, जिन मारग धर धीर ।
इनमें तीर्थंकर प्रभू, और भक्ति वर वीर ॥१८
तात मात जिनदेव के, चौवीसा चौवीस ।
नौ नारद चौदा मनूं, कामदेव चौवीस ॥१९
एकादश रुद्र महा, इत्यादिक पद धार ।
उपजें चौथे काल ही, ए निश्चय उर धार ॥२०
या विध भए अनन्त जिन, होसी देव अनन्त ।
सवको मारग एक ही, ज्ञान क्रिया वुधिवन्त ॥२१
सव ही शान्ति-प्रदायका, सवही केवल रूप ।
सव ही धर्म-निरूपका, हिंसा-रहित सरूप ॥२२
सवही आगम भासका, सव अध्यातम मूल ।
युक्ति-मुक्ति-दायक सवै, ज्ञायक सूक्षम थूल ॥२३
वरणन में आवें नहीं, तीन काल के नाथ ।
सर्व क्षेत्र के जिनवरा, नमों जोरि जुग हाथ ॥२४
भरत क्षेत्र यह आपनो जम्वूद्वीप मझारि ।
ताके मैं चौवीसिका, वन्दूं श्रुत-अनुसारि ॥२५
निर्वाणादि भये प्रभू, निर्वाणी चौवीस ।
ते अतीत जिन जानिये, नमों नाय निज शीस ॥२६
जिन भाष्यौ द्वै विधि धरम, परम धाम को मूल ।
यति श्रावक के भेद करि, इक सूक्षम इक थूल ॥२७
वहुरि वर्तमाना जिना, रिषभादिक चौवीस ।
नमों तिनें निज भाव करि, जिनके राग न रीस ॥२८
तिनहूँ सो ही भाषियौ, द्वै विधि धर्म विसाल ।
महाव्रत अणुव्रतमय, जीवदया प्रतिपाल ॥२९
वहुरि अनागत काल में होंगे तीरथनाथ ।
महापद्म प्रमुख प्रभु, चौवीसा वड़हाथ ॥३०
तातें सो ही भासि है, जे जो अनादि प्रवन्ध ।
सवको मेरी वन्दना, सवको एक निवन्ध ॥३१
चौवीसी तीनूं नमूं, नमों तीस चौवीस ।
सीमंधर आदिक प्रभू, नमन करों पुनि वीस ॥३२
पन्द्रा कर्मधरा सवै, तिनमें जे जिनराय ।
अर सामान्य जु केवली, वर्ते निर्मल काय ॥३३

तिन सबकों परणाम करि, प्रणमों सिद्ध अनंत।
आचारिज उपाध्याय कों, विनऊं साधु महन्त ॥३४
तीन काल के जिनवरा, तीन काल के सिद्ध।
तीन काल के मुनिवरा, वंदों लोक प्रसिद्ध ॥३५
पंच परमपद-पद प्रणमि, वन्दों केवलवानि।
वदों तत्त्वारथ महा, जैनधर्म गुण-खानि ॥३६
सिद्धचक्रकूं वंदिकै सिद्धमंत्रकू वंदि।
नमि सिद्धान्त-निबन्धकों, समयसार अभिनंदि ॥३७
वंदि समाधि तन्त्रकूं, नमि समभाव-सरूप।
नमोकारकूं करि प्रणति, भाषों व्रत्त अनूप ॥३८
चउ अनुयोगहिं वंदिकें, चउ सरणा ले सुद्ध।
चउ उत्तम मंगल प्रणमि, कहूँ क्रिया अविरुद्ध ॥३९
देव-धर्म गुरु प्रणति करि, स्यादवाद अवलोकि।
क्रियाकोष भाषा कहूं, कुंदकुंद मुनि ढोकि ॥४०
अरचों चरचा जैनकी, चरचों चरचा जैन।
क्रोध लोभ छल मोह मद, त्यागि गहूँ गुन वैन ॥४१
कृत्रिम और अकृत्रिमा जिनप्रतिमा जिनगेह।
तिन सबकूं परणाम करि, धारूं धर्म सनेह ॥४२
गाऊं चउविधि दान शुभ, गाऊं दसधा धर्म।
गाऊं षोडश भावना, नमि रतनत्रय धर्म ॥४३
स्तवऊं सर्व यतीसुरा, विनऊं आर्या सर्व।
सब श्रावक अर श्राविका, नमन करों तजि गर्व ॥४४
करों वीनती मना वर, समदृष्टिसो एह।
अपनों सौं वीरज मुझे, देहु धर्म में लेह ॥४५
लोक-शिखर पर थान जो मुक्ति क्षेत्र सुख-धाम।
जहां सिद्ध शुद्धातमा, तिष्ठै केवल राम ॥४६
नमों नमों ता क्षेत्र कों, जहां न कोई उपाधि।
आधि व्याधि असमाधि नहिं, वरतै परम समाधि ॥४७
प्रणमि ज्ञान कैवल्य कों केवलदर्शन ध्याय।
यथाख्यात चारित्रकूं वंदों सीस नमाय ॥४८
प्रणमि सयोगिस्थानकों, नमि अजोग गुणथान।
क्षायिक सम्यक वंदिकै, वरणों व्रत्तविधान ॥४९
वन्दों चउ आराधना, वंदों उपशमभाव।
जाकरि क्षायिकभाव ह्वै, होय जीव जिनराव ॥५०
मूलोत्तर गुण साधुके, ह्वै जिनकरि जन सिद्ध।
तिनकूं वंदि कहूँ क्रिया, त्रेपन परम प्रसिद्ध ॥५१

जहां मुनी निजध्यान करि, पावें केवलज्ञान।
वंदों ठौर प्रशस्त जो, तीरथ महानिधान ॥५२
जा थानकसों केवली, पहुंचे पुर निर्वाण।
वंदों धाम पुनीत जो, जा सम थान न आन ॥५३
तीर्थंकर भगवान के, वंदों पंच कल्याण।
और केवली कों नमों, केवल अर निर्वाण ॥५४
नमों उभैविधि धर्म को, मुनि श्रावक निरधार।
धर्म मुनिन को मोक्ष दे, काटे कर्म अपार ॥५५
तातें मुनि-मत अति प्रवल, वार-वार थुति जोग।
धन्य धन्य मुनिराज तें, तजें समस्त अजोग ॥५६
पर परणति जे परिहरें, रमें ध्यान में धीर।
ते हमकूं निज दास करि, हरौ महा भव-पीर ॥५७
मुनि की क्रिया विलोकि कैं, हम पै वरनि न जाय।
लौकिक क्रिया गृहस्थ की, वरणूं मुनि-गुण ध्याय ॥५८
यतिव्रत ज्ञान विना नहीं, श्रावक ज्ञान विना न।
वुद्धिवंत नर ज्ञान विन खोवें वादि दिनान ॥५९
मोक्ष मारगी मुनिवरा, जिनकी सेव करेय।
सो श्रावक धनि धन्य है, जिनमारग चित्त देय ॥६०
जिन-मंदिर जो शुभ रचे, अरचै जिनवर देव।
जिनपूजा नित्त-प्रति करै, करै साधुकी सेव ॥६१
करै प्रतिष्ठा परम जो, जात्रा करै सुजान।
जिन शासन के ग्रन्थ शुभ, लिखवावैं मतिमान ॥६२
चउविधि संघतणो सदा, सेवा धारे वीर।
पर उपकारी सर्व की, पीड़ा हरे जु वीर ॥६३
अपनी शक्ति प्रमाण जो, धारैं तप अर-दान।
जीवमात्र को मित्र जो, शीलवन्त गुणधाम ॥६४
भाव शुद्ध जाके सदा, नहिं प्रपंच को लेश।
पर-धन पाहन सम गिनै, तृष्णा तजी विशेष ॥६५
तातें गृहपति हू प्रवल, ताकी क्रिया अनेक।
जिनमें त्रेपन मुख्य है, तिनमें मुख्य विवेक ॥६६
नमस्कार गुरुदेव कों, जे सव रीति कहेय।
जिनवानी हिरदै धरी, ज्ञानवन्त व्रत लेय ॥६७
क्रियाकांड कों करि प्रणति, भाषों किरिया कोष।
जिनशासन अनुसार शुभ, दयारूप निरदोष ॥६८
प्रथमहिं त्रेपन जे क्रिया, तिनके वरणों नाम।
ज्ञान-विराग-सरूप जे, भविजनकूं विश्राम ॥६९

त्रेपन क्रिया

गाथा—गुण-वय-तव-सम-पडिमा, दाणं जलगालणं च अणत्थमियं ।
दंसण णाण चरित्तं किरिया तेवण्ण सावया भणिया ॥१

चौपाई

गुण कहिये अठमूल जु गुणा, वय कहिये व्रत द्वादस गुणा।
तव कहिये तप बारह भेद, सम कहिये समदृष्टि अभेद ॥७०
पड़िमा नाम प्रतिज्ञा सही, ते एकादस भेद जु लही।
दाणं कहिये दान जु चार, अर जलगालण रीति विचार ॥७१
निसिको खान-पान नहि भला, अन्न औषधी दूध न जला।
रात्रि विषें कछू लेवौ नाहि, अति हिंसा निसि-भोजन माँहि ॥७२
कह्यौ "अणत्थमिय" शब्द जु अर्थ, निसि भोजन सम नाहि अनर्थ।
दंसण णाण चरित्र जु तीन ए त्रेपन किरिया गिणि लीन ॥७३
प्रथमहि आठ मूलगुण कहों, गुण-परसाद विषाद न कहों।
मद्य मांस मधु मोटे पाप, इन करि पावे अतुलित ताप ॥७४
वर पीपर पाकर नहि लीन, ऊमर और कठूमर हीन।
तीन पंच ए आठों वस्तु, इनको त्यागे सकल प्रशस्त ॥७५
मन-वच-काय तजौ नर नारि, कृत-कारित-अनुमोद विचारि।
जिनमें इनको दोष जु लगै, तिन वस्तुनितें बुधजन भगें ॥७६
अमल जाति सबही नहि भक्ष, लगै मद्यको दोष प्रत्यक्ष।
रस चलितादिक सड़िय जु वस्तु, ते सब मदिरा तुल्यउ वस्तु ॥७७
जाये खाये मन ठीक न रहै, सो सब मदिरा दूषण लहै।
अर्क अनेक भांतिके जेह, खइवे में आवत है तेह ॥७८
आली वस्तु रहै दिन घना, तामें दोष लगै मदतना।
अब सुनि आमिष दोष जु भया, चर्मादिक घृत तेल न लया ॥७९
हींग कदापि न खावन बुधा, बींधौ सीवौ भखिवौ मुधा।
चून चालियो चलनी चाम, नीच जाति पीस्यौ हु न काम ॥८०
फूल आयौ वान अखान, फूल्यौ साग तजौ मतिवान।
कन्द अथाणा माखन त्याग, हाट मिठाई तज वड़भाग ॥८१
निसि भोजन अणछण्यू नीर, आमिष तुल्य गिनैं वरवीर।
निसि पीस्यौ निसि रांध्यौ होय, हाड़ चाम को परस्यो जोय ॥८२
मांस अहारी के घर तनी, सो सब मांस समानहि गिनों।
विकलत्रय अर तिर नर जेह, तिनको मांस रुधिरमय जेह ॥८३
तजौ सबै आमिष अघ-खानि, या सम पाप न और प्रमानि।
त्यागी सहत जु मदिरा समा, मधु दोउको नाम निरभ्रमा ॥८४
अर जिन वस्तुनि में मधुदोष, सो सब तजहु पापगण-पोष।
काकिव और मुरब्बा आदि, इनहि खाहि तिनको व्रत बादि ॥८५

मधु मदिरा पल जे नर ग्रहैं, ते शुभ गतितैं दूरहिं रहैं।
नरक निगोद माहिं दुख सहैं, अतुल अपार त्रासना लहै ॥८६
तातैं तीन मकार धिकार, मद्य मांस मधु पाप अपार।
ये तीनों औ पंच कुफला, तीन पांच ये आठों मला ॥८७
इन आठों में अगणित त्रसा, उपजै मरण करैं परवसा।
जीव अनंता वहुत निगोद, तातैं कृत कारित अनुमोद ॥८८
इनको त्याग किये वसु मूल गुणा होंहि अघतैं प्रतिकूल।
पांच उदम्बर तीन मकार, इनसे पाप न और प्रकार ॥८९
वार-वार इनको धिक्कार, जो त्यागै सो धन्य विचार।
इन आठनिसें चौदा और, भखै सु पावै अति दुख ठौर ॥९०॥
वहुत अभक्षनमें वाईस, मुख्य कहे त्यागें व्रतईस।
ओला नाम वड़ा जु बखानि, जीव-रासि भरिया दुख-खानि ॥९१
अणछणयां जलके बँधाण, दोष करै जैसें संघाण।
भखै पाप लागे अधिकाय, तातैं त्याग करौ सुखदाय ॥९२
घोल वड़ा में दूषण वड़ा, खाहिं तिके जाणे अति जड़ा।
दही मही में विदल जु वस्तु, खाये सुकृत जाय समस्त ॥९३
तुरत पंचेन्द्री उपजे तहां, विदल दही मुख में लें जहां।
अन्न मसूर मूंग चणकादि, मोठ उड़द मट्टर तूरादि ॥९४
अर मेवा पिस्ता जु बदाम, काजू चारौली अति नाम।
जिन वस्तुनि की ह्वै द्वै दाल, सो सो सब दधि भेला टालि ॥९५
जानि निशाचर जे निशि चरें, निशि-भोजन करि भव दुख करें।
ताते निशि-भोजन तजि भया, जो चाहे जिनमारग लया ॥९६
दोय मुहूरत दिन जव रहै, तवतैं चउविहार वुध गहैं।
जौलौं जुगल मुहूरत दिना, चढि है तौलौं अनसन गिना ॥९७
रात-वसौ अर रातहिं कियो, रात-पिस्यौ कवहूँ नहिं लियौ।
जहां होय अंधेरो वीर, तहां दिवस हू असन न वीर ॥९८
दृष्टि देखि भोजन करि शुद्ध, दृष्टि देखि पग धरहु प्रवुद्ध।
वहुवीजा जामें कण घणा, ते फल कुफल जिनेसुर भणा ॥९९
प्रगट तिजारा आदिक जेह, वहुवीजा त्यागौ सब तेह।
वेंगण जाति सकल अघ-खानि, त्याग करौ जिन आज्ञा मानि ॥१००
संघाणा दोषीक विसेस, सो भव्या छांड़ौ जु असेस।
ताके भेद सुनो मन लाय, सुनि यामें उपजें अधिकाय ॥१०१
अत्थाणा संधाणा मथाण, तीन जाति इनकी जु बखानि।
राई लूणी कलंजी आदि, अंबादिक में डारहिं वादि ॥१०२
नाखि तेल में करहिं अथाण, या सम दोष न सूत्रे प्रमाण।
त्रस जीवा तामें उपजन्त, मखियां आमिष दोष लहन्त ॥१०३

नीवू आम्रादिक जे फला, लूण माँहि डारें नहिं भला।
याको नाम होय संधाण, त्यागें पण्डित पुरुष सुजाण ॥१०४
अथवा चलित रसा सव वस्त, संधाणा जाणों अप्रशस्त।
वहुरि जलेबी आदिक जोय, डोहा राव मथाणा होय ॥१०५
लूण छांछि माहीं फल डारि, केर्यादिक जे खांहि गंवारि।
तेहि विगारें जन्म स्वकीय, जैसें पापी मदिरा पीय ॥१०६
अव सुनि चून तनी मरजाद, भापैं श्री गुरुजी अविवाद।
शीतकाल में सातहि दिना, ग्रीपम में दिन पांचहिं गिना ॥१०७
वरषा रितु माहीं दिन तीन, आगे संधाणा गण लीन।
मरजादा वीतें पकवान, सो नहीं भक्ष कहें भगवान ॥१०८
ताहि भखें जु असूत्री लोक, पावैं दुरगति में दुख शोक।
मर्यादा की विधि सुनि धीर, जो भापी गौतम प्रति वीर ॥१०९
जामें अन्न जलादिक नाहि, कछु सरदी जामांहि नाहि।
वूरा और वतासा आदि, वहुरि गिंदौडादिक जु अनादि ॥११०
ताकी मर्यादा दिन तीस, शीतकाल में भापी ईश।
ग्रीष्म पंदरा वर्षा आठ, यह धारौ जिनवाणी पाठ ॥१११
अर जो अन्नतणों पकवान, जलको लेश जु याहैं जान।
आठ पहर मरजादा तास, भापें श्री गुरु धर्म प्रकाश ॥११२
जल-वर्जित जो चूनहिं तनीं, घृत मीठी मिलिकै जो वनीं।
ताकी चून समानहिं जानि, मरजादा जिन-आज्ञा मानि ॥११३
भुजिया वड़ा, कचौरी पुवा, मालपुवा घृत तेलहि हुआ।
इत्यादिक है अवरहु जेह, लुचई सीरा पूरी एह ॥११४
ते सव गिनौ रसोई समा, यह उपदेश कहे पति रमा।
दारि भात कड़ही तरकारि, खिचड़ी आदि समस्त विचारि ॥११५
दोय पहर इनकी मरजाद, आगे श्री गुरु कहें अखाद।
केई नर संधारक त्यागि, ल्यूंजी खाँय सवादहिं लागि ॥११६
केरी नीवू आदि उकालि, नाना विधि सामग्री घालि।
सरस्यूं केरी तेल तपाय, तामें तलें सकल समुदाय ॥११७
जिह्वालंपट वहु दिन राख, खांय तिन्हें मतिमंद जु भाख।
तरकारी सम ल्यूंजी एह, आगे संधाणा समुझेह ॥११८
अणजाण्यूं फल त्यागहु मित्र, अणछाण्यो जल ज्यों अपवित्र।
त्यागौ कंदमूल वुधिवंत, कंदमूल में जीव अनंत ॥११९
गारि न कवहुँ भखहु गुणवन्त, गारी कवहु न काढ़उ संत।
डरी गारि में जीव असंख, निन्दैं साधु अशंक, अकंख ॥१२०
जा खाये छूटें निज प्राण, सो विषजाति अभक्ष प्रवान।
आफू और महोरा आदि, तजौ सकल मुनि सूत्र अनादि ॥१२१

काचौ माखण अति हि सदोष, भखिया करै सबै शुभ सोख।
पहले आमिष दूषण माँहि, पुनि-पुनि निन्द्यौ संशय नाँहि ॥१२२
फल अति तुच्छ खाहु मति वीर, निन्दे महावीर जगधीर।
पालौ राति जमावै कोय, ताहि भखत दुरगति फल होय ॥१२३
निज सवाद तजि ह्वै विपरीत, सो रस-चालित तजो भवभीत।
आगें मदिरा दूषण महैं, निंद्यौ ताहि सु बुध नहिं गहै ॥१२४
ए वाईस अभख तजि सखा, जो चाहौ अनुभव रस चखा।
अवर अनेक दोषके भरे, तजो अभख भव्यनि परिहरे ॥१२५
फूल जाति सव ही दोषीक, जीव अनन्त फिरे तहकीक।
कवहुं न इनकों सपरस करौ, इह जिन आज्ञा हिरदै धरौ ॥१२६
खावौ और सूँघिवौ सदा, इनकूं तजहु न ढांकहु कदा।
शाक पत्र सव निंद वखानि, त्याग करौ जिन आज्ञा मानि ॥१२७
नेम धर्म व्रत राख्यौ चहै, तौ इन सवकूं कवहुं न गहै।
झाड़ तनें वड़ वोरि जु तनें, तजौ वौर त्रस जीव जु घनें ॥१२८
पेठा और कोहला तजौ, तजि तरवूज जिनेसुर भजौ।
जांवू और करोंदा जेहु, दूध झरै त्यागौ सहु तेह ॥१२९
कन्द शाक दल फल जु त्यागि, साधारण फलतें दुर भागि।
जो प्रत्येकहु छांड़ै वीर, ता सम और न कोई धीर ॥१३०
जो प्रत्येक न त्यागे जाय, तौ परमाण करो सुखदाय।
तेहु अलप ही कवहुंक खाय, नहिं तौंड़े न तुडावन जाय ॥१३१
ताजा ले वासी नहिं भखै, रस चलितादिक कवहुँ न चखै।
हरित कायसों त्यागै प्रीति, सो जानें जिन-मारग रीति ॥१३२
जे अनन्तकाया दुखदाय, सव साधारण त्यागौ राय।
तजि केदार तूंवड़ी सदा, खाहु म नाली ढिस तुम कदा ॥१३३
कचनारादिक डौंड़ी तजौ, तजि अण फोड़यो फल जिन भजौ।
पहली विदलतनूं अति दोष, भाख्यौ भेद सुनहु तजि रोष ॥१३४
अन्न मसूर मूंग चणकादि, तिनकी दालि जु होय अनादि।
अर मेवा पिस्ता जु निदाम, चारौली आदिक अतिनाम ॥१३५
जिन जिन वस्तुनि की है दालि, सो सो सब दधि भेला टालि।
अर जो दधि भेलो, भिष्टान तुरत्तहि खावा सूत्र प्रमान ॥१३६
अन्तमुहूरत पीछें जीव, उपजें इह गावें जगपीव।
तातें मीठा जुत जो दही, अन्तमुहूरत पहले गही ॥१३७
दधि-गुड़ खावौ कवहुं न जोग, वरजें श्री वस्तु अजोग।
पुनि तुम सुनहुं मित्र इक वात, राई लूण मिलें उतपात ॥१३८
तातें दही मही में करै, तजौ रायता कांजी वरै।
घी ताजा गहिवौ भवि लोय, सूद्रनिको घृत जोगि न होय ॥१३९

स्वाद-चलित जो खावै घीव, सो कहिये अविवेकी जीव।
थिरत सोधिको लेवौ अल्प, भजिवौ जिनवर त्यागि विकल्प ॥१४०
घृतहू छाड़ै तौ अति तपा, नीरस तप धरि श्रीजिन जपा।
सिंधव लोंन व्रतिनिको लेन, कृत्रिम लोंन सर्वं तजि देन ॥१४१
जो सिंधवहू त्यागै भया, महा तपस्वी श्रुत में लया।
अब तुम गोरस की विधि सुनों, जिनवर की आज्ञा उर गुणों ॥१४२
दोहत जब महिषी अर गाय, तबतें इह मरजाद गहाय।
काचौ दूध न राखै सुधी, द्वै घटिका राखैं तौ कुधी ॥१४३
काचौ दूध न लेवौ वीर, अणछाण्यूं पय तजिवो धीर।
अंतर एक मुहूरत वसा, उपजै जीव असंखित त्रसा ॥१४४
जाको पय ह्वै तैसे जीव, प्रगटैं इह भाषे जगपीव।
पंचेन्द्री सम्मूर्छन प्राणि, भैया तू जिनवचन प्रवाणि ॥१४५
इह तो दूध तणी विधि कही, अब सुनो दही मही की सही।
जामण दीयौ ह्वै जिह दिनां, ताके दूजौ दिन शुभ गिना ॥१४६
पीछे दधि खावौ नहि जोगि, इह भाषैं जिनराज अरोगि।
दधि को मथियौ पानी डारि, ताको नाम जु छांछि विचारि ॥१४७
ताही दिवस होय सो भक्ष, यह जिन आज्ञा है परतक्ष।
मथता ही जा माहीं तोय, बहुर्यो वारि न डार्यो होय ॥१४८
माथिया पाछे काचौ वारि, नाख्यौ सो लेवौ जु विचारि।
जेतो काचा जलको काल, तेतौ ही ताको जु विचारि ॥१४९
छण्यूं जल सो काचौ रहै, एक मुहूरत जिनवर कहै।
आगें त्रसजीवा उपजंत, अणछणयां को दोष लगंत ॥१५०
तिक्त कषाय मिल्यौ जो नीर, सो प्राशुक भाख्यौ जिन वीर।
दोय पहर पहिली ही गहौ, यह जिन आज्ञा हिरदै वहो ॥१५१
तातौ जल जो भात उकाल, आठ पहर मरजादा काल।
आगे सनमूर्छन उपजाहि, पीवत धर्मध्यान सब जाहि ॥१५२

दोहा

अघ-तरुवर को मूल इह, मोह मिथ्यात जु होय।
राग द्वेष कामादिका, ए सकंध बहु जोय ॥१५३
अशुभ क्रिया शाखा घनी, पल्लव चंचल भाव।
पत्र असंजम अव्रता छाया नाहि लखाव ॥१५४
इह भव दुख भाखै पहुप, फल निगोद नरकादि।
इह अघ-तरु को रूप है, भव-वन मांहि अनादि ॥१५५

चौपाई

क्रिया कुठार गहै कर कोय, अघ-तरुवरको काटै सोय।
जे वेचें दधि और जु मठा, उदर भरण के कारण शठा ॥१५६

तिनकों मोल लेय जे खाहिं, ते नर अपनों जन्म नसाहिं।
तातैं मोलतनों दधि तजौ, यह गुरु आज्ञा हिरदै भजौ ॥१५७
दधी जमावै जा विधि व्रती, सो विधि धारहु भाषहिं जती।
दूध दुहाकर ल्यावै जवै, ततछिन अगनि चढावै तवै ॥१५८
रूपी गरम करै पयमांहि, जामण देय जु संसै नाहिं।
जमें दही या विधि कर जोहु, वाधै कपरा माहीं सोहु ॥१५९
बूंद रहै नहिं जल की एक, तवहिं सुकाय धरै सुविवेक।
दहो वड़ी इह भाषी सही, गृही जमावै तासों दही ॥१६०
अथवा दधि में रूई भेय, कपरा भेय सुकाय धरेय।
राखै इक द्वै दिन ही जाहि, वहुत दिना राखै नहिं ताहि ॥१६१
जल में घोलिर जामण देय, दधि ले तौ या विधि करि लेय।
और भाँति लेवौ नहिं जोगि, भाखें जिनवर देव अरोगि ॥१६२
शीतकाल की इह विधि कहीं, उष्णऊ वरषा राखै नहीं।
जो हि सर्वथा छाँड़ै दधी, तासम और न कोई सुधी ॥१६३
सूद्रतनें पात्रनि को दुग्ध, दधि-घृत-छाछि भखें ते मुग्ध।
उत्तम कुल हू जे मतिहीन, क्रियाहीन जु कुविसन अधीन ॥१६४
तिनके घरको कछहु न जोगि, तिनकी किरिया वहुत अजोगि।
दूध ऊँटणी भेड़िन तनों, निद्यौ जिनमत माहीं घनों ॥१६५
गो महिषी विन और न भया, कवहु न लेनों नाहीं पया।
महिषी दूध प्रमाद करेय, तातें गायनि की पय लेय ॥१६६
नीरसव्रत घर दूवहिं तजै, तातें सकल दोष ही भजै।
हाटें विकते चूनरु दालि, वुधजन इनको खावौ टालि ॥१६७
वीवौ खोटौ पीसै दलै, जीवदया कैसे करि पलै।
चूनो संखतणो कसतूरि, इनकों निंद कहें जिनसूरि ॥१६८

दोहा

चरम-सपरसी वस्तु को, खातें दोष जु होय।
ताको संक्षेपहि कथन, कहों सुनों भवि लोय ॥१६९
मूये पसूके चर्मकों, चीरै जो चंडार।
ता चंडालहिं परसिकै, छोति गिने संसार ॥१७०
तो कैसे पावन भयौ, मिल्यौ चर्म सों जोहि।
आमिष तुल्य प्रभू कहें, याहि तजौ वुध सोहि ॥१७१
उपजैं जीव अपार सुनि, जिनवानी उर धारि।
जा पसुको हैं चर्म जो, तैसे ही निरधारि ॥१७२
सन्मूर्छन उपजै जिया, तातें जल घृत तेल।
चर्म सपरसे त्यागिये, भाषें साधु अचेल ॥१७३

जैसे सूरज कांच के, रूई वीचि धरेय।
प्रगटै अगनि तहाँ सही, रूई भस्म करेय ॥१७४
तैसे रस अर चर्म के जोगै, जिय निपजांहि।
खावे वारे के सकल, धर्मव्रत लुपि जाँहि ॥१७५
जीमत भोजन के समैं, मुवौ जिनावर देखि।
तजै नहीं जे असनकों, ते दुरबुद्धि विशेखि ॥१७६
जे गँवार पाठातनी. फली खाय मतिहीन।
तिनके घट नहिं समुझि है, यह भावै परवीन ॥१७७

रसोई, परंडा, चक्की आदि क्रियाओं का वर्णन। चौपाई

जा घर माँहि रसोई होय, वारे चंदवा उत्तम सोय।
वहुरि परंडा ऊपर ताणि, उखली चाकी आदिक जाणि ॥१
फटकै नाज वीणिये जहाँ, चून चालिये भैय्या तहाँ।
अर जिह ठौर जीमिये धीर, पुनि सोवे की ठौहर वीर ॥२
तथा जहाँ सामायिक करै, अथवा श्री जिनपूजा धरै।
इतने थानक चंदवा होय, दीखै श्रावक को घर सोय ॥३
चाकी अर उखली परमाण, ढकणा दीजै परम सुजाण।
श्वान विलाव न चाटै ताहि, तव श्रावक को धर्म रहाहि ॥४
मूसल धोय जतन सों धरै, निशि घोटन पीसन नहिं करै।
छाज तराजू अर चालणी, चर्मतणी भविजन टालणी ॥५
निशिकों पीसै घोटै दलै, जीवदया कवहूँ नहिं पलै।
चाकी गालै चून रहाय, चोंटी आदि लगै तसु आय ॥६
निसिको पीसत खवर न परै, तातैं निशि पीसन परिहरै।
तथा रातिको भीज्यौ नाज, खावौ महापाप को साज ॥७
अंकूरे निकसें ता माँहि, जीव अनन्ता संशय नाँहि।
तातै भीज्यौ नाज अखाज, तजौ मित्र अपने सुखकाज ॥८
सुल्यौ सड्यौ गडियौ जो धान, फूली आयौ होय नखान।
स्वाद चलित खावौ नहिं वीर, रहिवौ अति विवेकसूं धीर ॥९
नहिं छीवै गोवर गोमूत, मल, मूत्रादिक महा अपूत।
छाणा ईंधन काज अजोगि, लकड़ी हू वीधी नहिं जोग ॥१०
जेती जाति मुरब्बा होय, लेणा एक दिवस ही सोय।
पीछे लागै मधुको दोप, तासम और न अघ को पोष ॥११
आथाणा का नाम अचार, भखें अविवेकी अविचार।
या सम अणाचार नहिं कोय, याको त्याग करें वुध सोय ॥१२

राह चल्यौ भोजन मति खाहु, उत्तम कुलको धर्म रखाहु।
निकट रसोई भोजन करौ, अणाचार सब ही परिहरौ ॥
करौ रसोई भूमि निहारि, जीव-जन्तु की बाधा टारि ॥१३

वेसरी छन्द

दोव खोदि मति करौ रसोई, तहां जीव की हिंसा होई।
मलिन वस्तु अवलोकन होवै, सो थानक तजि औरहिं जोवै ॥१४
नरम पूजणी सों प्रतिलेखै, करै रसोई चर्म न देखै।
माटी के वासण इक बारा, दूजी विरियां नाहीं अचारा ॥१५
जो दूजे दिन राखै कोई, सो नर सूद्रनि सदृश होई।
मिटै न सरदी करै न कोई, मिट्टी के वासण की भाई ॥१६
उपजें जीव असंख्य जु तामें, वासी भोजन दूषण जामें।
दया न किरिया उत्तम ताई, माटी के वासण में भाई ॥१७
तातैं भले धातु के वासन, इह आज्ञा गावै जिन शासन।
धातु-पात्र ही नीका मंजै, सोई अशन-अक्रिया भंजै ॥१८
रहै अशन को लेश जु कोई, सो वासन मांज्यौ नहि होई।
दया क्रिया को नास जु तामें, अन्न जोग उपजे जिय जामें ॥१९
मांजि धोय अर पूंछ जु राछा, राखै उज्जल निर्मल आछा।
दया सहित करणी सुखदाई, करुणा विन करणी दुखदाई ॥२०
जीवनिकूं सन्ताप न देवै, तव आचार तणी विधि लेवै।
विन जिनधर्मा उत्तम वंसा, देइ न लेय सुराक्ष नृशंसा ॥२१
श्रावक कुल किरिया करि युक्ता, तिनके करको भोजन युक्ता।
अथवा अपने करको कीयौ, आरम्भी श्रावक ने लीयौ ॥२२
अन्यमती अथवा कुलहीना, तिनक करको कवहु न लीना।
अन्य जाति जो भींटै कोई, तौ भोजन तजवौ है सोई ॥२३
नीली हरी तजै जो सारी, ता सम और नहीं आचारी।
जो न सर्वथा छांड़ी जाई, तौ प्रत्येक फला अलपाई ॥२४
हरी सुकावौ योग्य न भाई, जामें दोष लगै अधिकाई।
सूके पत्र औषधी लेवा, भाजी सूकी सब तजि देवा ॥२५
पत्र-फूल-कन्दादि भखें जे, साधारण फल मूढ चखें जे।
ते नहिं जानों जैनी भाई, जीभ-लंपटी दुरगति जाई ॥२६
पत्र-फूल-कन्दादि सवै ही साधारण फल सर्व तजै ही।
अर तुम सुनहु विवेकी भैय्या, भेलै भोजन कवहु न लैया ॥२७
मात तात सुत वांधव मित्रा, भेले भोजन अति अपवित्रा।
महा दोप लागै या मांही, आमिष को सो संशय नाहीं ॥२८

अपने भोजन के जे पात्रा, काहूकूं नहिं देय सुपात्रा ।
वुधजन भेलें जीमें कैसें, भाषें श्री जिन-नायक ऐसें ॥२९
मांहि सराय न भोजन भाई, जव श्रावक को व्रत्त रहाई ।
अन्तिज नीचनि के घर माहीं, कवहुँ रसोई करणी नाहीं ॥३०
मांस त्यागि व्रत जो नि धारै, नीचन को संगर्ग न कारै ।
उत्तम कुलहू परमट धारी, तिनहू के भोजन नहि कारी ॥३१
जैन धर्म जिनके घट नाहीं, अन्य देव पूजा घर माहीं ।
तिनको छूयौ अथवा करको, कवहू न खावै तिनके घरको ॥३२
कुल किरिया करि आप समाना, अथवा आप थकी अधिकाना ।
तिनको छुयौ अथवा करको, भोजन पावन तिनके घरको ॥३३
अर जे छाणि न जाणें पाणी, अन्न वीण की रीति न जाणी ।
भक्षाभक्ष भेद नहिं जानें, कुगुरु कुदेव मिथ्यामत मानें ॥३४
तिनतें कैसी पांति जु मित्रा, तिनको छूयौ है अपवित्रा ।
चर्म रोम मल हाथी दन्ता, जेहिं कचकड़ा विमल कहन्ता ॥३५
तिनतें नहि भोजन सम्वन्धा, यह किरिया को कह्यौ प्रवन्धा ।
जङ्गम जीवनि के जु शरीरा, अस्थि चर्म रोमादिक वीरा ॥३६
सब अपवित्रा जानि मलीना, थावर दल भोजन में लीना ।
रोमादिक को सपरस होवै, सो भोजन श्रावक नहि जोवै ॥३७
नीला वस्त्र न भीटै सोई, नाहि रेशमी वस्त्र हु कोई ।
विन धोया ह्वै कपरा नाहीं, इह आचार जैनमत नाहीं ॥३८
दया लिया ह्वै किरिया धारी, भोजन करैं सोधि आचारी ।
पांच ठांवसूं भोजन नाहीं, धोति दुपट्टा विमल धराहीं ॥३९
विन उज्ज्वलता भई रसोई, त्याग करै ताकूं विधि जोई ।
पंचेन्द्री पसु हू को छूयौ, भोजन तजै अविधितें हूयौ ॥४०
सोध तनी सव वस्तु जु लेई, वस्तु असोधी त्यागै तेई ।
अन्तराय ओ परे कदापी, तजै रसोई जीव निपापी ॥४१
दया क्रिया विन श्रावक कैसे, वुद्धि पराक्रम विन नृप जैसे ।
मांस रुधिर मल अस्थि जु, चामा तथा मृतक प्राणी लखि रामा ॥४२
अर जो वस्तु तजी है भाई, सो कवहू जो थाल धराई ।
तौ उठि वैठे होउ पवित्रा, यह आज्ञा गावै जगमित्रा ॥४३
दान विना जीमौ मति वीरा, इह आज्ञा धारौ उर धीरा ।
विना दान भोजन अपवित्रा, शक्ति प्रमाणें दान दो चित्रा ॥४४
मुनी अर्जिका श्रावक कोई, कै सुश्राविका उत्तम होई ।
अथवा अव्रत सम्यकदृष्टी, जिह उर अमृतधारा वृष्टी ॥४५
इनकूं महाभक्ति करि देहो, तिनके गुण हिरदा में लेहो ।
अथवा दुखित भुखित नर नारी, पसु पंखी दुखिया संसारी ॥४६

अन्न वस्त्र जल सवको देना, नर भव पाये का फल लेना।
तिर्यंचनिकूं तृण हू देना, दान तणों गुण उरमें लेना ॥४७
भोजन करत ओंठि जिन छोड़ौ, ओंठि खाय देही मति भांडौ।
काहूकूं उच्छिष्ट न देनो, यही वात हिरदै धरि लेनी ॥४८
अन्तराय जो परैं कदापी, अथवा छीवें खल जल पापी।
तव उच्छिष्ट तजन नहिं दोषा, इह भाषे वुधजन व्रत पोषा ॥४९
घृत दधि दूध मिठाई मेवा, जोहि रसोई माँहि जु लेवा।
सो सव तुल्य रसोई जानों, यह गुरु आज्ञा हिरदै मानो ॥५०
जहां वापरै अन्न रसोई, तातें न्यारे राखै जोई।
जेतौ चहिये तेतौ ल्यावै, आवै, सो वर्तन में आवै ॥५१
पाका वस्तु रु भोजन भाई, एक भये वाहिर नहिं जाई।
जल अर अन्न तणों पकवाना, सो भोजन ही सादृश जाना ॥५२
असन रसोई वाहर जावै, सो वढ वोपा नाम कहावै।
मौन विना भोजन वरज्या है, मौन सात श्रुत मांहि कह्या है ॥५३
भोजन भजन स्नान करंता, मैथुन वमन मलादि करंता।
मूत्र करंता मौन जु होई, इह आज्ञा धारैं वुध सोई ॥५४
अन्तराय अर मौन जु सप्ता, पालै श्रावक पाप अलिप्ता।
अव जल की किरिया सुनि धर्मी, जे नहिं धारें तेहि अधर्मी ॥५५
नदी तीर जो होय मसाणा, सो तजि घाट जु निन्द्य वखाणा।
और घाटको पाणी आणों, इह जिन आज्ञा हिरदै जाणों ॥५६
लोक भरत जे निजरमां आवै, तिनके ऊपरलौ जल ल्यावै।
सरवर माँहि गांव को पानी, आवै सो सरवर तजि जानी ॥५७
गांवथकी जो दूरि तलावा, ताका जल ल्यावौ सुभ भावा।
तजी अपावन नदी किनारा, अव वापी की विधि सुनि वीरा ॥५८
जा माहीं न्हावै नर नारी, कपरा वोवहिं दांतुनि कारी।
ता वापी को जल मति आनों, तहां न निर्मलताई जानों ॥५९
कूपतणी विधि सुनहु प्रवीना, जहां भरैं पानी कुल हीना।
तहां जाहि मति भरवा भाई, तवँ ऊंचकौ धर्म रहाई ॥६०
उत्तम नीच यहै मरजादा, यामें है कहुँ हू न विवादा।
यवन अन्तिजा सवसे हीना, इनको कूप सदा तजि दीना ॥६१
अव तुम वात सुनो इक औरै, शंका छांडि वखानौ चौरै।
धर्म रहित के पानी घर को, त्यागौ वारि अधर्मी नरको।
विन साधर्मी उत्तम वंसा, पर घर की छांड़ौ जल अंसा ॥६२

दोहा

जल के भाजन वातु के, जो होवें घर माँहि।
पूंछ मांजि नित धोयवा, यामें संशय नाँहि ॥६३

अर जे वासण गारके, गागर घट मटकादि।
ते हि अल्प दिन राखिवौ, इह आज्ञा जु अनादि ॥६४
राति सुकाय वराय वा, माटी वासण वीर।
तिनमें प्रातहि छाणिवौ, आछी विधिसों नीर ॥६५
जौ नहि राखै गारके, जल भाजन बुधिवान।
राखै वासण धातु ही, सो अति ही शुचिवान ॥६६

चौपाई

इह तौ जल की क्रिया वताई, अव सुनि जल-गालन विधि भाई।
रंगे वस्त्र नहि छानों नीरा, पहरे वस्त्र न गालौ वीरा ॥६७
नाहि पातरे कपड़े गालौ, गाढे वस्त्र छांड़ि अघ टालौ।
रेजा दिढ आंगुल छत्तीसा, लंवा अर चौंरा चौवीसा ॥६८
ताको दो पुड़ता करि छानों, यही नांतणा की विधि जानों।
जल छाणत इक बूंदहु धरती, मति डारहु भाषें महाव्रती ॥६९
एक बूंद में अगणित प्राणी, इह आज्ञा गावै जिनवाणी।
गलना चिउंटी धरि मति दावौ, जीव दयाको जतन धरावौ ॥७०
छाणे पाणी वहुते भाई, जल गलणा धोवै चित लाई।
जीवाणी को जतन करौ तुम, सावधान ह्वै विनवें क्या हम ॥७१
राखहु जलकी किरिया शुद्धा, तव श्रावक व्रत लवौ प्रवुद्धा।
जा निवांणकौ ल्यावौ वारी, ताही ठौर जिवाणी डारी ॥७२
नदी तालाव वावड़ी माहीं, जलमें जल डारी सक नाहीं।
कूप माहि नाखौ जु जिवाणी, तौ इह वात हिये परवाणी ॥७३
ऊपरसूं डारौ मति भाई, दयाधर्म धारौ अधिकाई।
भवंरकली को डोल मंगावौ, ऊपर नीचे डोरि लगावौ ॥७४
द्वै गुण डोल जतन करि वीरा, जीवाणी पधरावौ वीरा।
छाण्यां जल को इह निरधारा, थावरकाय कहें गणधारा ॥७५
द्वै घटिका वीतैं जो जाकों, अणछाण्यां को दोष जु ताकों।
तिक्त कषाय मेलि किय फासू, ताहि अचित्त कहें श्रुत-भासू ॥७६
पहर दोय वीतैं जो भाई, अगणित त्रस जीवा उपजाई।
ड्योढ़ तथा पौणा दो पहरा, आगें मति वरतौ वुधि-गहरा ॥७७
भात उकाल उष्ण जल जो है, सात पहर ही लेणो सो है।
वीतें वसु जामा जल उष्णा, त्रस भरिया इह कहै जु विष्णा ॥७८
विष्णु कहावें जिनवर स्वामी, सर्व व्यापको अन्तर-यामी।
या विधि पाणी दिवसें पीवौ, निसिकूं जल छाड़ौ भवि जीवौ ॥७९
अशन पान अर खादिम स्वादी, निशि त्यागे विन व्रत सव वादी।
दया विना नहि व्रत जु कोई, निश भोजन में दया न होई ॥८०

छाण्यूं जाय न निसकों नीरा, वीण्यूं जाय न धानहुँ वीरा।
छाण वीण विन हिंसा होवै, हिंसातैं नारक पद जोवैं ॥७१

अवर कथन इक सुनने योगा, सुनकर धारहु सुबुधि लोगा।
नारिन कों लागै वड़ रोगा, मास मास प्रति होहि अजोगा ॥८२

ताकी किरिया सुनि गुणवन्ता, जा विधि भाषैं श्रीभगवन्ता।
दिवस पांच वीतें सुचि होई, पांच दिनालौं मलिन जु सोई ॥८३

उक्तं च श्लोक—त्रिपक्षे शुद्धयते सूती, रजसा पंच वासरे।
अन्यशक्ता च या नारी, यावज्जीवं न शुद्धयते ॥१

अर्थ—प्रसूता स्त्री डेढ़ महीनेमें शुद्ध होय है, रजस्वला पांच दिवस गये पवित्र होय है अर जो स्त्री परपुरुष सों रत भई सो जन्म पर्यन्त शुद्ध नाहीं, सदा अशुचि ही है।

वेसरी छन्द

पांच दिवस लौं सगरे कामा, तजिकर, रहिवौ एकै ठामा।
कछु धंधा करवौ नहिं जाकों भई अजोग अवस्था ताको ॥८४

निज भर्त्तांहूँ कों नहिं देखै, नीची दृष्टि धर्म को पेखैं।
दिवस पांचलौं न्हावौ उचिता, नितप्रति कपड़ा धोवो सुचिता ॥८५

कांहूँ सों सपरस नहिं करिवौ, न्यारे आसन वासन धरिवौ।
जो कवहूँ ताके वासन सों, छुयौ राछ अथवा हाथन सों ॥८६

तो वह वासन ही तजि देवौ, या विधि शुद्ध जिनाज्ञा लेवौ।
अन्न वस्त्र जल आदि सवैही, ताकौ छुऔ कछू नहिं लेही ॥८७

कोरो पीस्यौ कछु नहिं गहिवौ, ताकौ ताके ठामहिं रहिवौ।
ठौर त्याग फिरवौ न कितैही, इह जिनवर की आज्ञा है ही ॥८८

करवौ नाहीं अशन गरिष्ठा, नाहीं जु दिवसें शयन वरिष्ठा।
हास कुतूहल तैल फुलेला, इन दिन माहिं न गीत न हेला ॥८९

काजल तिलक न जाकों करिवौ, नाहिं महावर महेंदी धरिवौ।
नख केशादि सुधार न करनों, या विधि भगवत-मारग धरनों ॥९०

और त्रियन में मिलवौ जाकों, पंच दिवस है वर्जित ताकों।
चंडाली छूतें अति निंद्या, भाषें जिनवर मुनिवर वंद्या ॥९१

पंच दिवस पति ढिग नहिं जावौ, अर नहिं वाके सज्या रचावौ।
भूमि-सयन है जोग्य जु ताको, सिंगारादि न करनों जाकों ॥९२

छट्टे दिवस न्हाय गुणवन्ती, शुभ कपड़ा पहरैं वुधिवन्ती।
ह्वै पवित्र पतिजुत जिन अर्चा, कर वातैं धारै शुभ चर्चा ॥९३

पूजा दान करै विधि सेती, सुभ मारग माहीं चित देती।
निसि को अपने पति ढिग जावै, तौ उत्तम वालक उपजावै ॥९४

सुवुधि विवेकी सुव्रत-धारी, शीलवन्त सुन्दर अविकारी।
दाता सूर तपस्वी श्रुतधर, परम पुनीत पराक्रम भर नर ॥९५
जिनवर भरत वाहुवलि सगरा, रामकृष्ण पांडव अर विदरा।
लव अंकुश प्रद्युम्न सरीसा, वृषभसेन गौतम स्वामी सा ॥९५
सेठ सुदर्शन जंबू स्वामी, गज कुमार आदि गुण-धामी।
पुत्र होय तौ या विधि को ह्वै, अर कवहूं पुत्री हो जो ह्वै ॥९७
तो सुशील सौभाग्यवती अति, नेम धरम परवीन हंस गति।
वाल सुब्रह्मचारिणी शुद्धा, ब्राह्मी सुन्दरि सी प्रतिवुद्धा ॥९८
चन्दन वाला अनन्तमतीसी, तथा भगवती राजमतीसी।
अथवा पतिव्रता जु पवित्रा, ह्वै सुशील सीतासी चित्रा ॥९९
कै सुलोचना कौशल्या सी, शिवा रुकमनी वीशल्या सी।
नीली तथा अंजना जैसी, रोहणि द्रौपद सुभद्रा तैसी ॥१००
अर जो कोऊ पापाचारी, पंच दिवस वीतें विन नारी।
सेवै विकल अन्ध अविवेकी, ते चंडालनि हूते एकी ॥१
अति ही घृणा उपजै ता समये, तातें कवहुं न ऐसे रमिये।
फल लागै तौ निपट हि विकला, उपजै संतति सठ वे-अकला ॥२
सुत जन्में तौ कामी क्रोधी, लापर लंपट धर्म विरोधी।
राजा वक वसु से अति मूढ़ा, ग्रन्थनि माहि अजस आरूढ़ा ॥३
सत्यघोष द्विज पर्वत दुष्टा, धवल सेठ से पाप सपुष्टा।
पुत्री जन्में तोहो कुशीली, पर-पुरुषा रति अवहीली ॥४
राव जसोधर की पटरानी, नाम अमृतादेवि कहानी।
गई नरक छट्ठे पति मारे, किये कुवज सों कर्म असारे ॥५
रात्रि विषैं कपरा ह्वै नारी, तौ इह वात हिये में धारी।
पंच दिवस में सो निसि नाहीं, ता विन पंच दिवस श्रुत माहीं ॥६
इह आज्ञा धारौ तजि पापा, तव पावौ आचार निपापा।
अव सुनि गृहपति के षट् कर्मा, जो भाषैं जिनवर को धर्मा ॥७
निज पूजा अर गुरु की सेवा, पुनि स्वाध्याय महासुख देवा।
संजम तप अर दान करौ नित, ए षट् कर्म धरौ अपने चित ॥८
इन कर्मनि करि पाप जु कर्मा, नासें भविजन सुनि निज धर्मा।
चाकी उखरी और वुहारी, चूला वहुरि परंडा वारी ॥९
हिंसा पाँच तथा घर धन्धा, इन पापनि करि पाप हि वंधा।
तिनके नासन कों षट कर्मा, सुभ भावैं जिनवर को धर्मा ॥१०
ए सव रीति मूल गुण माहीं, भाषें श्री गुरु संसै नाहीं।
आठ मूल गुण अंगीकारा, करौ भव्य तुम पाप निवारा ॥११
अर तजि सात विसन दुखकारी, पाप मूल दुरगति दातारी।
जूवा आमिष मदिरा दारी, आखेटक चोरी पर नारी ॥१२

जूवा सम नहिं पाप जु कोई, सब पापनि कौ यह गुरु होई।
जूवारी कौ संग जु त्यागौ, द्यूत कर्म के रंग न लागौ ॥१३
पासा सारि आदि वहु खेला, सब खेलनि में पाप हि भेला।
सकल खेल तजि जिन भजि प्रानी, जाकर होय निजातम ज्ञानी ॥१४
ठौर ठौर मद मांस जु निंदे, तातें तजिये प्रभू कों वंदे।
तज वेश्या जो रजक-शिला सम, गनिका को घर देखहु मति तुम ॥१५
त्यागि अहेरा दुष्ट जु कर्मा, ह्वै दयाल सेवौ जिन धर्मा।
करै अहेरातें जु अहेरी, लहै नर्क में आपद ढेरी ॥१६
क्षत्री को इह होय न कर्मा, क्षत्री को है उत्तम धर्मा।
क्षत् कहिये पीरा को नामा, पर-पीरा-हर जिनको कामा ॥१७
क्षत्री दुर्वल कों किम मारै, क्षत्री तो पर-पीरा टारै।
मांस खाय सो क्षत्री कैसो, वह तौ दुष्ट अहेरी जैसो ॥१८
अर जु अहेरी तजै अहेरा, दयापाल ह्वै जिनमत हेरा।
तौ वह पावै उत्तम लोका, सबकों जीव-दया सुख थोका ॥१९
त्यागौ चोरी जो सुख चाहौ, ठग विद्या तजि लोभ विलाहौ।
पर धन भूले विसरें आयौ, राखौ मति यह जिन श्रुत गायौ ॥२०
लूटि लेहु मति काहू को धन, पर धन हरवेंकों न धरौ मन।
चुगली करन, लुटावौ काकों, छाड़ों भाई अन्य रमा कों ॥२१
काहू की न, वरोहरि दावौ, सूधौ राखौ मित्र हिसावौ।
तौल माहिं घटि-वधि मति कारौ, इह जिन आज्ञा हिरदै धारो ॥२२

दोहा

तजौ चोर की संगती, तासू नहिं व्यवहार।
चोरयो माल गृहौ मती, जो चाहौ सुख सार ॥२३
परदारा सेवन तजौ, या सम दोष न और।
याकों निंदे जिनवरा, जो त्रिभुवन के मौर ॥२४
पापी सेवें पर तिया, परें नरक में जायँ।
तेतीसा-सागर तहाँ, दुख देखें अधिकाय ॥२५
तातें माता वहन अर, पुत्री सम पर-नारि।
गिनों भव्य तुम भाव सों, शील वृत्त उर धारि ॥२६
जे जेठी ते मात सम, समवय वहन समान।
आप थकी छोटी उमरि, सो जिन सुता प्रमान ॥२७
निन्दे विसन जु सात ए, सात नरक दुखदाय।
मन वच तिन ए परिहरौ, भजौ जिनेसुर पाय ॥२८
इन विसननि करि वहु दुखी, भये अनन्ते जीव।
तिनको को वर्णन करै, ए निंदें जग-पीव ॥२९

कैयक के भाखें भया, नाम, सूत्र-अनुसार।
राव जुधिष्ठर सारिखे, धर्मोत्तम अविकार ॥३०
दुर्योधन के हठ थकी, एक वारही द्यूत।
.... ॥३१
हारि गये पांडव प्रगट, राज सम्पदा मान।
दुखी भये जो दीन जन, ग्रन्थनि माहि बखान ॥३२
पीछे तजि सब जगत कों, जगदीश्वर उर ध्याय।
श्री जिनवर के लोक कों, गये जुधिष्ठर राय ॥३३
मांस भखनतें बक नृपति, गये सातवें नर्क।
तीस तीन सागर महा, पायौ दुख संपर्क ॥३४
अमल थकी जदुनन्दना, रिपिकों रिस उपजाय।
भये भस्मभावा सबै, पाप करम फल पाय ॥३५
कैयक उवरे जिन जपो, भये मुनीसुर जेह।
येह कथा जिनसूत्र में, तुम परगट सुन लेह ॥३६
चारुदत्त इक सेठ ही, करि गनिकासों प्रीति।
लही आपदा जिह घनी, गई संपदा वीति ॥३७
ब्रह्मदत्त पापी महा, राजा हौ मृग मार।
आखेटक अपराधतें, बूड्यो नरक मझार ॥३८
चोरी करि शिवभूति शठ, लहे बहुत दुख दोष।
ताकी कथा प्रसिद्ध है, कहिवे को सतघोष ॥३९
परदारा पर चित्त धरी, रावण से बलवन्त।
अपजस लहि दुरगति गये, जे प्रतिहरि गुणवन्त ॥४०
विसन बुरे विसनी बुरे, तजौ इनों तें प्रीति।
व्रत क्रियाके शत्रु ये, इनमें एक न नीति ॥४१
अब सुनि भैया बात इक, गुण इकवीसौं जेह।
इनहीं मूल गुणानिको, परिवारों गनि लेह ॥४२
लज्जा दया प्रशांतता, जिन मारग परतीति।
पर औगुनको ढांकिवो, पर उपगार सुप्रीति ॥४३
सोमदृष्टि गुणग्रहणता, अर गरिष्ठता जानि।
सबसों मित्राई सदा, वैरभाव नहि मानि ॥४४
पक्ष पुनीत पुमान की, दीरघदरसी सोय।
मिष्ट वचन बोलै सदा, अर बहु ज्ञाता होय ॥४५
अति रसज्ञ धर्मज्ञ जो, है कृतज्ञ पुनि तज्ञ।
कहै तज्ञ जाकूं वुधा, जो होवै तत्त्वज्ञ ॥४६
नहीं दीनता भाव कछु, नहि अभिमान धरेय।
सबसों समताभाव है, गुण को विनय करेय ॥४७

पापक्रिया सव परिहरौ, ए गुण होंय एकीस।
इनकों धारै सो सुधी, लहै धर्म जगदीश ॥४८
इन गुण वाहिर जीव जो, स्रावक नाहिं गनेय।
श्रावक व्रत के मूल ए, श्री जिनराज कहेय ॥४९
श्रावक व्रत सव जाति को, जति-व्रत तीन गहेय।
द्विज क्षत्री वाणिज विना, जति व्रत नाहिं जु लेय ॥५०
अर एते विणज न करै, श्रावक प्रतिमा धार।
धान पान मिष्टान अर, मोम हींग हरतार ॥५१
मादक लवण जु तेल घृत, लोह लाख लकड़ादि।
दल फल कन्दादिक सवै, फूल फूस सीसादि ॥५२
चीट चावका जेवड़ा, मूंज डाभ सण आदि।
पसु पंखी नहिं विणजवो, सावुन मधु नोलादि ॥५३
अस्थि चर्म रोमादि मल, मिनखा वेचवौ नाहिं।
वन्दि पकड़नी नाहिं कछु, इह आज्ञा श्रुत माहिं ॥५४
पशु-भाड़े मति द्यौ भया, त्यागि शस्त्र व्यौपार।
वध वंधन व्यवहार तजि, जो चाहौ भव-पार ॥५५
जहाँ निरंतर अगिनि को, उपजै पापारंभ।
सो व्यौहार तजौ सुधी, तजौ लोभ छल दंभ ॥५६
कन्दोई लोहार अर, सुवर्णकार शिल्पादि।
सिकलीगर वाटी प्रमुख, अवर लखेरा आदि ॥५७
छीपा रंगरेजादिका, अथवा कुम्भ जु कार।
व्रत धारी ए नहिं करै, उद्यम हिंसाकार ॥५८
रंग्यो नीलथकी जिको, सो कपरा तजि वीर।
अति हिंसाकर नीपनों, है अजोगि वह चीर ॥५९
कूप तड़ाग न सोखियो, करिये नहीं अनर्थ।
हिंसक जीव न पालिये, यह श्रुत धारौ अर्थ ॥६०
विषनि विणजवौ है भला, इसा विणजवौ नाहिं।
नहीं सीदरी सूतली, होय विणज के मांहि ॥६१
विणज करौ तो रतन को, कै कंचन रूपादि।
कै रूई कपड़ा तनों, मति खोवौ भव वादि ॥६२
जिनमें हिंसा अल्प ह्वै, ते व्यापार करेय।
अति हिंसा के विणज जे, ते सव ही तज देय ॥६३
ए सव रीति कही वुधा, मूल गुणनि में ठीक।
ते धारौ सरधा करी, त्यागौ वात अलीक ॥६४
जैसें तरु के जड़ गिनी, अह मंदिर के नींव।
तैसें ए वसु मूलगुण, तप जप व्रत की सीव ॥६५

वेसरी छन्द

ए दुरगति दाता न कदेही, शिव-कारण त्रै कहइ विदेही।
सम्यक सहित महाफल दाता, सब व्रत्तनि को सम्यक त्राता ॥६६
समकित सों नहि और जु धर्मा, सकल क्रिया में सम्यक पर्मा।
जाके भेद सुनो मन लाए, जाकरि आतम तत्व लखाए ॥६७

भेद बहुत पर द्वै बड़ भेदा, निश्चय अर व्यवहार अछेदा।
निश्चय सरधा निज आतम की, रुचि परतीति जु अध्यातम की ॥६८
सिद्ध समान लखै निज रूपा, अतुल अनन्त अखंड अनूपा।
अनुभव रसमें भोग्यौ भाई, वोई मिथ्या मारग काई ॥६९

अपनों भाव अपुनमें देखौ, परमानन्द परम रस पेखौ।
तीन मिथ्यात चौकड़ी पहली, तिन करि जीवनि की मति गहली ॥७०
मोह-प्रकृति है अट्ठावीसा, सात प्रबल भाषे जगदीसा।
सात गये सबही नसि जावें, सर्व गये केवल पद पावें ॥७१
उपशम क्षय-उपशम अथवा क्षय; सात तनों कीयौ तजि सब भय।
ये निश्चय समकित को रूपा, उपजै उपशम प्रथम अनूपा ॥७२

सुनि सम्यक व्यवहार प्रतीता, देव अठारा दोष वितीता।
गुरु निरग्रन्थ दिगम्बर साधू, धर्म दयामय तत्व अराधू ॥७३
तिनकी सरधा दिढ़ करि धारै, कुगुरु कुदेव कुधर्म निवारै।
सप्त तत्व को निश्चय करिवौ, यह व्यवहार सु सम्यक धरिवौ ॥७४
जीव अजीवा आस्रव बंधा, संवर निर्जर मोक्ष प्रबन्धा।
पुण्य पाप मिलि नव ए होई, लखै जथारथ सम्यक सोई ॥७५

ये हि पदारथ नाम कहावें, एई तत्व जिनागम गावैं।
नव पदार्थ में जीव अनन्ता, जीवनि मांहि आप गुणवंता ॥७६
लखै आपको आपहि माहीं, सो सम्यक दृष्टि शक नाहीं।
ए दोय भेद कहे समकित के, ते धारौ कारण निज हितके ॥७७
सम्यकदृष्टि जे गुण धारै, ते सुनि जे भव-भाव विडारै।
अठ मद त्यागै निर्मद होई, मार्दव धर्म धरै गुन सोई ॥७८

राज गर्व अरु कुलको गर्वा, जाति मान बल मान जु सर्वा।
रूप तनूं मद तपको माना, संपति अर विद्या अभिमाना ॥७९
ए आठों मद कबहु न धारै, जगमाया तृण-तुल्य निहारै।
अपनी निधि लखि अतुल अनन्ती, जो परपंचनि में न वसंती ॥८०
अविनस्वर सत्ता विकसंती, ज्ञान-दृगोत्तम द्युति उलसंती।
तामें मगन रहै अति रंगा, भवमाया जानें क्षण भंगा ॥८१
तीन मूढ़ता दूरी नाखैं, देव धर्मगुरु निश्चय राखैं।
कुगुरु कुदेव कुधर्म न पूजा, जैन विना मत गहै न दूजा ॥८२

छह जु अनायतनी वुधि त्यागै, त्याग मिथ्यामत जिनमत लागै।
कुगुरु कुदेव कुधर्म वड़ाई, अर उनके दासनि की भाई ॥८३
कवहुं करै नहिं सम्यकदृष्टी, जे करिहैं ते मिथ्यादृष्टी।
शंका आदि आठ मल छांड़ै करि, परपंच न आपौ भाडै ॥८४
जिनवच में शंका नहिं ल्यावै, जिनवाणी उर धरि दिढ भावै।
जग की वांछा सब छिटकावै, निःस्पृह भाव अचल ठहरावैं ॥८५
जिनके अशुभ उदैं दुख पीरा, तिनकी पीर हरै वर वीरा।
नाहिं गिलानि धरै मन माहीं, सांची दृष्टि धरै शक नाहीं ॥८६
कवहुं परको दोष न भाखैं, पर उपगार दृष्टि नित राखै।
अपनो अथवा परको चित्ता, चल्यौ देखि थांभै गुणरत्ता ॥८७
थिरीकरण समकित कौ अंगा, धारै समकित धार अभंगा।
जिनधर्मीसूं अति हित राखै, सो जिनमारग अमृत चाखै ॥८८
तुरत जात वछरा परि जैसें, गाय जीव देय है तैसें।
साधर्मी परि तन धन वारै, गुण वात्सल्य धरै अघ ढारै ॥८९
मन वच काय करै वह ज्ञानी, जिनदासनि को दासा जानी।
जिनमारग की करै प्रभावन, भावै ज्ञानी चउ विधि भावन ॥ ९०
सव जीवनि में मैत्रीभावा, गुणवंतनिकूं लखि हरसावा।
दुखी देखि करुणा उर आनें, लखि विपरीत राग न ठानें ॥९१
दोषहु माहीं है मध्यस्था, ए चउ भावन भावै स्वस्था।
जिन चैत्याले चैत्य करावै, पूजा अर परतिष्ठा भावै ॥९२
तीरथ जात्रा सूत्र सु भक्ती, चउविधि संघ सेव है युक्ती।
एहै सप्त क्षेत्र परिसिद्धा, इनमें खरचै धन प्रतिवुद्धा ॥९३
जीरण चैत्यालय की मरमती, करवावै, अर पुस्तक की प्रति।
साधर्मी कूं वहु धन देवे, या विधि परभावन गुन लेवे ॥९४
कहे अंग ए अष्ट प्रतक्षा, नाहिं धरवौ सोई मल लक्षा।
इन अंगनि करि सीझै प्रानी, तिनको सुजस करै जिन वानी ॥९५
जीव अनन्त भये भवपारा, कौ लग कहिये नाम अपारा।
कैयक के शुभ नाम वखानों, श्रुत-अनुसार हिए में आनों ॥९६
अंजन और अनन्तमती जो, राव उदायन कर्म हतीजो।
रेवति राणी धर्म-गढ़ासा, सेठ जिनेन्द्र भक्त अघ नासा ॥९७
पर औगुन ढांके जिह भाई, जिनवर की आज्ञा उर लाई।
वारिषेण ओ विष्नुकुमारा, वज्रकुमार भवोदधि तारा ॥९८
अष्ट अंग करि अष्ट प्रसिद्धा, और वहुत हूए नर सिद्धा।
अठ मद त्यागि अष्ट मल त्यागा, तीन मूढ़ता त्यागि सभागा ॥९९
षट जु अनायतना को तजिवौ, ए पच्चीस महागुण भजिवौ।
अर तजिवौ तिनकूं भय सप्ता, निर्भय रहिवौ दोष अलिप्ता ॥१००

इहं भव-पर भव को भय नाहीं, मरण वेदना भय न धराहीं।
हमरौ रक्षक कौऊ नाहीं, इह संशय नाहीं घट माहीं ॥१०१
सबको रक्षक आयु जु कर्मा, कै जिनवर जिनवर को धर्मा।
और न रक्षक कोई काकों, इह गुरु गायौ गाढ जु ताकों ॥१०२
अर नहिं चोर तनों भय जाकों, अपनो निज धन पायौ ताकों।
निद धन चोरयौ नांही जावै, तातें चित्त अडोल रहावै ॥१०३
अर नहिं अकस्मात भय कोई, जिन-सम लखियौ निज तन जोई।
चेतन रूप लख्यौ अविनासी, तातें ज्ञानी है सुख रासी ॥१०४
काहू को भय तिनकों नाहीं, भय-रहिता निरवैर रहा हीं।
सप्त भया त्यागे गुण होई, सप्त विसन तजियो शुभ जोई ॥१०५
सप्त सप्त मिलि चौदा गुन ए, मिलि पचीसा गुणताल जु ए।
पंच दुरगंछा भाव कबै ही, नहिं मिथ्यात सराह करैंही।
नहीं स्तवन मिथ्यादृष्टी को, यह लक्षण सम्यक दृष्टी को ॥१०७
पंच अतीचारनि कूं त्यागा, सो ह्वै पंच गुणा बड़ भागा।
मिलि गुणताली चौवालीसा, गुणा होंहि भाषें जगदीसा ॥१०८
इनकूं धारै सम्यकती सो, भव भ्रम तजि पावे मुक्ती सो।
ए गुन मिथ्याती के नाहीं, आतमज्ञान न मथ्या माहीं ॥१०९

उक्तं च गाथा

मयमूढमणायदणं संकाइवसणभयमईयारं।
एहिं चउदालेदे ण संति ते हुंति सद्दिट्ठी ॥१

अर्थ—जिनके अष्ट मद नाहीं, तीन मूढता नाहीं, षट आयतन नाहीं, शंकादि अष्ट मल नाहीं, सप्त व्यसन नाहीं, सप्त भय नाहीं, पंच अतीचार नाहीं, ए चवालीस नाहीं ते सम्यक-दृष्टि कहे।

दोहा

व्रत के मूल जु मूल गुण, सम्यक सबको मूल।
कह्यौ मूलगुण को सुजस, सुनि व्रतविधि अनुकूल ॥११०

इति क्रियाकोषे मूलगुण निरूपणम्।

बारह व्रत वर्णन

दोहा

द्वादस व्रतनि की सुविधि, जा विधि भाषी वीर।
सो भाषों जिन गुन जपी, जे धारें ते धीर ॥१
द्वादस व्रत माहें प्रथम, पंच अणुव्रत सार।
तीन गुण व्रत चारि पुनि, शिक्षा व्रत आचार ॥२

हिंसा मृषा अदत्तधन, मैथुन परिग्रह साज।
एकदेश त्यागी गृही, सव त्यागी रिषिराज ।।३
सब व्रत्तनि के आदिही, जीवदया-व्रतसार।
दया सारिसौ लोक में, नहिं दूजौ उपगार ।।४
सिद्ध समान लख्यौं जिनें, निश्चय आतम राम।
सकल आतमा आपसे, लखै चेतना-धाम ।।५
ते सव जीवनि की दया, करें विवेकी जीव।
मन वच तन करि सर्व को, शुभ वांछै जु सदीव ।।६
सुख सों जीवौ जीव सहु, क्लेश कष्ट मति होह।
तजौ पाप को सर्व ही, तजौ परस्पर द्रोह ।।७
काहू को हु पराभवा, कवहु करौ मति कोइ।
इह हमरी वांछा फलौ, सुख पावौ सहु लोइ ।।८
सवके हितकी भावना, राखै परम दयाल।
दयाधर्म उरमें धरी, पावै पद जु विशाल ।।९
थावर पंच प्रकार के, चउविधि त्रस परवानि।
सवसों मैत्री भावना, सो करुणा उर आनि ।।१०
पृथीकाय जलकाय का, अग्निकाय अर वाय।
काय वहुरि है वनस्पति, ए थावर अधिकाय ।।११
वे इन्द्री ते इन्द्रिया, चउ इन्द्रिय पंचेन्द्रि।
ए त्रस जीवा जानिये, भावें साधु जितेन्द्रि ।।१२
कृत-कारित-अनुमोद करि, धरै अहिंसा जेह।
ते निर्वाण पुरी लहै, चउ गति पाणी देह ।।१३
निरारंभि मुनि को दशा, तहां न हिंसा लेस।
छहूँ काय पीराहरा, मुनिवर रहित कलेश ।।१४
गृहपत्ति के गृहजोगतें, कछु आरम्भ जु होइ।
तातें थावरकाय को, दोष लगै अघ सोइ ।।१५
पै न करे त्रस घात वह, मन वच तन करि धीर।
त्रस कायनि को पीहरा, जाने परकी पीर ।।१६
विना प्रयोजन वह सुधी, थावर हू पीरै न।
जो निशंक थावर हनें जिनके जिनमी रैन ।।१७
हिंसाको फल दुरगती, दया स्वर्ग-सुख देइ।
पहुंचावै पुनि शिवपुरे, अविनाशी जु करेइ ।।१८
दया मूल जिन धर्म को, दया समान न और।
एक अहिंसा व्रतही, सव व्रतनि को मौर ।।१९
यम नियमादिक वहुत जे, भावें श्री जिनराय।
ते सहु करुणा कारणें, और न कोइ उपाय ।।२०

विना जैन मत यह दया, दूजे मत दीखैं न।
दया मई जिनदास है, हिंसा विधि सीखैं न ॥२१
दया दया सव कोउ कहै, मर्म न जाने मूर।
अणछान्यूं पाणी पिवैं, ते हि दयातें दूर ॥२२
दया भली सवही रटै, भेद न पावैं कोय।
वरतै अणगाल्यौ उदक, दया कहां ते होय ॥२३
दया विना करणी वृथा, यह भावें सव लोक।
न्हावैं अणगाले जलहि, वांधैं अघ के थोक ॥२४
छाण्यूं जल घटिका जुगल, पाछें अगाल्यौ होय।
विना जैन यह वारता, और न जाने कोय ॥२५
दया समान न धर्म कोउ, इह गावें नर-नारि।
निशा माहि भोजन करें, जाहि जमारो हारि ॥२६
दया जहां ही धर्म है, इह जाने संसार।
पै नहिं पावै भेदकों, भखैं अभक्ष आहार ॥२७
दया वड़ी सव जगत में, धरै न मूढ़ तथापि।
परदारा परधन हरै, परै नरक में पापि ॥२८
दया होय तौ धर्म ह्वै, प्रगट वात है एह।
तजै न तोहू द्रोह पर, धरै न धर्म सनेह ॥२९
व्रत करै पुनि मूढ़धी, अन्न त्यागि फल खाय।
कंदमूल भक्षण करै, सो व्रत निष्फल जाय ॥३०
दया धर्म कीजे सदा, इह जपै जग सर्व।
नहिं तथापि सव सम गिने, हनै न आठूं कर्म ॥३१
परम धर्म है यह दया, कहै सकल जन इह।
चुगली-चांटी नहिं तजै, दया कहां ते लेह ॥३२
दया व्रत के कारणें, जे न तजें आरम्भ।
तिनके करुणा होय नहिं, इह भाषे परब्रह्म ॥३३
दया धर्म को छांड़िकै, जे पशु घात करेय।
ते भव भव पीड़ा लहै, मिथ्या मारग सेय ॥३४
दया व्रतावें सव मता, समझ न काहू मांहि।
धर्म गिने हिंसा विषे, जतन जीव को नांहि ॥३५
दया नहीं परमत विषें, दया जैनमत मांहि।
विना फैन यह जैन है, यामें संशय नांहि ॥३६
दया न मिथ्या मत विषें, कहै कहां लों वीर।
करुणा सम्यक भाव है, यह निश्चय धरि धीर ॥३७
काहे के वे देवता, करें जु मांस अहार।
ते चंडाल वखानिये, तथा श्वान मार्जार ॥३८

देवनिको आहार ह्वै, अमृत और न कोय।
मांसाशी देवानिकूं, कहै सु मूरखि होय ॥३९
मंगल कारण जे जणा, जीवनि को जु निपात।
करें अमङ्गल ते लहें, होय महा उतपात ॥४०
जे अपने जीवे निमित, करे औरकों नास।
ते लहि कुमरण वेग ही गहें नरक कों वास ॥४१
मद्य मांस मधु खाय करि, जे वांधे अघ कर्म।
ते काहे के मिनख हैं, इह भाखै जिनधर्म ॥४२
कन्दमूल फल खाय करि, करै जु वनको वास।
तिनको वनवासा वृथा, होय दयाको नास ॥४३
विना दया तप है कुतप, जाकरि कर्म न जांय।
हिंसक मिथ्यामत धरा, नरक निगोद लहाय ॥४४
जैसो अपनों आतमा, तैसे सवही जीव।
यह लखि करुणा आदरी, भाखें त्रिभुवन-पीव ॥४५

छन्द जोगीरासा

काहे के ते तापस, करुणा नाहिं धरावें।
कर अपनी आरम्भ सपट्टा, जीव अनेक जरावें ॥
जे तजि कपड़ा तपके कारण, धारें शठमति चर्मा।
ते न तपस्वी भवदधि कारण, वांधे अशुभ जु कर्मा ॥४६
रिषि तौ ते जे जिनवर-भक्ता, नगन दिगम्वर साधा।
भव तनु भोग थकी जु विरक्ता, करै न थिर चर वाधा ॥
मैत्री मुदिता करुणा भावा मध्यस्था जु धारै।
राग दोष मोहादि अभावा ते भवसागर तारै ॥४७
विना दया नहिं मुनिव्रत होई, दया विना न गृही ह्वै।
उभय धर्म को सरवस करुणा जा विन धर्म नहीं ह्वै ॥
दया करौ मुखतैं सव भाखे भेद, न पावे पूरा।
वासी भोजन भखि करि, भोदू रहे धर्म तें दूरा ॥४८
वासी भोजन माहिं जीव वहु, भखें दया नहिं होई।
दया विना नहिं धर्म न व्रत्ता, पावे दुरगति सोई ॥
अत्थाणा संधाण मथाणा, कांजी आदि आहारा।
करें विवेक वाहिरा कुवुधी, तिनके दया न धारा ॥४९
मांसाशी के घरको भोजन, करें कुमति के धारी।
तिनके घट करुणा कहु कैसे, कहां शोध आचारी ॥
तातौ पाणी आठ हि पहरा, आगें त्रस उपजाही।
ताकी तिनकां सुधि वुधि नाहीं, दया कहां तिन माहीं ॥५०

निशिको पीस्यौ निसि को रांध्यौ थींवौ सोवौ खावै।
हरितकाय रांधी सब स्वादै, दया कहां तें पावै ॥
चर्म-पतित घृत तेल जलादिक, तिनमें दोष न मानें।
गिनें न दोष हींग में मूढा, दया कहां ते आने ॥५१
हाटें विकते चून मिठाई, कहें तिने निरदोषा।
भखें अजोगि अहार सर्व ही, दया कहां तें पोषा ॥
दूध दही अरु छाछि नीर को, जिनके कछु न विचारा।
दया कहां है तिनके भाई, नहीं शुद्ध आचारा ॥५२
सूडा नहीं मल मूत्रादिक की, ढोर समाना तेई।
तिनकूं जो नर जैनी जाने, ते नहिं शुभ मति लेई ॥
वावक जिन शासन सरधाके, सावकता कछु नाहीं।
साधु गिनें तिनकूं जे कोई, ते मुरख जग माहीं ॥५३
एक वारको नियम न कोई, वार-वार जल पाना।
वार-वार भोजन को करिवौ, तिनके व्रत्त न जाना ॥
त्रस काया को दूषण जामें, सो नहिं प्रासुक कोई।
भखै असूत्री शठमति जोई, नाहीं व्रत धर होई ॥५४
दयाधर्म को परकाशक है, जिन मन्दिर जगमाहीं।
ताहि न पूजें पापी जीवा, तिनके समकित नाहीं ॥
कारण आतम-ध्यान तणीं है, श्रीजिन प्रतिमा शुद्धा।
नाहि न वन्दें निन्द जु तेई, जानहु महा अवुद्धा ॥५५
बूढें नरक मझार महा शठ, जे जिन प्रतिमा निंदे।
जाहिं निगोद विवेक-वितीता, जे जिनगृह नहिं वन्दें ॥
अज्ञानी मिथ्याती मूढ़ा, नहीं दया को लेशा।
दयावन्त तिनकूं जे भाणें, ते न लहें निज देशा ॥५६

दोहा

सुर नर नारक पशुगती, ए चारों परदेश।
पंचमगति निज देश है, यामें भ्रांति न लेश ॥५७
पंचमगति की कारणा, जीवदया जग माहि।
दया सारिखौ लोक में, और दूसरौ नाहि ॥५८
दया दोय विधि है भया, स्व-पर दया श्रुत माहि।
सो धारौ दृढ़ चित्त में, जाकरि भव-भ्रम जाहि ॥५९
स्वदया कहिये सो सुधी, रागादिक अरि जेह।
हनें जीव की शुद्धता, टारि तिन्हें शिव लेह ॥६०
प्रगट करै निज शुद्धता, रागादिक मन मोरि।
निज आतम रक्षा करै, डारै कर्म जु तोरि ॥६१

सो स्वदया भाषें गुरू, हरै कर्म-विस्तार।
निजहि बचावै कालतें, करै जीव निस्तार ॥६२
षट कायाके जीव सहु, तिनतें हेत रहाय।
वैरभाव नहिं कोइसूं, सो पर-दया कहाय ॥६३
दया मात सब जगत की, दया धर्म को मूल।
दया उधारै जगत तें, हरै जोव की भूल ॥६४
दया सुगुन की वेलरी, दया सुखन की खान।
जीव अनन्ता सीजिया, दयाभाव उर आन ॥६५
स्व-पर दया दो विधि कही, जिनवाणी में सार।
दयावन्त जे जीव हैं, ते भावें भवपार ॥६६

सवैया इकतीसा

सुकृत की खानि इन्द्रपुरी की निसेंनी जानि,
पापरज खंडन कों पौनराशि पेखिये।
भवदुख-पावक वुझाय वे कूं मेघमाला,
कमला मिलायवे को दूतो ज्यूं विसेखिये ॥
मुकति-बधूसों प्रीति पालिवे कों आलो सम,
कुगति के द्वार दिढ़ आगलसी देखिये।
ऐसी दया कीजै चित्त तिहूँ लोक प्राणी हित,
और करतूति काहू लेखे में न लेखिये ॥६७

दोहा

जो कहुं पाषाण जल, माहि तिरै अर भान।
ऊगै पश्चिम की तरफ, दैवयोग परवान ॥६८
शीतल गुन ह्वै अगनि में, धरा पीठ उलटेय।
तौहू हिंसा-कर्मतें, नाहीं शुभ गति लेय ॥६९
जो चाहै हिंसा करी, धर्म मुकति को मूल।
सो अगनीसूं कमल-वन, अभिलाषै मति भूल ॥७०
प्राणि-घात करि जो कुधी, वांछै अपनी वृद्धि।
सो सूरज के अस्त तें, चाहे वासर शुद्धि ॥७१
जो चाहै व्रत धर्म को, करै जीव को नास।
सो शठ अहिके वदन ते, करै सुधा की आस ॥७२
धर्म वुद्धि करि जो अवुध, हनै आपसे जीव।
सो विवाद करि जस चहै, जल-मंथन तें घीव ॥७३
जैसें कुमती नर महा, काल कूटकू पीय।
जीवौ चाहै जीव हति, तैसें श्रेय स्वकीय ॥७४

करि अजीर्ण दुर्बुद्धि जो, इच्छै रोग-निवृत्ति।
तैसें शठ पर-घात करि, चाहै धर्म-प्रवृत्ति ॥७५
दया थकी इह भव सुखी, पर-भव सब सुख होय।
सुरग मुकति दायक दया, धारैं उबरैं सोय ॥७६

इन्द नरिन्द फणिन्द अर, चंद सूर अहमिन्द।
दया थकी इह पद लहै, होवै देव जिणंद ॥७७
भव सागर के पार ह्वै, पहुंचै पुर निर्वान।
दया तणों फल मुख्य सो, भाषें श्री भगवान ॥७८

हिंसा करिकै राज-सुत, सुबल नाम मति-हीन।
इह भव पर भव दुख लह्यो, हिंसा तजौ प्रवीन ॥७९
चौदसिके इक दिवस की, दया धारि चंडार।
इह भव नृप पूजित भयो, लह्यो स्वर्ग-सुख सार ॥८०

जे सीझे जे सीझि हैं, ते सब करुणा धार।
जे बूड़े जे बूड़ि हैं, ते सब हिंसा कार ॥८१
अतीचार भजि व्रत तजि, करुणा तिनतें जाय।
वध बंधन छेदन बहुरि, बोझ धरन अधिकाय ॥८२
अन्न पान को रोकिवौ, अतीचार ए पंच।
त्यागौ करुणा धारिकै, इनमें दया न रंच ॥८३

हिंसा तुल्य न पाप है, दया समान न धर्म।
हिंसक बूड़ै नरक में, बांधे अशुभ जु कर्म ॥८४
हुती धन श्री पापिनी, वणिक-नारि व्यभिचारि।
गई नरक में पुत्र हति, मानुष जन्म बिगारि ॥८५
हिंसा के अपराधतें, पापी जीव अनंत।
गये नरक पाये दुखा, कहत न आवै अंत ॥८६

जे निकसे भव-कूपतें, ते करुणा उर धारि।
जे बूड़े भव कूपतें, ते सब हिंसा कारि ॥८७
महिमा जीव दया तनी, जानें श्री जगदीश।
गणधर हू कहि ना सकें, जे चउ ज्ञान अधीश ॥८८
कहि न सकें इन्द्रादिका, कहि न सकें अहमिंद्र।
कहि न सकें लोकान्तिका, कहि न सकें जोगीन्द्र ॥८९
कहि न सकें पाताल-पति, अगणित जीभ बनाय।
सो महिमा करुणा तणी, हम पै बरणि न जाय ॥९०
दया मात को आसरो, और सहाय न कोय।
करि प्रणाम करुणा व्रतें, भाषी सत्य जु सोय ॥९१

इति दयाव्रत निरूपण

हिसा ह्वै परमादतें अर प्रमादतें झूंठ।
तातें तजौ प्रमादकूं, देय पापसों पूठ ॥९२

चौपाई

श्री पुरुषारथ सिद्धि उपाय, ग्रन्थ सुन्यां सब पाप लुभाय।
जहँ द्वादश व्रत कहे अनूप, सम दम यम नियमादि स्वरूप ॥९३
सम जु कहावै समताभाव, सम्यकरूप भवोदधि नाव।
दम कहिये मन इन्द्रिय-रोध, जाकर लहिये केवल बोध ॥९४
जीवो जाव वरत यम कह्यौ, अवधिरूप सो नियम जु लह्यौ।
ऐसे भेद जिनागम कहै, निकट भव्य ह्वै सो ही गहै ॥९५
तामैं सत्य कह्यौ चउ भेद, सो मुनि करि तुम धरहु अछेद।
चउविधि झूंठ तनों परिहार, सो है सत्य महागुण सार ॥९६
प्रथम असत्य तजौ बुध वहै, वस्तु छतीकूं अछती कहै।
दूजे अलती को जो छती, भापै अविवेकी हतमती ॥९७
तीजे कहै औरसों और, विरथा मूढ़ करै झकझोर।
चौथे झूठ तनें वय-भेद, गर्हित सवद प्रति उच्छैद ॥९८
ए सब कृत कारित अनुमंत, मन वच तन करि तज गुनवंत।
चुगली-चारी परकी हासि, कर्कश वचन महा दुख-राशि ॥९९
विपरीत न भाषौ बुधिवान, सवद तजौ अन्याय सुजान।
वचन प्रलाप विलाप न वोलि, भजि जिन नायक तजि सहु भोलि ॥१००
भाषौ मत उतसूत्र कदेह, मिथ्यामत सों तजौ सनेह।
ए सल गर्हित वैन तजेह, जिनशासन की सरधा लेह ॥१
वहुरि सवै सावद्य अजोग, वचन न वोलौ सुवुधी लोग।
छेदन भेदन मारण आदि, त्यागौ अशुभ बचन इत्यादि ॥२
चोरी जोरी डाका दौर, ए उपदेश पाप सिरमौर।
हिंसा मृषा कुशील विकार, पाप वचन त्यागौ व्रत धार ॥३
खेती विणज विवाह जु आदि, वचन न वौलै व्रती अनादि।
तजहु दोषजुत वानी भया, वोलहु जामें उपजै दया ॥४
ए सावद्य वचन तजि धीर, तजि अप्रीति वचन वर वीर।
अरति-करन भय-करन न बोल, शोक-करन त्यागौ तजि भोल ॥५
कलह-करन अध-करन तजेहु, वैर-करन वाणी न भजेहु।
ताप-करन अर पाप-प्रधान, त्यागहु बचन जु दोष-निधान ॥६
मर्म-छेद को वचन न कहौ, जो अपने जियको शुभ चहौ।
इत्यादिक जे अप्रिय वैन, त्यागहु, सुनि करि मारग जैन ॥७
वोलौ हित मित वानी सदा, संशय वानी बोलि न कदा।
सत्य प्रशस्त दया रस भरी, पर उपगार करन शुभ करी ॥८

अविरुध अव्याकुलता लिए, बोलहु करुणा धरिकै हियें।
कबहु ग्रामणी वचन न लपौ, सदा सर्वदा श्री जिन जपौ ॥९
अपनी महिमा कबहुं न करौ, महिमा जिनवर की उर धरौ।
जो शठ अपनी कीरति करे, ते मिथ्यात सरूप जु धरें ॥१०
निन्दा परकी त्यागहु भया, जो चाहौ जिनमारग लया।
अपनी निन्दा गरहा करौ, श्री गुरु पै तप व्रत आदरौ ॥११
पापनि को प्रायश्चित लेह, माया मच्छर मान तजेह।
होवै जहां धर्म को लोप, शुभ किरिया होवें पुनि गोप ॥१२
अर्थ शास्त्र के ह्वै विपरीत, मिथ्यामत की ह्वै परतीत।
तहां छांड़ि शंका प्रतिबुद्ध, भावै सत्य वचन अविरुद्ध ॥१३
इनमें शंका कबहुं न करहू यही बुद्धि निश्चय उर धरहु।
सत्य मूल यह आगम जैन, जैनी बोलै अमृत बैन ॥१४
चार्वाक बौद्ध विपरीत, तिनके नांहि सत्य परतीति।
कौलिक कापालिक जे जानि, इनमें सत्य लेश मति मानि ॥१५
सत्य समान न धर्म जु कोय, बड़ो धर्म इह सत्य जु होय।
सत्य थकी पावै भव पार, सत्यरूप जिनमारग सार ॥१६
सत्य प्रभाव शत्रु ह्वै मित्र, सत्य समान न और पवित्र।
सत्य प्रसाद अगनि ह्वै शीत, सत्य प्रसाद होय जग-जीत ॥१७
सत्य प्रभाव भृत्य ह्वै राव, जल ह्वै थल वरिया सत भाव।
सुर ह्वै किंकर वन पुर होय, गिरि ह्वै घर सतकरि जोय ॥१८
सर्प माल ह्वै हरि मृगरूप, बिल सम ह्वै पाताल विरूप।
कोऊ करै शस्त्र की घात, शस्त्र होय सो अंबुज-पात ॥१९
हाथी दुष्ट होय सम स्याल, विप ह्वै अमृतरूप रसाल।
कठिन सुगम ह्वै सत्य-प्रभाव, दानव दीन होय निरदाव ॥२०
सत्य-प्रभाव लहैं निज ज्ञान, सत्य धरे पावै वर ध्यान।
सत्य-प्रभाव होय निरवाण, सत्य विना ना पुरुप वखाण ॥२१
सत्य-प्रसाद वणिक धनदेव, राजा करि पाई वहु सेव।
इह भव पर भव सुखमय भयौ, जाको पाप करम सब गयौ ॥२२
झूठ थकी वसु राजा आदि, पर्वत, विप्र सत्यघोपादि।
जग देवादिक वाणिज घनें, गये दुरगती जाय न गिनें ॥२३
सत्य दया को रूप न दोय, दया विना नहिं सत्य जु होय।
सत्य तनें द्वय भेद अछेद, व्यवहारो निश्चय निरखेद ॥२४
निश्चय सत्य निजातम बोध, व्यवहारो जिन वचन प्रबोध।
सत्य विना सब व्रत तप वादि, सत्य सकल, सूत्रनिमें आदि ॥२५
सत्य प्रतिज्ञा विन यह जीव, दुरगति लहैं कहें जग-पीव।
सूकर कूकर वृक चंडार, घूघू स्याल काग मंजार ॥२६

नाग आदि जे जीव विरूप, लापर सबतें निंद्य प्ररूप।
सबतें बुरो महा असपर्श, लापरका लखिये नहिं दर्श ॥२७
चुगली-सांचहु झूठ हि जानि चुगल महा चंडाल समान।
चुगली उगली मुखतें जबै, इह भव पर भव खोये तबै ॥२७
सत्य-हेत धारौ भवि मौन, सत्य विना सब संजम गौन।
थोरो बोलहु कारण सत्य, मन वच तन करि तजौ असत्य ॥२९
मुनि के सत्य महाव्रत होय, गृहि के सत्य अणुव्रत होय।
मुनि तौ मौन गहें कै जैन, वचन निरूपें अमृत वैन ॥३०
लौकिक वचन कहें नहिं साध, सब जीवन के मित्र अगाध।
मृषावाद नहीं बोले रत्ती, सो जिनमारग सांचे जती ॥३१
श्रावक कों किंचित आरम्भ, त्यागै कुविणज पापारम्भ।
लौकिक वचन कहन जो परै, तौ पनि पाप वचन परिहरै ॥३२
पर उपगार दया के हेत, कबहुक किंचित झूठहु लेत।
जेतौ आटे माहें लोन, ते तौ बोलै अथवा मौन ॥३३
झूठ थकी उचरै पर-प्रान, तौ वह झूठ सत्य परमान।
अपने मतलब कारिज झूठ, कबहुं न बोलै अमृत बूठ ॥३४
प्राण तजै पर सत्य न तजैं, यद्वा तद्वा वचन न भजै।
यहै देह अर भोगुपभोग, सब ही झूंठ गिनें जग रोग ॥३५
परिग्रह की तृष्णा नहिं करै, करि प्रमाण लालच परिहरै।
पाप झूठ को है यह लोभ, याहि तजै पावै व्रत शोभ ॥३६
सत्य प्रताप सुजस अति बधै, सत्य धरै जिन आज्ञा सधै।
राजद्वार पंचायति माहिं, सत्यवन्त पूजित सक नाहिं ॥३७
इन्द्र चन्द्र रवि सुर धरणेंद, सत्य वचे अहमिन्द मुणिन्द।
करें प्रशंसा उत्तम जानि, इहे सत्य शिव-दायक मानि ॥३८
दया सत्य में रंच न भेद, ए दोऊ इकरूप अभेद।
विपति हरन सुख करन अपार, याहि धरें तें ह्वै भव-पार ॥३९
याहि प्रसंसें श्री जिनराय, सत्य समान न और कहाय।
भुक्ति मुक्ति दाता यह धर्म, सत्य विना सब गनिये भर्म ॥४०
अतीचार पांचों तजि सखा जो तें जिन वच अमृत चखा।
तजि मिथ्योपदेश मतिवान, भजि तन मन करि श्री भगवान ॥४१
देहि मूढ़ मिथ्या उपदेश, तिनमें नाहिं सुमति को लेश।
वहुरि तजौ जु रहोऽभ्याख्यान, ताको व्यक्त सुनों व्याख्यान ॥४२
गुप्त वारता परकी कोइ, मति परकासौ मरमी होइ।
कूट कुलेख क्रिया तजि वीर, कपट कालिमा त्यागहु धीर ॥४३
करि न्यासापहार परिहार, ताको भेद सुनहु व्रत धार।
पेलो आय धरौहरि धरै, अर कबहूं विसरन वह करै ॥४४

तौ वाकों चित एम जु भया, देहु परायो माल जु लया।
भूलिर थोरो मांगै वहै, तौ वाकों समझा कर कहै ॥४५
तुमरो दैनों इतनों ठीक, अलप बतावन बात अलीक।
ले जावौ तुमरो यह माल, लेखा में चूकौ मति लाल ॥४६
घटि देवे को जो परिणाम, सो न्यासापहार दुखवाम।
अथवा धरी पराई वस्त, जाकी वृद्धि भई विध्वस्त ॥४७
और ठौरकी और जु ठौर, करै सोइ पापनि सिरमौर।
पुनि साकारमन्त्र है भेद, तजौ सुबुद्धी सुनि जिन वेद ॥४८
दुष्ट जीव परको आकार, लखतो रहै दुष्टता कार।
लखि करि जानै परको भेद, सो पावै भव-वन में खेद ॥४९
परमंत्रनि को करइ विकास, सो खल लहै नरक को वास।
जो परद्रोह धरै चित-माहिं इह भव दुख लहि नरकहिं जाहि ॥५०
अतीचार ए पांचों त्यागि, सत्य धरम के मारग लागि।
परदारा परद्रव्य समान, और न दोष कहें भगवान ॥५१
परद्रोहसो पाप न और, निंद्यो श्रुत में ठौर जु ठौर।
जिन जान्यूं निज आतमराम, तिनके परधन सों नहि काम ॥५२
सत्य कहें चोरी पर-नारि, त्यागी जाइ यहै उर धारि।
झूंठ बकें तें जैनी नाहिं, परधन हरन न इह मत माहि ॥५३

दोहा

सत्य-प्रभावै धर्म-सुत, गये मोक्ष गुण कोप।
लहे झूठ अर कपटतें, दुर्योधन दुख दोप ॥५४
जे सुरझे ते सत्य करि, और न मारग कोय।
जे उरझे ते झूंठ करि, यह निश्चय अवलोय ॥५५
सत्यरूप जिनदेव हैं, सत्यरूप जिनधर्म।
सत्यरूप निर्ग्रन्थ गुरु, सत्य समान न धर्म ॥५६
सत्यारथ आतम-धरम, सत्यरूप निर्वाण।
सत्यरूप तप संयमा, सत्य सदा परवाण ॥५७
महिमा सत्य सुव्रत्त की, कहि न सकें मुनिराय।
सत्य वचन परभावतें, सेवें सुर नर पाय ॥५८
जैसो जस है सत्य को, तैसौ श्री जिनराय।
जानें केवल ज्ञान में, परमरूप सुखदाय ॥५९
और न पूरण लखि सके, कीरति सुर नर नाग।
या व्रतकूं धारें सदा, तेहि पुरुष बड़भाग ॥६०
नमस्कार या व्रतकों, जो व्रत शिव-सुख देय।
अर याके धारीनिकों, जे जिनशरण गहेय ॥६१

दया सत्य को कर प्रणति, भाषों तीजो व्रत्त।
जो इन द्वय विन ना हुवै, चोरी त्याग प्रवृत्त ॥६२

चालछन्द

चोरी छांड़ौ वड़ भाई, चोरी हैं अति दुखदाई।
चोरी अपजस उपजावै, चोरी तें जस नहिं पावै ॥६३
चोरी तें गुणगण नाशा, चोरी दुर्वुद्धि प्रकाशा।
चोरी तें धर्म नशावै, इह आज्ञा श्रीगुरु गावै ॥६४
चोरी सों माता ताता, त्यागें लखि अपनो घाता।
चोरी सों भाई-वंधा, कवहुं न राखै संवंधा ॥६५
चोरी तें नारि न नीरै, चोरी तें पुत्र न तीरै।
चोरी सों मित्र विडारै, चोरी सों स्वामी न धारै ॥६६
चोरी सों न्याति न पांती, चोरी सों कवहुं न सांती।
चोरी तें राजा दंडै, चोरी तैं सीस विहंडै ॥६७
चोरी तें कुमरण होई, चोरी में सिद्धि न कोई।
चोरी तें नरक निवासा, चोरी तें कष्ट प्रकाशा ॥६८
चोरी तें लहै निगोदी, चोरी तें जोनि जु वोदी।
चोरी में सुमति न आवै, चोरी तें सुमति न पावै ॥६९
चोरी तें नासे करुणा, चोरी में सत्य न धरणा।
चोरी तें शील पलाई, चीरी में लोभ धराई ॥७०
चोरी तें पाप न छूटै, चोरी तें तलवर कूटै।
चोरी तें इज्जति भंगा, त्यागौ चोरनि को संगा ॥७१
चोरी करि दोष उपावै, चोरी करि मोक्ष न पावै।
चोरी के भेद अनेका, त्यागौ सव धारि विवेका ॥७२
परको धन भूले-विसरे, राखौ मति ल्यों गुण पसरै।
परको धन गिरियो परियो, दावौ मति कवहु न धरियौ ॥७३
तोला घटि वधि जिन राखै, वोलौ मति कूड़ी साखै।
कवहूं औंटा जिन देहो, डाका दे धन मति लेहो ॥७४
मति दगड़ा लूटौ भाई, दौड़ाई है दुखदाई।
ठग विद्या त्यागौ मित्रा, परधन है अति अपवित्रा ॥७५
काहूकूं द्यो मति तापा, छांडो तन मन के पापा।
पासीगर सम नहिं पापी, पर प्राण हरै संतापी ॥७६
सो महानरक में जावै, भव-भव में अति दुख पावै।
हाकिम ह्वै वन मति चोरौ, ले घूंस न्याव मति वारौ ॥७७
लेखा में चूक न कारै, इहि नरभव मूढ़! न हारै।
जे हरियो पर को वित्ता, ते पापी दुष्ट जु चित्ता ॥७८

रुलिहैं भव माहिं अनंता, जे परधन प्राण हरंता।
चुगली करि मतिहि लुटावो, काहूकूँ नाहिं कुटावो ॥७९
परको इज्जति मति हरि हो, परको उपगार जु करिहो।
धन धान नारि पसु बाला, हरिये कछुके नहिं लाला ॥८०
काहू को मन नहिं हरिये, हिरदा में श्री जिन धरिये।
तिर नर जीवन की जीवी, मेटो मति करुणा कीवी ॥८१
तुम शल्य न राखो वीरा, कर शुद्ध चित्त गुण धीरा।
रोका बांधो मति करिहो, काहू की सोंपि न हरिहो ॥८२
बोलो मति दुष्ट जु बांके, तुम दोष गहो मति काके।
काहू को मर्म न छेदो, काहू को क्षेत्र न भेदो ॥८३
काहू की कछु नहिं वस्ता, मति हरहु होय शुभ अस्ता।
इह व्रत धारो वर वीरा, पावो भव सागर तीरा ॥८४
जाकरि ह्वै कर्म विध्वस्ता, सो भाव धरो परशस्ता।
तृण आदि रत्न परजंता, पर धन त्यागो बुधिवंता ॥८५
हरिवो रागादिक दोषा, करवो कर्मन को सोषा।
हरि मर्म धर्म धरि भाई, हूजे त्रिभुवन के राई ॥८६
अपनो अर परको पापा, हरिये जिन वचन प्रतापा।
छांड़ै जु अदत्तादाना, करि अनुभव अमृत पाना ॥८७
चोरी त्यागें शिव होई चोरी लागे शठ सोई।
चोरी के दोय प्रकारा, निश्चै व्यौहार विचारा ॥८८
निश्चै चोरी इह भाई, तजि आतम जड़ लव लाई।
पर परणति प्रणमन चोरी, छांड़ें ते जिनमत वोरी ॥८९
तजिकै पर परणति जीवा, त्यागो सब भाव अजीवा।
यह देह आदि पर वस्ता, तिनसों नहिं प्रीति प्रशस्ता ॥९०
बिन चेतन जे परपंचा, तिनमें सुख ज्ञान न रंचा।
इनमें नहिं अपनों कोई, अपनों निज चेतन होई ॥९१
तातें मुनि के अध्यातम, छांड़ी ममता सब आतम।
अपनो चेतन धन लेहो, परकी आसा तजि देहो ॥९२
जे ममता पंथ न लागे, निश्चै चोरी ते त्यागे।
जब निश्चै चोरी छूटै, तब काल भूपाल न कूटै ॥९३
इह निश्चै व्रत वखाना, या सम और न कोई जाना।
शिव पद दायक यह वृत्ता, करिये भवि जीव प्रवृत्ता ॥९४
जिन त्यागी परकी ममता, तिन पाई आतम-समता।
अब सुनि व्यवहार सरूपा, जा विधि जिनराज प्ररूपा ॥९५
इक देव जिनेसुर पूजो, सेवो मति जिन विन दूजो।
बिन गुरु निरग्रन्थ दयाला, सेवो मति औरहि लाला ॥९६

सुनि श्री जिन जूके ग्रन्था, मत्ति सुनहु और अघ-पंथा।
मिथ्यात समान न चोरी, धारें तिनकी मति भोरी ॥९७
इह अंतर वाहिज त्यागें, तव वृत्त विधान हि लागें।
सम्यक् ह्वै आतम भावा, मिथ्यात अशुद्ध विभावा ॥९८
सम्यक् निश्चय व्यवहारा, सो धारौ तजि उरझारा।
वर व्रत्त अचौरज धारें, ते सर्व दोष कों टारें ॥९९
या विन नहिं साधु गनिया, या विन नहिं श्रावक भनिया।
श्रावक मुनि द्वय विध धर्मा, यह ब्रत्त दुहुनि को मर्मा ॥१००
मुनि के सव ममता छूटी, समता तें दुरमति टूटी।
मुनि उपधि न एक धराहो, कछु छाने नाहिं कराहीं ॥१
देहादिक सों नहिं नेहा, वरसै घट आनंद मेहा।
मुनि के सव दोष जु नासें, तातें सु महाव्रत भाषे ॥२
मुनि के कछु हरनों नाहीं, चित लागै चेतन माहीं।
श्रावक के भोजन लेई, नहिं स्वाद विषें चित देई ॥३
काम न क्रोध न छल माना, नहिं लोभ महा वलवाना।
जे दोष छियालिस टालें, जिनवर की आज्ञा पालें ॥४
ते मुनिवर ज्ञान सरूपा, शुभ पंच महाव्रत रूपा।
गृहपति के कछु इक धंधा, कछु ममता मोह प्रबन्धा ॥५
छानें कछु करनों आवै, तातें अणुव्रत कहावै।
कूपादिक को जल हरिवौ, इह किंचित दोषहु धरिवो ॥६
मोटे सव त्यागें दोषा, काहू को हरिये न कोषा।
त्यागौ परधन को हरिवौ, छांड़ौ पापनि को करिवौ ॥७
संक्षेप कही यह वाता, आगे जु सुनहु अव भ्राता।
इह अणुव्रत को जु सरूपा, जिनश्रुत अनुसार प्ररूपा ॥८
अव अतीचार सुनि भाई, त्यागौ पंचहि दुखदाई।
है चोरी को जु प्रयोगा, सो पहलो दोष अजोगा ॥९
चोरी को माल जु लेनों, इह दूजो अघ तजि देनों।
थोरे मोले वड़ वस्ता, लेवौ नहिं कवहु प्रशस्ता ॥१०
राजा को हासिल गोपै, राजा की आणि जु लोपै।
इह तीजो दोष निरूपा, त्यागौ व्रत्त धारि अनूपा ॥११
देवे के तोला घाटै, लेवे के अधिका वाटै।
इह अतिचार है चौथो, त्यागौ शुभमति तें थोथो ॥१२
वधि मोल में घटि मोला, भेले ह्वै पाप अतोला।
इह पंचम है अतिचारा, त्यागें जिन मारग धारा ॥१३
ए अतीचार गुरु भाखे, जैनी जीवनिनें नांखे।
चोरी करि दुरगति होई, चोरी त्यागें शुभ सोई ॥१४

चोरी तजि अंजन चोरा, तिरियो भव-सागर थोरा।
लहि महामंत्र तप गहिया, ध्यानानल भववन दहिया ॥१५
अंजन हूऔ जु निरंजन, इह कथा भव्य मनरंजन।
बहुरि यो नृप श्रेणिक पुत्रा, है वारिषेण जगमित्रा ॥१६
कर परधन को परिहारा, पायौ भवसागर पारा।
चोरी करि तापस दुष्टा, पंचागन साधनि पुष्टा ॥१७
लहि कोटपालकी त्रासा, मरि नरक गयौ दुख भापा।
दलिद्दर का मूल जु चोरी, चोरी तजि अर तजि जोरी ॥१८
सब अब तजि जिनसों जोरी, विनऊँ भैय्या कर जोरी।
चोरी तजियाँ शिव पावैं, यह महिमा श्री जिन गावे ॥१९
चोरी तें भव-भव भटकै, चोरी तें सब गुन सटकैं।
जो बुधजन चोरी त्यागै, सो परमारथ पथ लागै ॥२०

दोहा

परधन के परिहार बिन, परम धाम नहिं होय।
भये पार ते तीसरे, व्रत्त बिना नहिं कोय ॥२१
जे बूड़े नर नरक में, गये निगोद अजान।
ते सब परधन-हरणतें, और न कोई बखान ॥२२
व्रत्त अचोरिज तीसरो, सब व्रत्तनि में सार।
जो याकों धारै व्रत्ती, सो उतरै संसार ॥२३
याकी महिमा प्रभु कहै, जो केवल गुणरूप।
पर गुण रहित निरंजना, निर्गुण निर्मलरूप ॥२४
कहैं गणिद मुनिन्दवर, करैं भव्य परमान।
जे धारें ते पावही, पूरण पद निर्वान ॥२५
अल्पमती हम सारिखे, कहैं कौन विधि वीर।
नमस्कार या वृत्त कों, धारे धर्मी वीर ॥२६
जे उरझे ते या बिना, इह निश्चय उर धारि।
जे सुरझे ते या करी, यह व्रत है अघहारि ॥२७
दया सत्य संतोष अर, शीलरूप है एह।
उतरै भवसागर थकी, धरै या थकी नेह ॥२८
दया सत्य अस्तेयकों, करि वन्दन मन लाय।
भाषों चौथो शीलव्रत, जो इन बिगर न थाय ॥२९

इति अचौर्याणुव्रत वर्णन

प्रणमि परम रस शांति कों, प्रणमि परम गुरुदेव।
वरणों सुजस सुशील को, करि शारद की सेव ॥३०

शीलव्रत को नाम है, ब्रह्मचर्य सुखदाय।
जाकरि चर्या ब्रह्म में, भव वन भ्रमण नशाय ॥३१
ब्रह्म कहावें जीव सव, ब्रह्म कहावें सिद्ध।
ब्रह्मरूप कैवल्य जो, ज्ञान महा परसिद्ध ॥३२
ब्रह्मचर्य सो वृत्त ना, न पर ब्रह्म सो कोय।
व्रती न ब्रह्म-लवलीन सो, तिरै, भवोदधि सोय ॥३३
विद्या ब्रह्म-विज्ञान सी, नहीं दूसरी जान।
विज्ञ नहीं ब्रह्मज्ञ सो, इह निश्चय उर आन ॥३४
ब्रह्म वासना सारिखी, और न रस की केलि।
विषय वासना सारिखी, और न विष की वेलि ॥३५
आतम अनुभव सिद्ध सी, और न अमृत वेलि।
नहीं ज्ञान सो वलवता, देहि मोह कों ठेलि ॥३६
अव्रत नाहिं कुशील सो, नरक निगोद प्रदाय।
नहीं सील सो संजमा, भाषें श्री जिनराय ॥३७
धर्म न श्री जिनधर्म से, नहिं जिनवर से देव।
गुरु नहिं मुनिवर सारिखे, रागी सो न कुदेव ॥३८
कुगुरु न परिग्रह धारितैं, हिंसा सो न अधर्म।
मर्म न मिथ्या सूत्र सो, नहीं मोह सो कर्म ॥३९
द्रष्टा न कोई जीव सो, गुन न ज्ञान सो आन।
ज्ञान न केवल ज्ञान सो, जीव न सिद्ध समान ॥४०
केवलदर्शन सारिखो, दर्शन और न कोई।
यथाख्यात चारित्र सो, चारित और न होइ ॥४१
नहिं विभाव मिथ्यात सो, सम्यक सो न स्वभाव।
क्षयिक सो सम्यक नहीं, नहीं शुद्ध सो भाव ॥४२
साधु न क्षीण कषाय से, श्रेणि न क्षपक समान।
नहिं चौदम गुण थान सो, और कोई गुणथान ॥४३
नहिं केवल प्रत्यक्ष सों, और कोई परमाण।
सुकल ध्यान सो ध्यान नहिं, जिनमतसो न वखाण ॥४४
अनुभव सो अमृत नहीं, नहि अमृत सो पान।
इन्द्री रसनासी नहीं, रस न शांति सो आन ॥४५
मनोगुप्ति सी गुप्ति नहिं, चचंल मन सो नाहि।
निश्चल मुनि से और नहिं, नहीं मौन मन माहिं ॥४६
मुनि से नहिं मतिवंत नर, नहिं चक्री से राव।
हलधर अर हरि सारिखो, हेत न कहूँ लखाव ॥४७
प्रतिहरि से न हठी भए, हरि से और न सूर।
हर से तासम धार नहिं, वहु विद्या भरपूर ॥४८

नारद से न भ्रमंत नर, भ्रमें अढाई दीप ।
कामदेव से सुन्दर न, नहिं जिनसे जगदीप ॥४९
जिन-जननी जिन-जनक से, और न गुरुजन जानि ।
मिष्ट न जिनवानी समा, यह निश्चय परमान ॥५०
जिनमूरति सी मूरति न, परमानंद सरूप ।
जिनसूरति सी सूरति न, जासम और न रूप ॥५१
जिनमंदिर से मंदिर नहीं, जिन तन सों न सुगन्ध ।
जिन विभूति सी भूति नहिं, जिन श्रुति सो न प्रबंध ॥५२
जिनवर से न महाबली, जिनवर से न उदार ।
जिनवर से न मनोहरा, जिनसे और न सार ॥५३
चरचा जिन चरचा समा, और न जग में कोइ ।
अर्चा जिन अर्चा समा, नहीं दूसरी होइ ॥५४
राज न श्री जिनराज से, जिनके राग न रोस ।
ईति भीति नहिं राज में, नहीं एक भी दोस ॥५५
सेवैं इन्द नरिन्द सब, भजहिं फणीस मुनीस ।
रटैं सूर ससि सुर सबै, जिनसम और न ईस ॥५६
अर्चें अहमिंद्रा महा, अरचें चतुर सुजान ।
हरि हर प्रति हरि हलि मदन, पूजें चक्रि पुमान ॥५७
गुरु कुल कर नारद सबै, सेवें तन मन लाय ।
जग में श्री जिन राय सों, पूज्य न कोइ लखाव ॥५८
तीर्थंकर पर सारिखा, और न पद जग माहिं ।
वज्र वृषभ नाराच सो, संहनन कोई नाहिं ॥५९
सम चतुस्र संठान सो, और नहीं संठाण ।
पुरुष सलाका सारिखा, और न कोई जाण ॥६०
चक्रायुध हल-आयुधा, कुसुमायुध इत्यादि ।
धर्मायुध के दास सब, वज्रायुध नृप आदि ॥६१
जे हैं चरम शरीर वर, तद भव मुक्ति मुनीश ।
तिन सी कोई न मानवा, नमें सुरासुर सीस ॥६२
नहीं सिद्ध पर्याय सी, और शुद्ध पर्याय ।
नहीं केवली कायसी, और दूसरी काय ॥६३
अर्हंत सिव साधू सबै, केवल भाषित धर्म ।
इन चउ सें नहिं मंगला, उत्तम और न पर्म ॥६४
इन चउ शरणनि सारिखे, शरण नाहिं जग माहिं ।
संघ न चउविधि संघ से, जिनके संशय नाहिं ॥६५
चोर न इन्द्री-चित्त से, मुसें धर्म धन भूरि ।
चारित से नहिं तलवरा, डारै तिनकों चूरि ॥६६

जैसें ए उपमा कही, तैसें शील समान।
व्रत न कोई दूसरो, भाषें श्री भगवान ॥६७
वक्ता सर्वज्ञ से नहीं, श्रोता गणधर से न।
कथन न आतम ज्ञान सो, साधक साधु जिसे न ॥६८
बाधक नहि रागादि से, तिनहि तजें जोगिन्द।
नहि साधन समभाव से, धारें धीर मुनिन्द ॥६९
पाप नहीं परद्रोह सो, त्यागें सज्जन संत।
पुण्य न पर उपकार सो, धारें नर मतिवंत ॥७०
लेश्या शुक्ल समान नहि, जामे उज्ज्वल भाव।
उज्ज्वलता निकषाय सी, और न कोई लखाव ॥७१
दया प्रकाशक जगत में, नहीं जैन सो कोइ।
पर्म धर्म नहि दूसरो, दया सारिखो होइ ॥७२
कारण निज कल्याण को, करुणा तुल्य न जानि।
कारण जिन विश्वास को, नहीं सत्य सो मानि ॥७३
सत्यारथ जिन सूत्र सो, और न कोइ प्रवानि।
सर्व सिद्धि को मूल है, सत्य हिये में आनि ॥७४
नहि अचौर्य व्रत सारिखौ, भय हरि भ्रांति निवार।
नहि जिनेन्द्रमत सारिखौ, चोरी वरज उदार ॥७५
नहीं सील सो लोक में, है दूजो अविकार।
कारण शुद्ध स्वभाव को, भव-जल तारणहार ॥७६
नहि जिनशासन सारिखो, शील प्रकाशन हार।
या संसार असार में, जा सम और न सार ॥७७
नहि संतोष समान है, सुख को मूल अनूप।
नहीं जिनेसुर धर्म सो, वर संतोष स्वरूप ॥७८
कोमल परिणामानि सो करुणाकरण नाहि।
नहि कठोर भावानि सों, दयारहित जग मांहि ॥७९
नहि निरलोभ स्वभाव सो, सत्य मूल है कोइ।
नहीं लोभ सो लोक में, कारण मिथ्या होइ ॥८०
मूल अचोरिज व्रत को, निस्पृहतासो नाहि।
चोरी मूल प्रपंच सो, नहीं लोक के मांहि ॥८१
राजवृद्धि को कारणा, नहीं नीति सो जानि।
नाहि अनीति प्रचार सों, राज विघन परवानि ॥८२
कारण संजम शील को, नहि विवेक सो भान।
नहि अविवेक विकार सो, मूल कुशील बखान ॥८३
मूल परिग्रह त्याग को, नहि वैराग समान।
परिग्रह संग्रह कारणा, तृष्णा तुल्य न आन ॥८४

करुणा निधि न जिनेन्द्र सो, जगत मित्र है सोय।
नहिं क्रोधी सो निरदई, सर्वनाश को होय ॥८५
सतवादी सर्वज्ञ से, नहीं लोक में कोइ।
कामी लोभी से महा, लापर और न होइ ॥८६
सम्यक् दृष्टी जीव सो, और न मन मद मोर।
मिथ्या दृष्टी जीव सो, और न परधन चोर ॥८७
समताभाव न सत्य सो, सीलवंत नहिं वीर।
लंपट परिणामी जिसो, नाहिं कुशीली वीर ॥८८
निसप्रेही निरदुंदसो, परिग्रह त्यागी नाहिं।
तृष्णावंत असंतसो, परिग्रह वंत न काहिं ॥८९
दारिद-भंजन, जस-करण, कारण संपति कोइ।
नहीं दान सो दूसरो, सुरग मुक्ति दे सोइ ॥९०
चउ दाननि से दान नहिं, औषध और आहार।
अभयदान अर ज्ञान को, दान कहैं गण-धार ॥९१
रागादिक परिहार सो, और न त्याग बखान।
त्याग समान न सूरता, इह निश्चय परवान ॥९२
तप समान नहिं और है, द्वादश माहिं निधान।
नहीं ध्यान सो दूसरो, भाषें श्री भगवान ॥९३
ध्यान नहीं निज ध्यान सो, जो कैवल्य स्वरूप।
जा प्रसाद भवरूप मिटि, जीव होय चिद्रूप ॥९४
क्षीण मोह से लोक में, ध्यानी और न जानि।
कारण आतम ध्यान को मन निश्चलता मानि ॥९५
कारण मन वशि करण को, नहीं जोग सो और।
जोग न निज संजोग सो, है सबको सिर मौर ॥९६
भोग न निज रस भोग सो, जामें नाहिं विजोग।
रोग न इन्द्री भोग सो, इह भाषें भवि लोग ॥९७
शोक न चिन्ता सारिखौ, विकलपरूप विड़रूप।
नहिं संशय अज्ञान सो, लखै न चेतनरूप ॥९८
विकलपजाल-परित्याग सो, और नहीं वैराग।
वीतराग से जगत में, और नहीं वड़भाग ॥९९
छती संपदा चक्रि की, जो त्यागै मतिवंत।
ता सम त्यागी और नहिं, भाषें श्री भगवंत ॥१००
चाहे अछती भूमिकौं, करै कल्पना मूढ़।
ता सम रागी और नहिं, सो शठ विषयारूढ़ ॥१
नव जौवन में व्याह तजि, वाल ब्रह्म व्रत लेय।
ता सम वैरागी नहीं, सो भवपार लहेय ॥२

कंटक नहिं क्रोधादि से, चढ़ि जु रहे गिर मान।
मुनिवर से जोधा नहीं, शस्त्र न शुकल समान ॥३
भाव समान न भेष है, भाव समान न सेव।
भाव समान न लिंग है, भाव समान न देव ॥४
ममता-माया रहित सो, उत्तम और न भाव।
सोइ शुद्ध कहिये महा, वर्जित सकल विभाव ॥५
कारण आतम ध्यान को, भगवत भक्ति समान।
और नहीं संसार में, इह धारौ मतिमान ॥६
विघन-हरण मंगल-करन, जप सम और न जानि।
जप नहिं अजप जाप सौ, इह श्रद्धा उर आनि ॥७
कारण रागविरोध को, भाव अशुद्ध जिसौ न।
कारण समताभाव को, विरकित भाव तिसौ न ॥८
कारण भव वन-भ्रमण के, नहिं रागादि समान।
कारण शिवपुर गमन को, नहीं ज्ञान सो आन ॥९
सम्यग्दर्शन ज्ञान व्रत, ए रतनत्रय जानि।
इनसे रतन न लोक में, ए शिव दायक मानि ॥१०
निज अवलोकन दर्शना, निज जानें सो ज्ञान।
निजस्वरूप को आचरण, सो चारित्र निधान ॥११
निजगुण निश्चय रतन ये, कहे अभेद स्वरूप।
व्यवहारै नव तत्व की, सरधा अविचल रूप ॥१२
तत्त्वारथ श्रद्धान सो, सम्यग्दर्शन जानि।
नव पदारथ को जानिवौ, सम्यग्ज्ञान वखानि ॥१३
विषय कषाय व्यतीत जो, सो व्यवहार चरित्र।
ए रतनत्रय भेद हैं, इनसे और न मित्र ॥१४
देव जिनेसुर गुरु जती, धर्म अहिंसारूप।
इह सम्यक् व्यवहार है, निश्चय निज चिद्रूप ॥१५
नहिं निश्चय व्यवहार सी, सरधा जग में कोइ।
ज्ञान भक्ति दातार ए, जिन भाषित नय दोइ ॥१६
भक्ति न भगवत भक्ति सी, नहिं आतम सो बोध।
रोध न चित्त निरोध सो, दुरनयसो न विरोध ॥१७
दुर्मतिसी नहिं शाकिनी, हरै ज्ञान सो प्रान।
नमोकार सो मंत्र नहिं, दुरमति हरे निधान ॥१८
नहिं समाधि निरूपाधि सी, नहिं तृष्णा सी व्याधि।
तन्त्र न परम समाधि सो, हरै सकल असमाधि ॥१९
भवयन्त्र जु भयदाय को, ता सम विघन न कोय।
सिद्धयन्त्र सो सिद्धकर, और न जग में होय ॥२०

सिद्धक्षेत्र सो क्षेत्र नहिं, सर्व लोक के सीस।
यात्री जतिवर से नहीं, पहुँचै तहां मुनीस ॥२१
षोड़सकारण सारिखा, और न कारण कोय।
तीर्थेश्वर पद सारिसा और न कारज होय ॥२२
नाहीं दर्शन शुद्धि सा, षोड़श माहीं जान।
केवल रिद्धि वरावरी, और न रिद्धि वखान ॥२३
नहिं लक्षण उपयोग से, आतम तें जु अभेद।
नाहिं कुलक्षण कुवुधि से, करै धर्म को छेद ॥२४
धर्म अहिंसारूप के, भेद अनेक वखान।
नहिं दशलक्षण धर्म से, जग में और निधान ॥२५
क्षमा उत्तमा सारिखो और दूसरी नाहिं।
दशलक्षण में मुख्य है, क्रोध-हरण जगमाहिं ॥२६
नीर न शांति स्वभाव सो, अगनि न कोप समान।
मान समान न नीचता, नहिं कठोरता आन ॥२७
मानी को मन लोक में, पाहन-तुल्य वखान।
मान समान अज्ञान नहिं भाखें श्री भगवान ॥२८
निगरवभाव समान सो, मृदु नहिं जगमें और।
हरै समस्त कठोरता, है सव कौ सिरमौर ॥२९
कीच न कपट समान को, वक्र न कपट समान।
सरल भाव सो उज्जवल, न सूधौ कोइ न आन ॥३०
आपद लोभ समान नहिं, लोभ समान न लाय।
लोभ समान न खांड़ है, दुख औगुन समुदाय ॥३१
नहिं सन्तोष समान धन, ता सम सुक्ख न कोय।
नहिं ता सम अमृत महा, निर्मल गुण है सोय ॥३२
श्रेष्ठ नहिं निर्मल भाव सो, जहां न अशुभ सुभाव।
नाहिं मलिन परिणाम सो, दूजौ कोई कुभाव ॥३३
सन्देह न अयथार्थ सो, जाकरि भर्म न जाय।
नहिं यथार्थ सो लोक में, निस्सन्देह कहाय ॥३४
नाहिं कलंक कषाय सो, भाषें श्री भगवन्त।
निःकलंक न अकषाय से, करै कर्म को अन्त ॥३५
शुचि नहिं मन-शुचि सारिखी, करै जीव कों शुद्ध।
अशुचि नहीं मन-अशुचिसी, इह भाषें प्रतिवुद्ध ॥३६
नहीं असंजम सारिखौ, जगत डवोवनहार।
नहिं संचय सो लोक में, ज्ञान वढ़ावन हार ॥३७
वंचक नहिं परपंच से, ठगें सकल कों सोइ।
विष-वांछना सारिखी, नांहि ठगौरी कोइ ॥३८

नहिं त्रिलोक में दूसरो, तप सो ताप-निवार ।
त्रिविध ताप से ताप नहिं, जरा जन्म मृति धार ॥३९
इच्छासी न अपूरणा, पूरी होइ न सोइ ।
नहिं इच्छा जु निरोध सी, तपस्या दूजो होइ ॥४०
त्याग समान न दूसरो, जग-जंजाल निवार ।
नहीं भोग-अनुराग सो, नरकादिक दातार ॥४१
नहीं अकिञ्चन सारिखौ, निरभय लोक मँझार ।
नर परिगरही सारिखौ, भय-रूप न निरधार ॥४२
परिग्रह सो नहिं पापगृह, नहिं कुशील सो काद ।
ब्रह्मचर्य सो और नहिं ब्रह्मज्ञान को वाद ॥४३
नहीं विषय रस सारिखौ, नीरस त्रिभुवन माहिं ।
अनुभव रस आस्वाद सो, सरस लोक में नाहिं ॥४४
अदयासी नहिं दुष्टता, अनृत सो न प्रपंच ।
छल नहिं चोरी सारिखौ, चोर समान न टंच ॥४५
हिंसक सो नहिं दुर्जन, हरै पराये प्राण ।
नहिं दयाल सो सज्जना, पीरा हरै सुजाण ॥४६
नहिं विश्वास-घाती अवर, झूंठे नर सो कोय ।
नहिं व्यभिचारी सो अना-चारी जग में होय ॥४७
विकथा सो न प्रलाप है, आरति सो न विलाप ।
पाप न द्वय नय थाप सो, जिनवर सो न प्रताप ॥४८
सन्ताप न कोई सोक सो, लोक न सिद्ध समान ।
धन प्राणन के नाश सो, और न शोक बखान ॥४९
जड़ जिय सो अभिलाष नहिं, गुण-मणि सो न मिलाप ।
श्री जिनवर गुणगान सो, और न कोई अलाप ॥५०
नहिं विकथा नारीनिसी, कथा न धर्म समान ।
नहिं आरति भोगार्त्तिसी, दुरगति दाई आन ॥५१
ऊँकार समान नहिं सर्व शास्त्र की आदि ।
महा मङ्गलाचार है, यह उपचार अनादि ॥५२
नाद न सोऽहं सारिखौ, नहीं स्वरस सो स्वाद ।
स्यादवाद सिद्धान्त सो, और नहीं अविवाद ॥५३
एक एक नय पक्ष सो, और न कोई वाद ।
नाहिं विषाद विवाद सो, निद्रा सो न प्रमाद ॥५४
स्त्यान गृद्धि निद्रा जिसी, निद्रा निंद्य न और ।
परनिन्दा सो दोष नहिं, भाषें जिन जग-मौर ॥५५
निन्दा चउविधि संघ की, ता सम अघ नहिं कोय ।
नाहिं प्रसंसा जोगि कोउ. जिन आगम सो होय ॥५६

सार न अध्यातम जिसौ, निज अनुभव को मूल ।
नहिं मुनि से अध्यातमी, सर्व विपय प्रतिकूल ॥५७
विषय कषाय बराबरी, वैरी जियके नाहिं ।
ज्ञान विराग विवेक से, हितू नाहिं जग माहिं ॥५८
अध्यात्म चरचा समा चरचा और न कोय ।
जिनपद अरचा सारिखी, अरचा और न होइ ॥५९
नाहिं गणाधिप से महा-चरचा-कारक जानि ।
नाहिं सुरधिप सारिखे, अरचा-कारक मानि ॥६०
गमन न ऊरध गमन सो, नहीं मोक्ष सो धाम ।
रोधक नाहीं कर्म से, हरो कर्म तजि काम ॥६१
शत्रु न कोई अधर्म सो, मित्र न धर्म समान ।
धर्म न वस्तु स्वभाव सो हिंसा-रहित बखान ॥६२
निज स्वभाव को विस्मरण, नहिं ता सम अपराध ।
साधे केवलभाव को, ता सम और न साध ॥६३
नर देहा सम देह नहिं, लिङ्ग न पुरुष समान ।
वेद नहीं नर वेद सो, सुमन समो न सयान ॥६४
त्रस-काया सम काय नहिं, पंचेन्द्री जा मांहि ।
पंचेन्द्री नहिं मनुष से, जे मुनिव्रत्त धराहिं ॥६५
मुनि नहिं तदभवमुक्ति से, जे केवल पद पाय ।
पहुँचे पंचमगति महा, चहुंगति भ्रमण नशाय ॥६६
गति नहिं पंचम गति जिसी, जाहि कहैं निजधाम ।
अविनश्वर पुर नाम जा, जा सम नगर न राम ॥६७
नाहिं शुद्ध उपयोग सो मारग सूधौ होय ।
नाहीं मारग मुक्ति को, भव-विरक्ति सो कोय ॥६८
लोक शिखर सो ऊंच नहिं, सबके शिरपर सोय ।
नहीं रसातल सारिखौ नीचो जग में जोय ॥६९
जित मन इन्द्री धीर से और न वंद्य बखानि ।
विषयी विकलनि सारिखे, और न निंद्य प्रवानि ॥७०
नहिं अरिष्ट अघ कर्म से, शिष्ट न सुभग समान ।
नाहिं पञ्च परमेष्ठि से, और इष्ट परवान ॥७१
जिन-देवल से देवल न, नहीं जैन से बिम्ब ।
केवल सो ज्ञायक नहीं, जामें सब प्रतिबिंब ॥७२
नाहि अकृत्रिम सारिखे, देवल अतिसयरूप ।
चैत्य वृक्ष से वृक्ष नहिं, सुरतरु सें हु अनूप ॥७३
जोगी जिनवर से नहीं, जिनकी अचल समाधि ।
निजरस भोगी ते सही, वर्जित सकल उपाधि ॥७४

इन्दिय भोगी इन्द्र से, नाहिं दूसरे जानि।
इन्द्रा जीत मुनीन्द्र से, इन्द्र नरेन्द्र न मानि ॥७५
राग द्वेष परपंच से, असुर और नहिं होय।
दर्शन-ज्ञान-चारित्र से, असुर-नाशक न कोय ॥७६
काम-क्रोध-लोभादि से, नाहिं पिशाच वखानि।
सम संतोष विवेक से, मंत्राधीश न मानि ॥७७
माया मच्छर मान से, दुखकारी नहिं वीर।
निगरव निकपटभाव से, सुखकारी नहिं धीर ॥७८
मैल न कोई मिथ्यात सो, लग्यौ अनादि विरूप।
सावुन भेद विज्ञान सो, और न उज्ज्वलरूप ॥७९
मदन दर्प सो सर्प नहिं, डसै देव नर नाग।
गरुड़ न कोई शील सो, मदन जीत बड़भाग ॥८०
मैल न मोहासुर समो, सकल कर्म को राव।
महामल्ल नहिं वोध सो, हरै मोह-परभाव ॥८१
भर्म न कोई कर्म से, कारण संशय जानि।
भ्रमहारी सम्यक्त्व से, और न कोई मानि ॥८२
विष नहिं विषयानंद से, देहि अनंता मर्ण।
सुधा न ब्रह्मानंद सो, अनुभवरूप अवर्ण ॥८३
क्रूर न क्रोधी सारिखे, नहीं क्षमी से शांत।
नीच न मानी सारिखे, निगरवसे न महांत ॥८४
मायावी सो मलिन नहिं, विमल न सरल समान।
चिंतातुर लोभीनसे, दीन न दुखी अयान ॥८५
दुष्ट न दोषी सारिखे, रागी से नहिं अंध।
अहंकार ममकार सो, और न कोई वंध ॥८६
मोही से नहिं लोक में, गहलरूप मतिहीन।
कामातुर से आतुर न, अविवेकी अघलीन ॥८७
ऋण नहिं आस्रव-बंध से, राखे भव में रोकि।
मुनिवर से मतिवंत नहिं, छूटे ब्रह्म विलोकि ॥८८
संवर निर्जर सारिखे, रिण-मोचन नहिं कोइ।
दुर्जर कर्म हरें महा, मुक्तिदायक सोइ ॥८९
विपति न वांछा सारिखी, वांछा-रहित मुनीश।
मृगतृष्णा मिथ्या जिसो, और न कहें रिषीश ॥९०
समतासी संसार में, साता कोइ न जानि।
सातासी न सुहावणी, इह निश्चय उर आनि ॥९१
ममतासी मानों भया, और असाता नाहिं।
नाहिं असाता सारिखी, है अनिष्ट जगमाहिं ॥९२

उदासीनता सारिखी, समता-करण न कोय ।
जग अनुराग समानता, ममता मूल न जोय ॥९३
नाहिं भोग-अभिलाप सौं, भूख अपूरण वीर ।
नाहिं भोग वैराग सौ, पूरणता है वीर ॥९४
नाहीं विषयाशक्ति, सौ त्रिसा त्रिलोकी मांहि ।
विरकततासी विश्व में, और तृषा-हर नांहि ॥९५
पराधीनता सारिखो, नहीं दीनता कोइ ।
नहि कोई स्वाधीनता, तुल्य उच्चता होइ ॥९६
नहीं समरसी भाव सौ, समता त्रिभुवन माहिं ।
पक्षपात बकवाद सौं, और न विसमता नांहि ॥९७
जगतकामना कल्पना,—तुल्य कालिमा नांहि ।
नहीं चेतना सारिखी ज्ञायक त्रिभुवन मांहि ॥९८
ज्ञान चेतना सारिखो, नहीं चेतना शुद्ध ।
कर्म कर्मफल चेतना, ता सम नाहिं अशुद्ध ॥९९
नर निरलोभी सारिखे, नाहिं पवित्र बखान ।
सन्तोषी से नहि सुखी, इह निश्चय परवान ॥१००
निरमोही अर निरममत, ता सम सन्त न कोय ।
निरदोषी निरवैर से, साधु और न कोय ॥१
दोष समान न मोषहर राग समान न पासि ।
मोह समान न बोध हर, ए तीनू दुखरासि ॥२
व्रती न कोई निशल्य सो, माया तुल्य न शल्य ।
हीन न जाचिक सारिखौ त्यागी से न अतुल्य ॥३
कामी से न कलकंधी, काम समान न दोष ।
परदारा परद्रव्य सो, और न अघ को कोष ॥४
शल्य समान न है सली, चुभी हिये के मांहि ।
नहि निरदयी स्वभाव सो, मूढ़ा और कहाहिं ॥५
शोच न संग समान है, संग न अंग समान ।
अंग नहीं द्वय अंग से, तिनहिं तजे निरवान ॥६
कारमाण अर तैज सा, ए द्वय देह अनादि ।
लगे जीव के जगत में, रोग महा रागादि ॥७
गेह समान न दूसरो, जानूं कारागेह ।
देह समान न गेह है, त्यागौ देह-सनेह ॥८
ए काया नहि जीव की, सो है ज्ञान शरीर ।
मृत्यु न ज्ञान शरीर की, नहीं रोग को पीर ॥९
नाहीं इष्ट-वियोग सो, शोक-मूल है कोइ ।
काया माया सारिखौ, इष्ट न जग के जोइ ॥१०

नहिं संकल्प विकल्प सो, जाल दूसरो जानि ।
नहिं निरविकलप ध्यान सो, छेदक जाल वखानि ॥११
नहीं एकता सारिखी, परम समाधि स्वरूप ।
नहीं विषमतासी अवर, सठता रूप विरूप ॥१२
चिन्ता सी असमाधि नहिं, नहिं तृष्णा सी व्याधि ।
नहिं ममता सी मोहनी, मायासी न उपाधि ॥१३
ज्ञानानन्दादिक महा, निजस्वभाव निरदाव ।
तिनसों तन्मय भाव जो, सो एकत्व कहाव ॥१४
आशासी न पिशाचिनी, आसासी न असार ।
नहीं जाचना सारिखी, लघुता जगत मंझार ॥१५

दान-कलासी दूसरी, दुख-हरणी नहिं कोइ ।
ज्ञान कलासो जगत में, सुखकारी नहिं कोइ ॥ १६
नाहि क्षुधासी वेदना, व्यापै सबकों सोइ ।
अन्न-पान दातार से, दाता और न होइ ॥१७
पर दुख हरणी सारिखी, गुरुता और न जानि ।
पर पीड़ा करणी समा, खलता कोइ न भानि ॥१८
शुद्ध पारणामिक समा, और नाहिं परिणाम ।
सकल कामना त्याग सो, और न उत्तम काम ॥१९

धर्म-सनेही सारिखा, नाहि सनेही होइ ।
विषय-सनेही सारिखा, और कुमित्र न कोइ ॥२०
सर्व वासना त्याग सी, और न थिरता वीर ।
कष्ट न नरक निगोद से, नहीं मरणसी पीर ॥२१
राज-काज अभ्यास सो, और न दुरगति-दाय ।
जोगाभ्यास अभ्यास सो, और न सिद्धि उपाय ॥२२
नहिं विराधना सारखी, वाधाकरण कहांहि ।
आराधन सी दूसरो, भव-वाधा-हर नाहिं ॥२३
निजसरूप आराधना, अचल समाधि स्वरूप ।
ता सम शिव साधन नहीं, यह भाखें जिनभूप ॥२४
निज सत्ता सी निश्चलता, और न मानों मित्त ।
आधि-व्याधि तें रहित जो, ध्यावौ ताहि निचिंत ॥२५
निज सत्ता को भूलि जे, राचें माया माहिं ।
धरि धरि काया में भ्रमें यामें संशय नाहिं ॥२६
मुनिव्रत तजि भवभोग कों, चाहें जे मति मंद ।
तिनसे मूढ़ न लोक में, इह भाषें जिनचन्द ॥२७
वृद्ध भये हू गेह कों, जो न तजे मतिहीन ।
तिनसे गृद्ध न जगत में, कापुरुषा न मलीन ॥२८

गेह तजें नव वर्ष के, धरें महाव्रत सार।
तिनसे पूज्य न लोक में, ते गुण वृद्ध अपार ॥२९
नहिं वैरागी जीव से, निरवंधन निरुपाधि।
नहीं जु रागी सारिखे, वारक आधि रु व्याधि ॥३०
निजरस आस्वादन-विमुख, भुगतें इन्द्रीभोग।
नरकवासना ते लहैं, तिनसे नाहिं अजोग ॥३१
अभविनि से न अभागिया, भव्यनि से न सभाग।
निकटभव्य से भव्य नहिं, गहैं ज्ञान वैराग ॥३२
नहिं दरिद्र दुरवुद्धि सो, दलिद्दर सो न दुकाल।
नहिं संपति सन्मति जिसी, नहीं मोह सो जाल ॥३३
नहीं शमी से संयमी, व्रत सो नाहिं विधान।
नहिं प्रधान जिनवोध सो, निज निधि सो न निधान ॥३४
कोष न गुणभंडार सो, सदा अटूट अपार।
औगुन सो नहिं गुणहरा, भव-भव दुख-दातार ॥३५
खल स्वभाव सो औगुन न, गुण न सुजनता तुल्य।
सत्य पुरुष निरवैर से, जिनके एक न शल्य ॥३६
खलजन दुरजन सारिखे, और न दूसरे नाहिं।
भववन सो वन नाहिं कौ, भ्रमै मूढ़ जा माहिं ॥३७
विषवृक्ष न वसुकर्म से, नानाफल दुखदाय।
वेलि न मायाजाल सी, जगजन जहाँ फँसाय ॥३८
दुरनय पक्षी सारिखे, नाहिं कुपक्षी आन।
दैत्य न निरदय भाव से, तिमिर न मोह समान ॥३९
मन-उनमाद गयँद सो, और न वनगज कोइ।
क्रूरभाव सो सिंह नहिं, ठग न मदन सो सोइ ॥४०
नहिं अजगर अज्ञान सो, ग्रसै जगत को जोइ।
नहिं रक्षक निज ध्यान सो, काल हरण है सोइ ॥४१
थिर चर से नहिं वनचरा, वसे सदा भव माहिं।
नहिं कंटक क्रोधादि से, दया तिनूं महिं नाहिं ॥४२
विष-पहुप न विषयादि से, रहै कुवासनि पूरि।
नाहिं कुपात्र कुसूत्रसे, ते या वन में भूरि ॥४३
पंथ न पावें जगत में, मुकति तनों जग जंत।
कोइक पावै ज्ञान निज, सोई लहै भव-अंत ॥४४
नहिं सेरो जिनवानि सी, दरसक गुरु से नाहिं।
नगर नहीं निरवाण सो, जहां संत ही जाहिं ॥४५
नहिं समुद्र संसार सों, अति गंभीर अपार।
लहर न विषय तरंगसी, मच्छ न जमसो भार ॥४६

भ्रमण न चहुंगति भ्रमण सो, भरमें जीव अपार।
पोत न मुनिव्रत सो महा, करै भवोदधि पार ॥४७
द्वीप नहीं शिवद्वीप सो, गुन रतनन की रासि।
तीरथनाथ जिनंद से, सारथवाह न भासि ॥४८
अंधकूप नहि जगत सो, परै तहां तनधार।
जिन विन काढै कौन जन, करिकै करुणा सार ॥४९
नाहि भवानल सारिखी, दावानल जग माहि।
जगत चराचर भस्म कर, यामें संशय नाहि ॥५०
जिनगुण अंबुधि शरण ले, ताहि न याको ताप।
तातें सकल विलाप तजि सेवौ आप निपाप ॥५१
नहि वायु जगवायु सी, जगत उड़ावै जोय।
काय टापरी वापरी, याकै टिकै न कोय ॥५२
जिन पद परचित आसिरौ, जो नर पकरै आय।
सोई यामें ऊबरै, और न कोइ उपाय ॥५३
नाहि अतिद्री, सुख समो, पूरण परमानन्द।
नाहि अफंद मुनीन्द्र सो, आनंदी निरद्वन्द ॥५४
नहि दीक्षा दुख-हारिणी, जिनदीक्षासी कोय।
नहि शिक्षा सुख-कारिणी, जिनशिक्षा सी होय ॥५५

जोगीरासा

फंद न कनककामिनी सरिसा, मृग नहि मूरख नरसा।
नाहि अहेरी काम लोभसा, सूर न अंध सु नरसा ॥१
काटक फंद न वोध वृत्त सा, मंदमती न अभविसा।
वुद्धिवंत नहि भव्यजीव सा, भव्य न तद्भव शिवसा ॥५६
पुरुष शलाका महाभाग से, तथा चरम तन धर से।
और न जानों पुरुष प्रवीना, गुरु नहि तीर्थंकरसे ॥
ते पहली भाषे गुणवंता, अव सुनि देवस्वरूपा।
इन्द्र तथा अहमिंद्र न सरखे, और न देव अनूपा ॥५७
इन्द्र न षट इंद्रनि से कोई, सौधर्म सनतकुमार।
व्रह्मेन्द्र जु अर लांतव इंद्रा, आनत आरण सारा ॥
ए एका भवतारी भाई, नर ह्वै शिवपुर लेंवे।
सम्यक्दृष्टी इंद्र सवै ही, श्री जिनमारग सेवें ॥५८
लोकपालहु सम्यक्दृष्टी, इक भव धरि भव-पारा।
इंद्र सारिखे सुर ये सोहै, इनसे देव न सारा ॥
देवरिषी लौकांतिक देवा, तिनसे इन्द्रहु नाहीं।
व्रह्मचर्य धारत ए देवा, इनसे भुवन न माहीं ॥५९

तप कल्याणक समये सेवा, करें जिनेसुर की ये।
नर ह्वै पावें पद निरवाना, राखे जिनमत हीये॥
इंद्राणी सी देवी नाहीं, इन्द्राणी न शचीसी।
इक भव वरि पावै सुखवासा, तीर्थंकर जननीसी ॥६०
सेवक देव जिनेसुरजू के, नाहि सुरेसुर तुल्या।
शची सारिखी भक्त न कोई, धारे भाव अतुल्या॥
कल्याणक ए पांचू पूजैं, शची शक्र जिनदासा।
अहनिशि जिनवर चरचा इनके, धारे अतुल विलासा ॥६१

दोहा

अब सुनि अहमिंद्रा महा, स्वर्ग ऊपरै जेहि।
नव ग्रीवक नव अनुदिसा, पंचानुत्तर लेहि ॥६२
तेईसों शुभ थान ए, तिनमें चौदा सार।
नव अनुदिश पंचोत्तरा, ये पावें भवपार ॥६३
सम्यक्दृष्टी देव ए, चौदहथान निवास।
चौदह में नहि पंच से, महा सुखनि की रास ॥६४
पंचनि में सरवारथी, सिद्ध नाम है थान।
सकल स्वर्ग को सीस जो, ता सम लोक न आन॥६५
एका भवतारी महा, सरवारथसिधि वास।
तिनसे देव न इन्द्र कोउ, अहमिंद्रा न प्रकाश ॥६६
कहे देवमें सार ए, तैसे व्रत में सार।
शील समान न गुरु कहैं, शील देय भवपार ॥६७
देव माहि जे समकिती, देव देव हैं जेहि।
देव माहि मिथ्या मती, पशु तें मूरख तेहि॥
नारक में जे समकिती, तिनसे देव न जांनि।
तिरजंचनि में श्राविका, तिनसे मनुज न मांनि ॥६९
मनुजनि में जे अव्रती, अज्ञानी मतिमंद।
तिनसें तिरजंचा नहीं, सेवें विषय सुछंद ॥७०
मनुजनि माहि मुनिन्द्रि जे, महाव्रती गुणवान।
तिनसे अहमिन्द्रा नहीं, ताको सुनहु वखान ॥७१
थावर नहि कृमिकीट से, ते सकलिन्द्री से न।
पंचेन्द्री नहि नरनि से, नर जु नरेन्द्र जिसे न ॥७२
महामंडलिक से न नृप, ते अर्धचक्री से न।
अर्धचक्री नहि चक्री से, चक्री इन्द्र जिसे न ॥७३
इन्द्र नहीं अहमिन्द्र से, ते न मुनीन्द्र समान।
नाहि मुनीन्द्र गणीन्द्र से, ज्ञानवान गुणवान ॥७४

नाहिं गणीन्द्र जिनेन्द्र से, जे सबके गुरुदेव।
इन्द्र फणिन्द्र नरेन्द्र मुनि, करें सुरासुर सेव ॥७५
ते जिनेन्द्र हू तप समय, करें सिद्ध को ध्यान।
सिद्धनि सो संसार में, नाहिं दूसरो आन ॥७६
सिद्धनि सो यह आत्मा, निश्चय नय करि होय।
सिद्धलोक दायक महा, नहीं शील सो कोय ॥७७
भूमि न अष्टम भूमि सी, सर्वभूमि के शीश।
कर्म भूमि तें पावही, अष्टम भूमि मुनीस ॥७८
द्वीप अढ़ाई से नहीं, असंख्यात ही द्वीप।
जहां ऊपजे जिनवरा, तीन भुवन के दीप ॥७९
नहिं जिन प्रतिमा-सारिखी, कारण वर वैराग।
नहीं आन मूरति जिसी, कारण दोष रु राग ॥८०
नहि अनादि प्रतिमा समा, सुंदर रूप अपार।
नाहिं अकृत्रिम सारिखे, चैत्यालय विसतार ॥८१
क्षेत्र न आरिज सारिखे, सिद्धक्षेत्र है सोइ।
भरतैरावत्त दस सबै, नहिं विदेह से कोइ ॥८२
गिरि नहिं सुरगिरि सारिखे, तरु सुरतरु से नाहिं।
नदी सुरनदी सी नहीं, सर्व नदी के माहिं ॥८३
शिला न पांडुकशिला सम, जा परि न्हावै ईश।
सिद्ध सिलासी पांडु नहिं, सा त्रिभुवन के शीश ॥८४
उदधि न क्षीरोदधि समा, द्रह पदमादि जिसे न।
मणि नहिं चिंतामणि समा, कामधेनु सी धेनु ॥८५
निधि नहिं नवनिधि सारिखी, सो निजनिधि सी नाहिं।
नहिं समुद्र गुणसिंधु सो, है निज निधि जा माहिं ॥८६
नन्दनादि से वन नहीं, ते निज वन से नाहिं।
निज वन में क्रीडा करें, ते आनन्द लहाहिं ॥८७
केवल परिणत्ति सारिखी, नदी कलोलनि कोइ।
निज गंगा सोई गनों, ता सम और न होइ ॥८८
देव न आतम देव सो, गुण आतम सो, नाहि।
धर्म न आतम धर्म सो, गुण अनन्त जामाहिं ॥८९
बाजा दुन्दुभि सारिखा, नहीं जगत में और।
राजा जिनवर सो नहीं, तीन भुवन सिर-मौर ॥९०
नाहिं अनाहत तूर से, देव दुन्दभी तूर।
सूर न तिनसे जे नरा, डारें मनमथ चूर ॥९१
वाहन नहीं विमान से, फिरें गगन के माहिं।
नाहिं विमान जु ज्ञान से, जा करि शिवपुर जाहिं ॥९२

हीन दीन अति तुच्छ तन, नहिं निगोदिया तुल्य।
सरवारथ सिधि देव से, भववासी नहिं कुल्य ॥९३
दीरघ देह न मच्छ से, सहसर जोजन देह।
चौइन्द्री नहिं भ्रमर से, जोजन एक गनेह ॥९४
कान खजुरया से नहीं, ते इन्द्री त्रय कोस।
वेइन्द्री नहिं संख से, तन अड़तालीस कोश ॥९५
एकेन्द्री नहिं कमल से, सहसर जोजन एक।
सब परि करुणा राखिवौ, इह जिनधर्म विवेक ॥९६
धातु न कनक समान सो, काई लगै न जाहि।
सोहु न चेतन धातु सों, नहिं कबहुं विनसाहि ॥९७
पारस से पाषाण नहिं, लोहा कनक कराय।
पारसनाथ समान कोउ, पारस नाहिं कहाय ॥९८
करै जीव कों आप सम, हरै सबै दुःख द्रोय।
धरै मोक्ष थानक विषै, करै कर्म गण सोय ॥९९
ध्यावौ पारसप्रभु महा, बसै सदा सो पास।
राशि सकल गुणरतन की, काटै कर्म जु पासि ॥१००
चातुर्मासिक सारखे, उतपत जीव न आन।
व्रती जति से नाहिं कोउ, गमन तजें गुणवान ॥१
जिन कल्याणक क्षेत्र से और न तीरथ जान।
तेहु न निज तीरथ जिसै, इह निश्चय कर मान ॥२
निज तीरथ निज क्षेत्र हैं, असंख्यात परदेश।
तहां विराजै आतमा, जानै भाव असेस ॥३
अष्टमि चउदसि सारिखी, परवी और न जानि।
आष्टाह्निक से लोक में, पर्व न कोइ प्रवानि ॥४
नंदीसुर सो धाम नहिं, जहां हरख अति होय।
नंदादिक वापनि सी, नहीं वापिका कोय ॥५
नारक से क्रोधी नहीं, शठ नर सो न गुमान।
विकल न पशुगण सारिखे, लोभ न दंभ न समान ॥६
नारक से न कुरूप कोउ, देवनि से न सुरूप।
नर से बन्धाधर नहीं, नहिं पशु से बहुरूप ॥७
कारण भोग न दान सो, तप सो स्वर्ग न मूल।
हिंसारम्भ समान नहिं, कारण नरक सथूल ॥८
पशुगति कारण कपट सो, ओर न कोइ बखान।
सरल निगर्व सुभाप सो, नरभव मूल न आन ॥९
सुख कारण नहिं शुभ समो, अशुभ समा दुख मूल।
नहीं शुद्ध सो लोक में, मोक्ष-मूल अनुकूल ॥१०

पोसह पडिक्रमणादि सो, शुभाचरण नहि होइ।
विषय कषाय कलंक सो, अशुभाचरण न कोइ ॥११
आतम अनुभव सारिखा, शुद्धभाव नहीं वीर।
नहीं अनुभवी सारिखे, तीन भुवन में धीर ॥१२
नारि समान न नागिनी, नारी सम न पिशाच।
नारि समान न व्याधि है, रहें मूढजन राचि ॥१३
ब्रह्मज्ञान को विश्व में, वैरी है व्यभिचार।
ब्रह्मचर्य सो मित्र नहि, इह निश्चै उर धारि ॥१४
कायर कृपण समान नहि, सुभट न त्यागी तुल्य।
रंक न आसादास से, लहै न भाव अतुल्य ॥१५
संत न आशा रहित से, आशा त्यागें साध।
साध समान अवाध नहि, करहि तत्त्व आराध ॥१६
निजगुण से नहि भूषणा, भूख न चाहि समान।
वस्त्र न दश दिश सारिखे, इह भाषें भगवान ॥१७
भोजन तृपति समान नहि, भाजन गगन जिसौ न।
राज न शिवपुर राज सो, जामें काल चको न ॥१८
राव न सिद्ध अनन्त से, साथ न भाव समान।
भाव न ज्ञानानन्द से, इह निश्चय परवान ॥१९
चेतनता सत्ता महा, ता सम पटरानी न।
शक्ति अनन्तानन्त सी, राजलोक जानी न ॥२०
नारक से दुखिया नहीं, विषयी देव जिसै न।
चिन्तावान मनुष्य से, असहाई पशु सें न ॥२१
सूक्षम अलप प्रजापता, जीव निगोद निवास।
ता सम सूक्षम थावर न, इह जिन आज्ञा भास ॥२२
अलस्या से वेइन्द्रिया, और न अलप शरीर।
नहीं कुंथिया से अलप, ते इन्द्रिय तनवीर ॥२३
काणमच्छिकासे न तुच्छ, चौइन्द्रिय तन धार।
तन्दुलमच्छ समान तुच्छ, पंचेन्द्री न विचार ॥२४
चुगली-चोरी अति वुरी, जोरी जारी ताप।
चोरी चमचोरी तथा, जुवा आमिष पाप ॥२५
मदिरा मृगया मांगना, पर महिलासूं प्रीति।
परद्रोह परपंच अर, पाखंडादि प्रतीत ॥२६
तजो अभक्षण भक्ष्य अरु, तजौ अगम्यागम्य।
तजौ विपर्यय भाव सहु, त्यागहु पाप अरम्य ॥२७
इनसी और न कुक्रिया, नरक निगोद प्रदाय।
सकल कुक्रिया त्याग-सों और न ज्ञान उपाय ॥२८

उज्जल जल गल्यौ उचित, सोध्यौ अन्न अडंक ।
ता सम भक्ष्य न लोक में, भावें विवुध निशंक ॥२९
मद्य मांस मधु मांखणा, ऊमरादि फल निंदि ।
इनसे अभख न लोक में, निंदें नर जगवंदि ॥३०
वेश्या दासी परत्रिया, तिनसी धारै प्रीति ।
एहि अगम्या गम्य है, या सम नाहि अनीति ॥३१
होय कलंक को सारखे, नाहि अनीतो कोय ।
वज्र चक्री सारिखे, नीतिवान नहिं जोय ॥३२
खग जग कोउ गजेन्द्र से, मृग मृगेन्द्र से नाहिं ।
खग नहिं कोउ खगेन्द्र से, जे अति जोर धराहि ॥३३
वादित्र न कोइ वीन से, सुरपति से न प्रवीन ।
वाण न कोइ अमोघ से, हिंसक से न मलीन ॥३४
अशन न पान पियूष से, व्यसन न द्यूत समान ।
वस्त्राभरण न लोक में, देवलोक सम आन ॥३५
वाजित्री न महेन्द्र से, पंच कल्याणक माहिं ।
सदा वजावें राग धरि, गावैं संशय नाहि ॥३६
अश्व नहीं जात्यश्व से, कटक न चक्रि-समान ।
अलंकार नहि मुकट से, अंग न सीस समान ॥३७
पालें वाल जु ब्रह्मव्रत, ता सम पुरुष न नारि ।
खोवै वृद्धहि ब्रह्मव्रत, ता सम पशु न विचारि ॥३८
वज्र चक्र से लोक में, आयुध और न वीर ।
वज्रायुध चक्रायुधी, तिनसे प्रवल न धीर ॥३९
हल मुसलायुध सारिखे, भद्रभाव नहिं भूप ।
नहि धनुषायुध सारिखे, केलि कुतूहल रूप ॥४०
नाहि त्रिशूलायुध जिसै, ओर न भयंकर कोइ ।
नहि पुष्पायुध सारिखे, महा मनोहर होइ ॥४१
धर्मायुध से धर्मधर, सर्वोत्तम सव नाथ ।
और न जानो लोक में, सकल जिनों के साथ ॥४२
नहिं व्यभिचारी सारिखा, पापाचारी और ।
नाहि ब्रह्मचारी समा, आचारी सिरमौर ॥४३
मायासी कुलटा नहीं, लगी जगत के संग ।
विरचे क्षण में पापिनी, परकीया वहु रंग ॥४४
नहिं चिद्रूपा सिद्धि सी, सुकिया जगत मझार ।
नहि नायक चिद्रूप सो, आनन्दो अविकार ॥४५
न्यारी होय न चेतना, है चेतन को रूप ।
रामरूप सी नहि रमा, रामस्वरूप अनूप ॥४६

कनक कामिनी रागतें, लखी जाय नहिं सोइ।
संयम शील स्वभावतें, ताको दरसन होइ ॥४७
सील ओपमा वहुत है, कहै कहांलौ कोय।
जानें श्री जिनराज जु, शीलशिरोमणि सोय ॥४८
दौलत्ति और न ऋद्धि सी, ऋद्धि न वुद्धि समान।
वुद्धि न केवल सिद्धि सी, इह निश्चय परवान ॥४९

इति शील-उपमा वर्णन

अथ शील स्वरूप निरूपण

कह्यौ दोय विध शीलव्रत, निश्चय अर व्यवहार।
सो धारो उर में सुधी, त्यागौ सकल विकार ॥५०
निश्चय परम समाधितें, खिसवौं नाहिं कदाचि।
लखिवौ आतमभाव को, रहियौ निज में राचि ॥५१
निज परिणति परगट जहां, पर परिणति परिहार।
निश्चय शील-निधान जो, वर्जित सकल विकार ॥५२
पर परिणति जे परिणमें, ते व्यभिचारी जानि।
मानि ब्रह्मचारी तिके, लेहि ब्रह्म पहिचान ॥५३
परम शुद्ध परिणति विषै, मगन रहै धरि ध्यान।
पावें निश्चय शील को, भावें आतमज्ञान ॥५४
निज परिणति निज चेतना, ज्ञान सरूपा होइ।
दरसन रूपा परम जो, चारित्तरूपा सोइ ॥५५
जड़रूपा जगवुद्धि जो, आपापर न लखेह।
पर परिणति सो जानिए, तन-धन मांहि फसेह ॥५६
पर परिणति के मूल ए, राग दोष मद मोह।
काम क्रोध छल लाभ खल, परनिंदा परद्रोह ॥५७
दंभ प्रपंच मिथ्यात मल, पाखंडादि अनंत।
इन करि जीव अनादि के, भव-भव में भटकंत ॥५८
जौ लग मिथ्या परिणती, सठजन के परकास।
तौ लग सम्यक् परिणती, होय न ब्रह्म-विकास ॥५९

जोगीरासा

तजि व्यभिचारी भाव, सवै ही भए ब्रह्मचारी जे।
ते शिवपुर में जाय विरजे, भव्यनि भव तारीजै ॥६०
व्यभिचारी जे पापाचारी, ते भरमें भव-भवमें।
पर परिणति सों रचिया जौलों, तौलों जाय न शिव में ॥६१

जग में जड़ अनुरागे, लागे नाहीं निज में।
कर्म कर्मफल रूप होय कै, परे भंवर भ्रम रज में ॥६२
ज्ञान चेतना लखी न अबलों, तत्त्वस्वरूपा शुद्धा।
जामें कर्म न भर्मकलपना, भाव न एक अशुद्धा ॥६३
मिथ्या परणति त्यागै कोई, सम्यक्दृष्टी होई।
अनुभव रस में भीगै जोंई, शीलवन्त है सोई ॥६४
निश्चय शील वखान्यूं एई, अचल अखण्ड प्रभावा।
परम समाधि मई निजभावा, जहां न एक विभावा ॥६५

छन्द चाल

अब सुनि व्यवहार सुशीला, वारन में करहु न ढीला।
दृढ़ व्रत आखड़ी धरिवी, नारिको संग न करिवी ॥६६
नारी है नरक प्रतोली, नारिन में कुमति अतोली।
ए महा मोह की टोली, सेवें जिनकी मति भोली ॥६७
नारी जग-जन-मन चोरै, नारी भवजल में वोरै।
भव भव दुखदायक जानों, नारी सों प्रीति न ठानों ॥६८
त्यागें नारी को संगा, नहि करें शीलव्रत भंगा।
ते पावें मुक्ति निवासा, कबहु न करें भव-वासा ॥६९
इह मदन महा दुखदाई, याकूं जीतें मुनिराई।
मुनिराय महा बलवन्ता, मनजीत मानजित सन्ता ॥७०
शीलहि सुरपति सिर नावै, शीलहि शिवपुर जति जावै।
साधू हैं शील सरूपा, यह शील सुव्रत्त अनूपा ॥७१
मुनि के कछूहू न विकारा, मन वच तन सर्व प्रकारा।
त्रितवां व्रत चेतन माहीं, नारी को सपरस नाहीं ॥७२
गृहपति के कछुक विकारा, तातें ए अणुव्रत धारा।
परदारा कबहुं न सेवैं, परधन, कबहुं नहि लेवैं ॥७३
जेती जग में परनारी, बेटी बहनी महतारी।
इह भांति गिनै जो भाई, सो श्रावक शुद्ध कहाई ॥७४
निजदारा पर सन्तोषा नहि, काम राग अति पोषा।
विरकत भावै कोउ समये, सेवैं निज नारी कम ये ॥७५
दिनको न करै ए कामा, रात्री कबहुक परिणामा।
मैथुन के समये मवना, नहि राव करै रति रमना ॥७६
परवी सब ही व्रत पालै, व्रत शील धारि अघ टालै।
अष्टान्हिक तीनों धारै, भादव के मास हु सारै ॥७७
ये दिवस धर्म के मूला, इनमें मैथुन अघ थूला।
अवर हु जै व्रत के दिवसा, पालै इन्द्रिनि के न वसा ॥७८

अपने अर तियके व्रत्ता, सबहीं पालै निरवृत्ता।
या विधि जिन नारी सेवै, पर मनमें ऐसें बेवै ॥७९
कब तजि हौं काम-विकारा, इह कर्म महा दुख-भारा।
यामें हिंसा बहु होवै, या कर्म करें शुभ खोवै ॥८०
जैसे नाली तिल भरिये, रंचहु खाली नहिं धरिये।
तातौ कीलौ ता माहै, लोहे को संसै नाहै ॥८१
घालें तिल भस्म जु होई, यह परतछि देखौ कोई।
तैसे ही लिंग करि जीवा, नासें भग माहिं अतीवा ॥८२
तातें यह मैथुन निंद्या, याकों त्यागें जगवंद्या।
धन धन्य भाग जाकौ है, जो मैथुनतें जु बच्यौ है ॥८३
जो बाल ब्रह्मव्रत धारें, आजनम न मैथुन कारें।
तिनके चरणनि की भक्ती, दे भव्य जीवकूं मुक्ती ॥८४
हमहू ऐसे कब होहैं, तजि नारी व्रत करि सोहैं।
या मैथुन में न भलाई, परतछ दीखै अब भाई ॥८५
अपनीहू नारी त्यागै, जब जिनवर के मत लागै।
यह देहहु अपनी नाहीं, चेतन बैठो जा माहीं ॥८६
तौ नारी कैसे अपनी, यह गुरु आज्ञा उर खपनी।
या विधि चितवै मन माहीं, कब घर तजि वनकूं जाहीं ॥८७
जबलों बलवान जु मोहा, तबलों इह मनमथ द्रोहा।
छांड़ै नहिं हमसों पापी, तातें ब्याही त्रिय थापी ॥८८
जबलों बलवान जु होहै, मारै मनमथ अर मोहै।
असमर्था नारी राखे, समरथ आतम-रस चाखें ॥८९
यह भावन नित भावंतो, घर माहिं उदास रहंतो।
जैसें पर-घर पाहुणियो, तैसें ये श्रावक गिणियो ॥९०
वह तौ घर पहुंचौ चाहै, यह शिवपुर कों जो उमाहै।
अति भाव उदासी जाको, निज चेतन में चित ताको ॥९१
छांड़ै सब राग रु दोषा, धारै सामायिक पोषा।
कबहू न रक्त घरमें, ह्वै नगन त्रियासों न रमें ॥९२
मुख आदि विकारा जे हैं, छांड़े नर ज्ञानी ते हैं।
इह त्रिय-सेवन विधि भाखी, बिन पाणिग्रह नहिं राखी ॥९३
श्रावक व्रतधरि सुरपति ह्वै, सुरपति तें चय नरपति ह्वै।
पुनि मुनि ह्वै पावै मुक्ती, इह शील प्रभाव सु जुक्ती ॥९४
नहिं शील सारिखौ कोई, दे सुरपुर शिवपुर होई।
जे बाल ब्रह्मचारी हैं, सम्यग्दर्शन धारी हैं ॥९५
तिनके सम है नहिं दूजा, पावै त्रिभुवन करि पूजा।
जे जीव कुशीले पापा, पावैं भव-भव संतापा ॥९६

व्यभिचारी तुल्य न होई, अपराधी जग में कोई।
ह्वै नरक निगोद निवासा, पापनि का अति दुख भासा ॥९७
जेते जु अनाचारा हैं, व्यभिचार पिछै सारा हैं।
त्यागौ भविजन व्यभिचारा, पाळौ श्रावक आचारा ॥९८

दोहा

मुख्य वारता यह भया, वाल ब्रह्मव्रत लेय।
जो यह व्रत धार न सके, तौ इक व्याह करेय ॥९९
दूजी नारी न जोग्य है, व्रतधारनि को वीर।
भोग समान न रोग है, इह धारै उर वीर ॥२००
जो अभिलाषा वहुत है, विषय-भोग की जाहि।
तौ विवाह औरहु करै, नहिं परदारा चाहि ॥१
परदारा सम पाप नहिं, तीन लोक में और।
जे सेवे परनारि को, लहैं नरक में ठौर ॥२
नरक मांहि वहु काल लों, दुख देवें अधिकाय।
वज्रागनि पुतलीनिसों तिनको अंग तपाय ॥३
जरि जरि तिनकी देह जो, जैसे को तैसो हि।
रहै सागरावधि तहां, दुःख सहंता सोहि ॥४
कहिवे में आवें नहीं, नरकवास के कष्ट।
ते पावें पापी महा, परदारा तें दुष्ट ॥५
नारक के वहु कष्ट लहि, खोटै नर तिर होय।
जन्म-जन्म दुरगति लहैं, दुख देखैं अघ सोय ॥६
अर याही भव में सठा, अपजस दुःख लहेय।
राजदण्ड परचण्ड अति, पावें पर-तिय सेय ॥७

वेसरी छन्द

जग में धन वल्लभ है भाई, धनहूतें जीतव अधिकाई।
जीतवतें लज्जा है वल्लभ, लज्जातें नारी नर दुल्लभ ॥८
जे पापी परदारा सेवें, ते वहुतनि की लज्जा लेवें।
वैर वढ़ै जु वहु सेती वीरा, परदारा सेवें नहिं धीरा ॥९
धन जीतव लज्जा जस माना, सर्व जाय या करि व्रत ज्ञाना।
कुलकों लागै वड़ो कलंका, या अघकों निंदे अकलंका ॥१०
पर-नारी रत पापनि कों, जे दस वेगा उपजें मनसों जे।
चिन्ता अर देखन अभिलाषा, पुनि निसास नाखन भय भाषा ॥११
काम-ज्वर होवै परकासा, उपजै दाह महादुख भासा।
भोजन की रुचि रहै न कोई, वहुरि महामूरछा होई ॥१२

तथा होय सो अति उनमन्ता, अंध महा अविवेक प्रभन्ता ।
जानौं प्राण रहन को संसै, अथवा छूटै प्राण निसंसै ॥१३
कहे वेग ए दश दुखदाई, व्यभचारी के उपजें भाई ।
कौ लग वर्णन कीजै मित्रा, परदारा सेवें न पवित्रा ॥१४
इही पाप है मेरु समाना, और पाप है सरस्यूँ दाना ।
याके तुल्य कुकर्म न कोई, सर्व दोष मूल जु सोई ॥१५
नर ते ही पर-दारा त्यागें, नारी जे पर पुरुष न लागें ।
सर्वोत्तम वह नारि जु भाई, ब्रह्मचर्य्य आजन्म धराई ॥१६
व्याह करै नहिं जो गुणवन्ती, विषय-भाव त्यागैं गुणवन्ती ।
ब्राह्मी सुन्दरि ऋषभ-सुता जे, रहित विकार सुधर्म-रता जे ॥१७
चेटक पुत्री चंदनवाला, ब्रह्मचारिणी व्रत्त विशाला ।
वहुरि अनन्तमती अति शुद्धा, वणिक-सुता व्रत शील प्रवुद्धा ॥१८
इत्यादिक की रीति चितारै, निरमल, निरदूषण व्रत पारै ।
महा सती जाकै न विकारा, विषयनि ऊपरि भाव न डारा ॥१९
आतम तत्त्व लख्यौ निरवेदा, काम कल्पना सवै निषेदा ।
पुरुष लखै सहु सुत अरु भाई; पिता समाना रंच न काई ॥२०
धारै वाल ब्रह्मव्रत शुद्धा, गुरु प्रसाद भई प्रति वुद्धा ।
ऐसी समरथ नाहीं पावै, तो पतिव्रत वृत्त धरावै ॥२१
मात पिता की आज्ञा लेती, एक पुरुष धारै विधि सेती ।
पाणिग्रहण कर सो कुलवन्ती, पतिकी सेव करै गुणवन्ती ॥२२
और पुरुष सहु पिता समाना, कै भाई पुत्रा करि माना ।
मेघेश्वर राजा की राणी, तथा राम की राणी जाणी ॥२३
श्रीपाल भूपति की नारी, इत्यादिक कीरति जु चितारी ।
जग सों विरकत भाव प्रवर्तें, औसर पाय सिताव निवर्तें ॥२४
मैथुन को जाने पशुकर्मा, यह उत्तम नारिन को धर्मा ।
तजि परिवार जु सम्यकवंती, ह्वै आर्या तप संजमवन्ती ॥२५
ज्ञान विवेक विराग प्रभावै, स्त्रीपद छांड़ि स्वर्गपुर आवै ।
सुरग माहिं उतकिष्टा सुर ह्वै, वहुत काल सुख लहि पुनि नर ह्वै ॥२६
धारै महाव्रत निज ध्यावै, कर्म काटि शिवपुर को जावै ।
शिवपुर सिद्धक्षेत्रकूं कहिये, और न दूजी शिवपुर लहिये ॥२७
शिव है नाम सिद्ध भगवन्ता, अष्टकर्म-हर देव अनन्ता ।
भुक्ति मुक्तिदायक इह शीला, या धरवे में ना कर ढीला ॥२८
शील सुधारस पान करै जो, अजरामर पद कोय धरे जो ।
शील विना नारी धिग जन्मा, जन्म-जन्म पावे हि कुजन्मा ॥२९
रानी राव जशोधर केरी, शील विना आपद वहुतेरी ।
लही नरक में तातें त्यागौ, कदै कुशीलपंथ मति लागौ ॥३०

शील समान न धर्म जु होई, नाहि कुशील समो अघ कोई।
जे नर नारि शीलव्रत धारे, ते निश्चय परब्रह्म निहारें ॥३१
त्यागे दशों दोष व्रतवन्ता, ते सुनि एकचित करि संता।
अञ्जन मञ्जन बहु सिंगारा, करना नहीं व्रतिनकों भारा ॥३२
तजिवो तिनको अशन गरिष्ठा, अर तजिवौ संसर्ग सपष्टा।
नरकों नारीकों संसर्गा, नारिन को उचित न नरवर्गा ॥३३
ह्वै संसर्ग थकी जु विकारा, अर तजिवौ तौर्यत्रिक सारा।
तौर्यत्रिक को अर्थ जु भाई गीत नृत्य वाजित्र वजाई ॥३४
मुनि को इनतें कछुहु न कामा, श्रावक के पूजा विश्रामा।
करे जिनेश्वर पद की पूजा, जिन प्रतिमा विन और न दूजा ॥३५
अष्टद्रव्य से पूजा करई, तहाँ गीत वादित्र जु वरई।
नृत्य करै प्रभु जी के आगे, जिनगुन में भविजन मन लागै ॥३६
और न सिंगारादिक गावै, केवल जिनपद सों उर लावै।
नारी-विषयनि को संकलपा, तजिवौ बुध को सर्व विकलपा ॥३७
अंग-उपंग निरखनों नाहीं, जो निरखै तो दोष वराही।
सतकारादिक नारी जनसों, करनों नाहीं मन-वच-तनसो ॥३८
पूरव भोग-विलास न चितवौ, अर आगामी वांछा हरिवौ।
सुपनें हूँ नहि मनमथ कर्मा, ए दश दोष तजै व्रत धर्मा ॥३९
व्रत नहि शील बराबर कोई, जिनशासन की आज्ञा होई।
.... ॥४०

उक्तंच श्री ज्ञानार्णवमध्ये

आद्यं शरीरसंस्कारो द्वितीयं वृष्यसेवनम्।
तौर्यत्रिकं तृतीयं स्यात्संसर्गस्तुर्यमिष्यते ॥१
योपिद्विपसंकल्पं पंचमं परिकीर्तितम्।
तदंगवीक्षणं पष्ठं सत्कारः सप्तमो मतः ॥२
पूर्वानुभूतसंभोगः स्मरणं स्यात्तदष्टमम्।
नवमे भावनी चिन्ता दशमे वस्तिमोक्षणम् ॥३

कवित्त

तिय-थल-वासि प्रेम रुचि निरखन, देखि रीझ भाषत मधु वैन,
पूरव भोग केलिरस चितवन, गुरु व अहार लेत चित चैन।
करि सुचि तन सिंगार वनावत, तिय परजंक मध्य सुख सैन,
मनमथ कथा उदर भरि भोजन, ए नव वाड़ि जानि मत जैन ॥४१

दोहा

अतीचार सुनि पाँच अव, सुनि करि तजि वर वीर।
जव चौथो व्रत शुद्ध ह्वै, इह भाषें मुनि वीर ॥४२

व्याह सगाई पारको, किरिया अव्रत पोष ।
शीलवन्त नर नहिं करै, जिन त्यागे सहु दोष ॥४३
इत्वरिका कुलटा त्रिया, ताकी है द्वै जाति ।
परिग्रहीता एक है, जाके सामिल खाति ॥४४
अपरिग्रहीता दूसरी जाके, स्वामि न कोय ।
ए इत्वरिका द्वै विधा, पर पुरुषा-रत होय ॥४५
जिन सों रहनों दूर अति, तिनकों संग तजेय ।
तिन सों संभाषण नहीं, तवै जनम सुधरेय ॥४६
गमन करै नहिं वा तरफ, विचरै तहाँ न नारि ।
डारि नारि को नेह नर, धरै व्रत्त अघ टारि ॥४७
तजि अनंग क्रीड़ा सवै, क्रीड़ा अघ की एहि ।
मदन मारि मन जीति कर, ब्रह्मचर्य व्रत लेहि ॥४८
निज नारी हूतें सुधी, करै न अधिकी प्रीति ।
भाव तीव्र नहिं काम के, धरै धर्म की रीति ॥४९
कहै अतिक्रम पंच ए, इनमें भला न कोय ।
ए सव ही तजि या थका, शील निर्मला होय ॥५०
नीलो सेठ-सुता शुभा शील व्रत परसाद ।
देवनि करि पूजा लही, दूरि भयो अपवाद ॥५१
शील प्रभावै जय-प्रिया, शुभ सुलोचना नारि ।
लही प्रशंसा सुरनि करि, सम्यग्दर्शन धारि ॥५२
शील-प्रमादै राम की, जनकसुता शुभ भाव ।
पूज्य सुरासुर नरनि करि, भये जगत की नाव ॥५३
सेठ विजय अर सेठनी, विजया शील प्रसाद ।
भई प्रशंसा मुनिन करि, भये रहित परमाद ॥५४
शुक्ल पक्ष अर कृष्ण पक्ष, धारि शील व्रत तेहि ।
तीन लोक पूजित भये, जिन आज्ञा उर लेहि ॥५५
सेठ सुदर्शन आदि वहु, सीझे शील-प्रताप ।
नमस्कार या व्रत्त कों, जो मेटै भव-ताप ॥५६
जे सीझे ते शील करि, और न मारग कोय ।
जनम जरा मरणादि को, नाशक यह व्रत होय ॥५७
धरि कुशील वहु पापिया, वड़े नरक मँझार ।
तिनको को निरणय करै, कहत न आवै पार ॥५८
रावण खोटे भाव धरि, गये अधोगति माँहि ।
धवल सेठ नरकें गयो, यामें संशय नाहिं ॥५९
कोटपाल जमदंड शठ, करि कुशील अति पाप ।
गयो नरक की भूमि में, लहि राजातें ताप ॥६०

वहुरि हुती जमदंड इक, कोटपाल गुणवन्त ।
नीति धर्म परभाव तें, पायौं जस जयवन्त ॥६१
सर्व गुणां हैं शील में, अरु कुशील में दोष ।
नांहि कुशील समान कोउ, और पाप को पोष ॥६२
इन दोउनि के गुण अगुण, कहत न आवै थाह ।
जाने श्री जिनराय जू, केवल रूप अथाह ॥६३
महिमा शील महंत को, कहैं महा गणधार ।
भाषै श्री जिन भारती, रटै साधु भव तार ॥६४
सरवारथसिधि के महा, अहमिन्द्रा परवीन ।
गावें गुण व्रत शील के, जे अनुभव रसलीन ॥६५
कपें कांति इन्द्रादि का, जपें सुजस जोगीन्द्र ।
लौकान्तिक वरणन करें, रटें नरिन्द्र फणीन्द्र ॥६६
चन्द्र सूर सुर असुर खग, महिमा शील करेय ।
सूरि सन्त अध्यापका, मन वच काय धरेय ॥६७
हम से अलपमती कहो, कैसें गुण वरणेह ।
नमों नमों व्रत शील कों, रहैं ऋषि शरणेह ॥६८
दया सत्य अस्तेय अर, शीलै करि परणाम ।
भाषों पंचम व्रत्त जो, परिग्रह त्याग सुनाम ॥६९

इति चतुर्थ व्रत निरूपण ।

इन चारनि विन ना हुवै, परिग्रह के परिहार ।
परिग्रह के परिहार विन, नहिं पावे भव-पार ॥७०
मुनिकों सर्वहि त्यागवौ, अतंर वाहिज-संग ।
धर्म अकिंचन धारिवौं, करिवौ तृष्णा-भंग ॥७१
अपने आतमभाव विनु, जो पररूपा वस्त ।
सो परिग्रह भाषी सुधी, ताको त्याग प्रशस्त ॥७२
सर्व भेद चउवीस हैं, चउदस अर दस भेलि ।
अंतर वाहिज संग ये, दुरगति फलकी वेलि ॥७३
परिग्रह द्वैविध त्यागिये, तव लहिये निज भाव ।
ब्रह्मज्ञान के शत्रु ये, नरक निगोद उपाय ॥७४
अंतरंग परिग्रह तनें, भेद चतुदर्श जान ।
मिथ्यात्वादिक जो सवै, जिन आज्ञा उर आन ॥७५
राग द्वेष मिथ्यात्त अर, चउ कषाय क्रोधादि ।
षट हास्यादिक वेद पुनि, चउदस भेद अनादि ॥७६
राग कहावै प्रीति अरु, द्वेष होइ अप्रीति ।
राग दोष तज भव्य जन, धरै धर्म की रीति ॥७७

जहां तत्त्व श्रद्धा नहीं, सो मिथ्यात कहाय।
जड़ चेतन को ज्ञान नहीं, भर्मरूप दरसाय ॥७८
क्रोध मान चउ लोभ ये, चउ-कषाय वलवन्त।
हतिये ज्ञान सुवानतें, लहिये भाव अनन्त ॥७९
हास्य अरति अरु शोक भय, वहुरि ग्लानि वखान।
तजिये षट हास्यादि का, मोह प्रकृति दुखदानि ॥८०
वेद भेद हैं तीन पुनि, पुरुष नपुंसक नारि।
चेतन तें न्यारै लखौ, जिनवानी उर धारि ॥८१
एक समय इक जीव के, उदय होय इक वेद।
तातें गनिये वेद इक, यह गावें निरवेद ॥८२
संख असंख अनन्त हैं, इनि चउदह के भेद।
अन्तरंग ये संग तजि, करिये कर्म विछेद ॥८३
अन्तर संग तजे विना, होइ न सम्यक् ज्ञान।
विना ज्ञान लोभ न मिटै, इह भाषें भगवान ॥८४
अव सुनि वाहर संग जे, दसधा हैं दुखदाय।
मुनिनें त्यागे सर्वही, दीये दोष उड़ाय ॥८५
क्षेत्र वास्तु चौपद द्विपद, धान्य द्रव्य कुप्यादि।
भाजन आसन सेज ये, दस परकार अनादि ॥८६
तजें संग चउवीस सहु, भजें नाथ चउवीस।
सजें साज शिवलोक कों, सवमें वड़े मुनीस ॥८७
मूर्च्छा ममता सहु तजी, तृष्णा दई उड़ाय।
नगन दिगम्वर भव तिरें, धरें न वहुरी काय ॥८८
श्रावक के ममता अलप, वहु तृष्णाकों त्याग।
राग नहीं पर द्रव्य सों, एक धर्म को राग ॥८९
धरम हेत खरचै दरव, गर्व नाहिं मन माहिं।
सर्व जीवसों मित्रता, दुराचारता नाहिं ॥९०
जीव दया के कारणों, तजो वहुत आरम्भ।
परिग्रह को परिमाण करि, तजौ सकल ही दम्भ ॥९१
लोभ लहरि मेटी जिनौ, धरियो धर्म संतोष।
ते श्रावक निरदोष हैं, नहीं पाप को पोष ॥९२
क्षेत्र आदि दस संग को, कियौ तिने परिमाण।
राख्यौ परिग्रह अलप ही, तिन सम और न जाण ॥९३
कह्यौ परिग्रह दसविधा, वहिरंगा जे वीर।
तिनके भेद सुनूं भया, भाखे मुनिवर धीर ॥९४

चौपाई

क्षेत्र परिग्रह खेत वखान, जहाँ ऊपजै धान्य निधान।
वास्तु कहावैं रहवा तना, मन्दिर हाट नौहरा वना ॥९५
हस्ती घोटक ऊँट रु आदि, गाय वलध महिषी इत्यादि।
होय राखणों जो तिरजंच, चौपद परिग्रह जानि प्रपंच ॥९६
द्विपद परिग्रह दासी दास, पुत्र कलत्रादिक परकास।
धान्य कहावे गेहूँ आदि, जीवन जनको अन्न अनादि ॥९७
धन कनकादिक सवही वात, चिन्तामणि आदिक मणि जात।
चौवा चन्दन अगर सुगन्ध, अतर अगरजा आदि प्रवन्ध ॥९८
तेल फुलेल घृतादिक जेह, वहुरि वस्त्र सव भाँति कहेह।
ये सव कुप्य परिग्रह कहे, संसारी जीवनिने गहे ॥९९
भाजन नाम जु वासन होय, धातु पषाणा काठके कोय।
माटी आदि कहाँ लग कहैं, साधन भाजन ए कहु गहैं ॥३००
आसन वैसनके वहु जान, सिंघासन प्रमुखा परवान।
गद्दी गिलम आदि जेतेक, त्यागौ परिग्रह धारि विवेक ॥१
सज्या नाम सेजको कह्यौ, भूमि-शयन मुनिराजनि गह्यौ।
ए दसधा परिग्रह द्वय रूप, कैइक जड़ कैइक चिद्रूप ॥२
द्विपद चतुष्पद आदि सजीव, रतन धातु वस्त्रादि अजीव।
अपने आतमतें सव भिन्न, परिग्रहतें ह्वै खेद जु खिन्न ॥३
हैं परिग्रह चिन्ताके धाम, इनकों त्याग लहैं शिवठाम।
जिनवर चक्री हलधर धीर, कामदेव आदिक वर वीर ॥४
तजि परिग्रह धारें मुनिरूप, मुनिसम और न धर्म अनूप।
मुनि होवे की शक्ति न होय, श्रावक व्रत धारै नर सोय ॥५
करै परिग्रहको परमाण, त्यागै तृष्णा सोहि सुजाण।
इह परिग्रह अति दुखको मूल, है सुखते अतिही प्रतिकूल ॥६
जैसे वेगारी सिर भार, तैसे यह परिग्रह अधिकार।
जेतौ थोरौ तेतौ चैन, यह आज्ञा गावैं जिन वैन ॥७
तातें अल्पारम्भी होय, अल्प परिग्रह धारे सोय।
ताहूको नित त्यागौ चहै, मन माहीं अति विरकत रहै ॥८
जैसे राहु केतु करि कान्ति, रवि शशिकी ह्वै और हि भाँति।
तैसें परणति होय मलीन, आतमकी परिग्रह करि दीन ॥९
ध्यान न उपजै या करि कवै, याहि तजें पावैं शिव तवैं।
समताको यह वैरी होय, मित्र अधीरपनाको सोय ॥१०
मोह तनों विश्राम निवास, यातें भविजन रहहिं उदास।
नासै सुखकों सुभतें दूर, असुभ भावतें है परिपूरि ॥११

खानि पाप की दुख की रासि, रह्यौं आपदा को पद भासि।
.... ॥
आरति रुद्र प्रकाशइ कंग, धर्म ध्यान का धरइ न संग।
गुण अनन्त धन धार्यो चहै, सो परिग्रह तें दूरहि रहै ॥१२

दोहा

लीला वनि दुर्ध्यान को, वहु आरम्भ सरूप।
आकुलता की निधि महा, संशय रूप विरूप ॥१३
मद का मंत्री काम घर, हेतु शोक को सोई।
कलह तनों क्रीड़ा ग्रह, जनक वैर को होय ॥१४
धन्य घरी वह होयगी, जव तजियेगो संग।
यामें वड़पन नांहि कछु, महादोष को अंग ॥१५
हिंसादिक अपराव का, कारण मूल वखानि।
जनम जनम में जीव को, दुखदाई सो जानि ॥१६
धिग धिग द्विविधा संग को, जो रोके शिव-संग।
चहुँ गति माँहि भ्रमाय करि, करै सदा सुख भंग ॥१७
जो यामें वड़पन गिनै, सो मूरख मति-हीन।
परिग्रहवान समान नहिं, और जगत में दीन ॥१८
धन्य धन्य धरमज्ञ जे, याकूं तुच्छ गिनेय।
माया ममता मूरछा, सर्वारम्भ तजेय ॥१९
यही भावना भाव तो, भविजन रहैं उदास।
मन में मुनिव्रत की लगन, सो श्रावक जिनदास ॥२०
वहुरि विचारै सो सुधी, अगनि धरै गुण शीत।
जो कदापि तौहु न कवै, परिग्रहवान अभीत ॥२१
काल कूट जो अमृता, होइ दैव संयोग।
नहिं तथापि सुख होय ये, इन्द्रिन के रस भोग ॥२२
विषयनि में जे राचिया, ते रुलिहैं भव-माँहिं।
सुख है आतन-ज्ञान में, विषय माँहि सुख नाँहि ॥२३
थिर ह्वै तड़ित प्रकाश जो, तौहु देह थिर नाँहि।
देह नेह करिवो वृथा, यह चितवै मन माँहि ॥२४
इन्द्रजाल जो सत्य ह्वै, दैव जोग परवान।
तौ पनि संसारी जना. नाँहि कदे सुखवान ॥२५
चहुँ गति में नहिं रम्यता, रम्य आतमाराम।
जाके अनुभव तें महा, है पंचमगति धाम ॥२६
इह विचार जाके भयौ, देहहु अपनी नाँहि।
सो कैसे परपंच करि, वढ़ै परिग्रह माँहि ॥२७

सवैया तेईसा

हय गय पायक आदि परिग्रह, पुण्य उदै गृह होय विभौ अति।
पाय विभौ पुनि मोहित होत, सरूप विसारि करें परसौं रति॥
नारहि पोषण काज, रच्यौ वहु आरम्भ वाँधत दुर्गति।
ज्ञानि कहै हमकूं कवहूं मन, राम वहै पुनि देहहु द्यो मति॥२८
नाहि संतोप समान जु आन है, श्रीभगवान प्रधान सुधर्मा।
है सुखरूप अनूप इहै गुण, कारण ज्ञान हरैं सव कर्मा॥
पापनिको यह वाप जुलोभ, करै अतिक्षोभ करै अति मर्मा।
धारि संतोष लहै गुणकाष, तजै सव दोष लहै निज-मर्मा॥२९
रंक सवै जग राव रिषीसुर, जो हि धरै शुभ शील संतोषा।
सो हि लहै निज आतम भेद, करै अघ छेद हरें दुख दोषा॥
श्रावक धन्य तजे सहु अन्य, हुए जु अनन्य गहै गुण कोषा।
काम न मोह न लोभ न लेश, गहै नहि भान दहै रति रोषा॥३०
लोभ समान न आँगुण आन, नहीं चुगली सम पाप अरूपा।
सत्य हि वैन कहै मुखतें सुभ, तो सम व्रत न तथ्य निरूपा॥
पावन चित्त समान न तीरथ, आतम तुल्य न देव अनूपा।
सज्जनता सम और कहा गुण, भूषन और न कीरति रूपा॥३१
ब्रह्म सुज्ञान समान कहा धन, औजस तुल्य न मृत्यु कहाई।
देवनिको गुरु देव दयानिधि, ता सम कोई न है सुखदाई॥
रोष समान न दोप कहैं वुध, मोक्ष समान न आनन्द भाई।
तोप समान न कारण मोक्ष, कहें भगवन्त कृपा उर लाई॥३२
अंग प्रसंग भये वहु संग, तिनौ महि नाहि अभंग जु कोई।
शुद्ध निजातम भाव अखंडित, ता महि चित्त धरै वुध सोई।
वँध-विदारण, दोप-निवारण, लोक-उधारण और न होई।
जा सम कोई न जान महामति, टारइ राग विरोध जु दोई॥३३

दोहा

धन्य-धन्य श्रावक व्रती, जो समकित धर धीर।
तन धन आतम भावतें न्यारे देखै वीर॥३४
तन धनको अनुराग नहि, एक धर्म को राग।
संतोपी समता धरा, करै लोभ को त्याग॥३५
मोह तनी ग्यारह प्रकृति शांत होय जव वीर।
तव धारै श्रावक व्रता, तृष्णा वर्जित धीर॥३६
तीन मिथ्यात कपाय वसु, ये ग्यारह परवान।
पंचम ठानें श्रावका, इनतें रहित सुजान॥३७
गई चौकरी द्वय प्रवल, जै दुरगति दुखदाय।
रह्यो चौकरी द्वय अवै, तिनको नाश उपाय॥३८

चिंतवै मनमें सासती, है जौलग अवसाय।
तौलग तीजी चौकरी उदै धरै रहवाय ॥३९
परिग्रह धारई, जाके अल्पारम्भ। अवसर पाय सिताव ही, त्यागै सर्वारम्भ ॥४०
व्रतके परसाद शिव, ह्वै अथवा अहमिन्द्र। श्रावकवरत प्रभावतें, सुरह्वै तथा सुरिन्द्र ॥४१
ग्रहको परमाण करि, जयकुमार गुणधार। सुर-नर कर पूजित भयौ, लह्यौ भवोदधि पार ॥४२
ग्रहकी तृष्णा करे, लुवधदत्त गुणवीत। गयौ दुरगती दुख लहे ज्यों समश्रु नवनीत ॥४३
जु संख्या संगकी, हरै देहतें नेह। अति न भ्रमावै नर पसू, गिनै आप सम तेह ॥४४
वोझ वहुत नहिं लादिवौ, करनों वहुत न लोभ।
अति संग्रह तजिवौ सदा, करनों वहुत न क्षोभ ॥४५
विस्मय नहि धारिवौं, रहनों निःसन्देह। झूठी माया जगतकी, अचिरज नाहिं गनेह ॥४६
परिग्रह संख्या वरत के, अतीचार हैं पंच।
तिनकूं त्यागें जे व्रती, तिनके पाप न रंच ॥४७
क्षेत्र वास्तु संख्या करी, ताको करै उलंघ।
अतीचार है प्रथम यह, भाषै चउविधि संघ ॥४८
काहु प्रकारै भूलि करि, जोहि उलंघे नेक।
अतीचार ताकों लगै, भाषैं पंडित एम ॥४९
द्विपद चतुष्पद संग को, करि प्रमाण जो वीर।
अभिलाषा अधिकी धरै, सो न लहै भव-तीर ॥५०
अतीचार दूजौ इहै, सुनि तीजो अघरास।
धन धान्यादिक वस्तु को, करि प्रमाण गुरु पास ॥५१
चित संकोचि सकै नहीं, मन दौरावे मूढ़।
सो न लहै व्रत शुद्धता, होय न ध्यानारूढ ॥५२
हम राख्यौ परिग्रह अलप, सरै न एते माहिं।
ऐसे विकलप जो करै, वर्तमान सो नाहिं ॥५३
कुप्य भांड परिग्रह तनौं, करि प्रमाण तन धारि।
चित्त चाहि मेटै नहीं, सो चौथो अतिचार ॥५४
शयन नाम सेज्या तनों, आसन द्वय विधि होय।
थिर आसन चर आसना, करै प्रमाण जु कोय ॥५५
पुनि अधिको अभिलाष धरि, लावै व्रत्त में दोष।
अतीचार सो पांचमो, रोकै मारग मोष ॥५६
थिर आसन सिंहासनों, ताहि आदि वहु जानि।
त्यागै चक्री मंडलो, जिन आज्ञा उर आनि ॥५७
स्यन्दन कहिये रथ प्रगट, शिविका है सुखपाल।
ए थल के चर आसना, त्यागै भव्य भूपाल ॥५८
वहुरि विमानादिक जिके, चर आसन शुभ रूप।
ते आकाश के जानिये, त्यागें खेचर भूप ॥५९

नाव जिहाजादिक गिनें, चर आसन जल माहिं।
चर आसन कों पंडिता, यान कहैं सक नाहिं ॥६०
सकल परिग्रह त्यागिवौ, सो मुनि मारग होय।
किंचित मात्र जु राखिवौ, व्रत श्रावक को सोय ॥६१
व्याधि न तृष्णा सारखी, तृष्णा सी न उपाधि।
नहिं सन्तोष समान है, कारण परम समाधि ॥६२
तृष्णा करि भव वन भ्रमैं, तृष्णा त्यागें सन्त।
गृह परिग्रह वन्धन गिनैं, ते निर्वाण लहंत ॥६३
व्रत पांचमो इह कह्यौ, सम सन्तोष स्वरूप।
धन्य धन्य ते धीर हैं, त्यागें लोभ विरूप ॥६४
जे सीझे ते लोभ हरि, और न मारग होय।
मोह प्रकृति में लोभ सो, और न परवल कोय ॥६५
सर्व गुणनि को शत्रु है, लोभ नाम वलवन्त।
ताहि निवारें व्रत्त ए. करें कर्म को अन्त ॥६६
नमस्कार संतोष कों, जाहि प्रशंसें धीर।
जाकी महिमा अगम है, जा सम और न वोर ॥६७
जानें श्री जिनराय जू, या व्रत के गुण जेह।
और न पूरन ना लखैं, गणधर आदि जिकेह ॥६८
हमसे अलपमती कहां, कैसें कहैं वनाय।
नमों नमों या व्रत्त कों, जो भव पार कराय ॥६९
सन्तोषी जीवानिकों, वार-वार परणाम।
जिन पायौ संतोष धन, सर्व सुखनि को धाम ॥७०
नहिं सन्तोष समान गुरु, धन नहिं या सम और।
निर विकलप नहिं या समा, इह सवको सिरमौर ॥७१

इति पंचम व्रत निरूपण।

दया सत्य असतेय अर, ब्रह्मचर्य सन्तोष।
इन पांचनिकों कर प्रणति, छट्ठम व्रत निरदोष ॥७२
भाषों दिसि परिमाण शुभ, लोभ नासिवे काज।
जोवदयाके कारणों, उर धरि श्री जिनराज ॥७३
द्वादश व्रत में पंच व्रत, सप्त शील परवानि।
सप्त शील में तीन गुण, चउ शिक्षा व्रत जानि ॥७४
जैसे कोट जु नगरके, रक्षा कारण होय।
तैसें व्रत रक्षा निमित, शील सप्त ये जोय ॥७५
वरत शील धारें सुधी, ते पावें सुखराशि।
कहैं व्रत अब शील के, भेद कहां परकाशि ॥७६

पहलो गुणव्रत, गुणमई, छट्ठा व्रत सो जानि।
दसों दिशा परमाण करि, श्रीजिन आज्ञा मानि ॥७७
तीन गुणव्रत में प्रथम, दिग्व्रत कह्यौ जिनेश।
ताहि धरे श्रावक व्रती, त्यागें दोष असेस ॥७८
लोभादिक नाशन निमित, परिग्रहको परिमाण।
कीयौ तैसें ही करौ, दिशि परमाण सुजाण ॥७९

वेसरी छन्द

पूरव आदि दिशा चउ जानों, ईशानादि विदिशि चउ मानों।
अध ऊरध मिलि दस दिशि होई, करै प्रमाण व्रती है सोई ॥८०
शीलवान व्रत धारक भाई, जाके दरशनतें अघ जाई।
या दिशिकों एतोही जाऊँ, आगैं कवहुं न पाँव धराऊँ ॥८१
या विधिसों जु दिशाको नेमा, करै सुवुद्धि धरि व्रतसों प्रेमा।
मरजादा न उलंघै जोई, दिग्व्रत धारक कहिये सोई ॥८२
दसों दिशा की संख्या धारे, जिती दूरलौ गमन विचारै।
आगैं गये लाभ ह्वै भारी, तौ पनि जाय न दिग्व्रत धारी ॥८३
संतोषी समभावी होई, धनकूं गिनै धूरि-सम सोई।
गमनागमन तज्यो वहु जाने, दया धर्म धार्यो उर तानै ॥८४
लगै न हिंसा तिनको अधिकी, त्यागी जिन तृष्णा धन निधिकी।
कारण हेत चालनो परई, तो प्रमाण माफिक पग धरई ॥८५
मेरु डिगै परि पैंड न एका, जाय सुवुद्धी परम विवेका।
व्रत करि नाश करै अघ कर्मा, प्रगटै परम सरावक धर्मा ॥८६
विना प्रतिज्ञा फल नहिं कोई, रहै वात परगट अवलोई।
अतीचार पाँचों तजि वीरा, छट्ठो व्रत धारौ चित धीरा ॥८७
पहली ऊरध व्यतिक्रम होई, ताको त्याग करौ श्रुति जोई।
गिरि परि अथवा मन्दिर ऊपरि, चढनो परई ऊरध भूपरि ॥८८
ऊरध की संख्या ह्वै जेती, ऊँची भूमि चढै वुध तेती।
आगैं चढिवो कौ जो भावा, अतीचार पहलो सु कहावा ॥८९
दूजो अध-व्यतिक्रम तजि मित्रा, जा तजिये व्रत होइ पवित्रा।
वापी कूप खानि अर खाई, नीची भूमि माहिं उतराई ॥९०
तौ परमाण उलंघि न उतरौ, अधिको भू उतर्यां व्रत खतरौ।
अधिक उतरने को जो भावा, अतीचार दूजो सु कहावा ॥९१
तीजो तिर्यग व्यतिक्रम त्यागौ, तव छट्ठे व्रत माहीं लागौ।
अष्ट दिशा जे दिशि विदिशा हैं, तिरछे गमने माहिं गिना हैं ॥९२
वहुरि सुरंगादिक में जावौ, सोऊ तिरछे गमन गिनावौ।
चउदिशि चउविदिशा परमाणा, ताको नाहिं उलंघ वखाणा ॥९३

जो अधिक जावेको भावा, अतीचार तीजो सु कहावा ।
चौथो क्षेत्रवृद्धि है दूपन, ताको त्याग करें व्रत भूपन ॥९४
जेती दूर जानका नेमा सो स्वक्षेत्र भापें श्रुति-प्रेमा ।
जो स्वक्षेत्रतें वाहिर ठौरा, सो परक्षेत्र कहावे औरा ॥९५
जो परक्षेत्र थको इह संधा, राखै सठमति हिरदे अंधा ।
ह्वातें क्रय विक्रय जो राखै, क्षेत्रवृद्धि दूपण गुरु भाखें ॥९६
पंचम अतीचारकों नामा, स्मृत्यंतर भासें श्रीरामा ।
ताको अर्थ सुनों मनलाई, करि परमाण भूलि जो जाई ॥९७
जानत और अजानत मूढ़ा, सो नहि होई व्रत आरूढ़ा ।
ए पाँचूं दोपा जे टारें, ते व्रत निर्मल निश्चल धारें ॥९८
श्री कहिये निजज्ञान विभूती, शुद्ध चेतना निज अनुभूती ।
केवल सत्ता शुद्ध स्वभावा, आतमपरिणति-रहित विभावा ॥९९
ता परिणतिसों रमिया जोई, कर्म-रहित श्रीराम जु होई ।
तिनकी आज्ञारूप जु धर्मा, धारें ते नाशें सव भर्मा ॥८००
अव सुनि व्रत सातमों भाई, जो दूजो गुणव्रत कहाई ।
दिशा तणों कीयौ परिमाणा, तामें देश प्रमाण वखाणा ॥१
देश नगर अर गाँव इत्यादी, अथवा पाटक हाट जु आदी ।
पाटक कहिये अर्ध जु ग्रामा, करै प्रमाण व्रती गुण-धामा ॥२
जिन देशनि में धर्म जु नाहीं, जाय नहीं तिन देशनि माहीं ।
जव वह वहु देशनितें छूटे, तव यासों अति लोभ जु टूटें ॥३
वहु हिंसा आरंभ निवर्त्या, जीवदया मन माँहि प्रवर्त्या ।
दिश अरु देशनिको जु प्रमाणा, लोभ नाशने निमित्त वखाना ॥४
जिनवर मुनिवर अर जिन धामा, जिनप्रतिमा अर तीरथ ठामा ।
यात्राकाज गमन निरदोप, द्वीप अढाई लौं व्रत पोसा ॥५
अतीचार पाँचों तजि वीरा, जाकरि देश व्रत ह्वै धीरा ।
चित पसरन-रोकन के कारन, मन वच तन मरजादा धारन ॥६
कवहूं नाहि उलंघि सु जाई, अर ह्वातैं आसा न धराई ।
प्रेष्य नाम है सेवक को जी, ताहि पठावौ जो अविको जी ॥७
वस्तु भेजिवौ लोभ निमित्ता, प्रेष्य प्रयोग दोप है मित्ता ।
तातें जेतौ देश जु राख्यौ, भृत्य भेजिवौ ह्वां तक भाख्यौ ॥८
आगै वस्तु पठैवो नाहीं, इह वातें धारौ उर माहीं ।
दूजो दोष आनयन त्यागै, तव हि व्रत विधानहि लागै ॥९
परक्षेत्र जु तें वस्तु मँगावै सा गुणव्रतको दूषण लावै ।
जो परमाण वाहिरा ठौरा, सो परक्षेत्र कहैं वृषमौरा ॥१०
तीजो दोष शब्दविनिपाता, ताको भेद सुनों तुम भ्राता ।
जाय नहीं परि शब्द सुनावै, सो निरदूपण व्रत्त न पावै ॥११

चौथा दूपण रूपनिपाता, रूप दिखावण जोगि न वाता।
पंचम पुद्गलक्षेप कहावै, कंकर आदिक जोहि वगावै ॥१२

भावार्थ—दिशा और देशको जावजीव नियम कियो छै, ताहूमें वर्ष छमासी दुमासी मासी पाखी नेम धार्यो छै, तीमें भी निति नेम करै छै। सो निति नेम मरजादामें क्षेत्र निपट थोड़ा राख्यो सो गमन तो मरजादा वाहिर क्षेत्रमें न करै। परि हेलौ मारि सवद सुनावै, अथवा जिह तरफ जिह प्रानीसों प्रयोजन होय तिह तरफ झांकि झरौकादिकमें वैठि करि तिह प्राणीनें आपनो रूप दिखाय प्रयोजन जणावें, अथवा कंकर इत्यादि वगाय पैलाने मतलव जतावै सो अतीचार लगाय व्रतनें मलीन करै।

वेसरी छन्द

अव सुनि वरत आठमो भाई, तीजो गुणव्रत अति सुखदाई।
अनरथदण्ड पापका त्यागा, यह व्रत धारें ते वड़भागा ॥१३
पंच भेद हैं अनरथवोपा, महापापके जानहु पोपा।
पहला दुर्ध्यान जु दुखदाई, ताको भेद सुनों मन लाई ॥१४
पर औगुण गहना उरमाहीं, परलक्ष्मी अभिलाष धराहीं।
परनारी अवलोकन इच्छा, इन दोपनितें सुधी अनिच्छा ॥१५
कलह करावन करन जु चाहै, वहुरि अहेरा करन उमाहै।
हारि जीति चितवै काहूका, करै नहीं भक्ति जु साहूकी ॥१६
चौर्यादिक चितवे मनमाहीं, सो दुरगति पावै शक नाहीं।
दूजी पापतनों उपदेशा, सो अनरथ तजि भजौ जिनेशा ॥१७
कृपि पशु धन्धा वणिज इत्यादी, पुरुप नारि संजोग करा दी।
मंत्र यंत्र तन्त्रादिक सर्वा, तजौ पापकर वचन सगर्वा ॥१८
सिंगारादिक लिखन लिखावन, राज-काज उपदेश वतावन।
सिलपि करम आदिक उपदेशा, तजो पाप कारिज आदेशा ॥१९
तजहू अनरथ विफला चर्या, सो त्यागी श्री गुरुने वर्ज्या।
भूमि-खनन अरु पानी ढारन, अगनि-प्रजालन पवन-विलोरन ॥२०
वनसपती छेदन जो करनों, सो विफला चर्याकों धरनों।
हरित तृणांकुर दल फल फूला, इनको छेदन अघको मूला ॥२१
अव सुनि चौथी अनरथदण्डा, जा करि पावौ कुगति प्रचण्डा।
हिंसादान नाम है जाको, त्याग करो तुम वुधजन ताको ॥२२
दयादान करिवा जु निरन्तर, इह वार्ता धारौ उर अन्तर।
छुरी कटारी खडग रु भाला, जूती आदिक देहि न लाला ॥२३
विप नहिं देवौ अगनि न देनी, हल फाल्यादिक दे नहिं जैनी।
धनुप वान नहि देनों काकों, जो दे अघ लागै अति ताकों ॥२४
हिंसाकारक जेती वस्तु, सो देवौ तो नाहिं प्रसस्तू।
वध वन्धन छेदन उपकरणा, तिनको दान दयाको हरणा ॥२५

पापवस्तु मांगी नहिं देवें, जो देवे सो शुभ नहिं लेवे।
जामें जीवनिको उपकारी, सो देवौ सबकौ हितकारी ॥२६
अन्न वस्त्र जल औषध आदी, देवौ श्रुतमें कह्यौ अनादी।
दान समान न आन जु कोई, दयादान सबके सिर होई ॥२७
मंजारादिक दुष्ट सुभावा, मांस अहारी मलिन कुभावा।
तिनको पालन कबहु न करनों, जीवनिकी हिंसातें डरनों ॥२८
नखिया पंखिया हिंसक जेही, धर्मवन्त पालै नहिं तेही।
आयुधको व्यापार न कोई, जाकरि जीवनिको वध होई ॥२९
सीसा लौह लाख साबुन ए, वनिज जोग नहिं अघकारन ए।
जेती वस्तु सदोष बताई, तिनको वनिज त्यागवौ भाई ॥३०
खान पान मिष्टादि रसादिक, लवण हींग घृत तेल इत्यादिक।
दल फल तृण पहुपादिक कंदा, मधु मादिक विणिजे मतिमन्दा ॥३१
अतर फुलेल सुगन्ध समस्ता, इनको विणज न होइ प्रशस्ता।
तथा अजोग्य मोम हरतारें, हिंसाकारन उद्यम टारें ॥३२
बध बन्धनके कारिज जेते, त्यागहु पाप विणज तुम तेते।
पशु पंखी नर नारी भाई, इनके विणज महा दुखदाई ॥३३
काष्ठादिकको विणज न करै, धर्म अहिंसा उरमें धरै।
ए सब कुविणज छांडै जोई, धरम सरावक धारै सोई ॥३४
मूलगुणनिमें निंदै एई, अष्टम व्रतमें निंदे तेई।
बार-बार यह विणज जु निंद्या, इनकूं त्यागें ते नर वंद्या ॥३५
सुवरण रूपा रतन प्रसस्ता, रूई कपरा आदि सुवस्ता।
विणज करै तो ए करि मित्रा, सबै तजौ अति ही अपवित्रा ॥३६
सुनो पांचवों और अनर्था, जे शठ सुनहिं मिथ्यामत अर्था।
इह कुसूत्र सुणवौ अब मोटा, और पाप सब यातें छोटा ॥३७
पाप सकल उपजें या सेता, उपजै कुबुधि जगतमें तेती।
भंडिम बात सुनों मति भाई, वशीकरण आदिक दुखदाई ॥३८
वशीकरण मनको करि संता, मन जीत्यौ है ज्ञान अनन्ता।
कामकथा सुनिवौ नहिं कबहू, भूलें धनें चेत परि अबहू ॥३९
परनिंदा सुनियां अति पापा, निंदक लहै नरक सन्तापा।
कबहुं न करिवौ राग अलापा, दोष त्यागिवौ होय निपापा ॥४०
विकथा करिवो जोगि न वीरा, धर्मकथा सुनिवौ शुभ धीरा।
आलवाल बकिवौ नहिं जोग्या, गालि काढिवौ महा अजोग्या ॥४१
विना जैनवानी सुखदानी, और चित्त धरिवौ नहिं प्रानी।
केवलिश्रुत केवलिकी आणा, ताकों लागै परम सुजाणा ॥४२
ते पावे निर्वाण मुनीशा, अजरा होवें जोगीशा।
सीख श्रवण रचना कुकथाको, नहीं करौ जु कदापि वृथाकौ ॥४३

जीवदयामय जिनवर-पन्था, धारै श्रावक अर निरग्रन्था।
काम क्रोध मद छल लोभादी, टारैं जैनी जन रागादी ॥४४
आगम अध्यातम जिन वानी, जाहि निरूपें केवलज्ञानी।
ताकी श्रद्धा दृढ़ धरि धीरा, करणगोचरी कर वर वीरा ॥४५
जाकरि छूटै सर्व अनर्था, लहिये केवल आतम अर्था।
धर्म धारणा धारि अखण्डा, तजौ सर्व ही अनरथदण्डा ॥४६
इन पंचनिके भेद अनेका, त्यागौ सुबुधी धारि विवेका।
वड़ो अनर्थंदण्ड है जूवो, यातें सर्व पाप महिं डूवौ ॥४७
या सम और न अनरथ कोई, सकल वरतको नाशक होई।
द्यूत कर्म के विसन न लागै, तव सव पाप पन्थतें भागै ॥४८
द्यूत कर्ममें माहि वड़ाई, जाकरि वूड़े भवमें भाई।
अनरथ तजिवो अष्टम व्रत्ता, तीजो गुणव्रत्त पाप निवृत्ता ॥४९
ताके अतीचार तजि पंचा, तिन तजियां अघ रहे न रंचा।
पहलो अतीचार कन्दर्पा, ताको भेद सुनों तजि दर्पा ॥५०
कामोद्दीपक कुकथा जोई, ताहि तजै वुधजन है सोई।
कौतकुच्य है दोष द्वितीया, ताको त्याग व्रतिनिनें कीया ॥५१
वदन मोरिवौ वांको करिवौ, भौंह नचैवो मच्छर धरिवौ।
नयनादिकको जो हि चलावौ, विषयादिकमें मन भटकावौ ॥५२
इत्यादिक जे भंडिम वातें, तजौ व्रती जे सुव्रत घातें।
कौतकुच्यको अर्थ वखानो, पुनि सुनि तीजा दोष प्रवानों ॥५३
भोगानर्थक है अति पापा, जाकरि पइये दुर्गति तापा।
ताकों सदा सर्वदा त्यागौ, श्री जिनवरके मारग लागौ ॥५४
वहुत मोल दे भोगुपभोगा, सेवै सो पावे दुख रोगा।
भोगुपभोग-थकी यह प्रीती, सो जानों अधिकी विपरीती ॥५५
वहुरि भूखतें अधिकों भोजन, जल पीवौ जो विनहि प्रयोजन।
शक्ति नहीं अह नारी सेवौ, करि उपाय मैथुन उपजैवौ ॥५६
वृथा फूल फल पानादिक जे, वाधा करै लहैं शठ अघ जे।
इत्यादिक जे भोगै अर्था, जो सेवौं सो लहै अनर्था ॥५७
है मौखर्य चतुर्था दोषा, ताहि तजै श्रावक व्रत-पोषा।
जो वाचालपनाको भावा, सो मौखर्य कहैं मुनिरावा ॥५८
विना विचार्यो अधिको वकिवौ, झूठे वाग्-जालमें छकिवौ।
असमीक्षित अधिकरण जु वीरा, अतीचार पंचम तजि धीरा ॥५९
विन देख्यो विन पूछ्यो कोई, घट्टी मूसल उखली जोई।
कछु भी उपकरणा विन देख्या, विन पूछ्यां गृहिवौ न असेखा ॥६०
तव हिंसा टरिहै परवीना, हिंसा-तुल्य अनर्थ न लीना।
ए सव अष्टम व्रत के दोषा, करै जु पापी व्रतकों सोखा ॥६१

इन तजिसी व्रत निर्मल होई, तातें तजै वन्य हैं सोई।
गुणव्रत काहेतें जु कहाये, ताको अर्थ सुनों मनलाये ॥६२
पंच अणुव्रतकों गुणकारी, तातें गुणव्रत नाम जु धारी।
जैसें नगर-तनें ह्वै कोटा, तैसें व्रत-रक्षक ए मोटा ॥६३
क्षेत्रनि होय वाड़ि जो जैसे, पंचनिके ए तीनूं तैसें।
अव सुनि चउ शिक्षाव्रत मित्रा, जिन करि होवें अष्ट पवित्रा ॥६४
अष्टनिकों शिक्षा-दायक ए, ज्ञानमूल तप व्रत नायक ए।
नवमो व्रत पहिलो शिक्षाव्रत, चित्त धीर धर धारहु अणुव्रत ॥६५
सामायिक है नाम जु ताको, धारन करत सुधीजन याका।
सामायिक शिवदायक होई, या सम नांहि क्रिया निधि कोई ॥६६

दोहा

प्रथम हि सातों शुद्धता, भासों श्रुत अनुसार।
जिन करि सामायिक विमल, होय महा अविकार ॥६७
क्षेत्र काल आसन विनय, मन वच काय गनेहु।
सामायिककी शुद्धता, सात चित्त धरि लेहु ॥६८
जहां शव्द कलकल नहीं, वहु जनको न मिलाप।
दंसादिक प्राणी नहीं, ता क्षेत्रे करि जाप ॥६९
क्षेत्र-शुद्धता इह कही, अव सुनि काल-विशुद्धि।
प्रात दुपहरां सांझकों, करै सदा सद्‌वुद्धि ॥७०
षट षट घटिका जो करैं, सो उतकृष्टी रीति।
चउ चउ घटिका मध्य है, करै शुद्धि धरि प्रीति ॥७१
द्वै द्वै घटिका जघनि है, जेती थिरता होइ।
तेती वेला योग्य है, या सम और न होइ ॥७२
धरै सुधी एकाग्रता, मन लावै जिन-मांहि।
यहै शुद्धता कालको, समय उलंघै नांहि ॥७३
तीजी आसन-शुद्धता, ताको सुनहु विचार।
पल्यंकासन धारिकै, ध्यावै त्रिभुवन सारि ॥७४
अथवा कायोत्सर्ग करि, सामायिक करत्तव्य।
तजि इंद्रिय-व्यापार सहु, ह्वै निश्चल जन भव्य ॥७५
विनय-शुद्धता है भया, चौथी जिनश्रुति मांहि।
जिनवचनें एकाग्रता, और विकल्पा नांहि ॥७६
हाथ जोड़ि आधीन ह्वै, शिर नवाय दे ढोक।
तन मन करि दासा भयौ, सुमरै प्रभु तजि शोक ॥७७
विनय समान न धर्म कोउ, सामायिकको मूल।
अव सुन मनकी शुद्धता, ह्वै व्रतसों अनुकूल ॥७८

मन लावै जिन-रूपसों, अथवा जिन-पद माहिं।
सो मन-शुद्धि जु पंचमो, यामें संशय नाहिं ॥७९
छट्ठी वचन-विशुद्धता, विन सामायिक और।
वचन कदापि न वोलिये, यह भाषें जगमौर ॥८०
काय-शुद्धता सातमी, ताको सुनहु विचार।
काय-कुचेष्टा नहिं करै, हस्त-पदादिक सार ॥८१
क्षेत्र-प्रमाण कियौ जितौ, तजे पापके जोग।
मुनि सम निश्चल होयकै, करै जाप भविलोक ॥८२
राग द्वेष के त्यागतें, समता सव परि होइ।
ममताको परिहार जो, सामायिक है सोइ ॥८३
सामायिक अहनिशि करें, ते पावें भव-पार।
सामायिक सम दूसरो, और न जगमें सार ॥८४
राति दिवस करनों उचित, वहु थिरता नहिं होय।
तौहु त्रिकाल न टारिवौ, यह धारैं बुध सोय ॥८५
जो सामायिकके समय, थिरता गहै सुजान।
अणुव्रत धारै सो सुधी, तौ पनि साधु समान ॥८६

छन्द

सामायिक सो नहिं मित्रा, दूजो व्रत सोई पवित्रा।
गृहपतिकों जतिपति तुल्या, करई इह व्रत जु अतुल्या ॥८७
तसु अतीचार तजि पंचा, जव होइ सामायिक संचा।
मन वच तन दुःप्राणिधाना, तिनको सुनि भेद वखाना ॥८८
जो पाप काज चिंतवना, सो मनको दूषण गिनना।
पुनि पाप वचनको कहिवौ, सो वचन व्यतिक्रम लहिवौ ॥८९
सामायिक समये भाई, जो कर चरणादि चलाई।
सो तनको दोष वतायो, सतगुरु ने ज्ञान दिखायो ॥९०
चौथो जु अनादर नामा, है अतीचार अघ-धामा।
आदर नहिं सामायिकको, निश्चय नहिं जिन-नायकको ॥९१
समरण अनुपस्थाना है, इह पंचम दोष गिना है।
ताको सुनि अर्थ विचारा, सुमरणमें भूलि प्रचारा ॥९२
नहिं पूरो पाठ पढै जो, परिपूरण नाहिं जपै जो।
कछुको कछु वोलै वाल, सो सामायिक नहिं काल ॥९३
ए पंच अतीचारा हैं, सामायिक में टारा हैं।
समता सव जीवन सेती, संयम शुभ भावनि लेती ॥९४
आरति अरु रोद्र जु त्यागा, सो सामायिक वड़भागा।
सामायिक धारौं भाई, जाकरि भव-पार लहाई ॥९५

वेसरी छन्द

क्षमा करौ हमसों सव जीवा, सवसों हमरी क्षमा सदीवा।
सर्व भूत हैं मित्र हमारे, वैर-भाव सवहीसों टारे ॥९६
सदा अकेलो मैं अविनाशी, ज्ञान-सुदर्शनरूप प्रकाशी।
और सकल हैं जो परभावा, ते सव मोतें भिन्न लखावा ॥९७
शुद्ध वुद्ध अविरुद्ध अखंडा, गुण अनन्तरूपी परचंडा।
कर्मवन्धतें रुलै अनादि, भटको भव-वन माहि जु वादि ॥९८
जव देखै अपनों निजरूपा, तव होवो निर्वाण-सरूपा।
या संसार असार मंझारे, एक न सुखकी ठौर करारे ॥९९
यहै भावना नित भावंतो, लहै आपनों भाव अनंतो।
अव सूनि पोसहकी विधि भाई, जो दसमो व्रत है सुखदाई ॥९००
दूजा शिक्षाव्रत अति उत्तम, याहि धरें तेई जु नरोत्तम।
न्हावन लेपन भूपन नारी,-संगति गंध धूप नहि कारी ॥१
दीपादिक उद्योत न होई, जानहु पोसहकी विधि सोई।
एक मासमें चउ उपवासा, द्वै अष्टामि द्वै चउदसि भासा ॥२
षोड़श पहर धारनो पोसा, विधि पर्वके निर्मल निर्दोषा।
सामायिककी सो जु अवस्था, षोडश पहर धारनी स्वस्था ॥३
पोसह करि निश्चल सामायिक, होवै यह भासे जगनायक।
पोसह सामायिकको जोई, पोसह नाम कहावै सोई ॥४
जे शठ चउ उपवास न धारें, ते पशु-तुल्य मनुष-भव हारें।
वहुत करै तो वहुत भला है, पोसा तुल्य न और कला है ॥५
चउ टारै चउगतिके माहीं, भरमें यामें संशय नाहीं।
द्वै उपवासा पखवारेमें, इह आज्ञा जिनमत भारेमें ॥६
व्रतकी रीति सुनों मन लाये, जाकरि चेतन तत्त्व लखाये।
सप्तमि तेरसि धारन धारै, करि जिनपूजा पातक टारै ॥७
एकभुक्ति करि दो पहरातें, तजि आरम्भ रहै एकांते।
नहि ममता देहादिक सेती, धरि समता वहु गुणहि समेती ॥८
चउ अहार चउ विकथा टारै, चउ कषाय तजि समता धारै।
धरमो ध्यानारूढमती सो, जगत उदास शुद्धवरती सो ॥९
स्त्री पशु पंढ वालकी संगति, तजि करि उरसें धारै सन्मति।
जिनमन्दिर अथवा वन उपवन, तथा मसानभूमिमें इक तन ॥१०
अथवा और ठौर एकान्ता, भजै एक चिद्रूप महंता।
सर्व पाप जोगनितें न्यारा, सर्व भोग तजि पोसह धारा ॥११
मन वच काय गुप्ति धरि ज्ञानी, परमातम सुमरे निरमानो।
या विधि धारण दिन करि पूरा, संध्या करै साँझकी सूरा ॥१२

सुचि संथारे रात्रि गुमावै, निद्राको लवलेश न आवै।
कै अपनों निजरूप चितारै, कै जिनवर चरणा चित धारै ॥१३
कै जिनविम्ब निरखई मनमें, भूल न ममता धरई तनमें।
अथवा ओंकार अपारा, जपै निरन्तर धीरज धारा ॥१४
नमोकार ध्यावै वर मित्रा, भयो भर्मतें रहित स्वतन्त्रा।
जग-विरक्त जिनमत आसक्तो, सकल-मित्र जिनपति अनुरक्तो ॥१५
कर्म शुभाशुभको जु विपाका ताहि विचारै नाथ क्षमाका।
निजकों जानै सवतें भिन्ना, गुण-गुणिकों मानै जु अभिन्ना ॥१६
इम चितवनतें परम सुखी जो, भववासिन सो नाहिं दुखी जो।
पंच परमपदको अति दासा, इन्द्रादिक पदतें हु उदासा ॥१७
रात्रि धारनाकी या विधिसों, पूरी करै भयो व्रतनिधिसों।
पुनि प्रभात संध्या करि वीरा, दिन उपवास ध्यान धरि धीरा ॥१८
पूरो करै धर्मसों जोई, संध्या करै सांझकों सोई।
निशि उपवासतणी व्रतधारी, पूरी करै ध्यानसों सारी ॥१९
करि प्रभात सामायिक सुवुधी, जाके घटमें रंच न कुवुधी,
पारण दिवस करै जिनपूजा, प्रासुक द्रव्य और नहिं दूजा ॥२०
अष्ट द्रव्य ले प्रासुक भाई, श्री जिनवरकी पूज रचाई।
पात्र-दान करि दो पहरां जे, करै पारणूं आप घरां जे ॥२१
ता दिन हू यह रीति वताई, ठौर अहार अल्प जल पाई।
धारन पारन अर उपवासा, तीन दिवसलों वरत निवासा ॥२२
भूमि-शयन शीलव्रत धारै, मन वच तन करि तजै विकारै।
इह उतकृष्टी पोसह विधि है, या पोसह सम और न निधि है ॥२३
मध्य जु पोसह वारह पहरा, जघनि आठ पहरा गुण गहरा।
अतीचार याके तजि पंचा, जाकरि छूटै सर्व प्रपंचा ॥२४
विन देखी विन पूंछे वस्तू, ताको ग्रहिवौ नाहिं प्रशस्तू।
ग्रहिवौ अतीचार पहलो है, ताको त्यागसु अति हि भलो है ॥२५
विन देखे विन पूंछे भाई, संथारे नहिं शयन कराई।
अतीचार छूटै तव दूजो, इह आज्ञा धरि जिनवर पूजो ॥२६
विन देखो विन पूंछो जागा, मल मूत्रादि न कर वड़भागा।
करिवौ अतीचार है तीजो, सर्व पाप तजि पोसह लीजो ॥२७
पर्व दिनाको भूलन चौथो, अतीचार यह गुणतें चौथो।
वहुरि अनादर पंचम दोषा पोसहको नहिं आदर पोषा ॥२८
ये पाँचो तजियाँ ह्वै पोषा, निरमल निश्चल अति निरदोषा।
सामायिक पोषह जयवन्ता, जिनकर पइये श्रीभगवन्ता ॥२९
मुनि होनेको एहि अभ्यासा, इन सम और न कोइ अध्यासा।
भुक्ति मुक्ति दायक ये व्रत्ता, धन्य धन्य जे करहिं प्रवृत्ता ॥३०

अब सुनि व्रत ग्यारमों मित्रा, तीजो शिक्षाव्रत पवित्रा।
जे भोगोपभोग हैं जगके, ते सहु बटमारे जिनमगके ॥३१
त्याग राग हैं सकल विनासी, जो शठ इनको होय विलासी।
सो रुलिहै भवसागर माहीं, यामें कछु संदेहा नाहीं ॥३२
एक अनंतो नित्य निजातम, रहित भोग उपभोग महातम।
भोजन तांबूलादिक भोगा, वनिता वस्त्र आदि उपभोगा ३३
एक बार भोगनमें आवै, ते सहु भोगा नाम कहावै।
बार बार जे भोगे जाई, ते उपभोगा जानहु भाई ॥३४
भोगुपभोग तनों यह अर्था, इन सम और न कोइ अनर्था।
भोगुपभोग तनों परमाणा, सो तीजो शिक्षाव्रत जाणा ॥३५
छता भोग त्यागें बड़भागा, तिनके इन्द्राद्रिक पद लागा।
अछताहू न तजें जे मूढ़ा, ते नहि होय व्रत आरूढ़ा ॥३६
करि प्रमाण आजन्म इनूं का, बहुरि नित्य नियमादि तिनूं का।
गृहपतिके थावरको हिंसा, इन करि ह्वै पुनि तज्या अहिंसा ॥३७
त्याग बराबर धर्म न कोई, हिंसाको नाशक यह होई।
अंग विषें नहिं जिनके रंगा, तिनके कैसे होय अनंगा ॥३८
मुख्य बारता त्याग जु भाई, त्याग समान न और बड़ाई।
त्याग बनै नहिं तोहु प्रमाणा, तामें इह आज्ञा परवाणा ॥३९
भोग अजुक्त न करनें कोई, तजने मन वच तन करि सोई।
जुक्त भोगको करि परिमाणा, ताहूमें नित नियम वखाणा ॥४०
नियम करौ जु घरी हि घरीको, त्याग करौ सवही जु हरीको।
जे अनंतकाया दुखदाया, ते साधारण त्याग कराया ॥४१
पत्र जाति अर कन्द समूला, तजनें फूलजाति अघ थूला।
तजनें मद्य मांस नवनीता, सहत त्यागिवौ कहैं अजीता ॥४२
तजनें कांजी आदि सवैही, अत्थाणा संधाण तजैही।
तजनें परदारादिक पापा, तजिवौ परधन पर संतापा ॥४३
इत्यादिक जे वस्तु विरुद्धा, तिनकों त्यागै सो प्रतिवुद्धा।
सवही तजिवो महा अशुद्धा, अर जे भोगा हैं अविरुद्धा ॥४४
भोग भावमें नाहिं भलाई, भोग त्यागि हूजै शिवराई।
अपने गुण पर-जाय स्वरूपा, तिनमें राचै रहित विरूपा ॥४५
वस्त्राभरण व्याहिता नारी, खान पान निरदूषण कारी।
इत्यादिक जे अविरुध भोगा, तिनहूको जाने ए रोगा ॥४६
जो न सर्वथा तजिया जाई तौ परमाण करौ वहु भाई।
सर्व त्यागवो कहें विवेकी, गृहपति के कछु इक अविवेकी ॥४७
तौ लगि भोगुपभोगहि अल्पा, विधिरूपा धारै अविकल्पा।
मुनि के खान-पान इकवारा, सोहू दोष छियालिस टारा ॥४८

और न एको है जु विकारा, तातैं महाव्रती अणगारा।
तजै भोग-उपभोग सवैही, मुनिवरका शुभ विरद फवैही ॥४९
शक्ति प्रमाण गृही हू त्यागैं, त्याग विना व्रतमें नहिं लागै।
राति दिवसके नेम विचारै, यम-नियमादि धरै अघ टारै ॥५०
यम कहिये आजन्म जु त्यागा नियम नाम मरजादा लागा।
यम नियमादि विना नर देही, पसुहूतें मूरख गनि एही ॥५१
खान पान दिनहीको करनों, रात्रि चतुर्विध हार हि तजनों।
नारी सेवे रैनि विषें ही, दिनमें मैथुन नाहिं फवै ही ॥५२
निसि ही नितप्रति करनों नाहीं, त्याग विराग विवेक धराहीं।
नियम माहिं करनों नित नेमा, सीम माहिं सीमाको प्रेमा ॥५३
करि प्रमाण भोगनिको भाई, इन्द्रिनको नहिं प्रवल कराई।
जैसे फणिकूं दूध जु प्यावौ, गुणकारी नहिं विष उपजावौ ॥५४
जो तजि भोग भाव अधिकाई, अलप भोग सन्तोष धराई।
सो वहुती हिंसातें छूट्यौ, मोहवटें नहिं जाय जु लूट्यौ ॥५५
दया भाव उपजौ घट ताके, भोगभावकी प्रीति न जाके।
भोगुपभोग पापके मूला, इनकूं सेवें ते भ्रम मूला ॥५६

दोहा

हिंसाके कारण कहे, सर्व भोग उपभोग।
इनको त्याग करै सुधी, दयावन्त भवि लोग ॥५७
सो श्रावक मुनि सारिखा, भोग अरुचि परणाम।
समता धरि सव जीव परि, जिनके क्रोध न काम ॥५८
भोगुपभोग प्रमाण सम, नहीं दूसरो और।
तृष्णाको क्षयकार जो, है व्रत्तनि सिरमौर ॥५९
अतीचार या व्रत्तको, तजो पंच दुखदाय।
तिन तजियां व्रत्त विमल ह्वै, लहिये श्री जिनराय ॥६०
नियम कियौ जु सचित्तको, भूलिर करै अहार।
सो पहलो दूषण भयो, तजि हूजे अविकार ॥६१
प्रासुक वस्तु सचित्त सों, मिश्रित कवहूँ होय।
उष्ण जले जु सीतल उदक, मिल्यो न लेव होय ॥६२
गृहें दोष दूजो लगे, अव सुनि तीजो दोष।
जो सचित्त सम्वन्ध ह्वै, तजो पापको पोष ॥६३
पातल दूनां आदि जे, वस्तु सचित्त अनेक।
तिनसों ढक्यौ अहार जो, जीमें सो अविवेक ॥६४
सुनि चौथो दूषण सुधी, नाम जु अभिषव जास।
याको अर्थ अयोग्य है, ते न भखै जिनदास ॥६५

अथवा काम-उद्दीपका, भोजन अति हि अजोगि।
ते कवहूँ करनें नहीं, वरजें देव अरोगि ॥६६
वहुरि तजौ वुव पंचमों, अतीचार अघरूप।
दुःपक्वो आहार जो, अव्रतको जु स्वरूप ॥६७
अति दुर्जर आहार जो, वस्तु गरिष्ठ सु होय।
नहीं योग्य जिनवर कहें, तजें धन्य हैं सोय ॥ ६८
कछु पक्यो कछु अपक ही, दुखसों पचै जु कोय।
सो नहि लेवो व्रतनिकों, यह जिन आज्ञा होय ॥६९
अतीचार पाँचौ तज्या, व्रत निर्मल ह्वै वीर।
निर्मल व्रत प्रभावतैं, लहै ज्ञान गम्भीर ॥७०

चाल छन्द

वरि वरत वारमो मित्रा, जो अतिथि-विभाग पवित्रा।
इह चौथो शिक्षाव्रत्ता, जे याकों करें प्रवृत्ता ॥७१
ते पावें सुर शिव भूती, वा भोगभूमि परसूती।
सुनि या व्रतको विधि भाई, जा विधि जिनसूत्र वताई ॥७२
त्रिविधा हि सुपात्रा जगमें, जगको नौका जिन-मगमें।
महाव्रत अणुव्रत समदृष्टी, जिनके घट अमृतवृष्टि ॥७३
तिनकों नवधा भक्ती तें, श्रद्धादि गुणनि जुक्ती तैं।
देवौ चउदान सदा जो, सो है व्रत द्वादशमो जो ॥७४
चउ दान सवोंमें सारा, इनसे नहि दान अपारा।
भोजन औषध अरु ज्ञाना, पुनि दान अभय परवाना ॥७५
भोजन-दानहि धन पावै, औषधि करि रोग न आवै।
श्रुत-दान बोध जु लहाई, इह आज्ञा श्रीजिन गाई ॥७६
अभया है अभय प्रदाता, भाषें प्रभु केवल ज्ञाता।
इक भोजन दानें माहीं, चउ दान सधैं शक नाहीं ॥७७
नहि भूख समान न व्याधी, भव माहीं वड़ी उपाधी।
तातें भोजन सों अन्या, नहि दूजी औषध धन्या ॥७८
पुनि भोजन-वल करि साधू, करई जिन-सूत्र अराधू।
भोजनतें प्राण अधारा, भोजनतें थिरता धारा ॥७९
तातें चउ दान सधे हैं, दानें करि पुण्य बंधे हैं।
सो सहु वांछा तजि ज्ञानी, होवै दानी गुण-खानी ॥८०
इह भव पर भवको भोगा, चाहैं नहि जानहि रोगा।
दे भक्ती करि सुपात्रनिकों, निजरूप ज्ञानमात्रनिकों ॥८१
तिह रतनत्रयमें संघो, थाप्यौ चउविधिको नर संघो।
सो पावै भुक्ति विमुक्ती, इह केवलि भाषित उक्ती ॥८२

नहिं दान समान जु कोई, सब व्रतको मूल जु कोई ।
यामें भविजन चित्त धारो, संसारपार जो चाहो ॥८३
जो भाषे त्रिविधा पात्रा, तिनिमें मुनि उत्तम पात्रा ।
हैं मध्यम पात्र अणुव्रती, समदृष्टो जघन्य अव्रती ॥८४
इन तीननिके नव भेदा, भाषें गुरु पाप-उछेदा ।
उत्तममें तीन प्रकारा, उतकृष्ट मध्य लघु धारा ॥८५
उत्तम तीर्थंकर साधू, मध्य सु गणधर आराधू ।
तिनतें लघु मुनिवर सर्वे, जे तप व्रतसूं नहिं गर्वे ॥८६
ए त्रिविध उत्तमा पात्रा, तप संजम शील सुमात्रा ।
तिनकी करि भक्ति सु वीरा, उतरै जा करि भव-नीरा ॥८७
मुनिवर होवै निरग्रंथा, चालै जिनवरके पंथा ।
जे विरकत्त भव-भोगनितें, राग न द्वेष न लोगनितें ॥८८
विश्राम आपमें पायौ, काहूमें चित्त न लायौ ।
रहनों नहिं एकै ठौरा, करनों नहिं कारिज औरा ॥८९
धरनूं निज-आतम-ध्यान, हरनूं रागादि अज्ञान ।
नहिं मुनिसे जगमें कोई, उतरें भव-सागर सोई ॥९०

दोहा

मोह कर्मकी प्रकृति सहु, होय जु अट्ठाईस ।
तिनमें पन्द्रह उपशमें, तब होवै जोगोस ॥९१
पन्द्रा रोकें मुनिव्रतें, ग्यारा अणुव्रति रोध ।
सात जु रोकें पापिनी, सम्यग्दरसन वोध ॥९२
क्रोध मान छल लोभ ए, जीवोंकों दुखदाय ।
सो चंडाल जु चौकरी, वरजें श्रीजिनराय ॥९३
अनंतानुवन्धी प्रथम, द्वितीय अप्रत्याख्यान ।
प्रत्याख्यान जु तीसरी, अर चौथी संजुलान ॥९४
तिनमें तीन जु चौकरी, अर तीन मिथ्यात ।
ए पंदरा प्रकृत्तियां, तजि व्रत होइ विख्यात ॥९५
* पहली दूजी चौकरी, वहुरि मिथ्यात जु तीन ।
ए ग्यारा प्रकृती गया, श्रावकव्रत लवलीन ॥९६
प्रथम चौकरी दूरि ह्वै, टरैं तीन मिथ्यात ।
ए सातों प्रकृति टर्यां उपजे समकित भ्रात ॥९७
तीन चौकरी मुनिव्रतें, द्वै अणुव्रत विधान ।
पहली रोकें समकिती, चौथी केवलज्ञान ॥९८
तीन मिथ्यात हतें महा, मुनिव्रत अर अणुव्रत ।
अव्रत सम्यककूं हतें, करहिं अधर्म प्रवृत्त ॥९९

प्रथम मिथ्यात अबोध अति, जहां न निज-परबोध।
अथ अधर्म विचार नहिं, तीव्र लोभ अर क्रोध ॥१०००
दूजी मिश्र मिथ्यात है, कछु इक बोध प्रबोध।
तीजी सम्यक प्रकृति जो, वेदक सम्यक बोध ॥१
कछु चंचल कछु मलिन जो, सर्वघाति नहिं होइ।
तीन माहि इह शुभ तहूं, वरजनीक है सोइ ॥२
ए मिथ्यात जु तीन विधि, कहे सूत्र अनुसार।
सुनों चौकरी बात अब, चारि चारि परकार ॥३
क्रोध जु पाहन-रेख सो, पाहन-थंभ जु मान।
माया बांस जु जड़-समा, अति परपंच बखान ॥४
लोभ जु लाखा रंग सो, नरक-योनि दातार।
भरमावै जु अनंत भव, प्रथम चौकरी भार ॥५
हलरेखा सम क्रोध है, अस्थि-थंभसम मान।
माया मीढ़ा सींगसी, तिथि षट मास प्रमान ॥६
रंग आलके सारखो, लोभ पशुगति दाय।
इह दूजी है चौकरी, अप्रत्याख्यान कहाय ॥७
रथरेखा सम क्रोध है, काठथंभ-सो मान।
गोमूत्रकी जु वक्रता, ता सम माया जान ॥८
लोभ कसूमा रंगसो, नरभव-दायक होय।
दिन पंदरा लग वासना, तृतीय चौकरी सोइ ॥९
जलरेखा सो रोस है, वेंतलता सो मान।
माया सुरमी चमरसी, लोभ पतंग समान ॥१०
तथा हरिद्रारंग सो, सुरगति-दायक जेह।
एक मुहूरत वासना, अन्त चौकरी लेह ॥११
कही चौकरी चारि ये, च्यार हि गतिकों मूल।
चारि चौकरी परिहरै, करै करम निरमूल ॥१२
मुनिनें तीन जु परिहरीं, वरी शांतता सार।
चौथी हूकों नाश करि, पावै भवजल पार ॥१३
सकल कर्मकी प्रकृति सौ, अर ऊपरि अड़ताल।
मुनिवर सर्व खपावहीं, जीवनिके रिछपाल ॥१४
मुनिपद विन नहिं मोक्ष पद, यह निश्चय उर-धारि।
मुनिराजनिकी भक्ति करि, अपनों जन्म सुधारि ॥१५

चाल छन्द

मुनि हैं निर्भय वनवासी, एकान्त वास सुखरासी।
निज ध्यानी आतमरामा, जगकी संगति नहिं कामा ॥१६

जे मुनि रहनेको थाना, वनमें कारहिं मतिवाना।
ते पावें शिव सुर थाना, यह सूत्र-प्रमाण बखाना ॥१७
मुनि लेइ अहारइ मित्रा, लघु एक वार कर-पात्रा।
जे मुनिकों भोजन देहीं, ते सुरपुर शिवपुर लेहीं ॥१८
जौ लग नहिं केवलभावा, तौ लग आहार धरावा।
केवल उपजें न अहारा, भागें भव-दूषण सारा ॥१९
नहिं भूख तृषादि सबै ही, जब केवल ज्ञान फबैही।
केवल पायें जिनराजा, केवल पद ले मुनिराजा ॥२०
मुनिकी सेवा सुखकारी, वड़भाग करें उरधारी।
पुस्तक मुनिपै ले जावें, मुनि सूत्र अर्थ ते आवें ॥२१
ते पावें आतमज्ञाना, ज्ञानहिं करि ह्वै निरवाना।
भेषज भोजनमें युक्ता, मुनिकों लखि रोग प्रव्यक्ता ॥२२
देवें ते रोग नसावें, कर्मादिक फेरि न आवें।
मुनिके उपसर्ग निवारें, ते आतम भवदधि तारें ॥२३
मुनिराज समान न दूजा, मुनि पद त्रिभुवन करि पूजा।
मुनिराज त्रिवर्णा होवै, शूद्र नहिं मुनिपद जोवै ॥२४
मुनि आर्या एल महा ए, ह्वै क्षत्री द्विज वणिजा ए।
अब मध्यपात्रके भेदा, त्रिविधा सुनि पाप उछेदा ॥२५
उतकृष्ट रु मध्य जघन्या, जिनसे नहिं जगमें अन्या।
पहली पडिमासों लेई, छट्ठी तक श्रावक जेई ॥२६
मध्यनिमें जघन कहावै, गुरु धर्म देव उर लावै।
जे पंचम ठाणें भाई, अणुवृत्ती नाम धराई ॥२७
पहली पड़िमा धर वुद्धा, सम्यक् दरसन गुण शुद्धा।
त्यागें जे सातों विसना, छांडें विषयनिकी तृष्णा ॥२८
जे अष्ट मूल गुण धारें, तजि अभख जीव न संघारें।
दूजी पड़िमा धर धीरा, व्रतधारक कहिये वीरा ॥२९
बारा व्रत पालै जोई, सेवै जिनमारग सोई।
जे धारें पंच अणुव्रत, त्रय अणुव्रत चउ शिक्षाव्रत ॥३०

चौपाई

तीजी पडिमा धरि मतिवंत, सामायिकमें मुनिसे संत।
पोसामें आरूढ़ विशाल, सो चौथी पडिमा प्रतिपाल ॥३१
पंचम पडिमा वर नर धीर, त्याग सचित्त वस्तु वर वीर।
पत्र फूल फल कूंपल आदि, छालि मूल अंकुर वीजादि ॥३२
मन वच तन कर नीली हरी, त्यागै उरमें दृढ़ व्रत धरो।
जीवदयाको रूप निधान, षट कायाको पीहर जान ॥३३

पाल्यौ जैन वचन जिन धीर, सर्व जीवकी मेटी पीर ।
छट्ठी प्रतिमा धारक सोई, दिवस नारिको परस न होई ॥३४
रात्रि विषें अनसन व्रत धरैं, चउ अहारकों है परिहरैं ।
गमनागमन तजै निशि माहिं, मन वच तन दिन शील धाराहिं ॥३५
ए पहलीसों छट्ठी लगें, जघन्य श्रावकके व्रत जगें ।
पतिव्रता व्रतवन्ती नारी, मध्यम पात्र जघन्य विचारी ॥३६
श्रावक और श्राविका जेह, घरवारी व्रतचारी तेह ।
मध्यम पात्तर कहे जघन्य, इनकी सेव करे सो धन्य ॥३७
वस्त्राभरण अन्न जल आदि, थान मान औषध धानादि ।
देनें श्रुत सिद्धांत जु वीर, हरनी तिनकी सवही पीर ॥३८
अभय दान देवो गुणवान, करनी भगति कहैं भगवान ।
भवजल के द्रोहण ए पात्र, पार उतारें दरसन मात्र ॥३९

दोहा

सप्तम प्रतिमा धारका, ब्रह्मचर्य व्रत धार ।
नारीकों नागिनि गिनें, लख्यौ तत्त्व अविकार ॥४०
मन वच तन करि शीलधर, कृत कारित अनुमोद ।
निज नारीहूकूं तजै, पावै परम प्रमोद ॥४१
जैसे ग्यारम दशम नव, अष्टम पड़िमाधार ।
मन वच तन करि शील धरि, तैसे ए अविकार ॥४२
तिनतें एतो आंतरो, ते आरंभ वितीत ।
इनके अलपारंभ है, क्रोध लोभ छल जीत ४३
लख्यौ आपनों तत्त्व जिन, नाहिं मायासों मोह ।
तजै राग दोषादि सव, काम क्रोध पर द्रोह ॥४४
कछु इक धनको लेस है, तातें घरमें वास ।
जे इनकी सेवा करें, ते पावें सुखरास ॥४५

चाल छन्द

अव सुनि अष्टम पड़िमा ए, त्रस थावर जीवदया ए ।
कछु हि धंधा नहिं करनों, आरंभ सवै परिहरनों ॥४६
भजनों जिनकों जगदीसा, तजनों जगजाल गरीसा ।
तनसों नहिं स्वामित धरनों, हिंसासों अतिही डरनों ॥४७
श्रावकके भोजन करई, नवमी सम चेष्टा धरई ।
नवमीतें एतो अंतर, ए हैं कछुयक परिग्रह-धर ॥४८
वन माहीं थोरो रहनों, शीतोष्ण जु थोरो सहनों ।
जे नवमी पड़िमावंता, जगके त्यागी विकसंता ॥४९
जिन धातु मात्र सव नांखे, कपड़ा कछुयक ही राखे ।
श्रावकके भोजन भाई, नहिं माया मोह धराई ॥५०

आवै जु बुलायें जीवा, जिनको नहिं माया छीवा।
है दशमीतें कछु नूना, परिकीय कर्म अघ चूना ॥५१
एत्तौ ही अन्तर उनत्तें, कबहुंक लौकिक वच जनत्तें।
बोलें परि विरकत्तभावा, धनको नहिं लेश धरावा ॥५२
आतेकों आरुकारा, जाते सो हूल भल धारा।
दसमीते अतिहि उदासा, नहिं लौकिक वचन प्रकाशा ॥५३
सप्तम अष्टम अर नवमा, ए मध्य सरावग पड़िमा।
मध्यनिमें मध्य जु पात्रा, व्रत शील ज्ञान गुण गात्रा ॥५४
अथवा हो श्राविका शुद्धा, व्रत धारक शील प्रवृद्धा।
जो ब्रह्मचारिणी बाला, आजनम शील गुण माला ॥५५
सो मध्यम पात्रा मध्या, जानों व्रत शील अवध्या।
अथवा निजपतिकों त्यागै, सो ब्रह्मचर्यं अनुरागै ॥५६
सो परम श्राविका भाई, मध्यनिमें मध्य कहाई।
इनको जो देय अहारा, सो ह्वै भवसागर पारा ॥५७

दोहा

अन्न वस्त्र जल औषधी, पुस्तक उपकरणादि।
थान ज्ञान दान जु करें, ते भव तिरें अनादि ॥५८
हरें सकल उपसर्ग जे, ते निरुपद्रव होंहि।
सुर-नर पति ह्वै मोक्षमें, राजे अति सुखसों हि ॥५९

चालछन्द

जो दशमी पड़िमा धारा, श्रावक सु विवेकी चारा।
जग धंधाको नहिं लेशा, नहिं धंधाको उपदेशा ॥६०
वनमें हु रहै वर वीरा, ग्रामे हु रहै गुणधीरा।
आवै श्रावक घरि जीवा, नहिं कनकादिक कछु छींवा ॥६१
एकादशमीतें छोटे, परि और सकलतें मोटे।
जिनवानी विन नहिं बोलें, जे कितहूं चित न डोलें ॥६२
मुनिवरके तुल्य महानर, दशमी एकादशमी धर।
एकादशमी द्वै भेदा, एलिक छुल्लक अघछेदा ॥६३
इनसे नहिं श्रावक कोई, सबमें उत्तकृष्टे होई।
त्यागी जिन जगत्त असारा, लाग्यौ जिन रंग अपारा ॥६४
पायौ जिनराज सुधर्मा, छांड़े मिथ्यात अधर्मा।
जिनके पंचम गुणठाणा, पूरणतारूप विधाना ॥६५
द्वय माहिं महंत जु ऐला, निश्चलता करि सुरशैला।
जिनके परिग्रह कोपीना, अर कमण्डल पीछी तीना ॥६६

जिनशासनको अभ्यासा, भव-भोगनिसुं जु उदासा।
श्रावक के घर अविकारा, ले आप उदंड अहारा ॥६७
गुणवान साध सारीसा, लुंचितकेसा विन रीसा।
ए ऐलि त्रिवर्णी होई, शूद्रा नहि ऐलि जु कोई ॥६८

इनतें छुल्लक कछु छोटे, परि और सकलतें मोटे।
इक खंडित कपरा राखें, तिनको छुल्लक जिन भाखें ॥६९
कमडलु पीछी कोपीना, इन विन परिग्रह तजि दीना।
जिनश्रुत-अभ्यास निरंतर, जान्यूं है निज पर अंतर ॥७०

जे हैं जु उदंड विहारा, ले भाजनमाहिं अहारा।
कातरिका केस करावैं, ते छुल्लक नाम कहावैं ॥७१
चारों हैं वर्ण जु छुल्लक, राखें नहि जगसूं तल्लुक।
आनन्दी आतमरामा, सम्यग्दृष्टी अभिरामा ॥७२

ए द्वै है भेद वड़ भाई, ग्यारम पड़िमा जु कहाई।
वन-माहिं रहैं वर वीरा, निरभय निरव्याकुल धीरा ॥७३

तिनकी करि सेव जु भाया, जो जीवनिकों सुखदाया।
तिनके रहनेकों थाना, वनमें करने मतिवाना ॥७४

भोजन भेपज जिनग्रन्था, इनकों दे सो निजपंथा।
पावै अर दे उपकरणा, सो हरै जनम जर मरणा ॥७५

उपसर्ग उपद्रव टारै, ते निरभय थान निहारै।
दसमी अर ग्यारस दोऊ, मध्यम उत्तकृष्टे होऊ ॥७६

अथवा आर्या व्रतधारी, अणुव्रतमें श्रेष्ठ अपारी।
आर्या घर-वार जु त्यागै, श्रीजिनवरके मत लागै ॥७७

राखै इक वस्त्र हि मात्रा, तप करि है क्षीण जु गात्रा।
कमडलु पीछी अर पोथी, ले भूति तजी सहु थोथी ॥७८

थावर जंगम तनवाना, जानें सव आप समाना।
जे मुनि कर-पात्र अहारा, सिर लोंच करें तप धारा ॥७९

तिनकी सो रीति जु धारै, जगसों ममता नहि कारै।
द्विज क्षत्री वणिक कुला ही, ह्वै आर्या अति विमला ही ॥८०

अणुव्रत परि महाव्रत तुल्या, नारिनमें एहि अतुल्या।
माता त्रिभुवनकी भाई, परमेसुरसों लवलाई ॥८१
आर्याकों वस्त्र जु भोजन, देनें भक्ती करि भो जन।
पुस्तक औषधि उपकरणा, देनें सहु पाप जु हरणा ॥८२
उपसर्ग हरै वुधिवाना, रहनेकों उत्तम थाना।
देवे पुन अविनासी, लेवैं अति आनंदरासी ॥८३

दोहा

छै पड़िमा जानों जघनि, मध्य जु नवमी ताइ ।
दस एकादशमी उभय, उतकृष्टी कहवाइ ॥८४
पतिव्रता जो श्राविका, मध्यम माँहि जघन्य ।
व्रह्मचारिणी मध्य है, आर्या उत्तम धन्य ॥८५
पंचम गुण ठाणें व्रती, श्रावक मध्य जु पात्र ।
छठें सातवें ठाण मुनि, महापात्र गुणगात्र ॥८६
कहे मध्यके भेद त्रय, अर उतकिष्टे तीन ।
सुनों जघन्य जु पात्रके, तीन भेद गुणलीन ॥८७
चौथे गुणठाणे महा, क्षायिक सम्यकवन्त ।
सो उतकृष्टे जघनिमें, भाषें श्रीभगवंत ॥८८
क्रोध मान छल लोभ खल, प्रथम चौकरी जानि ।
मिथ्या अर मिश्रहि तथा, सम्यक् प्रकृत्ति पर वानि ॥८९
सात प्रकृति ए खय गई, रह्यौ अलप संसार ।
जीवनमुक्त दशा धरै, सो क्षायिकसम धार ॥९०
सातो जाके उपसमे, रमैं आपमें धीर ।
सो उपसम-सम्यक धनी, जघनि माँहि मधि वीर ॥९१
सात माँहि षट उपसमें, एक तृतीय मिथ्यात ।
उदै होय है जा समें, सो वेदक विख्यात ॥९२
वेदक सम्यकवन्त जो, जघनि जघनिमें जानि ।
कहे तीन विधि जघनि ए, जिन आज्ञा उर आनि ॥९३
जघनि पात्रकूं अन्न जल, औषध पुस्तक आदि ।
वस्त्राभूषण आदि शुभ, थान मान दानादि ॥९४
देवो गुरु भाषें भया, करनों वहु उपगार ।
हरनी पीरा कष्ट सहु, धरनों नेह अपार ॥९५
सव ही सम्यकधारका, सदा शांत रसलीन ।
निकट भव्य जिनधर्मके, धोरी परम प्रवीन ॥९६
नव भेदा सम्यक्तके, तामें उत्तम एक ।
सात भेद गनि मध्यके, जघनि एक सुविवेक ॥९७
वेदक एक जघन्य है, उत्तम क्षायिक एक ।
और सवै गनि मध्य ए, इह धारौ जु विवेक ॥९८
क्षयोपसम वरते त्रिविध, वेदक चारि प्रकार ।
क्षायिक उपसम जुगल जुत, नवधा समकित धर ॥९९
वेदक कछुयक चंचला, तौ पनि मर्म-उछेद ।
लखै आपकी शुद्धता जानें निज पर भेद ॥११००

सेवा जोग्य सुपात्र ए, कहे जिनागम माँहि ।
भक्ति सहित जे दान दें, ते भवभ्रांति नसाँहि ॥१
त्रिविध पात्रके भेद नव, कहे सूत्र-परवान ।
मुनिको नवधा भक्ति करि, देहि दान वुधिमान ॥२
विधिपूर्वक शुभ वस्तुकों, स्वपर अनुग्रह हेत ।
पातरकों दान जु करै, सो शिवपुरको लेत ॥३
नवधा भक्ति जु कौनसी, सो सुनि सूत्र-प्रवानि
मिथ्या मारग छाड़ि करि, निज श्रद्धा उर आनि ॥४
आवौ आवौ शब्द कहि, तिष्ठ तिष्ठ भासेहि ।
सो संग्रह जानों वुधा अव-संग्रह टारेहि ॥५
ऊँचौ आसन देय शुभ, पात्रनिकों परवीन ।
पग धोवैं अरचै वहुरि, होय वहुत आधीन ॥६
करै प्रणाम विनय करी, त्रिकरण शुद्धि धरेहि ।
खान-पानकी शुद्धता, ये नव भक्ति करेहि ॥७
सुनों सात गुण पंडिता, दातारनिके जेह ।
धारै धरमी धीर नर, उधरैं भव-जल तेह ॥८
इह भव फल चाहै नहीं, क्रियावान अति होय ।
कपट-रहित ईर्षा-रहित, धरै विषाद न सोय ॥९
हुइ उदारता गुण सहित, अहंकार नहिं जानि ।
ए दाताके सप्त गुण, कहे सूत्र-परवानि ॥१०
श्रद्धा धरि निज शक्तिजुत लोभ रहित ह्वै धीर ।
दया क्षमा दृढ़ चित्त करि, देय अन्न अर नीर ॥११
राग द्वेष मद भोग भय, निद्रा मन्मथपीर ।
उपजावै जु असंजमा, सो देवी नहिं वीर ॥१२
यह आज्ञा जिनराजकी, तप स्वाध्याय सु ध्यान ।
वृद्धि-करण देवौ सदा, जाकरि लहिये ज्ञान ॥१३
मोक्ष कारणा जे गुणा, पात्र गुणनिके धीर ।
तातें पात्र पुनीत ए, भाषें श्रीजिनवीर ॥१४
संविभाग अतिथीनको, व्रत्त बारमों सोइ ।
दया तनों कारण इहै, हिंसा नाशक होइ ॥१५
हिंसाके कारण महा, लोभ अजसकी खानि ।
दान करै नासै भया, इह निश्चय उर आनि ॥१६
भोग-रहित निज जोग धरि, परमेश्वर के लोग ।
जिनके दर्शन मात्र ही, मिटै सकल दुख सोग ॥१७
मधुकर वृत्ति धारें मुनी, पर पीड़ा न करेय ।
पुण्यजोग आवे घरैं, जिन आज्ञा जु धरेय ॥१८

तिनकौं जो सु अहार दे, ता सम और न कोइ।
दानधर्मतें रहित जे, किरपण कहिये सोइ ॥१९
कियौ आपने अर्थ जो, सो ही भोजन भ्रात।
मुनिकों अरति विषाद तजि, दे भवपार लहात ॥२०
शिथिल कियौ जिह लोभकों, परम पंथके हेत।
तेई पात्रनिकों सदा, विधि करि दान जु देत ॥२१
सम्यग्दृष्टी दान करि, पावै पुर निरवान।
अथवा भव धरनों परै, तौ पावै सुरथान ॥२२
विन सम्यक्त जु दान दे, त्रिविधि पात्रको जोहि।
पावै इन्द्री भोग सुख, भोगभूमि में सोहि ॥२३
उत्तम पात्र सु दानतें, भोगभूमि उतकृष्ट।
पावै दशधा कल्पतरु, जहाँ न एक अनिष्ट ॥२४
मध्य पात्रके दान करि, मध्य भोगभू माहि।
जघनि पात्रके दानकरि, जघनि भोगभू जाहि ॥२५
पात्रदानको फल इहै, भाषें गणधरदेव।
धन्य धन्य जे जगतमें, करें पात्रकी सेव ॥२६

चाल छन्द

देने औषध सु अहारा, देने श्रुत पाप प्रहारा।
रहने को देनी ठौरा, करने अति ही जु निहौरा ॥२७
हरने उपसर्ग तिन्होंकें, धरनें गुण चित्त जिन्होंके।
सुख साता देनी भाई, सेवा करनी मन लाई ॥२८
ए नवविधि पात्र जु भाखे, आगम अध्यातम साखे।
वहुरी त्रय भेद कुपात्रा, धारें वाहिज व्रतमात्रा ॥२९
जे शुभ किरिया करि युक्ता, जिनके नहिं रीति अयुक्ता।
सम्यग्दर्शन विन साधू, तप संजम शील अराधू ॥३०
पावैं नहिं भवजल पारा, जावें सुरलोक विचारा।
पहुंचे नव ग्रीव लगै भी, जिनतैं अघकर्म भगै भी ॥३१
पण भावलिंग विनु भाई, मिथ्यादृष्टी हि कहाई।
द्रव्यलिंग धारक जति जेई, उतकृष्ट कुपात्रा तेई ॥३२
जे सम्यक विन अणुव्रती, द्रव्य-श्रावकव्रत प्रवृत्ती।
ते मध्य कुपात्र वखानें, गुरुने नहिं श्रावक मानें ॥३३
आपा पर परचें नाहीं, गनिये बहिरातम माहीं।
षोडश सुरगलों जावें, आतम अनुभव नहिं पावें ॥३४

दोहा

जघनि कुपात्रा अव्रती, बाहिर धर्मप्रतीति।
दीखें समदृष्टी समा, नहिं सम्यककी रीति ॥३५

शुभगति पावै तौ कहा, लहै न केवल भाव।
ये संसारी जानिये, भाषैं श्रीजिनराव ॥३६
इनको जानि सुपात्र जा, धारैं भक्ति विधान।
सो कुभोगभूमी लहै, अल्पभोग परवान ॥३७
पर उपगार दया निमित्त, सदा सकलकों देय।
पात्रनिकी सेवा करै, सो शिवपुर सुख लेय ॥३८
नहिं श्रावक नहिं व्रत जती, नहिं श्रावक व्रत जानि।
नहिं प्रतीति जिनधर्मकी, ते अपात्र परवानि ॥३९
तिनैं न करनों तिनतनों, दया सकल परि जोग।
करनी भक्ति सु पात्रकी, भक्ति अपात्र अजोगि ॥४०
करनी करुणा सकल परि, हरनी सबकी पीर।
वरनी सेवा सन्तकी, इह भाषैं श्रीवीर ॥४१
पात्रापात्र द्विभेद ए, कहे सूत्र अनुसार।
अब सुनि करुणादानको, भेद विविधि परकार ॥४२
सबैं आतमा आपसे, चेतनगुण भरपूर।
निज परकी पहिचान विन, भ्रमें जगतमें कूर ॥४३
उदय कर्मके हैं दुखी, आधि व्याधिके रूप।
परे पिंडमें मूढ़धी, लखैं नहीं चिद्रूप ॥४४
तिन सब पर धरिके दया, करैं सदा उपगार।
नर तिर सब ही जीवको, हरैं कष्ट व्रतधार ॥४५
अपनी शक्ति प्रमाण जो, मेटै परकी पीर।
तन मन धन करि सर्वको, साता दे वर वीर ॥४६
अन्न वस्त्र जल औषधी, व्रण आदिक जे देय।
जाने अपने मित्र सहु, करुणाभाव धरेय ॥४७
बाल वृद्ध रोगीनिको, अति ही जतन कराय।
अन्ध पंगु कुष्टीनि परि, करै दया अधिकाय ॥४८
वन्दि छुडावैं द्रव्य दे, जीव बचावैं सर्वं।
अभयदान दे सर्वकों, धरैं न धनको गर्व ॥४९
काल दुकालै माहिं जो, अन्नदान बहु देय।
रंकनिकी पीहर जिकौ, नरभवको फल लेय ॥५०
जाको जगमें कोउ नहीं, ताको धीरी सोइ।
दुरबलको बल शुभमती, प्रभुको दासा होइ ॥५१
शीतकालमें शीतहर, दे वस्त्रादिक वीर।
उष्णकालमें तापहर, वस्तु प्रदायक धीर ॥५२
वर्षाकालै धर्मधी, दे आश्रय सुखदाय।
जल बाधाहर वस्तु दे, कोमल भाव धराय ॥५३

भाँति भाँतिकी औषधी, भाँति भाँतिके चीर।
भाँति भाँतिकी वस्तु दे, सो जैनो जगवीर ॥५४
दान विधी जु अनन्त हैं, कौ लग करें वखान।
जानें श्रीजिनरायजू, किह दाता वुधिवान ॥५५
भक्ति दया द्वै विधि कही, दानधर्मकी रीति।
ते नर अंगीकृत करें, जिनके जैन प्रतीति ॥५६
लक्ष्मी दासी दानकी, दान मुकतिको मूल।
दान समान न आन कोउ, जिन मारण अनूकूल ॥५७
अतीचार या व्रत्तके, तजै पंच परकार।
तव पावै व्रतशुद्धता, लहै धर्म अविकार ॥५८
भोजनकों मुनि आवहीं, तव जो मूढ़ कदापि।
मनमें ऐसी चिंतवै, दान करंता क्वापि ॥५९
लगि है वेला चूकिहों जगतकाजतें आज।
तातें काहूकों कहै, जाय करें जगकाज ॥६०
मो विन काम न होइगो, तातें जानों मोहि।
दान करेंगे भ्रातृ-सुत, इहहू कारिज होहि ॥६१
धनको जाने सार जो, धर्म न जाने रंच।
सो मूढ़नि सिरमौर है, घटमें वहुत प्रपंच ॥६२
कहै भ्रात पुत्रादिको, दानतनों शुभ काम।
आप सिधारै जड़मती, जग वंधाके ठाम ॥६३
परदात्री उपदेश यह, दूषण पहलो जानि।
पराधीन ह्वै या थकी, यह निश्चै उर आनि ॥६४
मुनि सम ह्वैगौ धन कहा, इह धारै उर धीर।
मुक्ति-मुक्ति दाता मुनि, पटकायनिके वीर ॥६५
पुनि सचित्तनिक्षेप है, दूजौ दोष अजोगि।
ताहि तजें तेई भया, दानव्रत्तकों जोगि ॥६६
सचित्त वस्तु कदली दला, ढाक पत्र इत्यादि।
तिनमें मेली वस्तु जो, मुनिकों देवो वादि ॥६७
दोष लगै जु सचित्तको, मुनिके अचित अहार।
तातै सचितनिक्षेपको, त्याग करै व्रत धारा ॥६८
तीजौ सचितपिधान है, ताहि तजौ गुणवान।
कमलपत्र आदिक सचित, तिन करि ढाक्यौ धान ॥६९
नहिं देनों मुनिरायको, लगै सचितको दोष।
प्रासुक आहारी मुनी, व्रत तप संजम कोष ॥७०
काल उलंघन दानको, योग्य होत नहिं दान।
सो चौथो दूपण भया त्यागें ते मतिवान ॥७१

है मत्सरता पंचमों, दूषण दुखकी खानि ।
करै अनादर दानको, ता सम मूढ़ न आनि ॥७२
देखि न सकै विभूति पर, पर-गुण देखि सकै न ।
सहि न सकै पर उच्चता, सो भव-वास तजै न ॥७३
नहि मात्सर्य समान कोउ, दूषण जगमें आन ।
जाहि निषेधें सूत्रमें, तीर्थंकर भगवान ॥७४
अतीचार ए दानके कहे जु श्रुत अनुसार ।
इनके त्याग किये शुभा, होवै व्रत अविकार ॥७५
नमों नमों चउ दानकों, जे द्वादश व्रत-मूल ।
भोजन भेषज भय-हरण, ज्ञानदान हर भूल ॥७६
भोजन दानें ऋद्धि ह्वै, औषध रोग निवार ।
अभयदानतै निर्भया, श्रुति दानें श्रुत-पार ॥७७
कहे व्रत्त द्वादश सवै, दया आदि सुखदाय ।
दान पर्यन्त शुभंकरा, जिन करि सव दुख जाय ॥७८
एक एक व्रत्तके कहे, पंच पंच अतिचार ।
पालें निरतीचार व्रत्त, ते पावें भव पार ॥७९
सम्यक विन नहि व्रत ह्वै, व्रत विन नहि वैराग ।
विन वैराग न ज्ञान ह्वै, राग तजे वड़भाग ॥८०

चाल छन्द

अव सुनि सव व्रतको कोटा, देशावकाशिव्रत मोटा ।
ताकी सुनि रीति जु भाई, जैसी जिनराज वताई ॥८१
पहले जु करौ परमाणा, दिसि विदिशाको विधि जाणा ।
इन्द्री विषयनिका नेमा, कीयौ धरि व्रतसों प्रेमा ॥८२
धन धान्य अन्न वस्त्रादी, भोजन पानाभरणादी ।
मरजादा सवकी धारी, जीवितलों धर्म सम्हारी ॥८३
जामें मरजादा वरसी, तामें छै मासी दरसी ।
करनी चउमासो तामें, वहुरि द्वै मासी जामें ॥८४
ताहूमें मासी नेमा, मासीमें पाखी प्रेमा ।
पाखीमें आधी पाखी, ताहूमें दिन-दिन भाखी ॥८५
दिन माहीं पहरां धारै, पहरनिमें घरी विचारै ।
पल-पलके धारै नेमा, जाके जिनमतसों प्रेमा ॥८६
भोगनिसों घटतो जाई, व्रतहै चढ़तो अधिकाई ।
सीमामें सीमा कारै, जिन-मारग जतनें धारै ॥८७
ह्वै वाड़ि फले क्षेत्रनिके, जैसें कोट जु नगरीके ।
तैसे यह द्वादश व्रतके, देशावकाशि व्रत सवके ॥८४

देसावकाशि व्रत माहीं, सतरा नेम जु सक नाहीं।
तिनकी सुनि रीति जु मित्रा, जिन करि ह्वै व्रत पवित्रा ॥८९

दोहा

नियम किये व्रत शोभ ही, नियम विना नहिं शोभ।
तातें व्रत धरि नेमकों, धारै तजि मद लोभ ॥९०

सतरा नेमके नाम उक्तं च श्रावकाचारे

भोजने षटरसे पाने, कुंकुमादिविलेपने।
पुष्पताम्बूलगीतेषु, नृत्यादौ ब्रह्मचर्यके ॥१
स्नानभूषण वस्त्रादौ, वाहने शयनाशने।
सचित्तवस्तुसंख्यादौ, प्रमाणं भज प्रत्यहम् ॥२

चौपाई

भोजनकी मरजादा गहै, वारंवार न भोजन लहै।
पर घर भोजन तोहि जु करै, प्रात समै जो संख्या धरै ॥९१
अन्न मिठाई मेवा आदि, भोजन माहिं गिने जु अनादि।
वहुरि चवीणीं अर पकवान, भोजन जाति कहे भगवान ॥९२
सव मरजादा माफिक गहै, वार-वार ना लीयौ चहै।
षट रसमें राखे जो रसा, सोई लेय नेममें वसा ॥९३
और न रस चाखौ वुधिवन्त, इह आज्ञा भाषें भगवन्त।
काम-उदीपक हैं रसजाति, रस परित्याग महातप भांति ॥९४
जो रसजाति तजी नहिं जाय, करि प्रमाण जियमें ठहराय।
पानी सरवत दूध रु मही, इत्यादिक पीवेके सही ॥९५
तिनमें लेवौ राखै जोहि, ता माफिक लेवौ वुध सोहि।
चोवा चन्दन तेल फुलेल, कुंकुम और अरगजा मेल ॥९६
औषधि आदि लेप हैं जेह, संख्या विन न लगावै तेह।
जाने येह देह दुरगन्ध, याके कहा लगावै सुगन्ध ॥९७
जो न सर्वथा त्यागै वीर, तोहु प्रमाण ग्रहै नर धीर।
पहुपजातिसों छांडै प्रेम, अति दोषीक कहे गुरु एम ॥९८
भोग उदय जो त्यागि न सकै, थोरे लेप पापतें सकै।
पान सुपारी डोड़ा आदि, लोंगादिक मुखसोध अनादि ॥९९
दालचिनी जावित्री जानि, जातीफल इत्यादि वखानि।
सवमें पान महा दोषीक, जैसे पापनि माँहि अलीक ॥१२००
पान त्यागिवौ जावो जीव, पाननिमें प्राणी जु अतीव।
जो अतिभोगी छांडि न सकै, थोरे खाय दोषतें सकै ॥१

गीत नृत्य वादित्र जु सर्व, उपजावै अति मनमथ गर्व।
ए कौतूहल अधिके बन्ध, इनमें जो राचै सो अन्ध ॥२
जो न सर्वथा छाड़े जाय, तोहु न अधिक न राग धराय।
मरजादा माफिक ही भजै, औसर पाय सकल ही तजै ॥३
एक भेद या माहीं, और, आपुन बैठो अपनी ठौर।
गावत गीतत्रिया नीकली, सुनिकर हरषै चितधरि रली ॥४
तामें दोष लगै अधिकाय, भाव सराग महा दुखदाय।
पातरि नृत्य अखारे माहि, नट नटवा अथ नृत्य कराहि ॥५
बादीगर आदिक बहु ख्याल, बिनु परमाण न देखौ लाल।
अब सुनि ब्रह्मचर्यकी बात, याहि जु पाले तेहि उदात ॥६
परनारोकौ है परिहार, निजनारी में इह निरधार।
जावो जीव दिवसकी त्याग, रात्रि विषै हूं अलपहि राग ॥७
पाँचूं परवी शील गहेय, अर सब व्रतके दिवस धरेय।
कबहुक मैथुन सेवन परै सो मरजादा माफिक करै ॥८
महा दोषको मूल कुशील, या तजिवेमें ना करि ढील।
सेवत मनमथ जीव-विघात, इहै काम है अति उतपात ॥९
जा न सर्वथा त्यागयौ जाहि, तौहू अलप सेववौ ताहि।
नदी तलाव वापिका कूप, तहाँ जाय न्हावौ जु विरूप ॥१०
जो न्हावै विनछाणें जले, ते सब धर्म-कर्मतैं टलैं।
जैसौ रुधिरथकी ह्वै स्नान, तैसौ अनगाले जल जान ॥११
अचित जले न्हावौ है भया, प्रासुक निर्मल विधिकरि लया।
ताहूकी मरजादा धरै, विना नेम कारिज नहिं करै ॥१२
रात्री न्हावौ नाहि कदापि, जीव न सूझै मित्र कदापि।
हिंसा सम नहिं पाप जु और दया सकल धर्मनि सिर मौर ॥१३
आभूषण पहिरे हैं जिते, घरमैं और धरै हैं तिते।
नियम विना नहिं भूषण धरै, सकल वस्तुकौ नियम जु करै ॥१४
परके दीये पहरै जे हि, नियम माहि राखै हैं तेहि।
रतनत्रय भूषण बिनु आन, पाहन सम जाने मतिवान ॥१५
वस्त्रनिकी जेती मरजाद, ता माफिक पहरै अविवाद।
अथवा नये ऊजरे और, नियमरूप पहरै सुभतौर ॥१६
सुसरादिकके दीने भया, अथवा मित्रादिकतैं लया।
राजादिकने की बकसीस, अदभुत अंबर मोल गरीस ॥१७
नित्य नेममें राखै होइ, तौ पहिरै नातर नहिं कोइ।
पावंनिकी पनही हैं जेहि, तेऊ वस्त्रनि माहि गिनेहि ॥१८
नई पुरानी निज परतणी, राखै सो पहिरै इम भणी।
पनही तजै पहरवौ भया, तौ उपजै प्राणिनिकी दया ॥१९

रथ वाहन सुखपाल इत्यादि, हस्ती ऊंट रु घोटक आदि ।
एहैं थलके वाहन सबै, पुनि विमान आदिक नभ फबै ॥२०
नाव जिहाज आदि जलकेह, इनमें ममता नाहिं धरेह ।
कोइक जावो जावै तजै, कोइक राखे नियमा भजैं ॥२१
तिनहूंमें निति नेम करेइ, वहु अभिलाषा छांड़ि जु देइ ।
मुनि हूवौ चाहे मन मांहि, जगमाहीं जाको चित नाहिं ॥२२
वाहन चढ़ै होइ नहिं दया, तातैं तजैं धन्य ते भया ।
मुनि आर्या अर श्रावक बड़े, हैं जु निरारंभी अति छड़े ॥२३
ते वाहनकौ नाम न धरैं, जीवदया मारग अनुसरैं ।
आरम्भी श्रावक राजादि, तिनकें वाहन है जु अनादि ॥२४
तेऊ करैं प्रमाण सुवीर, नित्यनेम धारैं जगधीर ।
तीर्थंकर चक्री अरु काम, मुनि ह्वै फिरैं पयादे राम ॥२५
तातैं पगां चालिवौ भला, पर सिर चलिवौ है अघमिला।
इहै भावना भावत रहै, सो वेगा शिवकारन लहै ॥२६
रतनत्रय शिवकारण कहे, दरसन ज्ञान चरण जिन लहे ।
अब सुनि शयनासनको नेम, धारै श्रावक व्रतसों प्रेम ॥२७
जोहि पलंगपरि सोवो तनों, सोहू शयन परिग्रह गनों ।
सौड़ दुलाई तकिया आदि, ए सब सज्जा मांहि अनादि ॥२८
इनकौ नेम धरै व्रतवान, भूमि-शयन चाहै मतिवान ।
भूमि-शयन जोगीश्वर करैं, उत्तम श्रावक हू अनुसरै ॥२९
आरंभी गृहपतिके सेज, तेहू नियम सहित अधिकेज ।
जापरि परनारी सोवेहि, सो सज्ज्या वुध नहिं जोवेहि ॥३०
निज सज्जा राखी है भया, ताहूमें परमित अति लया ।
व्रतके दिन भू-सज्जा करै, भोग भावतें प्रेम न धरै ॥३१
गादी गाऊ तकिया आदि, चौकी चौका पाट इत्यादि ।
सिंहासन प्रमुखा जेतेक, आसन मांहि गिनौ जु अनेक ॥३२
गिलम गलीचा सतरंजादि, जाजम चादर आदि अनादि ।
इन चीजोंसे मोह निवार, जासें होय पार संसार ॥३३
जेती जाति बिछौनाकी हि, सो सब आसन मांहि गनीहि ।
निज घरके अथवा परठाम, जेते मुकते राखे धाम ॥३४
तिनपरि बैसे और जु त्याग, है जाको व्रतसूं अनुराग ।
सचित्त वस्तुको भोजन निंद, जाहि निषेवै त्रिभुवनचंद ॥३५
मुनि आर्या त्यागेंहि सचित्त, उत्तम श्रावक लें हि अचित ।
पंचम पड़िमा आदि सुवीर, एकादस पड़िमा लों वीर ॥३६
कवहु न लेइ सचित्त अहार, गहै अचित्त वस्तु अविकार ।
पहलो पड़िमा आदि चतुर्थ, पड़िमा लों ले सचितहि अर्थ ॥३७

पै मनमें कम्पै सु विवेक, तजै सचित्त जु वस्तु अनेक।
केइक राखी तामें नेम, नितप्रति धारै व्रतसों प्रेम ।।३८
कहा कहावै वस्तु सचित्त, सो धारौ भाई निज चित्त।
पत्र फूल फल छांड़ि इत्यादि, कूंपल मूल कन्द बीजादि ।।३९
पृथिवी पाणी अग्नि जु वाय, ए सहु सचित कहे जिनराय।
जीव-सहित जो पुदगल पिंड, सो सब सचित तजै गुणपिंड ।।४०
ये सहु भांति सचित्त तजेय, सो निहचै जिनराज भजेय।
जो न सर्वथा त्यागी जाय, तौ कैयक ले नेम धराय ।।४१
संख्या सचित वस्तुकी करै, सकल वस्तुको नियम जु धरै।
गिनती करि राखै सब वस्तु, तबहि जानिये व्रत्त प्रशस्त ।।४२
लाडू पेड़ा पाक इत्यादि, औषधि रस अर चूरण आदि।
बहुत वस्तु करि जे निपजेह, एक द्रव्य जानों बुध तेह ।।४३
वस्तु गरिष्ठ न खावे जोग, ए सब काम तने उपयोग।
जो कदापि ये खाने परै, अलप-थकी अलपजु आहरै ।।४४
सत्रह नेम चितारै नित्य, जानों ए सहु ठाठ अनित्य।
प्रातथकी संध्यालों करे, पुनि संध्या समये बुध धरै ।।४५
इती वस्तु तौ त्यागै वीर, राति परै नहि सेवै वीर।
भोजन षटरस पान समस्त, चंदनलेप आदि परसस्त ।।४६
तजे राति तंबोल सुवीर, दया धर्म उर धारै धीर।
गीत श्रवण जो होय कदापि, राखै नेम माहि सो क्वापि ।।४७
नृत्यहुंसो नहि जाको भाव, पै न सर्वथा छांड्यौ चाव।
जौ लग गृहपति कबहुंक लखै, सोहू नेममाहि जो रखै ।।४८
ब्रह्मचर्यसों जाको हेत, परनारीसों वीर सचेत।
निज नारीहीमें संतोष, दिनको कबहु न मनमथ पोष ।।४९
रात्रिहुमें पहले पहरौ न, चौथौ पहरौ मनमथको न।
दूजौ तीजौ पहर कदापि, परै सेवनी मैथुन क्वापि ।।५०
सोहू अलप-थको अति अल्प, नित प्रति नहि याकौ संकल्प।
राखै नेम माहि सहु बात, विना नेम नहि पांव धरात ।।५१
स्नान रातिकों कबहु न करै, दिनको स्नान तनी विधि धरै।
भूषण वस्त्रादिकको नेम, राखै जाविधि धारै प्रेम ।।५२
वाहन शयनासनकी रीत, नेम माहि धारै सहु नीति।
वस्तु सचित नहि निशिकों भखै, रजनीमें जलमात्र न चखै ।।५३
खान पानकी वस्तु समस्त, रात्रिविषै कोई न प्रशस्त।
याविधि सतरा नेम जु धरै, सो व्रत धारि परम गति वरै ।।५४
नियम विना धिग धिग नर जन्म, नियमवान होवेहि अजन्म।
यमनियमासन प्राणायाम, प्रत्याहार धारना राम ।।५५

ध्यान समाधि अष्ट ए अंग, योगतनैं भाषै जु असंग।
सवमें श्रेष्ट कही सुसमाधि, नियमथकी उपजै निरुपाधि ॥५६
राग-द्वेषको त्याग समाधि, जाकरि टरै आधि अरु व्याधि।
परम शांतता उपजै जहां, लहिए आतम भाव जु तहां ॥५७
मरण-काल उपजै जु समाधि, आय प्राप्त ह्वै आधि रु व्याधि।
नित्य अभ्यासी होय समाधि, तौ न नीपजै एक उपाधि ॥५८
जो समाधितें छाड़ै प्राण, तौ सदगति पावैहि सुजांण।
नाहि समाधिसमान जु और, है समाधि व्रत्तनि सिरमौर ॥५९

छन्द चाल

अब सुनि सल्लेखण भाई, जाकरि सहु व्रत सुखराई।
उत्तम जन याकौं भावें, याकरि भवभ्रांति नसावें ॥६०
जे द्वादस व्रत संजुक्ता, सल्लेखण कारई युक्ता।
होवें जु महा उपशांता, पावें सुरसौख्य सुकांता ॥६१
अनुक्रम पहुंचै थिर थानै, परकी सहु परणति भानै।
यह एकहु निर्मलव्रत्ता, समदृष्टी जो दृढ़चित्ता ॥६२
करई सौ सुरपति होवै, पुनि नरपति ह्वै शिव जोवै।
इह भुक्ति मुक्तिदायक है, सव व्रत्तनिको नायक है ॥६३

सोरठा

मेरौ जो निजधर्म, ज्ञान सुदर्शन आचरण।
सो नाशक वसु कर्म, भासक अमित सुभावको ॥६४
मैं भूल्यौ निज धर्म, भयौ अधर्मा जगविषैं।
तातें बाँधे कर्म, किये कुमरण अनंत मैं ॥६५
मरि-मरि चहुंगति माहि, जनम्यौ मैं शठ भ्रांति घर।
सो पद पायौ नाहि, जहां जन्म मरण न हुवै ॥६६
विना समाधि जु मर्ण, मर्ण मिटै नहि हमतनों।
यह एकैव जु सर्ण, है सल्लेखण अति गुणौ ॥६७
निज परणतिसों मोहि, एकत्त्व करिवे सक इहै।
देख्यौ श्रुतिमें टोहि, ठौर ठौर याको जसा ॥६८
धरै निरंतर याहि, अंतिम सल्लेखण वरत।
उपजै उत्तम ताहि, मरणकाल निस्संकता ॥६९
करिहों पंडित मर्ण, किये वाल मर्णा अमित।
ले जिनवरको सर्ण तजिहों काया कालिमा ॥७०
जिन आज्ञा अनुसार, अवश्य करूंगो अन्नसन।
सल्लेखणव्रत धार, इहै भावना नित धरै ॥७१

वेसरी छन्द

मरण काल धरियेगो भाई, परि याकों नित प्रति चितराई।
व्रत्त अनागत्त या विधि पालै, या व्रत करि सहु दूषण टालै ॥७२
मरणो नाहीं आतमतामें, तातैं निरभय होय रह्या मैं।
पर संबंध ऊपनी काया, ताका नाशा अवश्य बताया ॥७३
इनका ज्ञान हुए यह जीव, पावे निश्चय सुगति सदीव।
मै अनादि सिद्धों अविनाशी, सिद्धसमानो अति सुखरासी ॥७४
सो अनादि कालहुतैं भूल्यौ, परपरिणतिके रसमें फूल्यौ।
परपरिणति करि भयौ सदोषी, कर्म-कलंक उपार्जक रोषी ॥७५
जातैं देह अनन्ती धारी, किये कुमर्ण अनन्ता भारी।
मैं नहिं कबहूं उपज्यो मूवौ, मैं चेतन मायातैं दूवौ ॥७६
मोतैं भिन्न सकल परभावा, मैं चिद्रूप अनन्त प्रभावा।
भयो कषाय-कलंकित चित्ता, मैं पापी अति ही अपवित्ता ॥७७
बहु तन धरि धरि डारै भाई, तन तजिवौ इह मरण कहाई।
तातैं कुमरण मूल कषाया, क्षीण करै ब्याळं जिनराया ॥७८
रागादिक तजि करौं सुमरणा, बहुरि न मेरे होइ कुमरणा।
इहै धारना धरि व्रत धारी, दुर्बल करै कषाय जु सारी ॥७९
कै गुरुके उपदेशथकी जो, कै असाध्य लखि रोग अती जो।
मरणकाल जानै जब नीरे, तब कायरता वरइ न तीरे ॥८०
चउ अहार तजि चारि कषाया, तजि करि त्यागै त्यागी काया।
तन-सम्बन्ध उदय मति आवौ, तनमें हमरौ नाहिं सुभावौ ॥८१

सोरठा

कर्मं संजोगे देह, उपज्यौ सो न रहायगो।
तातें यासौं नेह, करनौ सो अति कुमति है ॥८२

चौपाई

इहै भावना धारि विरागी, तजै कारिमा काय सभागी।
सो श्रावक पावै शुभ लोका, षोड़श स्वर्ग लगै सुखथोका ॥८३
नर ह्वै फिर मुनिके व्रत धारै, सिद्ध लोककों शीघ्र निहारै।
सल्लेखण सम व्रत नहिं दूजा, इह सल्लेखण त्रिभुवन पूजा ॥८४
तजि कषाय त्यागै बुध काया, सो संन्यास महा फलदाया।
सल्लेखण संन्यास समाधी, अनसन एक अर्थ निरुपाधी ॥८५
पंडित मरणा वीरियमरणा, ये सब नाम कहें जु सुमरणा।
सुमरणते कुमरण सब नासे, अविनासी पद शीघ्र प्रकासे ॥८६
यह संन्यास न आतम-घाता, कर्म-विघाता है सुख-दाता।
अर जो शठ करि तीव्र कषाया, जलमें डूबि मरै भरमाया ॥८७

जीवत गड़े भूमिमें कुमती, सो पावै दुरगति अति विमती।
अगनि दाह ले अथवा विष करि, तजै मूढधी काया दुख करि ॥८८
शस्त्र प्रहारि जो त्यागैं प्राणा, अथवा झंपापात वखाणा।
ए सव आतम-घात वतावे, इनकरि वड़ भव-भव भरमाये ॥८९
हिंसाके कारण ये पापा, हैं जु कषाय प्रदायक तापा।
तिनको क्षीण पारिवो भाई, सौ संन्यास कहें जिनराई ॥९०
जीव-दयाको हेतु समाधी, विना समाधि मिटै न उपाधी।
दया उपाधि मिटै विन नाहीं, तातैं दया समाधि ही माहीं ॥९१
व्रत शीलनिकौ सर्वस एही, इह संन्यास महा सुख देही।
मुनिकों अनशन शिवसुख देई, अथवा सुर अहमिन्द्र करेई ॥९२
श्रावककों सुर उत्तम कारै, नर करि मुनि करि भवदधि तारै।
उभय धर्मको मूल समाधो, मेटे सकल आधि अर व्याधी ॥९३
कायर मरणे वहुर्ताहि मूवा, अव धरि वीर मरण जगदूवा।
वहुत भेद हैं अनशनके जी, सवमें आराधन चउ ले जी ॥९४
दरसन ज्ञान चरन तप शुद्धा, ए चारों ध्यावैं प्रतिवुद्धा।
निश्चय अर व्यवहार नयनि करि, चउ आराधन सेवैं चितकरि ॥९५
ताकौ सुनहु विचारि पवित्रा, जा करि छूटै भव भ्रम मित्रा।
देव जिनेसर गुरु निरग्रन्था, सूत्र दयामय जैन सुपन्था ॥९६
नव तत्त्वनिकी श्रद्धा करिवौ, सो व्यवहार सुदर्शन धरिवो।
निश्चय अपनो आतमरामा जिनवर सो अविनश्वर धामा ॥९७
गुण-पर्याय स्वभाव अनन्ता, द्रव्य थकी न्यारे नहिं सन्ता।
गुण-गुणिकौ एकत्व सुलखिवौ, आतमरुचि श्रद्धाको धरिवौ ॥९८
करि प्रतीति जे तत्त्वतनी जो, हनै कर्मकी प्रकृति घनी जो।
सो सम्यकदर्शन तुम जानों, केवल आतम भाव प्रवानों ॥९९
अव सुनि ज्ञान अराधन भाई, सम्यकज्ञानमयी सुखदाई।
नव पदार्थकों जातैं भेदा, जिनवानी परमान सुवेदा ॥१३००
पंच परम पदकों प्रभु जानै, भयो जु दासा वोध प्रवानै।
इह व्यवहारतनों हि स्वरूपा, निश्चय जानै हूं जु अरूपा ॥१
शुद्ध वुद्ध अविरुद्ध प्रवृद्धा, अतुल शक्तिरूपी अनुरुद्धा।
.... ॥२
चेतन अनन्त गुणातम ज्ञानी, सिद्ध सरीखौ लोक प्रमानी।
अपनो भाव भायवौ भाई, सो निश्चय ज्ञान जु शिवदाई ॥३
पुनि सुनि सम्यकचारित रतना, त्रस-थावरको अति ही जतना।
आचरिवौ भवित्त जिन मुनिकी, आदरिवौ विधि जोहि सु पुनकी ॥४
पंच महाव्रत पंच सु समिती, तीन गुपति धारैं हि जु सुजती।
अथवा द्वादस व्रत्त सुधरिवौ, श्रावक संयमको अनुसरिवौ ॥५

ए सब हैं व्यवहार चरित्रा, निम्चय आतम अनुभव मित्रा।
जो सु स्वरूपाचरण चरित्रा, थिरता निजमें सो सु पवित्रा ॥६
ए रतनत्रय भाषे भाई, चौथो सम्यक तप सुखदाई।
व्यवहारें द्वादस तप सन्ता, अनसन आदि ध्यान परजन्ता ॥७
निश्चय इच्छाको जु निरोधा, पर परिणति तजि आतम शोधा।
अपनो आतम तेजकरी जो, सो तप भाषहि कर्महरी जो ॥८
ए चउ आराधन आराधै, सो संन्यास धरै शिव साधै।
अरहन्ता सिद्धा साधू जे, केवलि कथित सुधर्म दया जे ॥९
ए चउ शरणा लेइ सु ज्ञानी, ध्यावै परम ब्रह्मपद ध्यानीं।
णमोकार मन्तर जपतो जो, ओंकार प्रणवे रटतो जो ॥१०
सोहं अजपा अनादह सुनतौ, श्रीजिन विम्ब चित्तमों मुनतौ।
धर्मध्यान धरन्तौ धोरी, लगो जिनेसुर पदसों डोरी ॥११
ध्यावन्तौ जिनवर गुन धीरा, निजरस रातौ विरकत वीरा।
दुर्वल देह अनेह जगतसों, करि कषाय दुर्वल निज वृतिसों ॥१२
क्षमा करै सब प्राणी गणसों, त्यागै प्राण लाय लव जिनसों।
सो पण्डितमरणा जु कहावै, ताकौ जस श्रुतिकेवलि गावै ॥१३
सल्लेखणके बहुते भेदा, भाषे जिनमत पाप उछेदा।
है प्रायोपगमन सब माहैं, उत्तमसों उत्तम सक नाहैं ॥१४
ताकौ अर्थ सुनौ मनलाये, जाकरि अपनों तत्त्व लखाये।
प्रायः कहिये मित्र सर्वथा, उप कहिये स्वसमीप निर्व्यथा ॥१५
गमन जु कहिये जाग्रत होवौ, रात दिवस कबहूं नहि सोवौ।
सो प्रायोपगमन संन्यासा, सर्व गुणाकरि धर्म अभ्यासा ॥१६
जिनकों बारंबार चितारै, क्षण-क्षण चेतन तत्त्व निहारै।
जग सन्तति तजि होइ इकाकी, कीरति गावें श्रीगुरु ताकी ॥१७
तजै आहार विहार समस्ता, भजै विचार समस्त प्रशस्ता।
इह भव पर भवकी अभिलाषा, जिन करि होइ निरोह अभासा ॥१८
या जड़ तनकी सेवा आपु न, करै न करावे विधि सों थापु न।
अति वैराग्य परायण सोई, तजै अनातम भाव सवोई ॥१९
गहन वनें भू सज्जा धारी, निसप्रह जगतजोगयो भारी।
चित्त दयाल सहनशीलो जो, सहै परिसह नहि ढीलो जो ॥२०
जो उपसर्ग थकी नहि कंपै, जाकों कायरता नहि चंपै।
भागौ लोक प्रपंच-थकी जो, परपरिणति जातैं दिसिकी जो ॥२१
या संन्यास थकी जो प्राणा, त्यागै सो नहि मुवौ सुजाणा।
सुर-शिवदायक है यह व्रता, यामैं वुधजन करै प्रवृत्ता ॥२२
पंच अतिचारा जो त्यागै, तब संन्यास-पंथकों लागै।
सो तजि पांचों ही अतिचारा, ये तो सल्लेखण व्रत धारा ॥२३

जीवित-अभिलाषा अघ पहिला, ताकों धारइ सो गिनि गहिला।
देखि प्रतिष्ठा जीयौ चाहै, सो सल्लेखण नहिं अवगाहै ॥२४
दूजौ मरण-तनी अभिलाषा, जो धारै निज रस नहिं चाखा।
रोग कष्ट करि पीड्यो अति गति, मरिवौ चाहै सो है शठमति ॥२५
ताजौ सुहृदनुराग सुगनिये, मित्रथकी अनुराग सु धरिये।
मरिवौ आनि वन्यूं परि मित्रा, मिल्यौ न हमसों जाहु पवित्रा ॥२६
दूरि जु सज्जन तामैं भावा, मिलिवेको अति करहि अपावा।
अथवा मित्र कनारे जो है, ताके मोह-थको मन मोहै ॥२७
यों अज्ञानथको भव भरमै, पावै नहिं सल्लेखण धरमैं।
पुनि सुखानुबंधो है चौथो, सुख संसार तनों सहु थोथौ ॥२८
या तनमें भुगते सुख भोगा, सो सव यादि करैं शठ लोगा।
यों नहि जानें भव सुख दुख ए, तीन कालमैं नाहीं सुख ए ॥२९
इनको सुख जानें जो भाई, भोंदू इनसों चित्त लगाई।
सो दुख लहै अनंता जगके, पावै नहिं गुण जे जिन-मगके ॥३०
पंचम दोष निदान प्रवंधा, जो धारइ सो जानहु अंधा।
परभवमैं चाहे सुख भोगा, यों नहिं जाने ए सहु रोगा ॥३१
इन्द्र चन्द्र नागेन्द्र नरेन्द्रा, हूवौ चाहे पुनि अहमिन्द्रा।
व्रतकों वेचै विषयनि साटे, सो जड़ कर्मवंध नहिं काटे ॥३२
ए पाचौं तजि धरहि समाधी, सो पावै सद्गति निरुपाधी।
या व्रत सम नहिं दूजौ कोई, सवमैं सार जु इह व्रत होई ॥३३
याकौ जस सुर नर मुनि गावें, धीर चित्त यासों लव लावैं।
नमों नमों या सुमरणकों है, जो काटै जलदी कुमरणको है ॥३४

दोहा

उदय होउ सल्लेखणा, जोहि निवारै भ्रांति।
आवैं वोध जु घटिविषैं, पइये परम प्रशांति ॥३५
कहे वरत द्वादश सवै, अर सल्लेखण सार।
अव सुनि तप द्वादश तनों, भेद निर्जराकार ॥३६
प्रथमहिं वारह तपविषै, है अनशन अविकार।
जाहि कहैं उपवास गुरु, ताकौ सुनहु विचार ॥३७
इन्द्रिनिकी उपसांतता, सो कहिये उपवास।
भोजन करते हू मुनी, उपवासे जिनदास ॥३८
जो इन्द्रिनिके दास है, अज्ञानि अविवेक।
करै उपासा तउ शठा, नहिं व्रत धार अनेक ॥३९
मुनि श्रावक दोऊनिकों, अनशन अति गुणदाय।
जाकरि पाप विनाश ह्वै, भाषै श्रीजिनराय ॥४०

इन्द्रिनिकों उपशांत करि, करैं चित्तकी रोध।
ते उपवासे उत्तमा, लहैं आपकौ वोध ॥४१
गनि उपवासे ते नरा, मन इन्द्रिनिकों जीति।
करैं वास चेतनविषै, शुद्धभावसों प्रीति ॥४२
इस भव परभव भोगकी, तजि आशा ते धीर।
करम-निर्जरा कारणें, करैं उपास सु वीर ॥४३
आतम ध्यान धरैं बुधा, के जिन श्रुत अभ्यास।
तव अनसनकौ फल लहै, केवल तत्त्व अध्यास ॥४४
चऊ अहार विकथा चऊ, तजिवौ चारि कषाय।
इन्द्री विषया त्यागिवौ, सो उपवास कहाय ॥४५
द्वै विधि अनसनकी कहैं, महामुनी श्रुतिमांहि।
सावधि निरवधि गुण धरी, जाकरि कर्म नशांहि ॥४६
एक दिवस द्वै तीन दिन, च्यारि पांच पखवार।
मासा द्वय त्रय च्यारि हू, मास छमास विचार ॥४७
वर्षावधि उपवास करि, करैं पारनों जोहि।
सावधि अनसन तप भया, भाषै श्री गुरु सोहि ॥४८
आयु-कर्म थोरौ रहै, तव ज्ञानी व्रत वीर।
जावौजीव तजैं सवै, असन पान जगवीर ॥४९
मरणावधि अनसन करैं, सो निरवधि उपवास।
जे धारैं उपवासकों, ते जु करैं अघ नाश ॥५०
करते थके उपासकों, जे न तजैं आरम्भ।
जग धंधेमें चित धरैं, तजैं न शठमति दंभ ॥५१
मोहगहल चंचल दशा, लहै न फल उपवास।
कछुयक काय-कलेशका, फल पावै जगवास ॥५२
कर्म-निर्जरा फल सही, सो नहि तिनकों होइ।
इह निश्चय सतगुरु कहैं, धारैं, बुधजन सोइ ॥५३
धन्य धन्य उपवास हैं, देइ सासतो वास।
अव सुनि अवमोदर्य जो, दूजौ तप सुखरास ॥५४
जो मुनि करै अनोदरी, तजि अहारकी वृद्धि।
प्रासुक योग सु अलप अति, ले अहार तप-वृद्धि ॥५५
करै सु अवमौदर्यकों, करै निर्जरा हेत।
नहि कीरतिकों लोभ है, सो मुनिजिन पद लेत ॥५६
श्रावक होइ जु व्रत करै, लेइ अलप आहार।
जव स्वाध्याय सु ध्यान ह्वै, मिटैं अनेक विकार ॥५७
संध्या पोसह पडिकमण, तासों सवै अदोष।
जो अहार वहुत न करै, धरै महागुण कोष ॥५८

कै अनसन अघ नाश कर, कै यह अवमोदर्य ।
इन सम और न जगविषै, ए तप अति सौंदर्य ॥५९
इन विन कदे न जो रहे, सो पावै व्रतशुद्धि ।
ध्यान कारणें जो करै, सो होवै प्रतिवुद्ध ॥६०
अरु जो मायावी अधम, धरि कीरतिको लोभ ।
करै सु अलप अहारकों, सो नहिं होइ अक्षोभ ॥६१
अथवा जो शठ अंधधो, यह विचार जियमांहि ।
करै सु अलप अहार जो, सोहू व्रतधरि नाहिं ॥६२
जो करिहों जु अहार अति, तौ जैसो तैसो हि ।
मिलि हैं मोदक स्वादकरि, तातैं इह न भलौ हि ॥६३
अलप अहार जु खाहुंगो, वहुत रसीली वस्तु ।
इहैं भाव धरि जो करै, सो नहि व्रत्त प्रशस्त ॥६४
मिष्ट भोज्य अथवा सुजस, कारण अल्प अहार ।
करै न फल तपको प्रवल, कर्म निर्जराकार ॥६५
केवल आतमध्यानके, अर्थ करै व्रत धार ।
कै स्वाध्याय सु व्रतके, कारण अल्प आहार ॥६६
अल्प अहार-थकी वुधा, रोग न उपजे क्वापि ।
निद्रा मनमथ आदि सहु, नहिं पीरै जु कदापि ॥६७
वहु अहार सम दोष नहिं, महा रोगकी खानि ।
निद्रा मनमथ प्रमुख जो, उपजै पाप निदान ॥६८
लोकमांहि कहवत इहै, मरै मूढ़ अति खाय ।
कै विन वुद्धि जु वोझकों, भोंदू मरै उचाय ॥६९
तातैं धनों न खाइवौ, करिवो अलप अहार।
याहि करैं सतगुरु सदा, व्रतको वीज अपार ॥७०
व्रतपरिसंख्या तीसरो तप ताकों सु विचार।
सुनों सुगुरु भाषैं भया, परम निर्जराकार ॥७१
मुनि उतरें आहारकों, करि ऐसी परतिज्ञ ।
मनमें तौऊ छांटकों (?) सो धारौ तुम विज्ञ ॥७२
एक घरें नहि पाय हो, तौ न आन घर जाहुँ ।
और कछू नहि खाय हों, यह मिलि हैं तौ खाहुं ॥७३
अथवा ऐसी मन धरै, या विधिके तन चीर ।
पहिरे होंगी श्राविका, तौ लेहूँ अन नीर ॥७४
तथा विचारै सो सुधी, कारों वलधा जोहि ।
धरै सींग परि गुड़-डला, मिलै पंथमें मोहि ॥७५
जाऊँ भोजन कारनें, नांतरि नहीं अहार ।
इत्यादिक जे अटपटी, करै प्रतिज्ञा सार ॥७६

व्रतपरिसंख्या तप लहैं, जे मुनिराय महंत ।
श्रावक हू इह तप करें, कौन रीति सुन संत ॥७७
प्रातहि संध्या विधि करें, धारहि सतरा नेम ।
तासम कबहूं व्रत करें, परिसंख्यासों प्रेम ॥७८
धारि गुप्ति चितवै सुधी, अपने चित्त मंझारि ।
साखि जिनेश्वर देव हैं, ज्ञायक ज्ञेय अपार ॥७९
और न जानें बात इह, जो धारें बुध नेम ।
नहीं प्रेम भव-भावसों, जप तप व्रतसों प्रेम ॥८०
अनायास भोजन समय, मिलि हैं मोहि कदापि ।
रूखी रोटी मूंगकी, लेहूँ और न क्वापि ॥८१
इत्यादिक जे अटपटी, धरें प्रतिज्ञा धीर ।
व्रतपरिसंख्या व्रत लहैं, ते श्रावक गंभीर ॥८२
अब सुनि चौथा तप महा, रस परित्याग प्रवीन ।
मुनि श्रावक दोऊनिकों, भाषें आतमलीन ॥८३
अति दुखको सागर जगत, तामें सुख नहिं लेश ।
चहुंगति भ्रमण जु कब मिटे, कटैं कलंक अशेष ॥८४
जगके झूठे रस सबै, एक सरस अतिसार ।
इहै धारना वर सुधा, होइ महा अविकार ॥८५
भवतैं अति भयभीत जो, डर्यो भ्रमणतैं धीर ।
निर्वांनी निर्वान जो, चाखैं निजरस वीर ॥८६
विषहूतें अति विषम जे, विषया दुख की खानि ।
भव-भव मोकूं दुख दियौ, सुख परिणतिकों मानि ॥८७
तातें इनकों त्याग करि, धरौं ज्ञानकों मित्र ।
तप जो भव आतप हरै, करण पुनीत पवित्र ॥८८
इह चितवतौ धीर जो, रसपरित्याग करेय ।
नीरस भोजन लेयकै, ध्यावै आतम ध्येय ॥८९
दूध दही घृत तेल अर, मीठो लवण इत्यादि ।
रस तजि नीरस अन्न ले, काटै कर्म अनादि ॥९०
अथवा मिष्ट कषायलो, खारो खाटो जानि ।
कड़वौ और जु चिरपरौ, यह षटरस परवानि ॥९१
तजि रस नीरस जो भखै, सो आतम-रस पाय ।
देय जलांजलि भ्रमणकों, सूधो शिवपुर जाय ॥९२
भव बाकी ह्वै जो भया, तो पावै सुर-लोक ।
सुरथी नर ह्वै मुनिदशा, धारि लहै शिव-थोक ॥९३
अथवा सिंगारादिका, नव रस जगत विख्यात ।
तिनमें शांति सुरस गहै, जो सब रसको तात ॥९४

पर रस तजि जिनरस गहै, जाकै राग न रोष।
सो पावै समभावकों, दूरि करै सहु दोष ॥९५
रसपरित्याग समान नहिं, दूजौ तप जगमांहि।
जहां जीभके स्वाद सहु, त्यागै संशय नांहि ॥९६
अव विविक्तशय्यासना, पंचम तप सुनि वीर।
राग द्वेषके हेतु जे, आसन सज्जा चीर ॥९७
तजि मुनिवर निरग्रन्थ ह्वै, वसैं आपमैं धीर।
तन खीणां मन उनमना, जगतरूढ़ गंभीर ॥९८
पूजा हमरी होयगी, वहुत भजेंगे लोक।
इह वांछा नहि चित्तमें, नहीं हरष अर शोक ॥९९
सकल कामना-रहित जे, ते साधू शिवमूल।
पापथकी प्रतिकूल ह्वै, भये व्रह्म अनुकूल ॥१४००
ते संसार शरीर अरु, भोगथकी जु उदास।
अभ्यंतर निज वोध धर, तप कुशला जिनदास ॥१
उपशमशीला शांतधी, महासत्त्व परवीन।
निवसै निर्जन वनविषैं, ध्यान लीन तन खीन ॥२
गिरिसिर गुफा मंझार जे, अथवा वसैं मसान।
भूमिमांहि निरव्याकुला, धीर वीर वहु जान ॥३
तरुकोटर सूना घरी, नदी-तीर निवसंत।
कर्म-क्षपावन उद्यमी, ते जैनी मतिवंत ॥४
कंकरीली धरतीविषैं, विषम भूमिमें साध।
तिष्ठैं ध्यावैं तत्त्वकों, आराधन आराधि ॥५
जगवासिनकी संगती, ध्यान-विघनकौ मूल।
तातैं तजि जड़ संगती, भये ज्ञान अनुकूल ॥६
स्त्री-पशु-वाल-विमूढ़की, संगति अति दुखदाय।
कायरकी संगति थकी, सूरापन विनसाय ॥७
जे एकांत वसैं सुधी, अनेकांत धरि चित्त।
ते पावै परमेसुरो, लहि रतनत्रय चित्त ॥८
मुनिकी रीति कही भया, सुनि श्रावककी रीति।
जा विधि पंचम तप करै, धरि जिन वचन प्रतीत ॥९
निज नारीहूतै विरत्त, परनारीका वीर।
शीलवान शांतिक अती, तप धारे अति धीर ॥१०
परनारीकी सेज अर, आसन चीर इत्यादि।
कवहुं न भींटै भव्य जो, तजै काम रागादि ॥११
निज नारीहूकों तजै, जौलग त्याग न होय।
तौलग कवहूंक सेवही, वहुत राग नहिं कोय ॥१२

एक सेज सोवे नहीं, जुदी जु सोवै जोहि।
जव विविक्तशय्यासना, पावै तप अति सोहि ॥१३
करै परोस न दुष्टको, तजे दुष्टकी संग।
व्यसनीतैं दूरी रहै, पालै व्रत्त अभंग ॥१४
जे मिथ्यामत धारका, अलगौ तिनसों होइ।
जिनधरमीकी संगती, धारै उत्तम सोइ ॥१५
कुगुरु कुदेव कुधर्मका, करै न जो विश्वास।
है विश्वासी जैनको, जिनदासनिको दास ॥१६
सामायिक पोषा समै, गहै इकंत सुथान।
सो विविक्तशय्यासना, भाषै श्रीभगवान ॥१७
करनों पंचम तप भया, अव छट्ठो तप धार।
कायकलेस जु नाम है कहूं सूत्र अनुसार ॥१८
अति उपसर्ग उदय भयौ, ताकरि मन न डिगाय।
क्षमावान शांतिक महा, मेरु समान रहाय ॥१९
देव मनुज तिरजंच कृत, अथवा स्वतः स्वभाव।
उपजी जो उपसर्ग है, तामैं निर्मल भाव ॥२०
खेद न आने चित्तमें, कायकलेस सहेय।
सो कलेस नहिं पावई, ज्ञान शरीर लहेय ॥२१
गिरि-सिर ग्रीषममैं रहै, शीतकाल जल-तीर।
वर्षाऋतु तरु-तल वसइ, सो पावै अशरीर ॥२२
आतापन जोग जु धरै, कष्ट सहै जु अशेष।
अति उपवास करै सुधी, सो तप कायकलेश ॥२३
कायकलेसें सहु मिटै, तन मनके जु कलेस।
महापाप कर्म जु कटैं, गुण उपजेंहि अशेष ॥२४
मुनि श्रावक दोऊनिकों, करिवां कायकलेश।
संकलेसता भाव तजि, इह आज्ञा जगतेश ॥२५
वनवासीके अति तपा, घरवासीके अल्प।
अपनी शक्ति प्रमाण तप, करिवां त्याग विकल्प ॥२६
ए षट वाहिज तप कहै, अव अभ्यन्तर धारि।
इह भाषैं श्रुतकेवली, जिनवाणी अनुसार ॥२७
दोष न करई आप जो, करवावै न कदापि।
दोषतनो अनुमोदना, करै नहीं बुध कापि ॥२८
मन वच तन करि गुणमई, निरदोषो निरुपाधि।
आनन्दी आनंद मय, धारै परम समाधि ॥२९
अथवा कदै प्रमादतैं, किंचित लागै दोष।
तौ अपने औगुण सुधी, नहिं गोपै व्रतपोष ॥३०

श्रीगुरु पास प्रकाशई, सरल चित्तकरि धीर।
स्वामी लाग्यो दोष मुझ, दण्ड देहु जगवीर ॥३१
तव जो श्रीगुरु दण्ड दे, व्रत तप दान सुयोग।
सो सव श्रद्धा तें करै, पावै पंथ निरोग ॥३२
ऐसी मनमें ना धरै, अलप हुतो यह दोष।
दियौ दण्ड गुरुने महा, जाकरि तनको शोष ॥३३
सवै त्यागि शंका सुधी, सकल विकलपा डारि।
प्रायश्चित्त करै तपा, गुरु आज्ञा अनुसारि ॥३४
वहुरि इच्छै दोषकों, त्यागै मन वच काय।
देहतनें सौ टूंक ह्वै, तोहु न दोष उपाय ॥३५
या विधिके निश्चय सहित, वरतै ज्ञानी जीव।
ताकै तप ह्वै सातमों, भाषें त्रिभुवन-पीव ॥३६
जो चितवै निजरूपकों, ज्ञानस्वरूप अनूप।
चेतनता मंडित विमल, सकल लोकको भूप ॥३७
वार वार ही निज लखै, जानें वारम्वार।
वार वार अनुभव करै, सो ज्ञानी अविकार ॥३८
विकथा विपय कपायतें, न्यारों वरतै सन्त।
ता विरकतके दोष कहु, कैसे उपजे मित ॥३९
निरदोषी वहुगुण धरै, गुणी महाचिद्रूप।
तासों परचै पाइयो, सो तप धारि अनूप ॥४०
दोषतनों परिहार जो, कहिये प्रायश्चित्त।
धारै सो निजपुर लहै, गहै सासतो वित्त ॥४१
अव सुनि भाई आठमो, विनय नाम तप धार।
विनय मूल जिनधर्म है, विनय सु पंच प्रकार ॥४२
दरसन ज्ञान चरित्र तप, ए चउ उत्तम होइ।
अर इन चउके धारका, उत्तम कहिये सोइ ॥४३
इन पांचनिको अति विनय, सो तप विनय प्रधान।
ताके भेद सुनूं भया, जाकरि पद निरवान ॥४४
दरसन कहिये तत्त्वकी, श्रद्धा अति दृढरूप।
ज्ञान जानिवौ तत्त्वकौ, संशय रहित अनूप ॥४५
चारित थिरता तत्त्वमें, अति गलतानी होइ।
तप इच्छाकों रोकिवौ, तन मन दण्डन सोइ ॥४६
ए है चउ आराधना, इन बिन सिद्ध न कोय।
इनको अति आराधिवौ, विनयरूप तप सोय ॥४७
रतनत्रय-धारक जना, तप द्वादश विधि धार।
तिनकी अति सेवा करै, तन मन करि अविकार ॥४८

सो उपचार कह्यौ विनय, ताके बहुत विभेद।
जिनवर जिन प्रतिमा बहुरि, जिनमन्दिर हर खेद ॥४९
जिनवानी जिन तीरथा. मुनि आर्याव्रत धार।
श्रावक और सु श्राविका समदृष्टी अविकार ॥५०
इनको विनय जु धारिवौ, गुण अनुरागी होइ।
सो तप विनय कहावई, धारैं उत्तम सोइ ॥५१
जैसे सेवक लोग अति, सेवें नरपति-द्वार।
तैसे चउविधि संघकों, सेवै सौ तप धार ॥५२
आप थकी जो उत्तमा, तिनको दासा होइ।
सवसों समता भावई, विनयरूप तप सोइ ॥५३
व्रत विन छोटे आपतैं, जे सम्यक्त निवास।
जिनधर्मी जिनदास हैं, तिनहूँ सों हित्त पास ॥५४
धर्मराग जाके भयो, सो इह विनय धरेय।
पंच प्रकार विनय करि, भव-सागर उतरेय ॥५५
अव सुनि वैयावृत्त जो नवमो तप सुखदाय।
जो उपचार करें सुधी, पर दुखहर अधिकाय ॥५६
हरैं सकल उपसर्ग जो, ज्ञानिनिके तप धार।
सुधी वृद्ध रोगीनिकों, करै सदा उपगार ॥५७
महिमादिक चाहै नहीं, निरापेक्ष व्रतधार।
वैयावृत्त करै भया, जिनवाणी अनुसार ॥५८
मुनिकों उचित मुनी करैं, टहल मुनिनिकी धीर।
मुनि सेवासम नाहि कोउ, त्रिभुवनमें गंभीर ॥५९
श्रावक भोजन पथ्य दे, औषधि आश्रय आदि।
करै भक्ति साधूनिकी, इह विधि है जु अनादि ॥६०
जो ध्यावै निजरूपको, सर्व विकलपा टारि।
सम दम भाव हि दृढ़ धरै, वैयावृत्त सो धारि ॥६१
सम कहिये समदृष्टिता, सकल जीवकों तुल्य।
देखैं ज्ञान विचारतैं, इह दृष्टी जु अतुल्य ॥६२
दम कहिये मन इन्द्रियां, दमै महा तप धारि।
चित्त लगावै आपसों, सहै लोककी गारि ॥६३
तजै लोक व्यवहारकों, धरै अलौकिक वृत्ति।
सो चउगतिकों दे जला, पावैं महानिवृत्ति ॥६४
सुनों सुवुद्धी कान धरि, दसमो तप स्वाध्याय।
सर्व तपनिमैं है सिरै, भाषैं त्रिभुवनराय ॥६५
नहि चाहै जु महंतता, करवावे नहि सेव।
चाह नहीं परभावकी, सेवै श्रीजिनदेव ॥६६

दुष्ट विकलपनिकों भया, जो नासन समरत्थ ।
सो पावै स्वाध्यायकों, फल केवल परमत्थ ॥६७
तत्त्व सुनिश्चय कारनें, करैं शुद्ध स्वाध्याय ।
सिद्धि करैं निज ऋद्धिकों, सो आतम लवलाय ॥६८
आगम अध्यातममई, जिनवरकौ सिद्धान्त ।
ताहि भक्ति करि जो पढ़ै, सो स्वाध्याय सुकान्त ॥६९
केवल आतम अर्थ जो, करै सूत्र अभ्यास ।
अपनी पूजा नहिं चहै, पावै तत्त्व अध्यास ॥७०
अपने कर्म कलंकके, काटनकों श्रुतपाठ ।
करैं निरन्तर धर्मधी, नासैं कर्म जु आठ ॥७१
भेद पंच स्वाध्यायके, उपाध्याय भाषेहिं ।
जे धारैं ते शांतधी, आतम रस चाखेहिं ॥७२
कही वाचना पृच्छना, अनुप्रेक्षा गुरु देव ।
आमनाय पुनि धर्मको, उपदेशी वहुभेव ॥७३
ग्रन्थ वांचवौ वाचना, पूछना पूछनरीति ।
वारंवार विचारिवौ, अनुप्रेक्षो परतीति ॥७४
आमनायकौ जानिवौ, जिनमारगकी वीर ।
धर्म-कथन करिवौ सदा, कहैं धर्मधर धीर ७५
निसप्रेही भवभावतैं, जो स्वाध्याय करेय ।
पावैं निजज्ञानकों, भवसागर उतरेय ॥७६

जो सेवैं जिनसूत्रकों, जग अभिलाष धरेय ।
गर्व धरै विद्यातनों, सो चउगति भरमेय ॥७७
हम पंडित वहुश्रुत महा, जानैं सकल जु अर्थ ।
हमहिं न सेवै मूढ़धी, देखौ वड़ौ अनर्थ ॥७८
इहै वासना जो धरै, सो नहिं पंडित कोइ ।
आतम भावे जो रमैं, सो वुध पंडित होइ ॥७९
मान वढ़ाइ कारनें, जे श्रुति सेवैं अंध ।
ते नहिं पावैं तत्त्वकों, करैं कर्मको वन्ध ॥८०
जैनसूत्र मद मान हर, ताकरि गर्वित होय ।
ताहि उपाय न दूसरौ, भ्रमैं जगतमैं सोय ॥८१
अमृत विषरूपौ भयौ, जाकौ और इलाज ।
कहौ, कहा जु वताइये, भाषैं पंडितराज ॥८२
जो प्रतिकूल विमूढ़धी, साधर्मिनितें होइ ।
पढ़िवौ गुनिवौ तासकें, हालाहल सम जोइ ॥८३
रागद्वेष करि परिणम्यूं, करैं असूत्र अभ्यास ।
सो पावै नहिं धर्मकों, करै न कर्म विनास ॥८४

युद्ध कथा कामादिका, कुकथा चावैं मूढ़ ।
लोक-रिझावन कारणें, सो पद लहै न गूढ़ ॥८५
जो जानैं निजरूपकूं, अशुचि देहतैं भिन्न ।
सो निकसैं भवकूपतैं, भटकैं भाव अभिन्न ॥८६
जानैं निज पर भेद जो, आतमज्ञान प्रवीन ।
सो स्वामी सब लोकको, सदा शांत-रस लीन ॥८७
विना निजातम जानिवैं, ह्वै न कर्म को रोध ।
आगम पाठ करै तऊ, नाहिं नाहिं कछु बोध ॥८८
लखिवौ आतमभावकौ, सो स्वाध्याय बखानि ।
मुनि श्रावक दोऊनिकौ, यह परमारथ जानि ॥८९
अब सुनि ग्यारम तप महा, कायोत्सर्ग शिवदाय ।
कायाकौ उतसर्ग जो, निर्ममता ठहराय ॥९०
त्याग्यां वैठ्यो देहकों, नहीं देहसों नेह ।
लग्यौ रंग निजरूपसों, बरसै आनंद मेह ॥९१
छिदौ भिदौ ले जाहु कोउ, प्रलय होउ निजसंग ।
यह काया हमरी नहीं, हम चेतन चिद अंग ॥९२
इहै भावना उर धरै, जल-मल-लिप्त शरीर ।
महारोग पीड़ै तऊ, भजै न औषध वीर ॥९३
व्याधितनों न उपायको, शिवकौ करै उपाय ।
इन्दी-विषय न सेवई, सेवै चेतनराय ॥९४
भयौ विरक्त जु भोगतैं, भोजन सज्जा आदि ।
काहूकी परवा नहीं, मेटी व्रह्म अनादि ॥९५
निजस्वरूप चितवन जग्यौ, भग्यौ भोगकौ भाव ।
लग्यौ चित्त चेतनयकी प्रकट्यो परम प्रभाव ॥९६
शत्रु मित्र सहु सम गिनैं, तजै राग अरु दोष ।
बंध-मोक्षतें रहित निज, रूप लख्यौ गुण कोष ॥९७

वेसरी छन्द

हे विरकत पुरुषनिकों भाई, इह कायोतसर्ग सुख-दाई ।
अरु जे तन पापनहै लागा, ते पावैं नहिं भाव विरागा ॥९८
उपकरणादिकमे मन राखैं, ते नहि ज्ञान सुधारस चाखैं ।
जग व्यवहार तजैं नहिं जौलों, नहि कायोत्सर्ग तप तौलों ॥९९
नाम त्यागकौ है उतसर्गा, कंपैं नहि जा है उपसर्गा ।
तव कायोत्सर्ग तप पावै, निज चेतनसों चित्त लगावै ॥१५००
एक दिवस द्वै दिवसा भाई, पाख मास ऊभौ हि रहाई ।
चउमासी छहमासी वर्षा, रहै जु ऊभौ चितमें हरषा ॥१

लहि निज ज्ञान भयौ अति पुष्टा, जाहि न घेरै विकलप दुष्टा।
सो कायोत्सर्ग तपधारी, पावै शिवपुर आनन्दकारी ॥२
मुनिके यह तप पूरण होई, श्रावकके किंचित तप जोई।
श्रावक हू नहिं देह-सनेही, जानो आतम तत्त्व विदेहो ॥३
मरणतनों भय तिनके नाहीं, ते कायोत्सर्ग तपमाहीं।
अव सुनि वारम तप है ध्याना, जा परसाद लहै निज ज्ञाना ॥४
अन्तर एक मुहूरत काला, ह्वै एकाग्रचित्त व्रत पाला।
ताकौ नाम ध्यान है भाई, च्यारि भेद भाषै जिनराई ॥५
द्वै प्रशस्त द्वै निंद्य वखानैं, श्रुत अनुसार मुनिनने जानैं।
आरति रौद्र अशुभ ए दोई, धर्म सुकल अति उत्तम होई ॥६
आरति तीव्र कषायें होई; महा तीव्रतैं रौद्र जु सोई।
मन्द कषायें धर्म सु ध्याना, जाहि न पावै जीव अज्ञाना ॥७
धर्मध्यानतैं सुकल सु ध्यान, सुकलध्यानतैं केवल ज्ञान।
रहित कषाय सुकल है सूधा, जा सम और न ध्यान प्रवूधा ॥८
चार ध्यान ए भाषैं भाई, तिनके सोला भेद कहाई।
ते तुम सुनहु चित्त धरि मित्रा, त्यागौ आरति रौद्र विचित्रा ॥९
आरतिके चउ भेद जु खोटे, पशुगति दायक औगुण मोटे।
इष्टवियोग अनिष्टसंजोगा, पीरा चिंतन होई अजोगा ॥१०
चौथो वंधनिदान कहावै, जो जीवनिको भव भरमावै।
वस्तु मनोहरको जु वियोगा, होय तवै धारै शठ सोगा ॥११
इष्ट वियागारत सो जानों, दुःखतरुवरकौ मूल वखानों।
दूजौ भेद अनिष्ट संजोगा, ताकौ भाव सुनौ भविलोगा ॥१२
वस्तु अनिष्ट मिलै जव आई, शोच करै तव भोंदू भाई।
भववनमें भरमैं शठमति सो, पाप वांधि पावै दुरगति सो ॥१३
रोगनिकरि पीड्या अति शठजन, आरति धार जो अपने मन।
सो पीरा-चितवन है तीजौ, आरतध्यान सदा तजि दीजौ ॥१४
चौथौ आरति त्यागौ भाई, वंधनिदान महा दुखदाई।
जप तप व्रत करि चाहै भोगा, ते जगमांहि महाशठ लोगा ॥१५
ए चारों आरति दुखदाई, भव-कारण भाषैं जिनराई।
रौद्रध्यानके चारि विभेदा, अव सुनि जे दायक अतिखेदा १६
हिंसाकरि आनन्द जु मानै, हिंसानन्दी धर्म न जानै।
मृषावाद करि धरै अनंदा, मृषानन्द सो जियको फन्दा ॥१७
चोरीतें आनंद उपजावै, सो अघ चौर्यानन्द कहावै।
परिग्रह वढ़ैं होय आनन्दा, सो जानों जु परिग्रहानन्दा ॥१८
ए चउ भेद हरें सुख साता, दुरमतिरूप उग्र दुखदाता।
पर विभूतिकी घटतौ चाहैं, अपनी संपत्ति देखि उमाहैं ॥१९

रौद्रध्यानके लक्षण एई, त्यागैं धन्य धन्य हैं तेई।
आरति रुद्र ध्यान ए खोटा, इनकरि उपजें पाप जु मोटा ॥२०
दुखके मूल सुखनिके खोवा, ए पापी हैं जगत डबोवा।
चउ आरतिके पाये भाई, तिर्यंग्गतिकारण दुखदाई ॥२१
रौद्रध्यानके चार ए पाये, अधोलोकके दायक गाये।
अशुभध्यान ये दोय विरूपा, लगे जीवके विकलप रूपा ॥२२
नरक निगोद प्रदायक तेई, वसैं मिथ्यात धरामैं एई।
कबहुं कदाचित अणुव्रत ताई, काहूके रौद्र जु उपजाई ॥२३
महाव्रत्तलों आरतध्याना, कबहुंक छट्ठे परमित थाना।
काहूके उपजें त्रय पाये, सप्तम ठाणे सर्व नसाये ॥२४
भोगारति उपजें नहि भाई, जो उपजें तो मुनि न कहाई।
अब सुन धर्मध्यानकी वातें, जे सहु पाप पंथकों घातें ॥२५
धर्म जु स्वतैं स्वभाव कहावै, पण्डितजन तासों लव लावै।
क्षमा आदि दशलक्षण धर्मा, जीवदया विनु कटइ न कर्मा ॥२६
इत्यादिक जिन-भाषित जेई, धारैं धर्म धीर हैं तेई।
धर्मविषैं एकाग्र सुचित्ता, विषय-भोगसे अतिहि विरत्ता ॥२७
जे वैराग्यपरायण ज्ञानी, धर्मध्यानके होंहि सु ध्यानी।
जो विशुद्धभावनिमें लागा, जिनतें रागदोष सहु भागा ॥२८
एक अवस्था अंतर वाहिर, निरविकल्प निज निधिके माहिर।
ध्यावै आतमभाव सुधीरा, ह्वै एकाग्रमना वर वीरा ॥२९
जे निजरूपा हैं समभावा, ममत वितीता जग निरदावा।
इन्द्री जीति भये जु जितिन्द्री, तिनकों ध्यानी कहैं अतिन्द्री ॥३०
चितवन्ता चेतन गुण-धामा, ध्यानहि लीना आतमरामा।
निरमोहा निरदुन्द सदा ही, चितमें कालिम नाहि कदा ही ॥३१
जेहि अनुभवैं निज चितधनकों, रोकैं मनकों सोखें तनकों।
आनन्दी निज ज्ञानस्वरूपा, तिनके धर्म रु ध्यान निरूपा ॥३२
मैत्री मुदिता करुणा भाई, अर मध्यस्थ महासुखदाई।
एहि भावना भावै जोई, धर्मध्यानको ध्याता सोई ॥३३
सर्वजीवसों मैत्रीभावा, गुणी देखि चितमैं हरषावा।
दुखी देखि करुणा उर आनै, लखि विपरीत राग नहि ठानैं ॥३४
द्वेष जु नाहि धरै जु महन्ता, है मध्यस्थ महा गुणवन्ता।
वहुरि धर्मके चारि जु पाया, ते सम्यकदृष्टिनिकों भाया ॥३५
आज्ञाविचय कहावै जोई, श्रीजिनवरने भाष्यौ सोई।
ताकी दृढ़ परतीति करै जो, संशय विभ्रम मोह हरै जो ॥३६
कर्म नाशको उद्यम ठानै, रागद्वेषकी परणति भानै।
सो अपायविचयो है दूजो, तिरै जगतथी धारै तू जो ॥३७

करै उपाय शुद्ध भावनिकौ, अर निरवाणपुरी पावनिकौ ।
तीजौ नाम विपाकविचय है, भव-भावनितैं भिन्न रहै हैं ॥ ३८
शुभके उदय संपदा आवै, अशुभ उदय आपद बहु पावै ।
दोऊ जानै तुल्य सदाही, हर्ष विषाद धरै न कदा ही ॥३९
पुनि संठाणविचय है चौथौ, सर्व जगतकों जानैं थोथौ ।
तीन लोकको जानि सरूपा, जिनमारग अनुसार अनूपा ॥४०
सबकौ भूषण चेतनराया, चेतनसों नहिं दूजी भाया ।
सर्व लोकसूं छांड़ि जु प्रीती, चेतनकी धारै परतीतो ॥४१
चेतन भावनिमैं ली लावै, अपनों रूप आपमें ध्यावै ।
ए हैं धरमध्यानके भेदा, सुकल-प्रदायक पाप-उछेदा ॥४२
चौथे गुण ठाणें होइ धर्मा, संपूरण गुण ठाणें परमा ।
धर्मध्यानके चउ गुणठाणा, ते देवाधिदेवने जाणा ॥४३
अहमिन्द्रादिक पद फल ताकौ, वरणे जाहिं न अति गुण जाकौ ।
कारण सुकल ध्यानकौ एही, धर्मध्यानतैं सुकल जु लेही ॥४४
मुनि श्रावक दोऊके गाया, धर्मध्यान सो नहीं उपाया ।
मुनिको पूरणरूप प्रवानों, श्रावकके कछु नून वखानों ॥४५
मुनिके अति ही निश्चलताई, श्रावकके किंचित थिरताई ।
परिग्रह चंचलताकौ मूला, जातैं धर्म न होय सथूला ॥४६
पै तृष्णा छांड़ी बहुतेरी, करि मरजादा परिग्रहकेरी ।
तातैं धर्मध्यानके पात्रा, श्रावक हू जाणों गुणगात्रा ॥४७
धर्मध्यानके च्यारि स्वरूपा, और हु श्रीगुरु कहे अनूपा ।
इक पिंडस्थ पदस्थ द्वितीया, रूपस्था तीजौ गनि लीया ॥४८
रूपातीत चतुर्थम भेदा, हद्द धर्मकी पाप-उछेदा ।
इनके भेद सुनौ मन लाये, जाकरि सुकलध्यानकूं पाये ॥४९
पिंडमाहिं सब लोक विभूती, चितवै ज्ञानी निज अनुभूती ।
पिंडलोककौ राजा चेतन, जाहि स्पर्श सकै न अचेतन ॥५०
ताकौ ध्यान करै जो ध्यानी, सो होवै केवल निज ज्ञानी ।
बहुरि पदस्थ ध्यान बुध धारै, जिनभाषित पद मन्त्र विचारै ॥५१
पंच परमगुरुमंत्र अनादी, ध्यावै धीर त्याग क्रोधादी ।
नमोकारके अक्षर भाई, पैंतीसौ पूरण सुख दाई ॥५२
षोड़श अक्षर मंत्र महंता, पंच परमगुरु नाम कहन्ता ।
मन्त्र षड़ाक्षर अ र हं त सि द्धा, अ सि आ उ सा पंच प्रबुद्धा ॥५३
नमोकारके पैंतिस अक्षर, प्रसिद्ध छै अरु षोड़स अक्षर ।
अरहंत सिध आयरिय उवझाया, साहू जपैंते अंक गिनाया ॥५४
चउ अक्षर अ र हं त जपौ जू, सिद्ध नाम उरमाहिं थपौ जू ।
द्वै अक्षर भूलौ मति भाई, सिद्ध-सिद्ध यह जाप कराई ॥५५

मन्त्र इकाक्षर है ओंकारा, ब्रह्मबीज इह प्रणव अपारा।
पंच परमपद या अक्षरमें, याहि ध्याय जगमैं नहि भरमैं ॥५६
शुक्लरूप अति उज्जल सजला, ध्यावै प्रणवातें हैं विमला।
सौऽहं सोऽहं अजपाजापा, हरै सन्तके सब सन्तापा ॥५७
इह सुर सबही प्राणीगणके, होवै श्वास उश्वास सबनिके।
पै नहि याकौ भेद जु पावै, तातैं भोंदू भव भरमावै ॥५८
जो यह नाद सुनै वरवीरा, पावै शुक्लध्यान गुणधीरा।
उज्जलरूप दाय ए अंका, ध्यावै सो नासै अघ-पंका ॥५९
जिनवर सो नहि देव जु कोई, अजपा सो नहि जाप सु होई।
मन्त्र अनेक जिनागम गाये, ते ध्यानी पुरुषनिने ध्याये ॥६०
सबमें पंच परम गुरु नामा, पंच इष्ट बिन मंत्र निकामा।
मन्त्राक्षरमाला जो ध्यावैं, नाम पदस्थ ध्यान सो पावै ॥६१
अब सुनि तीजौ भेद सु भाई, है रूपस्थ महासुखदाई।
कृत्रिम और अकृत्रिम मूरति, जिनवरको ध्यावै शुभ सूरति ॥६२
जिनवरकौ साकार स्वरूपा, तेरम गुणठाणें जु अनूपा।
अतिशय प्रातिहार्यधर स्वामी, धरै अनंत चतुष्टय नामी ॥६३
समवसरण शोभित जिनदेवा, ताहि चितारै उर धरि सेवा।
पुनि तजि रूप रंग गुणवाना, ध्यावै चौथौ भेद सुजाना ॥६४
रूपातीत समान न कोई, धर्मध्यानकौ भेद जु होई।
ध्यावै सिद्धरूप अतिशुद्धा, निराकार निरलेप प्रवुद्धा ॥६५
पुरुषाकार अरूप गुसांई, निरविकार निरदूषण सांई।
वसु गुण आदि अनंत गुणाकर, अवगुण-रहित अनंत प्रभाधर ॥६६
लोकशिखर परमेसुर राजै, केवलरूप अनूप विराजै।
जिनकों उर-अन्तर जे ध्यावै, रूपातीत ध्यान ते पावैं ॥६७
सिद्ध समान आपकों देखै, निश्चयनय कछु भेद न पेखै।
व्यवहारे प्रभुके हम दासा, निश्चय शुद्ध बुद्ध अविनाशा ॥६८
ए चारूं ध्यावैं जो धर्मा, ते हि पिछानै श्रुतकौ मर्मा।
धर्मध्यान चहुं गतिमैं होई, सम्यक बिन पावै नहि कोई ॥६९
छट्टम सप्तम मुनिके ठाणा, पंचम ठाणें श्रावक जाणा।
चौथे अव्रत सम्यकज्ञानी, तेऊ धर्मध्यानके ध्यानी ॥७०
चौथेसों ते सप्तमताई, धर्मध्यानकों कहैं गुसांई।
धर्मध्यान परभाव सुज्ञानी, नासै दस प्रकृती निजध्यानी ॥७१
प्रथम चौकरी तीन मिथ्याता, सुर नारक अर आयु विख्याता।
अष्टमसों चौदमलों सुकला, सुकल समान न कोई विमला ॥७२
शुकलध्यान मुनिराज हि ध्यावै, शुकलकरी केवलपद पावैं।
शुकल नसावैं प्रकृति समस्ता, करै शुकल रागादि विध्वस्ता ॥७३

जै जिन आतमसों लव लावैं शुकल तिनोंके श्रीगुरु गावैं।
शुकलध्यानके चारि जु पाये, ते सर्वज्ञदेवने गाये ॥७४
द्वै सुकला द्वै सुकल जु पर्मा, जानै श्रीजिनवर सहु मर्मा।
प्रथम पृथक्त वितर्कविचारा, पृथक नाम है भिन्न प्रचारा ॥७५
भिन्न भिन्न निज भाव विचारै, गुण पर्याय स्वभाव निहारै।
नाम वितर्क सूत्रकौ होई, श्रुति अनुसार लखै निज सोई ॥७६
भावथकी भावांतर भावै, पहलो शुकल नाम सो पावै।
दूजौ है एकत्ववितर्का, अवीचार अगणित द्युति अर्का ॥७७
भयो एकतामें लवलीना, एकीभाव प्रकट जिन कीना।
श्रुत अनुसार भयौ अविचारी, भेदभाव परिणति सब टारी ॥७८
तीजौ सूक्षम किरियाधारी, सूक्षम जोग करै अविकारी।
चौथो जोगरहित निहकिरिया, जाहि ध्याय साधू भव तिरिया ॥७९
अष्टम ठाणें पहलो पायो, बारमठाणैं दूजौ गायौ।
तीजौ तेरमठाणें जानों, चौथो चौदमठाणें मानों ॥८०
इनके भेद सुनों धरि, भावा, जिनकरि नासै सकल विभावा।
होंहि पवित्र भाव अधिकाई, जे अब तक हुए नहि भाई ॥८१
भाव अनन्त ज्ञान सुख आदी, तिनको धारक वस्तु अनादी।
लिये अनन्ता शक्ति महन्ती, धरै विभूति अनन्तानन्ती ॥८२
अपनी आप माहि अनुभूती, अति अनंतता अतुल प्रभूती।
अपने भाव तेहि निज अर्था, और सबै रागादि अनर्था ॥८३
अपनो अर्थ आपमें जानै, आतम सत्ता आप पिछानै।
इक गुणतैं दूजौ गुण जावै, ज्ञानथकी आनन्द बढ़ावै ॥८४
गुण अनन्तमें लीलाधारी, सो पृथक्त वीतर्क विचारी।
अर्थथकी अर्थान्तर जावै, निज गुण सत्ता माहि रमावै ॥८५
योगथकी योगान्तर गमना, राग द्वेष मोहादिक वमना।
शब्दथकी शब्दान्तर सोई, ध्यावै शब्द-रहित ह्वै सोई ॥८६
व्यंजन नाम शुद्ध परजाया, जाको नाश न कबहुँ बताया।
वस्तुशक्ति गुणशक्ति अनन्ती, तेई पर्यय जानि महन्ती ॥८७
व्यंजनतैं व्यंजन परि आवे, निज स्वभाव तजि कितहु न जावै।
श्रुति अनुसार लखै निजरूपा, चिनमूरति चैतन्य स्वरूपा ॥८८
जैनसूत्रमें भाव श्रुती जो, प्रगटै अनुभव ज्ञानमती जो।
सो पृथक्तवित्तर्क विचारा, ध्यावै साधू ब्रह्म विहारा ॥८९

दोहा

जानि पृथक्त अनन्तता, नाम वितर्क सिद्धंत।
है विचार अविचार निज, इह जानों विरतन्त ॥९०

वेसरी छन्द

लश्या सुकल भाव अति शुद्धा, मन वच-काय सर्वं जु निरुद्धा।
यामैं एक और है भेदा, सो तुम धारहु टारहु खेदा ॥९१
उपशमश्रेणी क्षपक जु श्रेणी, तिनमें क्षायक मुक्ति निसैनी।
पहलो शुक्ल जु दोऊ धारै, दूजौ क्षपकविना न निहारै ॥९२
उपशम धारे ग्यारम ठाणा, परम्परै उत्तरै गुणठाणा।
जो कदाचि भवहूतैं जाई, तौ अहमिन्द्रलोककों जाई ॥९३
नर ह्वै करि धारे फिर धर्मा, चढ़ै क्षपकश्रेणी जु अमर्मा।
क्षपक श्रेणिवर वीर मुनिन्द्रा, होवे केवलरूपजिनिन्द्रा ॥९४
बारम ठाणें दूजौ सुकला, प्रकटै जा सम और न विमला।
द्वैमें क्षपकश्रेणि अधिकाई, कही जाय नहिं क्षपक बढ़ाई ॥९५
अष्टम ठाणें प्रगटै श्रेणी, सप्तमलों श्रेणी नहिं लेणी।
क्षपक श्रेणिवर सुकल निवासा, प्रकृति छतीस नवें गुण नासा ॥९६
दशमें सूक्षम लोभ खिपावें, दशमाथी बारमकों जावें।
ग्यारमकों पैंडौ नहिं लेवे, दूजौ सुकलध्यान सुख वेवे ॥९७
साधकताकी हद्द बताई, बारमठाण महा सुखदाई।
जहां षोड़शा प्रकृति खिपावै, शुद्ध एकतामें लव लावै ॥९८

सोरठा

मायाँ मोह पिशाच, पहले पायेसे श्रीमुनी।
तजौ जगतको नाच, पायो ध्यायौ दूसरौ ॥९९
है एकत्ववितर्क, अवीचार दूजौ महा।
कोटि अनन्ता अर्क, जाकौ सो तेज न लहै ॥१६००
ज्ञानावरणीकर्म, दर्शनावरणी हू हते।
रह्यौ नाहिं कछु मर्म, अन्तराय अन्त जु भयौ ॥१
निरविकल्प रस माँहि, लीन भयौ मुनिराज सो।
जहाँ भेद कछु नाहिं, निजगुण पर्ययभावतें ॥२
द्रव्य सूत्र परताप, भावसूत्र दरस्यो तहाँ।
गयो सकल सन्ताप, पाप पुण्य दोऊ मिटैं ॥३
एक भावमें भाव, लखै अनन्तानन्त ही।
भागे सकल विभाव, प्रगटे ज्ञानादिक गुणा ॥४
अपनों रूप निहार, केवलके सन्मुख भयौ।
कर्म गये सब हारि, लरि न सकै जासें न को ॥५
एकहि अर्थं लीन, एकहि शब्दै माँहि जो।
एकहि योग प्रवीन, एकहि व्यंजन धारियौ ॥६

एकत्व नाम अभेद, नाम वितर्क सिद्धंतकौं।
निरविचार निरखेद, दूजौ पायो इह कह्यौ ।।७
जहाँ विचार न कोय, भागे विकलप जाल सहु।
क्षीणकषायी होइ, ध्यानारूढ़ भयौ मुनी ।।८
दूजौ पायो येह, गायौ गुरु आज्ञा थकी।
करैं कर्मको छेह, अब सुनि तीजौ शुकल तू ।।९
सूक्षमकिरिया नाम, प्रगटै तेरम ठाण जो।
जो निज केवल धाम, श्रुतज्ञानीके है परे ।।१०
लोकालोक समस्त, भासै केवल बोधमें।
केवल सो न प्रशस्त, सर्वलोकमें और कोउ ।।११
जे अघातिया नाम, गोत्र वेदनी आयु हैं।
तिनकों नाशै राम, परम शुकल केवल थकी ।।१२
पिच्यासी प्रकृतो जु, जिनके ठाणें तेरमें।
जरो जेवरी सी जु, तिनकूं नाशैं सो प्रभू ।।१३
सूक्षमक्रिया प्रवृत्ति, ध्यावैं तीजौ शुकल सो।
बादरजोग निवृत्ति, कायजोग सक्षम रहै ।।१४
करै जु सूक्षम जोग, तेरम गुणके छेहु रैं।
पावैं तबैं अजोग, चौदम गुणठाणें प्रभू ।।१५
तहां सु चौथो ध्यान, है जु समुच्छिन्नक्रिया।
ताकरि श्रीभगवान, बेहत्तरि तेरा हतै ।।१६
गई प्रकृति समस्त, सौ ऊपरि अड़ताल जे।
भये भाव जड़ अस्त, चेतन गुण प्रगटे सबै ।।१७
करनी सकल उठाय, कृत्यकृत्य हूवौ प्रभू।
सो चौथो शिवदाय, परम शुकल जानों भया ।।१८
पंच लघुक्षर काल, चौदम ठाणें थिति करै।
रहित जगत जंजाल, जगत-शिखर राजै सदा ।।१९
बहुरि न आवैं सोय, लोकशिखामणि जगततैं।
त्रिभुवनको प्रभु होय, निराकार निर्मल महा ।।२०
सबकी करनी सोइ, जानैं अंतरगत प्रभू।
सर्व-व्यापको होइ, साखीभूत अव्यापको ।।२१
ध्यान समान न कोइ, ध्यान ज्ञानको मित्र है।
सो निज ध्यानी होइ, ताकों मेरी वंदना ।।२२
धर्ममूल ए दोय, ध्यान प्रशंसा योग्य हैं।
आरति रूद्र न होय, सा उपाय करि जीव तू ।।२३
धर्म अगनिकौ दीप, शुकल रतनकौ दौप है।
निज गुण आप समीप, तिनकों ध्यावौ लोक तजि ।।२४

ध्यान तनूं विस्तार, कहि न सके गणधर मुनी ।
कैसे पावें पार, हमसे अलपमती भया ॥२५
तप जप ध्यान निमित्त, ध्यान समान न दूसरो ।
ध्यान धरो निज चित्त, जाकरि भवसागर तिरो ॥२६
तपकूं हमरी ढोक, जामें ध्यान जु पाइये ।
मेटै जगको शोक करै कर्मको निर्जरा ॥२७
अनशन आदि पवित्र, ध्यान लगैं तप गाइया ।
बारा भेद विचित्र, सुनों अबै समभाव जो ॥२८

इति द्वादश तप निरूपणम् ।

अथ सम भाव वर्णन

छप्पय चाल

राग द्वेष अर मोह, एहि रोकै समभावें ।
जिनकरि जगके जीव, नाहिं शिवथानक पावें ।
तेरा प्रकृति राग, द्वेषकी बारा जानो ।
मोहतनी हैं तीन, ए अट्ठाईस बखानों ॥
एक मोहके भेद दो, दर्शन चारित्र ए ।
दर्शन मोह मिथ्यात भव, जहां न सम्यक सोहए ॥२९
राग द्वेष ए दोय, जानि चारित्र जु मोहा ।
इनकरि तप नहीं व्रत, एह पापो पर द्रोहा ॥
इनकी प्रकृति पचीस, तेहि तजि आतमरामा ।
छांडो तीन मिथ्यात, यही दोयनिके धामा ॥
स्वपर विवेक विचार विना, धर्म अधर्म न जो लखै।
सो मिथ्यात अनादि प्रथम, ताहि त्यागि निजरस चखैं ॥३०
दूजो मिश्र मिथ्यात, होय तीजे गुण ठाणें ।
जहां न एक स्वभाव, शुद्ध आतम नहि जाणें ॥
सत्य असत्य प्रतीति, होय दुविधामय भावें ।
ताहि त्यागि गुणखानि, शुद्ध निजभाव लखावै ॥
तीजी सम्यक् प्रकृति मिथ्यात, समकितमैं उदवेग कर ।
भली दोयतें तीसरो, तौ पन चंचलभाव धर ॥३१

दोहा

कहे तीन मिथ्यात ए, दरशन मोह विकार ।
अब चारित्र जु मोहको, भेद सुनो निरधार ॥३२
कही कषाय जु षोडसो, नो-कषाय नव मेलि ।
ए पच्चीसों जानिये, राग द्वेषकी वेलि ॥३३

चउ माया चउ लोभ अर, हासि रती त्रय वेद।
ए तेरा हैं रागकी, देहि प्रकृति अति खेद ॥३४
चार क्रोध अर मान चउ, अरति शोक भय जानि।
दुरगंधा ये द्वादशा, प्रकृति द्वेषकी मानि ॥३५
लगीं अनादि जु कालकी, भरमावै जु अनंत।
विनसैं भव्यनिके भया, ह्वै न अभविके अन्त ॥३६
रोकै सम्यक्दृष्टिकों, कोकै सकल विभाव।
ढोकै मिथ्यादृष्टिकों, नहिं जामें समभाव ॥३७
अनंतानुवन्धी इहै, प्रथम चौकरी जानि।
त्यागै तीन मिथ्यात जुत, सो समदृष्टी मानि ॥३८

छप्पय छन्द

समकित बिनु नहिं होत, शांतिरूपी समभावा।
चौथे गुण ठाणें जु कछुक, समभाव लखावा।
द्वितिय चौकरी वहुरि, सोहु अव्रतमय भाई।
नाम अप्रत्याख्यान, जा छतैं व्रत न पाई ॥
दोय चौकरी तीन मिथ्या, त्याग होय श्रावकव्रती।
प्रगटै गुणठाण जु पंचमैं, पापनिकी परिणति हती ॥३९
चढै तहां समभाव, होय रागादिक नूना।
अव्रततैं गनि ऊंच, साधुव्रत्तनितैं ऊना ॥
तृतिय चौकरी जानि, नाम है प्रत्याख्यानी।
रोकै मुनिव्रत एह, ठाण छट्ठो शुभध्यानी ॥
तीन चौकरी तीन मिथ्या, छांड़ि साधु ह्वै संजमी।
वृद्धि होय समभावई, मन इन्द्री सव ही दमी ॥४०

दोहा

चौथी संजुलना सही, रोकै केवलज्ञान।
जाके तीव्र उदय-थकी, होय न निश्चल ध्यान ॥४१

छप्पय छन्द

चौथी चौकरि टारै, नाम संजुलन जवै ही।
नौ-कषाय नव भेद, नाशि जावै जु सवै ही ॥
यथाख्यात चारित्र, ऊपजै वारम ठाणें।
पूरण तव समभाव, होय जिनसूत्र प्रमाणें ॥
क्रोध मान छल लोभ, चारूं एक एक चउ भेद ए।
ह्वै षोडश नव युक्त ये, मोह प्रकृति अति खेद ए ॥४२

दोहा

अनंतानुबंधी प्रथम, द्वितीय अप्रत्याख्यान।
तीजी प्रत्याख्यान है, चउथी है संजुलान ॥४३
कही चौकरी चारि ए, चारों गतिको मूल।
चार-तनी सोला भई, भेद मोक्ष प्रतिकूल ॥४४
हास्य अरति रति शोक भय, दुरगंधा दुखदाय।
नो-कषाय ए नव कही, पंचवीस समुदाय ॥४५
राग द्वेषकी प्रकृति ए, कही पचीस प्रमान।
तीन मिथ्यात समेत ए, अट्ठाईस बखान ॥४६
जायं जबैं सब ही भया, तब पूरण समभाव।
यथाख्यातचारित्र ह्वै, क्षीणकषाय प्रभाव ॥४७
मुनिके जातैं अलप हैं, छठें सातमें ठाण।
पन्द्रा प्रकृति अभावतैं, ता माफिक सम जाण ॥४८
श्रावकके यातें अलप, पंचम ठाणें जाण।
ग्यारा प्रकृति गयां थकीं, ता माफिक परवाण ॥४९
श्रावकके अणुवृत्त है, इह जानों निरवार।
मुनिके पंच महाव्रता, समिति गुपति अविकार ॥५०
श्रावकके चौथे अलप, चौथो अव्रत ठाण।
तहां सात प्रकृति गई, ता माफिक ही जाण ॥५१
गुणठाणा समभावके, ह्वै ग्यारा तहकीक।
चौथे सूं ले चौदमा-तक नहिं बात अलीक ॥५२
चौथे जघन जु जानिये, मध्य पंचमे ठाण।
छट्ठासूं दसमा लगै, बढ़तो बढ़तो जाण ॥५३
बारम तेरम चौदवें, है पूरण समभाव।
जिन शासनको सार यह, भव-सागरकी नाव ॥५४

छप्पय

छट्ठमसों ले·······जुगल मुनीके जाणा।
तिनकी सुनहु विचार, जैनशासन परवाणा ॥
छट्टम सप्तम ठाण, प्रकृति पंद्रा जब त्यागी।
तीन मिथ्यात विख्यात, चौकरी इक तीन उ भागी ॥
तब उपजै समभावई, श्रावकके अधिकी महा।
पै तथापि तेरा रही, तातें पूरण नहिं कहा ॥५५
रहो चौकरी एक, और गनि नो-कषाय नव।
तिनको नाश करेय, सो न पावै कोई भव ॥

छट्टे तीव्र जु उदै, सातवें मंद जु इनकौ।
इनमैं षट हास्यादि, आठवें अन्त जु तिनकौ ॥
क्रोध मान अर कपट नो वेद तीनही नहि यां।
चौथे चौकरि लोभ सूक्षम दश वेंठाण विनाशिया ॥५६

चाल छन्द

एकादशमा द्वादशमा, पुनि तेरम अर चौदशमा।
समभावतने गुणथाना, ए चार कहे भगवाना ॥५७
ग्यारम है पतन स्वभावा, डिगि जाय तहाँ समभावा।
वारहमैं परम पुनीता, जासम नहि कोइ अजीता ॥५८
तेरम चौदम गुणठाणा, परमातरूप वखाना।
समभाव तहाँ है पूरा, कीये रागादिक चूरा ॥५९
नहि यथाख्यात सौ कोई, समभाव-सरूपी सोई ॥
इह सम उतपत्ति वताई, रागादिक नाश कराई ॥६०
अव सुनि सम लक्क्षण संता, जा विधि भाषैं भगवंता।
जीवौ-मरिवौ सम जानै, अरि-मित्र समान वखानै ॥६१
सुख-दुख अर पुण्य जु पापा, जानै सम ज्ञान-प्रतापा।
सव जीव समान विचारै, अपने से सर्व निहारै ॥६२
चिंतामणि-पाहन तुल्या, जिसके समभाव अतुल्या।
सुरगति अर नरक समाना, सव राव रंक सम जाना ॥६३
जिनके घरमैं नहि ममता, उपजी सुखसागर समता।
वन-नगर समान पिछानैं, सेवक साहिव सम जानैं ॥६४
समसान-महल सम भावै, जिनके न विषमता आवै।
है लाभ-अलभ समाना, अपमान-मान सम जाना ॥६५
गिरि-ग्राम समान जिनूंके, सुर-कीट समान तिनूंके।
सुरतरु-विषतरु सम दोऊ, चन्दन-कर्दम सम होऊ ॥६६
गुरु-शिष्य न भेद विचारै, समता परिपूरण धारैं।
जानै सम सिंह-सियाला, जिनके समभाव विशाला ॥६७
संपत्ति-विपदा द्वै सरिखी, लघुता-गुरुता सम परखी।
कंचन लोहा सम जाके, रंच न है विभ्रम ताके ॥६८
रति-अरति हानि अर वृद्धी, रज सम जानैं सव ऋद्धी।
खर-कुंजर तुल्य पिछानैं, अहि फूलमाल सम जानैं ॥६९
नारी नागिन सम देखै, गृह कारागृह सम पेखै।
सम जानैं इष्ट-अनिष्टा, सम मानैं अवलि-वलिष्टा ॥७०
जे भोग रोग सम जानै, सव हर्ष रोग सम मानैं।
रस नीरस रंग कुरंगा, सुसवद कुसवद सम अंगा ॥७१

शीतल अर उष्ण समाना, दुरगंध सुगंध प्रमाना।
नहिं रूप कुरूप जु भेदा, जिनके समभाव निवेदा ॥७२
चक्री अर निरधन दोई, कछु भेदभाव नहिं होई।
चक्राणी अर इन्द्राणी, अति दीन नारि सम जाणी ॥७३
इन्द्र नागेन्द्र नरेन्द्रा, पुनि सर्वोत्तम अहमिन्द्रा।
सूक्षम जीवनि सम देखें, कछु भेद भाव नहिं पेखें ॥७४
थुति निंदा तुल्य गिनैं जो, पापनिके पुंज हनैं जो।
कृमि कुन्युकृष्ण सम तुल्या, पायौ समभाव अतुल्या ॥७५
सेवा उपसर्ग समाना, वैरी बाँधव सम माना।
जिनके द्विज शुद्र सरीखा, सीखी सदगुरुकी सीखा ॥७६
वन्दै निन्दै सो सरिखौ, समभावनि तन जिन परिखौ।
समतारस पूरण प्रगट्यौ, मिथ्यात महाभ्रम विघट्यौ ॥७७
तिनकी लखि शांत सु मुद्रा, रौद्र जु त्यागैं अति रुद्रा।
चीता मृगवर्ग न मारै, अति प्रीति परस्पर धारै ॥७८
गरुड़ा नहिं नाग विनासै, नागा नहिं दादर नासै।
उन्दर मारै न विडाला, पंखिनिसौं प्रीति विशाला ॥७९
तिर विद्याधर नर कोई, सुर असुर न बाधक होई।
काहूकूं राव न दंडै, दुरजन दुरजनता छंडै ॥८०
काहूके चोर न पैसे, चोरी होवै कहु कैसे।
लखि समता-धारक मुनिकों, त्यागै पापी पापनिकों ॥८१
डाकिनिको जोर न चालै, हिंसक हिंसा सब टालै।
भूता नहिं लागन पावै, राक्षस व्यंतर भजि जावैं ॥८२
मंतर न चलैं जु किसीके, ये हैं परभाव रिषीके।
कोहू काहू नहिं मारै, सब जीव मित्रता धारै ॥८३
हरिनी मृगपतिके छावा, देखै निज-सुत समभावा।
वाघनिकूं गाय चुखावै, मार्जारी हंस खिलावै ॥८४
ल्याही अर मीढ़ा इकठे, नाहर अर बकरा बइठे।
काहूकौ जोर न चालै, समभाव दुखनिकों टालै ॥८५
रोगिनि के रोग नसावे, सोगिनि सोग त्रिलावै।
कारागृह तें सब छूटें, कोउ काहू कोनहिं लूटै ॥८६
इह ब्रह्म सुविद्यारूपा, निरदोष विराग अनूपा।
अति शांतिभावको मूला, समसों नहिं शिव अनुकूला ॥८७
नहिं समता पर छे कोऊ, सब श्रुतिकौ सार जु होऊ।
जो ममताकौ परित्यागी, सो कहिये सम बड़भागी ॥८८
मन इन्द्रीकौ जु निरोधा, सो दम कहिये प्रतिवोधा।
समतें क्रोधादि नशाया, दमतें भोगादि भगाया ॥८९

सम दम निरवाण प्रदाया, काहे धारौ नहिं भाया।
सव जैनसूत्र समरूपा, समरूप जिनेश्वर भूपा ॥९०
समताधर चउविधि संघा, समभाव भवोदधि लंघा।
पूरण सम प्रभुके पइये, तिनतैं लघु मुनिके लइये ॥९१
तिनतैं श्रावकके नूना, सम करै कर्मगण चूना।
श्रावकतैं चौथे ठाणें, कछुइक घटता परमाणें ॥९२
सम्यक बिन समता नाहीं, सम नांहि मिथ्यामत माहीं।
ममता है मोह सरूपा, समता है ज्ञान प्ररूपा ॥९३
सव छांड़ि विषमता भाई, ध्यावौ समता शिवदाई।
समकी महिमा मुनि गावै, समको सुरपति शिर नावै ॥९४
समसौं नहि दूजौ जगमैं, इह सम केवल जिनमगमैं।
सम अर्थ सकल तप वृत्ता, सम है मारग निरवृत्ता ॥९५
जो प्राणी समरस भावै, सो जनम मरण नहिं पावै।
यम नियमादिक जे जोगा, सवमैं समभाव अलोगा ॥९६
समकौ जस कहत्त न आवैं, जो सहस जीभ करि गावै।
अनुभव अमृतरस चाखै, सोई समता दिढ़ राखै ॥९७

इति समभाव निरूपण।

सम्यक्त्व

सवैया इकतीसा।

अष्ट मूलगुण कहे, वारह वरत कहे, कहे तप द्वादश जु समभाव साधका।
सम सा न कोऊ और सर्वकौ जु सिरमोर, याही करि पावैं ठौर आतम आराधका।
विषमता त्यागि अर समताके पंथ लागि, छाडौ सव पाप जेहि धर्मके विराधका।
ग्यारै पड़िमा जु भेद दोषनिकौ करै छेद, धारै नर धीर धरि सकै नांहि वाधका ॥९८

दोहा

पड़िमा नाम जु तुल्यकौ, मुनिमारगकी तुल्य।
मारग श्रावककौ महा, भाषैं देव अतुल्य ॥९९
वहुरि प्रतिज्ञाकों कहैं, पड़िमा श्रीभगवान।
होंहि प्रतिज्ञा धारका, श्रावक समतावान ॥१७००
मुनिके लहुरे वीर हैं, श्रावक पड़िमाधार।
मुनि श्रावकके धर्मको, मूल जु समकित सार ॥१
सम्यक चउ गतिके लहैं, कहै कहालों कोइ।
पै तथापि वरणन करूँ, संवेगादिक सोइ ॥२

सम्यकके गुण अतुल हैं, श्रावक तिरि नर होय।
मुनिव्रत मनुजहि धारहीं, द्विज छत वाणिज होय ॥३
संवेगो निरवेद अर, निंदन गरुहा जानि।
समता भक्ति दयालुता, वात्सल्यादिक मानि ॥४
धर्म जिनेसुर कथित जो, जीवदयामय सार।
तासौं अधिक सनेह है, सो संवेग विचार ॥५

भव तन भोग समस्ततें, विरकत भाव अखेद।
सो दूजौ निरवेद गुण, करैं कर्मकौ छेद ॥६
तीजौ निंदन गुण कह्यौ, निजकों निंदै जोइ।
मनमें पछितावौ करैं, भव भरमणकौ सोइ ॥७
चौथौ गरहा गुन महा, गुरुपै भापै वीर।
अपने औगुन समकिती, नहीं छिपावैं धीर ॥८

पंचम उपशम गुण महा, उपशमता अधिकाय।
प्राण हरै ताहू थकी, वैर न चित्त धराय ॥९
छट्टौ गुण भक्ती धरैं, सम्यकदृष्टी संत।
पंच परमपदकी महा, धारै सेव महंत ॥१०
सप्तम गुण वात्सल्य जो, जिन धर्मिनिसों राग।
अष्टम अनुकंपा गुणो, जीवदया व्रत लाग ॥११

उक्तं च गाथा—

संवेओ णिव्वेओ, णिंदण गरुहा य उवसमो भत्ती।
वच्छल्लं अणुकंपा, अट्ट गुणा हुंति सम्मत्ते ॥१२

चौपाई

भव्यजीव चहुँगतिके माहीं, पावैं समकित संशय नाहीं।
पंचेन्द्री सैनी विनु कोय, और न सम्यकदृष्टी होय ॥१३
जव संसार अलप ही रहै, तव सम्यक दरशनकों गहै।
प्रथम चौकरी तीन मिथ्यात, ए सातों प्रकृती विख्यात ॥१४
इनके उपशमतैं जो होय, उपशम नाम कहावै सोय।
इनके क्षयतै क्षायिक नाम, पावै मनुप महागुण धाम ॥१५
क्षायिक मनुष विना नहि लहै, क्षायिक तुरत ही भव-वन दहै।
केवल आदि मूल इह होय, क्षायिक सो नहि सम्यक कोय ॥१६
अव सुनि क्षय-उपसमकौ रूप, तीन प्रकार कह्यौ जिनभूप।
प्रथम चौकरी क्षय है जहां, तीन मिथ्यात उपसमैं तहां ॥१७
पहली क्षय-उपशम सो जानि, जिनवानी उरमैं परवानि।
प्रथम चौकरी पहल मिथ्यात, ए पांचों क्षय ह्वै दुखदात ॥१८

द्वै मिथ्यात उपशमें जहां दूजौ क्षय-उपशम है तहां।
प्रथम चौकरी द्वै मिथ्यात, ए षट क्षय होवैं जड़तात ॥१९
तृतिय मिथ्यात उपशमैं भया, तीजौ क्षय-उपशम सो लया।
वेदकसम्यक चार प्रकार, ताके भेद सुनों निरधार ॥२०
प्रथम चौकरी क्षय है जहां, दोय मिथ्यात उपशमैं तहाँ।
तृतिय मिथ्यात उदय जब होय, पहलौ वेदक जानौ सोय ॥२१
प्रथम चौकरी प्रथम मिथ्यात, ए पांचौ क्षय होय विख्यात।
द्वितिय मिथ्यात उपशमें जहां, उदय होय तीजेकौ तहां ॥२२
भेद दूसरौ वेदकतणों, जिनमारग अनुसारें भणों।
प्रथम चौकरी दो मिथ्यात, ए षट प्रकृति होय जब घात ॥२३
उदय तीसरौ मिथ्या होय, तीजौ वेदक कहिये सोय।
प्रथम चौकरी मिथ्या दोय, इन छहूँको उपशम जब होय ॥२४
उदय होय तीजौ मिथ्यात, सो चौथौ वेदक विख्यात।
ए नव भेद सु सम्यक कहे, निकट भव्य जीवनिनें गहे ॥२५

दोहा

क्षय-उपशम वरतैं त्रिविध, वेदक च्यारि प्रकार।
क्षायिक उपशम भेलि करि, नवधा समकित धार ॥२६
नवमे क्षायिक सारिखौ, समकित होय न और।
अविनाशी आनंदमय, सो सबकौ सिर मौर ॥२७
पहली उपशम ऊपजे, पहली और न कोय।
उपशमके परसादतें पाछे क्षायिक होय ॥२८
क्षायिक विनु नहिं कर्मक्षय, इह निश्चय परवानि।
क्षायिक दायक सर्व ए, सम्यकदर्शन मानि ॥२९
उपशमादि सम्यक्त सर्व, आदि अन्त जुत जानि।
क्षायिककौ नहिं अन्त है, सादि अनन्त वखानि ॥३०
सम्यकदृष्टी सर्व ही, जिनमारगके दास।
देव धर्म गुरु तत्त्वको, श्रद्धा अविचल भास ॥३१
अनेकांत सरधा लिया, शांतभाव धर धीर।
सप्तभंग वाणी रुचै, जिनवरकी गंभीर ॥३२
जीव अजीवादिक सबै, जिन आज्ञा परवान।
जानैं संशय रहित जो, धारै दृढ़ सरधान ॥३३
सप्त तत्त्व षट द्रव्य अर, नव पदार्थ परतक्ष।
अस्तिकाय हैं पंच ही, तिनकौ धारे पक्ष ॥३४
इष्ट पंच परमेष्ठिकौ, और इष्ट नहिं कोय।
मिष्ट वचन बोले सदा, मनमैं कपट न होय ॥३५

तजे अष्ट ही गर्व जो, है निगर्व गुणवान।
पुत्र-कलत्रादिक उपरि, ममता नाहि वखान ॥३६
तृण सम माने देहकों, निजसम जानें जीव।
धरै महा उपशांतता, त्यागै भाव अजीव ॥३७
सेवै विषयनिकों तऊ, नहीं विषयसूं राग।
वरतै गृह आरम्भमें, धारि भाव वैराग ॥३८
कवै दशा वह होयगी, धरियेगा मुनिवृत्त।
अथवा श्रावक वृत्त ही, करियेगो जु प्रवृत्त ॥३९
धिग धिग अव्रतभावकों, या सम और न पाप।
क्षणभंगुर विषया सवै, देहि कुगति दुख ताप ॥४०
इहै भावना भावतो, भोगनितैं जु उदास।
सो सम्यकदरसी भया पावै तत्त्वविलास ॥४१
सप्तम गुणके ग्रहणकों, रागी होय अपार।
साधुनिकी सेवा करै, सो सम्यक गुण धार ॥४२
सार्धमिनसौं नेह अति, नहि कुटुम्बसौं नेह।
मन नहि मोह-विलासमैं, गिनैं न अपनी देह ॥४३
जीव अनादि जु कालको, वसै देहमें एह।
वंध्यौ कर्म प्रपंचसों, भवमें भ्रमौ अच्छेह ॥४४
त्याग जोग जगजाल सव, लेन जोग निजभाव।
इह जाके निश्चय भयौ, सो सम्यक परभाव ॥४५
भिन्न भिन्न जानै सुधी, जड-चेतनकौ रूप।
त्यागै देह सनेह जो, भावै भाव अनूप ॥४६
क्षीर नीरकी भांति ये, मिलैं जीव अर कर्म।
नांहि तथापि मिलैं कदै, भिन्न भिन्न हैं धर्म ॥४७
यथा सर्पकी कंचुकी, यथा खडगकौ म्यान।
तथा लखै वुध देहकों, पायौ आतमज्ञान ॥४८
दोष समस्त वितीत जो, वीतराग भगवान।
ता विन दूजौ देव नहि, इह धारै सरधान ॥४९
सर्व जीवकी जो दया, ताहि सरदहै धर्म।
गुरु मानै निरग्रन्थकों, जाके रंच न भर्म ॥५०
जपै देव अरहंतकों दास भाव धरि धीर।
रागी दोषी देवकी, सेव तजै वर वीर ॥५१
रागी दोषी देवकों, जो मानै मतिहीन।
धर्म गिनै हिंसा विषैं, सो मिथ्या मत लीन ॥५२
परिग्रह धारकको गुरु, जो जानें जग माहि।
सो मिथ्यादृष्टी महा, यामैं संशय नांहि ॥५३

कुगुरु कुदेव कुधर्मकों, जो ध्यावै हिय अंध।
सो पावै दुरगति दुखा, करै पापकों वंध ॥५४
सम्यकदृष्टी चिंतवै, या संसार मंझार।
सुखकौ लेश न पाइये, दीखै दुःख अपार ॥५५
लक्ष्मी-दाता और नहिं, जीवनिकों जग माहिं।
लक्ष्मी दासी धर्मकी, पापथकी विनसाहि ॥५६
जैसौ उदय जु आवही, पूरव वांध्यौ कर्म।
तैसौ भुगतैं जीव सव, यामैं होय न भर्म ॥५७
पुण्य भलाई कार है, पाप वुराई कार।
सुख-दुखदाता होय यह, और न कोइ विचार ॥५८
निमितमात्र पर जीव हैं, इह निहचै निरधार।
अपने कीये आप ही, फल भुगते संसार ॥५९
पुण्यथकी सुर नर हुवै, पापथकी भरमाय।
तिर नारक दुरगति विषै, भव-भव अति दुख पाय ॥६०
पाप समान न शत्रु है, धर्म समान न मित्र।
पाप महा अपवित्र है, पुण्य कछुक पवित्र ॥६१
पुण्य-पापतें रहित जो, केवल आतमभाव।
सो उपाय निरवाणकौ, जामैं नहीं विभाव ॥६२
झूठी माया जगतकी, झूठौ सव संसार।
सत्य जिनेसुर धर्म है, जा करि ह्वै भव-पार ॥६३
व्यंतर देवादिकनिकों, जे शठ लक्ष्मीहेत।
पूजैं ते आपद लहैं, लक्ष्मी देय न प्रेत ॥६४
भक्ति किये पूजे थके, जो व्यन्तर धन देय।
तौ सव ही धनवन्त ह्वै, जगजन तिनकों सेय ॥६५
क्षेत्रपाल चंडी प्रमुख, पुत्र कलत्र धनादि।
देन समर्थ न कोइकों, पूजैं शठ जन वादि ॥६६
जो भवितव्यता जीवकौ, जा विधान करि होय।
जाहि क्षेत्र जा कालमैं, निःसंदेह ह्वै सोय ॥६७
जान्यौ जिनवर देवने, केवलज्ञान मंझार।
होनहार संसारकौ, ता विधि ह्वै निरधार ॥६८
इह निश्चय जाके भयौ, सो नर सम्यकवन्त।
लखै भेद षट द्रव्य के, भावै भाव अनन्त ॥६९
शंका भागी चित्ततें, भयो निशंकित वीर।
गुण परजाय स्वभाव निज, लखैं आप मैं धीर ॥७०
दृढ़ प्रतीत जिनवैन की, सम्यकदृष्टी सोय।
जाकै संशय जीव में, सो मिथ्याती होय ॥७१

सोरठा

जो नहिं समझी जाय, जिनवाणी अति सूक्षमा।
तो ऐसे उर लाय, संदेह न मन आनें सुधी ॥७२
बुद्धि हमारी मन्द, कछु समझें कछु नाहिं।
जो भाष्यौ जिनचन्द, सो सब सत्य स्वरूप है ॥७४
उदय होयगो ज्ञान, जब आवरणु नसाइगौ।
प्रगटेगौ निज ध्यान, तब सब जानी जायगी ॥७४

जिनवानी सम और, अमृत नाहिं संसार में।
तीन भुवन सिरमौर, हरै जन्म जर-मरण जो ॥७५
जिनधर्मिनि सों नेह, लग्यौ नेह जिनधर्मसू।
बरसै आनन्द मेह, भक्त भयो जिनराज को ॥७६
सो सम्यक धरि धीर, लहै निजातम भावना।
पावै भवजल तीर, दरसन ज्ञान चरित्त तैं ॥७७

ऋद्धिनि में बड़ ऋद्धि, रतननि में रतन जु महा।
या सम और न सिद्धि, इह निश्चय धारौ भया ॥७८
योगिनि में निज योग, सम्यक दरसन जानि तू।
हनै सदा सब शोक, है आनन्दमयी महा ॥७९

जोगीरासा

वन्दनीक है सम्यकदृष्टी, यद्यपि व्रत्त न कोई।
निन्दनीक है मिथ्यादृष्टी, जों तपसी हू होई॥
मुक्ति न मिथ्यादृष्टी पावै, तपसी पावै स्वर्गा।
ज्ञानी व्रत्त विना सुरपुर ले, तपधरि ले अपवर्गा ॥८०

दुरगति बन्ध करै नहिं ज्ञानी, सम्यकभावनि माहीं।
मिथ्याभावनि में दुरगति को, बन्ध होय बुधि नाहीं॥
समकित विन नहिं श्रावकव्रत्ती, अर मुनिव्रत हू नाहीं।
मोक्ष हु सम्यक बाहिर नाहीं, सम्यक आपहि माहीं ॥८१

अंग निशंकित आदि जु अष्टा, धारै सम्यक सोई।
शंका आदि दोष मल रहिता, निरमल दरशन होई॥
जिनमारग भाषै जु अहिंसा, हिंसा परमत भाषै।
हिंसा मारगकी तजि सरधा, दयाधर्म दृढ़ राखै ॥८२
संदेह न जाके जिय माहीं, स्यादवादकौ पंथा।
पकरै त्यागि एक नयवादी, सुनै जिनागम ग्रंथा॥
पहली अंग निसंसै सोई, दूजी कांक्षा रहिता!
जामैं जगकी वांछा नाहीं, आतम अनुभव सहिता ॥८३

शुभ करणी करि फल नहिं चाहै, इह भव परभवके जो।
करै कामना-रहित जु धर्मा, ज्ञानामृत फल ले जो ॥
इह भाष्यौ निःकांक्षित अंगा, अब सुनि तीजै भेदा।
निरविचिकित्सा अंग है भाई, जा करि भव-भ्रम छेदा ॥८४
जे दश लक्षण धर्म धरैया, साधु शांतरस लीना।
तिनकौ लखि रोगादिक युक्ता, सेव करै परवीना ॥
सूग न आनै मनमैं क्यूं ही, हरै मुनिनिकी पीरा।
सो सम्यकदृष्टी जिनधर्मा, तिरै तुरत भवनीरा ॥८५
चौथौ अंग अमूढ़ स्वभावा, नहीं मूढता जाकै।
जीवघातमैं धर्म न जानै, संशयमोह न ताके।
अति अवगाढ़ गाढ़ परतीती, कुगुरु कुदेव न पूजै।
जिन शासनकौ शरणो ले करि, जाय न मारग दूजै ॥८६
जानैं जीवदयामैं धर्मा, दया जैन ही माहीं।
आन धर्ममैं करुणा नाहीं, परतछ जीव हताई ॥
जो शठ लज्जा लोभ तथा, भय करिके हिंसा माहीं।
मानै धर्म सो हि मिथ्याती, जामैं समकित नाहीं ॥८७
पंचम अंग नाम उपगूहन, ताकौ सुनहु विवेका।
पर जीवनिकें आंखिनि देखैं, ढ़ांकै दोष अनेका ॥
आप जु दोष करै नहिं, ज्ञानी सुकृत रूप सदा ही।
अपने सुकृत नाहिं प्रकाशै, धरै न एक मदा ही ॥८८

दोहा

ढांकै अपने शुभ गुणा, ढाके परके दोप।
गावै गुण परजीवके, रहै सदा निरदोष ॥८९
जो कदाचि दूषण लगै, मन वच काय करेय।
तौ गुरु पै परकाशिकै, ताकौ दंड जु लेय ॥९०
जप तप व्रत दानादि कर, दूषण सर्व हरेय।
करै जु निंदा आपकी, परनिंदा न करेय ॥९१
जे परकासैं पारके, औगुन तेहि अयान।
जे परकासैं आपके, औगुण ते हि सयान ॥९२
जे गावैं गुन आपने, ते मिथ्याती आनि।
जे गावैं गुन गुरुनिके, ते समदृष्टी जानि ॥९३
छट्ठो अंग कहों अबै, थिरकरणा गुणवान।
धर्मथकी विचलेनिकूं प्रतिबोधै मतिवान ॥९४
थापैं धर्म मंझार जो, करै धर्मकी पक्ष।
आप डिगै नहिं धर्मतैं, भावै भाव अलक्ष ॥९५

थिरता गुण सम्यक्तको, प्रगट वात है एक।
चित्त अथिरता रूप जो, तौ मिथ्यात गिनेह ॥९६
सुनों सातमूं अंग अव, जिन मारगसों नेह।
जिनधर्मीकूं देखि करि, वरसै आनंद मेह ॥९७
तुरत जात वछरानि परि, नेह धरैं ज्यूं गाय।
त्यूं यह साधर्मी उपरि, नेह करै अविकाय ॥९८
जे ज्ञानी धरमातमा, मुनि श्रावक व्रतवंत।
आर्या और सुश्राविका, चउविधि संघ महंत ॥९९
तथा अव्रती समकिती, जिनधर्मी जग माहि।
तिनसों राखै प्रीति जो, यामैं संशय नाहि ॥१८००
तन मन धन जिनधर्म परि, जो नर वारै डारि।
सो वात्सल्य जु अंग है, भाख्यौ सूत्र विचारि ॥१
अष्टम अंग प्रभावना, कह्यौ सुनों धरि कान।
जा विधि सिद्धान्तनि विषै, भाख्यौ श्रीभगवान ॥२
भाँति-भाँति करि भासई, जिनमारगकों जो हि।
करै प्रतिष्ठा जैनकी, अंग आठमो होहि ॥३
जिनमंदिर जिनतीरथा, जिनप्रतिमा जिनधर्म।
जिनधर्मी जिनसूँत्रकी, करै सेव विन भर्म ॥४
जो अति श्रद्धा करि करैं, जिनशासनकी सेव।
वोलै प्रिय वाणी महा, ताहि प्रशंसै देव ॥५
जो दशलक्षण धर्मकी, महिमा करै सुजान।
इन्द्रिनके सुखकों गिनै, नरक निगोद निसान ॥६
कथनी करै न पारकी, पुनि-पुनि ध्यावै तत्त्व।
भावै आतमभाव जो, त्यागै सर्व ममत्व ॥७
कहे अंग ये प्रथम ही, मूलगुणनिके माहि।
अव हू पड़िमा मैं कहै, इन सम और जु नाहि ॥८
वार-वार थुति जोग ये, सम्यकदरसन अंग।
इनकों धारै सो सुधी, करै कर्मको भंग ॥९
अष्ट अंगकी धारिवौ, अष्ट मदनिको त्याग।
षट अनायतन त्यागिवौ, अतीचार नहिं लाग ॥१०
ते भाषै गुरु पंचविधि, वहुरि मूढ़ता तीन।
तजिवौ सातों व्यसनकौ, भय सातौं नहिं कीन ॥११
ए सव पहले हू कहै, अव हू भाषे वीर।
वार-वार सम्यक्त्व की, महिमा गावैं धीर ॥१२
अंग निशंकित आदि वहु, अठ गुण संवेगादि।
अष्ट मदनिको त्याग पुनि, अर वसु मूलगुणादि ॥१३

सात व्यसनको त्यागिवौ, अर तजिवौ भय सात।
तीन मूढ़ता त्यागिवौ, तीन शल्य पुनि भ्रात ॥१४
पट अनायतन त्यागिवौ, अर पाँचों अतिचार।
ए त्रेसठ त्यागै जु कोउ, सो समदृष्टी सार ॥१५
चौथे गुणठाणें तनी, कही वात ए भ्रात।
है अव्रत परि जगत तें, विरकित रूप रहात ॥१६
नहिं चाहै अव्रत दशा, चाहे व्रत्त-विधान।
मन में मुनिव्रत की लगन, सो नर सम्यकवान ॥१७
जैसे पकरयो चोरकूं, दे तलवर दुख घोर।
परवश वध वन्धन सहै, नहीं चोरको जोर ॥१८
त्यूं हि अप्रत्याख्यानने, पकरयो सम्यकवन्त।
परवश अव्रत में रहै, चाहै व्रत्त महन्त ॥१९
चाहै चोर जु छूटिवाँ, यथा वन्धतें वीर।
चाहै गृहतै छूटिवाँ, त्यों सम्यक धर धीर ॥२०
सात प्रकृतिके त्यागतें, जेती थिरता जोय।
तेती चौथे ठाणि है, इह जिन आज्ञा होय ॥२१

अथ ग्यारा व्रत वर्णन। दोहा

ग्यारा प्रकृति वियोगतै, होय पंचमो ठाण।
तव पड़िमा धारै सुधी, एकादश परिमाण ॥२२
तिनके नाम सुनों सुधी, जा विधि कहै जिनंद।
धारैं श्रावक वीर जे, तिन सम नाहिं नरिंद ॥२३
दरसन प्रतिमा प्रथम है, दूजी व्रत अधिकार।
तीजी सामायिक महा, चौथो पोसह धार ॥२४
सचितत्याग है पंचमो, छट्ठो दिन-तिय-त्याग।
तथा रात्रि-अनसन व्रती, धारै तपसों राग ॥२५
जानों पड़िमा सातवीं, ब्रह्मचर्यव्रत धार।
तजी नारि नागिन गिनै, तजै मोह जंजार ॥२६
निरारंभ ह्वैं अष्टमी, नवमी परिग्रह त्याग।
लौकिक वचन न वोलिवौ, सो दशमी वड़भाग ॥२७
एकादशमी दोय विधि, क्षुल्लक ऐलि विवेक।
है उदंडाहार द्वै, तिनमैं मुनिव्रत एक ॥२८
ऐलि महा उतकृष्ट हैं, ऐलि समान न कोय।
मुनि आर्या अर ऐलि ए, लिंग तीन शुभ होय ॥२९
भाषी एकादश सवें, प्रतिमा नाम जु मात्र।
अव इनकी विस्तार सुनि, ए सव मध्य सुपात्र ॥३०

चौपाई

प्रथम हि दरशन प्रतिमा सुणों, आतमरूप अनूप जु मुणों ।
दरशन मोक्ष-वीज है सही, दरशन करि शिव परसन लही ।।३१
दरशन सहित मूलगुण वरै, सात व्यसन मन वच तन हरै ।
विन अरहंत देव नहि कोय, गुरु निरग्रन्थ विना नहि होय ।।३२
जीवदया विन और न धर्म, इह निहचै करि टारै भर्म ।
संजम विन तप होय न कदा, इह प्रतीति धारै बुध सदा ।।३३
पहली प्रतिमाकौ सो धनी, दरशनवन्त कुमति सब हनी ।
आठ मूल गुण व्यसन जु सात, भाषैं प्रथम कथनमैं भ्रात ।।३४
तातैं कथन कियौ अब नाहि, श्रावक बहु आरम्भ तजाहि ।
है स्वारथमैं सांचौ सदा, कूट कपट धारै नहि कदा ।।३५
धरै शुद्ध व्यवहार सुधीर, परपीड़ाहर है जगवीर ।
सम्यक् दरशन दृढ़ करि धरै, पापकर्मकी परणति हरै ।।३६
क्रय विक्रयमैं कसर न कोय, लेन देनमैं कपट न होय ।
कियौ करार न लोपै जोहि, सा पहिली पड़िमा गुण होहि ।।३७
जाके उर कालिम नहि रंच, जाके घटमैं नाहि प्रपंच ।
जिनपूजा जप तप व्रत दान, धर्मध्यान धारे हि सुजान ।।३८
गुण इकतीस प्रथम जे कहै, ते पहली पड़िमामैं लहै ।
अब सुनि दूजी पड़िमाधार, द्वादश व्रत पालै अविकार ।।३९
पंच अणुव्रत गुणव्रत तीन, शिक्षाव्रत धारै परवीन ।
निरतीचार महामतिवान, जिनकौ पहली कियौ बखान ।।४०
अब तीजी पड़िमा सुनि संत, सामायिक धारी गुणवन्त ।
मुनिसम सामायिककी धार, थिरताभाव अतुल्य अपार ।।४१
करि तनकौ मनतैं परित्याग, भव भोगिनतैं होइ विराग ।
धरि कायोत्सर्ग वर वीर, अथवा पदमासन धरि धीर ।।४२
षट घट घटिका तीनूं काल, ध्यावै केवलरूप विशाल ।
सब जीवनिसूं समता भाव, पंच परम पद सेवै पांव ।।४३
सो सब वर्णन पहलो कियौ, बारा वरत कथनमैं लियौ ।
चौथी प्रतिमा पोसह जानि, पोसहमैं थिरता परवानि ।।४४
सो पोसहकौ सर्व सरूप, आगे गायौ अब न प्ररूप ।
पोसा समये साधु समान, होवै चौथी प्रतिमावान ।।४५
दूजी पड़िमा धारक जेहि, सामायिक पोसह विधि तेहि ।
धारै परि इनको सम नाहि, नहि ऐसी थिरता तिन मांहि ।।४६
तीजी सामायिक निरदोष, चौथी पड़िमा पौसह पोष ।
पंचम पड़िमा धरि बड़भाग, करै सचित्त वस्तुनिकौ त्याग ।।४७

काचौ जल अर कोरो धान, दल फल फूल तजै बुधिवान।
छाल मूल कन्दादि न चखै, कूंपल बीज अंकूर न भखै ॥४८
हरितकायको त्यागी होय, जीवदयाको पालक सोय।
सूको फल फोड़्या विन नांहि, लेवौ जोगि न ग्रन्थनि मांहि ॥४९
लोंन न ऊपरसे ले धीर, लोंन हु सचित्त गिनै वर वीर।
माटी हाथ धोयवे काज, लेय अचित्त दयाके काज ॥५०
खार तथा माटी जो जली, सोई लेय न काची डली।
पृथ्वीकाय विरावै नांहि, जीव असंख कहैं ता मांहि ॥५१
जलकायाकी पालै दया, सर्व जीवको भाई भया।
अगनिकायसों नांहि विरोध, दयावन्त पावैं निज वोध ॥५२
पवन करैं न करावे सोय, षट कायाको पीहर होय।
नांहि वनस्पति करै विराघ, जिनशासनकी धरै अगाध ॥५३
विकलत्रय अर नर तिर्यंच, सबको मित्र रहित परपंच।
जो सचित्तको त्यागी होय, दयावान कहिये नर सोय ॥५४
आप भखै नहिं सचित्त कदेय, भोजन सचित्त न औरहिं देय।
जिह सचित्तको कीयौ त्याग, जीती जीभ तज्यौ रस-राग ॥५५
दयाधर्म धारयौ तिह धीर, पाल्यौ जैन वचन गम्भीर।
अव सुनि छट्ठी प्रतिमा सन्त, जा विधि भाषी वीर महन्त ॥५६
द्वै मुहूर्त जव वाकी रहै, दिवस तहांतै अनशन गहै।
द्वै मुहूर्त जव चढ़िहै भान, तो लग अनशनरूप वखान ॥५७
दिनमें शील धरै जो कोय, सो छट्ठी प्रतिमाधर होय।
खान पान नहिं रैनि मझार, दिवस नारिको है परिहार ॥५८
पूछै प्रश्न यहाँ भवि लोग, निशिभोजन अर दिनको भोग।
ज्ञानी जीव न कोई करै, छट्ठो कहा विशेष जु धरै ॥५९
ताको उत्तर धारौ एह, औरनिको व्रत न्यून गिनेह।
मन वच तन कृत कारित त्याग, करै न अनुमोदन वड़भाग ॥६०
तव त्यागी कहिते श्रुति मांहि, या माहीं कछु संशय नांहि।
गमनागमन सकल आरम्भ, तजै रैनिमें नांहि अचंभ ॥६१
महाधीर वर वीर विशाल, दिनको ब्रह्मचर्य प्रतिपाल।
निरतीचार विचार विशेष, त्यागै पापारम्भ अशेष ॥६२
जैनी जिनदासनि को दास, जिनशासनको करे प्रकाश।
जो निशिभोजन त्यागी होय, छः मासा उपवासी सोय ॥६३
वर्ष एकमें इहै विचार, जावो जीव लगै विस्तार।
ह्वै उपवासनिकों सुनि वीर, तातैं निशिभोजन तजि धीर ॥६४
जो निशिकों त्यागै आरम्भ, दिनहू जाके अलपारम्भ।
अव सुनि सप्तम पड़िमा धनी, नारिनकूं नागिन सम गिनी ॥६५

धारयौ ब्रह्मचर्य व्रत शुद्ध, जिनमारगमें भयो प्रवुद्ध।
निशि वासर नारीकों त्याग, तज्यौ सकल जाने अनुराग ॥६६
मन वच काय तजी सब नारि, कृत कारित अनुमोद विचारि।
योनिरंध्र नारीको महा, दुरगति-द्वार इहै उर लहा ॥६७
इन्द्राणी चक्राणी देखि, निद्य वस्तु सम गिनें विशेष।
विपय-वासनामें नहि राग, जाने भोग जु काले नाग ॥६८
विपय-मगनता अति हि मलीन, विपयी जगमें दीखै दीन।
विपय समान न वैरी कोय, जीवनिकूं भरमावै सोय ॥६९
शील समान न सार न कोय, भवसागर तारक है सोय।
अब सुनि अष्टम पड़िमा भेद, सर्वारम्भ तजे निरखेद ॥७०
आप करै नहि कछु आरम्भ, तजे लोभ छल त्यागे दंभ।
करवावै न करै अनुमोद, साधुनिकों लखि धरै प्रमोद ॥७१
मन वच काय शुद्ध करि संत, जग धंधा धारै न महंत।
जीव घाततें कांप्यौ जोहि, सो अष्टम पड़िमाधर होहि ॥७२
असि मसि कृपि वाणिज इत्यादि, तजे जगत कारज गति वादि।
जाय पराये जीमें सोइ, गृह आरम्भ कछू नहि होइ ॥७३
कहि करवावै नाहीं वीर, सहज मिलै तो जीमें धीर।
ले जावै कुल किरियावन्त, ताकै भोजन ले बुधिवन्त ॥७४
जगत काज तजि आतम काज, करै सदा ध्यावै जिनराज।
दया नहीं आरम्भ मँझार, करि आरम्भ भ्रमै संसार ॥७५
तातें तजै गृहस्थारंभ, जीवदयाको रोप्यौ थंभ।
करि कुटुम्बको त्याग सुजान, हिंसारम्भ तजे मतिवान ॥७६
दया समान न जगमें कोइ, दया हेत त्यागे जग सोइ।
अब नवमी प्रतिमा कौ रूप, धारी भवि तजि जगत विरूप ॥७७
नवमी पड़िमा धारक धीर, तजै परिग्रहकों वर वीर।
अन्तरंगके त्यागे संग, रागादिकको नाहि प्रसंग ॥७८
बाहिरके परिग्रह घर आदि, त्यागे सर्व धातु रतनादि।
वस्त्र मात्र राखै बुधिवन्त, कनकादिक भीटे न महंत ॥७९
वस्त्र हु बहु मोले नहि गहै, अलप वस्त्र ले आनन्द लहै।
परिग्रहकों जानै दुःखरूप, इह परिग्रह है पापस्वरूप ॥८०
जहां परिग्रह लोभ तहां हि, या करि दया सत्य विनशाहि।
हिंसारम्भ उपावै एह, या सम और न शत्रु गिनेह ॥८१
तजै परिग्रह सो हि सुजान, तृष्णा त्याग करै बुधिवान।
जाको चाह गई सो सुखी, चाह करैं ते दीखें दुखी ॥८२
बाहिज ग्रन्थ-रहित जग माहि, दारिद्री मानव शक नाहि।
ते नहि परिग्रह-त्यागी कहैं, चाह करंते अति दुख लहैं ॥८३

जे अभ्यन्तर त्यागैं संग, मूर्च्छा रहित लहैं निजरंग।
ते परिग्रहत्यागी हैं राम, वांछा-रहित सदा सुखधाम ॥८४
ज्ञानी विन भीतरको संग, और न त्यागि सकें दुख अंग।
राग-द्वेष मिथ्यात विभाव, ए भीतरके संग कहाव ॥८५
तजि भीतरके वाहिर तजै, सो बुध नवमी पड़िमा भजै।
वस्त्र मात्र है परिग्रह जहाँ, धातुमात्रको लेश न तहां ॥८६
नर्म पूंजणी धारै वीर, षट कायनिकी टारैं पीर।
जल-भाजन राखे शुचि-काज, त्यागै धन धान्यादि समाज ॥८७
काठ तथा माटीको जोय, और पात्र राखै नहिं कोय।
जाय वुलायो जीमें जोय, श्रावकके घर भोजन होंय ॥८८
दशमी प्रतिमा-धर वड़भाग, लौकिक वचनथको नहिं राग।
विना जैनवानी कछु वोल, जो नहिं वोलै चित्त अडोल ॥८९
जगत काज सव ही दुखरूप, पापमूल परपंच स्वरूप।
तातें लौकिक वचन न कहै, जिनमारगकी सरधा गहै ॥९०
मौन गहै जगसेती सोय, सो दशमी पड़िमाधर होय।
श्रुति अनुसार धर्मकी कथा, करै जिनेश्वर भाषी यथा ॥९१
जगतकाजको नहिं उपदेश, ध्यावै धीरज धारि जिनेश।
वोलै अमृत वानी वीर, षट कायनिकी टारै पीर ॥९२
तजै शुभाशुभ जगके काम, भयो कामना-रहित अकाम।
जे नर करें शुभाशुभ काज, ते नहिं लहैं देश जिनराज ॥९३
राग-द्वेष कलहके धाम, दीसैं सकल जगतके काम।
जगतरीतिमें जे नर वसा, सो नहिं पावै उत्तम दसा ॥९४
दशमी पड़िमा धारक सन्त, ज्ञानी ध्यानी अति मतिवन्त।
गिनें रतन-पाहन सम जेह, तृण-कंचन सम जाने तेह ॥९५
शत्रु-मित्र सम राजा-रंक, तुल्य गिनें मनमें नहिं संक।
वांधव-पुत्र कुटुम्व धनादि, तिनकूं भूलि गये गनि वादि ॥९६
जानें सकल जीव समरूप, गई विषमता भागि विरूप।
पर घर भोजन करें सुजान, श्रावककुल जो किरियावान ॥९७
अल्प अहार तहां लें धीर, नहिं चिन्ता धारें वर वीर।
कोमल पीछी कमंडल एक, विना धातुकी परम विवेक ॥९८
इक कोपिन कणगती लया, छह हस्ता इक वस्त्र हु भया।
इक तह एक पाटकौ जोय, यही रीति दशमीकी होय ॥९९
जिन शासनको है अभ्यास, आगम अध्यातम अध्यास।
अव सुनि एकादशमी धार, सबमें उतकृष्टे निरधार ॥१००
वनवासी निरदोष अहार, कृत कारित अनुमोदन कार।
मन वच काय शुद्ध अविकार, सो एकादश पड़िमा धार ॥१

ताके दोय भेद हैं भया, क्षुल्लक ऐलिक श्रावक लया।
क्षुल्लक खण्डित कपड़ा धरै, अरु कमण्डल पीछी आदरै ॥२
इक कोपीन कणगतो गहै, और कछू नहिं परिग्रह चहै।
जिनशासनकी दासा होय, क्षुल्लक ब्रह्मचारि है सोय ॥३
ऐलि धरें कोपीन हि मात्र, अर इक शौचतनूं है पात्र।
कोमल पीछी दया निमित्त, जिनवानीकौ पाठ पवित्त ॥४
पंत्र घरनिमें एक धरेंहि, भोजन मुनिकी भाँति करेंहि।
ये है चिदानन्दमैं लीन, धर्मध्यानके पात्र प्रवीन ॥५
क्षुल्लक जीमैं पात्र मँझार, ऐलि करैं करपात्र अहार।
मुनिवर ऊभा लेय अहार, ऐलि अर्यिका वैठा सार ॥६
क्षुल्लक कतरावै निज केश, ऐलि करें शिरलोंच अशेष।
पहली पड़िमा आदि जु लेय, क्षुल्लकलों व्रत सवकूं देय ॥७
श्रीगुरु तीन वर्ण विन कदे, नहिं मुनि ऐलितनें व्रत दे।
पहलीसां छट्ठीलों जेहि, जघन्य श्रावक जानों तेहि ॥८
सप्तमि अष्टमि नवमी धार, मध्य सरावक है अविकार।
दशमी एकादशमीवन्त, उतकृष्टे भापें भगवन्त ॥९
तिनहूमें ऐलि जु निरधार, ऐलिथकी मुनि वड़े विचार।
मुनिगणमें गणधर हैं बड़े, ते जिनवरके सनमुख खड़े ॥१०
जिनपति शुद्धरूप हैं भया, सिद्ध परें नहिं दूजौ लया।
सिद्ध मनुज विन और न होय, चहुंगतिमैं नहिं नर सम कोय ॥११
नरमें सम्यकदृष्टी नरा, तिनतैं वर श्रावक व्रत वरा।
षोडश स्वर्गलोकलों जाहिं, अनुक्रम मोक्षपुरी पहुंचाहिं ॥१२
पंचमठाणें ग्यारा भेद, धारें तेहि करें अघछेद।
इह श्रावककी रीति जु कही, निकट भव्य जीवनिनें गही ॥१३
ऊपरि ऊपरि चढ़ते भाव, विरकतभाव अधिक ठहराव।
नींव होय मन्दिरके यथा, सर्व व्रतनिके सम्यक तथा ॥१४

अथ दान वर्णन। दोहा

प्रतिमा ग्याराकी कथन, जिन आज्ञा परवान।
परिपूरण कीनूं भया, अव सुनि दान वखान ॥१५
कियौ दान वरणन प्रथम, अतिथिविभाग के माँहि।
अवहू दान प्रवन्ध कछु, कहिहौं दूषण नाँहि ॥१६

मनोहर छन्द

ए मूढ़ अचेतो कछु इक चेतौ, आखिर जगमैं मरना है।
धन रह ही इहां हो संग न जाहीं, तातैं दान सु करना है ॥१७

विन दान न सिद्धी ह्वै अघवृद्धी, दुरगति दुख अनुसरना है।
करपणता धारी शठमति भारी, तिनहिं न सुभ गति वरना है ॥१८
यामैं नहिं संसा नृप श्रेयंसा, कियउ दान दुख हरना है।
सो ऋषभ प्रतापें त्याग त्रितापे, पायौ धाम अमरना है ॥१९
श्रीपेण सुराजा दान प्रभावा, गहि जिनशासन सरना है।
लहि सुख वहु भांती ह्वै जिन शांती, पायो वर्ण अवर्णा है ॥२०
इक अकृतपुण्या कियउ सुपुण्या, लहिउ तुरत जिय मरना है।
ह्वै धन्यकुमारा चारित धारा, सरवारथ सिधि धरना है ॥२१
सूकर अर नाहर नकुल रु वानरु, नमि चारन मुनि चरना है।
करि दान प्रशंसा लहि शुभ वंशा, हरैं जनम जर मरना है ॥२२

दोहा

वज्रजंघ अर श्रीमती, दानतनें परभाव।
नर सुर सुख लहि उत्तमा, भये जगत की नाव ॥२३
वज्रजंघ आदीश्वरा, भए जगतके ईश।
भये दानपति श्रीमती, कुल कर माहिं अधीश ॥२४
अन्नदान मुनिराजकों, देत हुते श्रीराम।
करि अनुमोदन गीध इक, पंछी अति अभिराम ॥२५
भयौ धर्मथी अणुव्रती, कियौ रामकौ संग।
राममुखै जिन नाम सुनि. लह्यो स्वर्ग अतिरंग ॥२६
अनुक्रम पहुँचैगो भया, राम सुरग वह जीव।
वारैगौ निजभाव सहु, तजिकै भाव अजीव ॥२७
दानकारका अमित ही, सीझे भवथी भ्रात।
वहुरि दान अनुमोदका, को लग नाम गिनात ॥२८
पात्रदान सम दान अर, करुणादान वखान।
सकल दान है अन्तिमो, जिन आज्ञा वरवान ॥२९
आपथकी गुण अधिक जो, ताहि चतुरविधि दान।
देवौ है अति भक्ति करि, पात्रदान सो जान ॥३०
जो पुनि सम गुन आपतैं, ताकों दैंनों दान।
सो समदान कहैं बुधा, करिकै वहु सनमान ॥३१
दुखी देखि करुणा करै, देवै विविध प्रकार।
सो है करुणादान शुभ, भाषै मुनिगणधार ॥३२
सकल त्यागि ऋषिव्रत धरै, अथवा अनशन लेइ।
सो है सकल प्रदानवर, जाकरि भव उतरेइ ॥३३
दान अनेक प्रकारके, तिनमैं मुखिया चार।
भोजन औषधि शास्त्र अर, अभयदान अविकार ॥३४

तिनकौ वर्णन प्रथम ही, अतिथि विभाग मंझार।
कियौ अवै पुनरुक्तके, कारण नहिं विसतार ॥३५

सप्तक्षेत्र अर्णन

जो करवावै जिनभवन, धन खरचै अधिकाय।
सो सुर नर सुख पायकै, लहै धाम जिनराय ॥३६
जो करवावै विधिथकी, जिनप्रतिमा बुधिवन्त।
मन्दिरमें पधरावई, सो सुख लहै अनन्त ॥३७

यव-समान जिनराजकी, प्रतिमा जो पधराय।
किंदूरीसम देहुरो, सोहू धन्य कहाय ॥३८
शिखर बंध करवावई, जिन चैत्यालय कोय।
प्रतिमा उच्च करावई, पावै, शिवपुर सोइ ॥३९

जल चंदन अक्षत पहुप, अर नैवेद्य सुदीप।
धूप फलनि जिन पूजई, सो ह्वै जग अवनीप ॥४०
जो देवल करि विधिथकी, करै प्रतिष्ठा धीर।
सुर नर पतिके भोग लहि, सो उतरै भवतीर ॥४१

जो जिन तीरथको महा, यात्रा करै सुजान।
सफल जनम ताही तनों, भाषै पुरुष प्रधान ॥४२
चउ अनुयोगमई महा, द्वादशांग अविकार।
सो जिनवाणी है भया, करै जगतथी पार ॥४३

ताके पुस्तक बोधकर, लिखै लिखावै शुद्ध।
धन खरचै या वस्तु में, सो होवै प्रतिबुद्ध ॥४४
ग्रन्थनिकूं पूठे करै, करवावै धरि चित्त।
भले भले वस्त्रनि विषैं, राखैं महा पवित्त ॥४५

जीरणि ग्रन्थनिके महा, जतन करै बुधिवान।
ज्ञानदान देवै सदा, सो पावै निरवान ॥४६
जीरण जिनमंदिरतणी, मरमत जो मतिवान।
करवावै अति भक्ति सों, सो सुख लहै निदान ॥४३

शिखर चढ़ावै देहुरा, धन खरचै या भांति।
कलश धरै जिनमंदिरां, पावै पूरण शांति ॥४८
छत्र चमर घंटादिका, बहु उपकरणां कोय।
पधरावै चैत्यालये, पावै शिवपुर सोय ॥४९

टीप करावै द्रव्य दे, धवलावै जिनगेह।
धुजा चढ़ावै देवलों, पावै धाम विदेह ॥५०

जो जिनमंदिर कारनें, धरती देय सु वीर।
सो पावै अष्टम धरा, मोक्ष काम गंभीर ॥५१
चउविधि संघनिकी भया, मन वच तनकरि भक्ति।
करै हरै पीरा सवै, सो पावै निजशक्ति ॥५२
सप्त क्षेत्र ये धर्मके, कहे जिनागमरूप।
इनमैं धन खरचे वुधा, पावै वित्त अनूप ॥५३

अथ वचनिका

प्रतिमा करावैं, देवल करावै, पूजा तथा प्रतिष्ठा करै, जिन तीरथकी यात्रा करै शास्त्र लिखावै, चउविधि संघकी भक्ति करै ए सप्त क्षेत्र जानि। यहां कोई प्रश्न करै, प्रतिमाजी अचेतन छै, निग्रह अनुग्रह करवा समर्थ नाहीं, सो प्रतिमाका सेवनथकी स्वर्गमुक्ति फलप्राप्ति किसी भाँति होय ? ताका समाधान। प्रतिमाजी शांत स्वरूपने धार्या छै ध्यानकी रीतिने दिखावे छै। दृढ़ आसन, नासाग्र दृष्टी, नगन, निराभरण, निर्विकार जिसौ भगवानकौ साक्षात् स्वरूप छै तिस्यौ प्रतिमाजीने देख्यां यादि आवै छै। परिणाम ऐते निर्मल होइ छै। अर श्रीप्रतिमाजीने सांगोपांग अपना चितमैं ध्यावैं तो वीतराग भावने पावै। यथा स्त्रीको मूरति चित्रामकी, पाषाणकी काष्ठादिककी देखि विकारभाव उपजै छै, तथा वीतरागकी प्रतिमाका दर्शनथकी ध्यानथकी निर्विकार चित्त होइ छै। अर आन देवकी मूरति रागी द्वेषी छै। उन्मादने धारै छै। सो वाका दरशन ध्यान करि राग द्वेष उन्माद वढै छै। तीसौं आराधवा जोग्य, दरसन जोग्य, ध्यान जोग्य जिनप्रतिमा ही छै। जीवांने भुक्ति, मुक्तिदाता छै। यथा कलपवृक्ष, चिंतामणि औषधि मन्त्रादिक सर्व अचेतन छै, पणि फलदाता छै, तथा भगवतकी प्रतिमा अचेतन छै, परन्तु फलदाता छै। ज्ञानी तो एक शांतभावका अभिलाषी छै। सो शांतभावने जिनप्रतिमा मूर्तवन्त दिखावै छै। तीसूं ज्ञानी जनांने सदा वन्दिवा ध्यावा जोग्य छे। अर जगतका प्राणी संसारीक भोग चावै छै। सो जिनप्रतिमाका पूजनथकी सर्व प्राप्ति होय छै। ऐसो जानि, हित मानि, संशय भानि जिनप्रतिमाकी सेवा जोग्य छै।

कवित्त

श्रीजिनदेवतनी अरचा अर साधु दिगम्वरकी अतिसेव।
श्रीजिनसूत्र सुनै गुरु सन्मुख, त्यागै कुगुरु कुधर्म कुदेव ॥५४
धारै दान शील तप उत्तम, ध्यावै आतमभाव अछेव।
सो सव जीव लखै आपन सम, जाके सहज दयाकी टेव ॥५५
दानतनी विधि है जु अनन्त, सवै महिं मुख्य किमिच्छक दाना।
ताके अर्थ सुनूं मनवांछित, दान करै भवि सूत्र प्रवाना ॥५६
तीरथकारक चक्र जु धारक, देहि सकैं इह दान निधाना।
और सवै निज शक्ति प्रमाण, करैं शुभ दान महा मतिवाना ॥५७

सोरठा

कोउ कुवुद्धी कूर, चितवै चितमें इह भया।
लहिहौं धन अतिपूर, तव करिहूँ दानहि विधी ॥५८

अव तो धन कछु नाहिं, पास हमारे दानकों ।
किस विधि दान कराहिं, इन मनमें धरि कृपण ह्वै ।।५९
यो न विचारै मूढ, शक्ति प्रमाणें त्याग है ।
होय धर्म आरूढ़, करे दान जिनवैन सुनि ।।६०
कछु हू नाहि जुरै जु, तौहू रोटी एक ही ।
ज्ञानी दान करै जु, दान विना घृग जनम है ।।६१
रोटी एक हु माहिं, तोहू रोटी आध ही ।
जिनमारगके माहिं, दान विना भोजन नहीं ।।६२
एक ग्रास ही मात्र, देवै अतिहि अशक्त जो ।
अर्धं ग्रासही मात्र, देवै, परि नहि कृपण ह्वै ।।६३
गेह मसान समान, भाषै किरपणको श्रुति ।
मृतक समान वखान, जीवत ही कृपणा नरा ।।६४
जानौ गृद्ध समान, ताके सुत दारादिका ।
जो नहि करै सुदान, ताकौ धन आमिप समा ।।६५
जैसे आमिष खाय, गिरध मसाणा मृतककौ ।
तैसे धन विनशाहि, कृपणतनों सुत-दारका ।।६६
सवकों देनौ दान, नाकारौ नहि कोइसूं ।
करुणाभाव प्रधान, सव ही आतमराम हैं ।।६७
सव ही प्राणिनकों जु, अन्न वस्त्र जल औषधी ।
सूखे तृण विधिसों जु, देनें तिरजंचानिकों ।।६८
गुनी देखि अति भक्ति, भावथकी देनी महा ।
दान भुक्ति अरु मुक्ति, कारण मूल कहैं गुरु ।।६९
पर परिणतिकौ त्याग, ता सम आन न दान कोउ ।
देहादिकको राग, त्यागें ते दाता वड़े ।।७०
कह्यौ दान परभाव, अव सुनि जलगालण विधी ।
छांडी मुगध स्वभाव, जलगालण विधि आदरौ ।।७१

जलगालण विधि । अडिल्ल छन्द

अव जल गालन रीति सुनौ वुध कान दे,
जीव असंखिनिको हि प्राणको दान दे ।
जो जल वरतै छांणि सोहि किरिया धनी,
जलगालणकी रीति धर्ममें मुख भनी ।।७२
नूतन गाढ़ो वस्त्र गुड़ी विनु जो भया,
ताकौ गलनो करै चित्त धरिके दया ।
डेढ़ हाथ लम्वो जु हाथ चौरो गहै,
ताहि दुपड़तो करै छांणि जल सुख लहै ।।७३

वस्त्र पुरानो अवर रंगको नांतिनां,
राखै तिनतैं ज्ञानवन्तकी पीति नां।
छाणन एक हु बूंद महीपरि जो परै,
भाषैं श्रीगुरुदेव जीव अगणित मरैं ॥७४

वरतैं मूरख लोग अगाल्यौ नीर जे, तिनकों केतौ पाप सुनो नर धीर जे।
असी वरसलों पाप करै धीवर महा, अवर पारधी मोल वागुरादिक लहा ॥७५
तेतो पाप लहैं जु एक ही वार जे, अणछाण्यूं वरतें हि वारि तनधार जे।
ऐसौ जानि कदापि अगाल्यौ तोय जी, वरतौ मति ता माँहि महा अघहोय जी ॥७६
मकरीके मुखथकी तन्तु निकसैं जिसौ, अति सूक्षम जो वीर नीर कृमि है तिसौ।
तामें जीव असंखि उडैं ह्वै भ्रमर ही जम्बूद्वीप न भाय जिनेश्वर यों कही ॥७७
शुद्ध नातणे छांणि पान जलकों करै, छाण्यां जलथी धोय नांतणो जो धरै।
जत्तनथकी मतिवन्त जिवाण्यूं जलविषैं, पहुँचावै सो धन्य श्रुतविषै यूं लिखें ॥७८
जा निर्वाणको होय तीर ताही महै, पधरावैं बुधिवान परम गुरु यों कहें।
ओछै कपड़े तीर गालही जे नरा, पावैं ओछो योनि कहें मुनि श्रुतधरा ॥७९
जलगालन सम किरिया और नाहीं कही, जलगालणमें निपुण सोहि श्रावक सही।
चउथी पड़िमा लगें लेईं काचौ जला, आगे काचौ नाहिं प्रासुको निर्मला ॥८०
जाण्यूं काचौ नीर इकेन्द्रो जानिये, द्वै घटिका त्रसजीव रहित सो मानिये।
प्रासुक मिरच लवंग कपूरादिक मिला, बहुरि कसेला आदि वस्तुतें जो मिला ॥८१
सों लेनों दोय पहर पहली ही जैनमें, आगें त्रस निपजन्त कह्यौ जिनवैनमें।
तातौ भात उकालि वारि वसु पहर ही, आगे जंगम जीवहु उपजै सहज ही ॥८२

चौपाई

जे नर जिन आज्ञा नहिं जानैं, चित्तमें आवै सो ही ठानैं।
भात उकाल करैं नहिं पानी, कछू इक उष्ण करैं मनमानी ॥८३
ताहि जु वरतैं अष्टहि पहरा, ते व्रत वर्जित अर श्रुति वहरा।
मरजादा माफिक नहिं सोई, ऐसें वरतो भवि मति कोई ॥८४
जो जन जैनधर्म प्रतिपाला, ता घरि जलकी है इह चाला।
काचौ प्राशुक तातौ नीरा, मरजादामें वरतैं वीरा ॥८५
प्रथमहिं श्रावकको आचारा, जलगालण विधि है निरधारा।
जे अणछाण्यों पीवैं पाणी, ते धीवर वागुर सम जाणी ॥८६
विन गाल्यो औरै नहिं प्याजे, अभख न खाजै और न ख्वाजै।
तजि आलस अर सव परमादा, गालै जल चित धरि अहलादा ॥८७
जलगालण नहिं चित करै जो, जल छाननमैं चित धरै जो।
अणछाण्यांकी वूंद हु धरती, नाखै नहीं कदाचित वरती ॥८८
वून्द परैं तौ ले प्रायश्चित्ता, जाके घटमैं दया पवित्ता।
यह जलगालणकी विधि भाई, गुरु आज्ञा अनुसार वताई ॥८९

निशि-भोजनका दोष । दोहा

अव सुनि रात्रि अहारका, दोष महा दुखदाय ।
द्वै मुहुरत दिन जव रहै, तवतैं त्याग कराय ।।९०
दिवस मुहूरत द्वै चढ़ै, तवलों अनसन होय ।
निशि अहार परिहार सो, व्रत न दूजौ कोय ।।९१
निशिभोजनके त्यागतैं, पावै उत्तम लोक ।
सुर नर विद्या धरनकें, लहै महासुख थोक ।।९२
जे निशि भोजन कारका, तेहि निशाचर जानि ।
पावै नित्य निगोदके, जनम महा दुखखानि ।।९३
निशि वासरकौ भेद नहिं, खात तृप्ति नहिं होय ।
सो काहेके मानवा, पशुहूंतैं अधिकोय ।।९४
नाम निशाचर चारकौ, चोर समाना ते हि ।
चरैं निशाकों पापिया, हरैं धर्ममति जे हि ।।९५
वहुरि निशाचर नाम है, राक्षसकौ श्रुतिमांहि ।
राक्षस सम जो नर कुधी, रात्रि अहार करांहि ।।९६
दिन भोजन तजि रैनिमैं, भोजन करै विमूढ़ ।
ते उलूक सम जानिये, महापाप आरूढ़ ।।९७
मांस अहारी सारिखे, निशिभोजी मतिहीन ।
जनम जनम या पापतैं, लहैं कुगति दुखदीन ।।९८

नाराच छन्द

उलूक काक औ विलाव श्वान गर्दभादिका,
गहै कुजन्म पापिया जु ग्राम शूकरादिका ।
कुछारछोवि १ मांहि कीट होय रात्रिभोजका,
तजैं निशा अहारकों विमुक्ति पंथ खोजका ।।९९
निशा महैं करें अहार ते हि मूढ़धी नरा,
लहैं अनेक दोषकूं सुधर्महीन पामरा ।
जु कीट माछरादिका भखैं अहार मांहि ते,
महा अधर्म धारिके जु नर्क मांहि जांहि ते ।।२०००।।

छन्द चाल

निशिमाहीं भोजन करही, ते पिंडु अभखते भरही ।
भोजनमैं कीड़ा खाये, तातैं वुधि मूल नशाये ।।१
जो जूंका उदरें जाये, तौ रोग जलोदर पाये ।
मांखी भोजनमैं आवै, ततखिन सो वमन उपावै ।।२
मकरी आवै भोजनमैं, तौ कुष्ट रोग होय तनमें ।
कंटक अरु काठजु खंडा, फसि है जा गले परचंडा ।।३

तौ कंठविथा विस्तारे, इत्यादिक दोष निहारै।
भोजनमैं आवै वाला, सुर भंग होय ततकाला ॥४
निशिभोजन करके जीवा, पावै दुख कष्ट सदीवा।
होवै अति ही जु विरूपा, मनुजा अति विकल कुरूपा ॥५
अति रोगी आयुस थोरा, ह्वै भागहीन निरजोरा।
आदर-रहिता सुख-रहिता, अति ऊंच-नीचता सहिता ॥६
इक वात सुनो मन लाई, हथनापुर पुर है भाई।
तामैं इक हूतौ विप्रा, मिथ्यामत धारक लिप्रा ॥७
रुद्रदत्त नाम है जाकौ, हिंसामारग मत ताकौ।
सो रात्रि-अहारी मूढ़ा, कुगुरुनिके मत आरूढ़ा ॥८
इक निशिकों भोंदू भाई, रोटीमैं चींटी खाई।
वैंगनमैं मींडक खायौ, उत्तम कुल तिहं विनशायौ ॥९
कालान्तर तजि निज प्राणा, सो घूघू भयौ अयाणा।
पुनि मरि करि गयौ जु नर्का, पायौ अति दुख सम्पर्का ॥१०
नीसरि नरकजुतैं कागा, वह भयौ पाप-पथ लागा।
वहुरें नर्कजुके कष्टा, पायौ ताने जु सपष्टा ॥११
पुनि भयौ विडाल सु पापी, जीवनिकूं अति संतापी।
सो गयौ नर्कमैं दुष्टा, हिंसा करिके वो पुष्टा ॥१२
तहांतैं जु भयौ वह गृद्धा, पुनि गयौ नर्क अघवृद्धा।
नर्कजुतैं नीसरि पापी, हूवौ पसु पाप-प्रतापी ॥१३
वहुरें जु गयौ शठ कुगती, घोर जु नर्कें अति विमती।
नीसरिकै तिरजंच हूवौ, वहु पाप करी पशु मूवौ ॥१४
पुनि गयौ नर्कमें कुमती, नारकतैं अजगर अमती।
अजगरतैं वहुरी नर्का, पायौ अति दुख सम्पर्का ॥१५
नर्कजुतैं भयौ वघेरा, तहां किये पाप वहुतेरा।
वहुरें नारकगति पाई, तहातैं गोधा पशु जाई ॥१६
गोधातैं नर्क निवासा, नारकतैं मच्छ विभासा।
सो मच्छ नरकमैं जायौ, नारकमैं बहु दुख पायौ ॥१७
नारकतें नीसरि सोई, वहुरी द्विजकुलमें होई।
लोमस प्रोहितको पुत्रा, सो धर्मकर्मके शत्रा ॥१८
जो महीदत्त है नामा, सातों विसनजुसों कामा।
नग्रजुतैं लह्यौ निकासा, मामाके गयौ निरासा ॥१९
मामे हू राख्यौ नाहीं, तव काशीके वनमाहीं।
मुनिवर भेटे निरग्रन्था, जे देहि मुकतिको पन्था ॥२०
ज्ञानी ध्यानी निजरत्ता, भव-भोग-शरीर-विरत्ता।
ज्ञानैं जनमान्तर वातें, जिनके जियमें नहिं घातें ॥२१

तिनकों लखि द्विज शिर नायौ, सब पापकर्म विनशायौ।
पूछी जनमान्तर वातां, जा विधि पाई वहु घातां ॥२२
सो मुनिने सारी भाखी, कछु वात चीच नहिं राखी।
निशिभोजन सम नहिं पापा, जाकरि पायौ दुखतापा ॥२३
सुनि करि मुनिवरके वैना, ब्राह्मण धार्यो मत जैना।
सम्यक्त अणुव्रत धारी, श्रावक हूवौ अविकारी ॥२४

दोहा

मात पिता अति हित कियौ, दियौ भूप अति मान।
पुण्य उदय लक्ष्मी अतुल, पाप किये वहु हान ॥२५

चौपाई

पूजा करै जपै अरहन्त, महीदत्त हूवौ अतिसन्त।
जिनमन्दिर जिनविम्व रचाय, करी प्रतिष्ठा पुण्य उपाय ॥२६
सिद्धक्षेत्र वन्दै अधिकाय, जिनसिद्धांत सुनै अधिकाय।
केतौ काल गयौ इह भांति, समय पाय धारी उपशांति ॥२७
शुभ भावनितें छांडे प्रान, पायो षोडश स्वर्ग विमान।
ऋद्धि महा अणिमादिक लई, आयु वीस द्वै सागर भई ॥२८
चयौ स्वर्ग थी सो परवीन, राजपुत्र हूवौ शुभ लीन।
देश अवन्ती उत्तम वसै, नगर उजैणी अति ही लसै ॥२९
तहां नरपती पृथ्वीमल्ल, जिनधर्मी सम्यक्ति अचल्ल।
प्रेमकारिणी रानी महा, ताके उदर जन्म सो लहा ॥३०
नाम सुधारस ताकौ भयौ, मात पिता अति आनन्द लयौ।
अनुक्रम वर्ष सातको जवै, विद्या पढ़ने सोप्यौ तवै ॥३१
शस्त्र शस्त्रमें वहु परवीण, भयौ अणुव्रती समकित लीन।
जोवनवंत भयौ सुकुमार, व्याह कियौ नहिं धर्म सम्हार ॥३२
एक दिवस वनक्रीड़ा गयौ, वड़तरु विजुरीतै क्षय भयौ।
ताकों लखि उपनो वैराग, अनुप्रेक्षा चितई वड़भाग ॥३३
चन्द्रकीर्ति मुनिके ढिग जाय, जिनदाक्षा लीनो शिर नाय।
अभ्यन्तर वाहिर चौवीस, ग्रन्थ तजै मुनिकूं नमि शीश ॥३४
पंच महाव्रत गुप्ति जु तीन, पंच समिति धारी परवीन।
सुकल ध्यान करि कर्म विनाशि, केवल पायौ अति सुखराशि ॥३५
वहुत भव्य उपदेशे जिनें, आयुकर्म पूरण करि तिनें।
शेष अघातियको करि नाश, पायौ मोक्षपुरी सुखवास ॥३६
निशि भोजनतैं जे दुख लये, अर त्यागेतें सुख अनुभये।
तिनके फलको वर्णन करी, कथा अणणमी पूरण करी ॥३७

छप्पय

इक चंडाली सुरझि व्रत सेठनिपैं लीयौ।
मन वच तन दृढ़ होय त्यागि निशिभोजन कीयौ ॥
व्रततनों परभाव त्याग तन अंतिज जाया।
वाही सेठनिके जु उदर उपनी वर काया।
गहि जैनधर्म धरि शीलव्रत, पापकर्म सव ही दहा।
लहि सुरगलोक नरलोक सुख, लोकसिखरकौ पथ गहा ॥३८
एक हुतौ जु शृगाल कर सुदरशन मुनिराया।
त्यागौ निशि को खान पान जिनधर्म सुहाया।
मरि करि हूवौ सेठ नाम प्रीतंकर जाकौ।
अदभुत रूपनिधान धर्ममैं अति चित ताकौ।
भयौ मुनीश्वर सव त्यागिकैं, केवल लहि शिवपुर गयौ।
नहि रात्रिभुक्ति परित्याग सम, और दूसरौ व्रत लयौ ॥३९

सोरठा

निशि भोजन करि जीव, हिंसक ह्वै चहुंगति भ्रमैं।
जे त्यागैं जु सदीव, निशिभोजन ते शिव लहैं ॥४०
अर्ध उमरि उपवास, माहीं वीतै तिन तनी।
जे जन हैं जिनदास, निशिभोजन त्यागैं सुधी ॥४१
दिवस नारिकौ त्याग, निशिकों भोजन त्यागई।
निशिदिन जिनमत राग, सदा व्रतमूरति वुधा ॥४२
एक मासमैं भ्रात, पाख उपास फलैं फला।
जे निशि माहि न खात, चारि अहारा धीधना ॥४३
निशि भोजन सम दोष, भयौ न ह्वै है होयगौ।
महा पापकौ कोष, मद्य मांस आहार सम ॥४४
त्यागै निशिकौ खान, तिन्हें हमारी वंदना।
देही अभय प्रदान, जीवगणनिकों ते नरा ॥४५
कौलग कहैं सुवीर, निशि भोजनके अवगुणा।
जानैं श्रीमहावीर, केवलज्ञान महंत सव ॥४६

रत्नत्रय वर्णन

सोरठा

अव सुनि दरसन ज्ञान, चरण मोक्षके मूल हैं।
रतनत्रय निज ध्यान, तिन विन मोक्ष न ह्वैं भया ॥४७
सम्यकदर्शन सो हि, आतम रुचि श्रद्धा महा।
करनौं निश्चय जो हि, अपने शुद्ध स्वभावकों ॥४८

निजकी जानपनो हि, सम्यकज्ञान कहैं जिना ।
थिरता भाव घनो हि, सो सम्यकचारित्र है ।।४९

चौपाई

प्रथमहि अखिल जतन करि भाई, सम्यकदरशन चित्त धराई ।
ताके होत सहज ही होई, सम्यकज्ञान चरन गुन दोई ।।५०
जीवाजीवादिक नव अर्था, तिनकी श्रद्धा विन सब व्यर्था ।
है श्रद्धान-रहित विपरीता, आतमरूप अनूप अजीता ।।५१
सकल वस्तु हैं उभय स्वरूपा, अस्ति-नास्तिरूपी जु निरूपा ।
अनेकांतमय नित्य अनित्या, भगवतने भाषे सहु सत्या ।।५२
तामें संशय नाहि जु करनौ, सम्यक दरसन हो दिढ़ धरनौ ।
या भवमैं विभवादि न चाहै, परभव भोगनिकूं न उमाहै ।।५३
चक्री केशवादि जे पदई, इन्द्रादिक शुभ पदई गिनई ।
कबहू वांछै कछु हि न भोगा, ते कहिये भगवतके लोगा ।।५४
जो एकांतवाद करि दूषित, परमत गुण करि नाहि जु भूषित ।
ताहि न चाहै मन वच तन करि, तै दरसन धारी उरमैं धरि ।।५५
क्षुधा तृषा अर उष्ण जु सीता, इनहि आदि सुखभाव वितीता ।
दुखकारणमैं नाहि गिलानी, सो सम्यकदरशन गुणखानी ।।५६
लोकविषैं नहि मूढ़तभावा, श्रुति अनुसार लखै निरदावा ।
जैनशास्त्र विनु और जु ग्रंथा, शास्त्राभास गिनैं अघपंथा ।।५७
जैनसमय विनु और जु समया, समयाभास गिनैं सहु अदया ।
विनु जिनदेव और हैं जेते, लखै जु देवाभास सु ते ते ।।५८
श्रद्धानी सौ तत्त्वविज्ञानी, धरै सुदर्शव आतमध्यानी ।
करै धर्मकी जो बढ़वारी, सदा सु मार्दव आर्जवधारी ।।५९
पर औगुन ढ़ाकै बुधिवंता, सो सम्यकदरशनधर संता ।
काम क्रोध मद आदि विकारा, तिनकरि भये विकलमति धारा ।।६०
न्यायमार्गतें विचल्यौ चाहै, मिथ्यामारगकौ जु उमाहै ।
तिनको ज्ञानी थिर चित कारै, युक्त्यकी भ्रमभाव निवारै ।। १
आप सुथिर औरैं थिर कारै, सो सम्यकदरशन गुण धारै ।
दयाधर्ममैं जो हि निरन्तर, करै भावना उर अभ्यंतर ।।६२
शिवसुख लक्ष्मी कारण धर्मो, जिनभाषित भवनाशित पर्मो ।
तासौं प्रीति धरै अविकेरी, अर जिनधर्मिनसूं बहुतेरी ।।६३
प्रीति करै सो दर्शनधारी, पावै लोकशिखर अविकारी ।
यथा तुरतके बछरा ऊपरि, गौ हित राखै मन वच तन करि ।।६४
तथा धर्म धर्मिनिसौं प्रीती, जाके ताने शठता जीती ।
आतम निर्मल करणों भाई, अतिशयरूप महा सुखदाई ।।६५

दर्शन ज्ञान चरण सेवन करि, केवल उतपति करनौ भ्रम हरि।
सो सम्यक परभावनि होई, पर-भावनिकौ लेश न कोई ॥६६
दान तपो जिनपूजा करिकै, विद्या अतिशय आदि जु वरिकै।
जैनधर्मकी महिमा कारै, सो सम्यकदरशन गुण धारै ॥६७
ए दरशनके अष्ट जु अंगा, जे धारै उर माहिं अभंगा।
ते सम्यक्ती कहिये वीरा, जिन आज्ञा पालक ते धीरा ॥६८
सेवनीय हैं सम्यकज्ञानी, माया मिथ्या ममता भानी।
सदा आतमरस पीवैं धन्या, ते ज्ञानी कहिये नहिं अन्या ॥६९
यद्यपि दरशन ज्ञान न भिन्ना, एकरूप हैं सदा अभिन्ना।
सहभावी ए दोऊ भाई, तौ पनि किंचित भेद धराई ॥७०
भिन्न, भिन्न आराधन तिनका, ज्ञानवंतके होई जिनका।
एक चेतनाके द्वै भावा, दरसन ज्ञान महा सुप्रभावा ॥७१
दरसन है सामान्य स्वरूपा, ज्ञान विशेष स्वरूप निरूपा।
दरसन कारन ज्ञान सु कार्या, ए दोऊ न लहै हि अनार्या ॥७२
निराकार दर्शन उपयोगा, ज्ञान धरै साकार नियोगा।
कोऊ प्रश्न करै इह भाई, एककाल उत्पत्ति बताई ॥७३
दरसन ज्ञान दुहुनिको तातैं, कारन कारिज होइ न तातैं।
ताकौ समाधान गुरु भाषैं, जे धारैं ते निजरस चाखै ॥७४
जैसे दीपक अर परकासा, एककाल दुहुं कौ प्रतिभासा।
पर दीपक है कारनरूपा, कारिजरूप प्रकाशनरूपा ॥७५
तैंसैं दरशन ज्ञान अनूपा, एककाल उपजै निजरूपा।
दरशन कारनरूपी कहिये, कारिजरूपी ज्ञान सु गहिये ॥७६
विद्यमान हैं तत्त्व सर्वै ही, अनेकांततारूप फबै ही।
तिनकौ जानपनों जो भाई, संशय विभ्रम मोह नशाई ॥७७
जो विपरीत रहित निजरूपा, आतमभाव अनूप निरूपा।
सो है सम्यकज्ञान महंता, निजको जानपनों विलसंता ॥७८
अष्ट अंगकरि शोभित सोई, सम्यकज्ञान सिद्ध कर होई।
ते धारौ भवि आठों शुद्धा, जिनवाणी अनुसार प्रवुद्धा ॥७९
शब्द-शुद्धता पहलो अंगा, शुद्ध पाठ पढ़ई जु अभंगा।
अर्थ-शुद्धता अंग द्वितीया, करै शुद्धअर्थ जु विधि लीया ॥८०
शब्द अर्थ दुहुकी निर्मलता, मन वच तन काया निहचलता।
सो है तीजो अंग विशुद्धा, सम्यक्ता धारै प्रतिवुद्धा ॥८१
कालाध्यायन चतुर्थम अंगा, ताकौ भेद सुनौ अतिरंगा।
जा विरियां जो पाठ उचित्ता, सोहा पाठ करै जु पवित्ता ॥८२
विनय अंग है पंचम भाई, विनयरूप रहिवौ सुखदाई।
सो उपधान है छट्टम अंगा, योग्य क्रिया करिवौ जु अभंगा ॥८३

जिनभाषितकों अंगी करनौ, सो उगवान अंगकौ धरनौं।
सप्तम है बहुमान विख्याता, ताकौ अर्थ सुनूं तजि घाता ॥८४
बहुसतकार सु आदर करिकै, जिन आज्ञा पालै उर धरिकै।
अष्टम अंग अनिन्हव धारै, ते अष्टम भूमी जु निहारै ॥८५
जा गुरुके ढिग तत्त्वविज्ञाना, पायौ अदभुत रूप निधाना।
ता गुरुकौ नहिं नाम छिपावै, वार वार महागुण गावै ॥८६
को कहिये जु अनिन्हव अंगा, ज्ञानस्वरूप अनूप अभंगा।
सम्यक ज्ञान तनूं आराधन, ज्ञानिनिकों करनूं शिव-साधन ॥८७
दरशन मोह रहित जो ज्ञानी, तत्त्वभावना दृढ़ ठहरानी।
जे हि जथारथ जानैं भावा, ते चारित्र धरैं निरदावा ॥८८
बिना ज्ञान नहिं चारित सोहै, बिना ज्ञान मनमथ मन मोहै।
तातैं ज्ञान पीछें जु चरित्रा, भाष्यौ जिनवर परम पवित्रा ॥८९
सर्व पाप-मारग परिहारा, सकल कषाय-रहित अविकारा।
निर्मल उदासीनता रूपा, आतमभाव सु चरन अनूपा ॥९०
सो चारित्र दोय विधि भाई, मुनि-श्रावक व्रत प्रगट कराई।
मुनिको चारित सर्व जु त्यागा, पापरीतिके पंथ न लागा ॥९१
ताके तेरह भेद बखानैं, जिनवानी अनुसार प्रवानैं।
पंच महाव्रत पंच जु समिती, तीन गुपतिके धारक सुजती ॥९२
चउविधि जंगम पंचम थावर, निश्चयनय करि सब हि बराबर।
तिन सर्वनिकी रक्षा करिवौ, सो पहलो सु महाव्रत धरिवौ ॥९३
संतत सत्य वचनकौ कहिवौ, अथवा मौनव्रतकों गहिवौ।
मृषावाद वोलै नहिं जोई, दूजौ महाव्रत है सोई ॥९४
कौड़ी आदि रतन परजंता, घटि अघटित तसु भेद अनन्ता।
दत्त अदत्त न परसै जोई, तीजो महाव्रत है सोई ॥९५
पशु पंछी नर दानव देवा, भववासा रमनी-रत मेवा।
तजै निरन्तर मदन विकारा, सो चौथो जु महाव्रत भारा ॥९६
द्विविधि परिग्रह त्यागै भाई, अन्तर बाहिर संग न काई।
नगन दिगम्बर मुद्रा धारा, सो हि महाव्रत्त पंचम सारा ॥९७
ईर्यासमिति ऋषी जो चालै, भाषासमिति कुभाषा टालै।
भखै अहार अदोष मुनीशा, ताहि एषणा कहै अधीशा ॥९८
है आदान निक्षेपा सोई, लेहि निरखि शास्त्रादिक जोई।
अर परिठवणा पंचम समिति, निरखि शास्त्रादिक जोई।
अर परिठवणा पंचम समिती, निरखि भूमि डारै मल सुजती ॥९९
मनोगुप्ति कहिये मन-रोधा, वचन गुप्ति जो वचन निरोधा।
कायगुप्ति काया वस करिवौ, ए तेरह विधि चारित धरिवौ ॥२१००

एकदेश गृहपात्त चारित्रा, द्वादश व्रतरूपी हि पवित्रा।
जो पहली भाख्यौ अव तातैं, कह्यौ नहीं श्रावकव्रत तातैं ॥१
इह रतनत्रय मुनिके पूरा, होवैं अष्टकर्म दल चूरा।
श्रावक के नहिं पूरण होई, धरै न्यूनतारूप जु सोई ॥२
इह रतनत्रय करि शिव लेवै, चहुँ गतिकों भवि पानी देवे।
या करि सीझे अरु सीझेंगे, यह लहि परमें नहिं रीझेंगे ॥३
या करि इन्द्रादिक पद होवै, सो दूषण शुभको बुध जोवै।
इह तौ केवल मुक्ति प्रदाई, वंधनरूप होय नहिं पाई ॥४
वंध-विदारन मुक्ति-सुकारण, इह रतनत्रय जगत उधारण।
रतनत्रय सम और न दूजौ, इह रतनत्रय त्रिभुवन पूजो ॥५
रतनत्रय विनु मोक्ष न होई, कोटि उपाव करै जो कोई।
नमस्कार या रतनत्रयकों, जो दै परम भाव अक्षयकों ॥६
रतनत्रय की महिमा पूरन, जानि सकै वसु कर्म-विचूरन।
मुनिवर हू पूरण नहिं जानैं, जिन-आज्ञा अनुसार प्रवानैं ॥७
सहस जीभ करि वरणन करई, तिनहूँ पै नहिं जाय वरणई।
हमसे अलपमती कहो कैसे, भाषै वुधजन धारहु ऐसे ॥८
त्रेपन किरिया कौ यह मूला, रतनत्रय चेतन अनुकूला।
जिन धार्यो तिन आपौ तार्यो, याकरि वहुतनि कारिज सार्यो ॥९
धन्य घरी वह ह्वैगी भाई, रतनत्रयसों जीव मिलाई।
पहुंचेगो शिवपुर अविनाशी, होवेगो अति आनन्द राशी ॥१०
सव ग्रन्थनि में त्रेपन किरिया, इन करि, इन विन भववन फिरिया।
जो ए त्रेपन किरिया धारै, सो भवि अपना कारिज सारै ॥११
सुरग मुकति दाता ए किरिया, जिनवानी सुनि जिनि ए धरिया।
तिन पाई निज परणति शुद्धा, ज्ञानस्वरूपा अति प्रतिवुद्धा ॥१२
है अनादि सिद्धा ए सर्वा, ए किरिया धरिवौ तजि गर्वा।
ठौर ठौर इनको जस भाई, ए किरिया गावैं जिनराई ॥१३
गणधर गावैं मुनिवर गावैं, देव भाषमें शवद सुनावैं।
पंचम काल माहिं सुर-भाषा, विरला समझै जिनमत साखा ॥१४
तातें यह नर-भाषा कीनी, सुर-भाषा अनुसारे लीनी।
जो नर-नारि पढ़ै मन लाई, सो सुख पावै अति अधिकाई ॥१५
संवत सत्रासै पच्याण्णव, भादव सुदि वारस तिथि जाणव।
मंगलवार उदयपुर माहैं, पूरन कीनी संशय नाहैं ॥१६
आनन्द-सुत जयसुतकौ मंत्री, जयकौ अनुचर जाहि कहै।
सो दौलत जिन-दासनि दासा, जिनमारग की शरण गहै ॥१७

इति।



परिशिष्ट

क्रियाकोषोंमें उद्धृत गाथा-श्लोक-सूची

श्री किसनसिंह-कृत क्रियाकोषमें

गुण-वय-तव-सम-पडिमा दाणं जलगालणं च अणत्थमियं।
दंसण-णाण-चरित्तं किरिया तेवण्ण सावया भणिया ॥ (पृष्ठ ११५)

हेमंते तीस दिणा, गिम्हे पणरस दिणाणि पक्कण्णं।
वासासु य सत्त दिणा, इय भणियं सूय-जंगेहिं ॥ (पृष्ठ ११६)

इक्खु-दही-संजुत्तं, भवंति सम्मुच्छिमा जीवा।
अंतोमुहुत्त-मज्झे, जम्हा भणंति जिणणाहा ॥ (पृष्ठ ११८)

चउ एइंदी विण छह-अठ्ठह तिण्णिणि भणंति दह।
चौरिंदी जीवङा वार वारह पंच भणंति ॥ (पृष्ठ ११९)

अन्न जलं किंचि ठिई, पच्चक्खाणं न भुंजए भिक्खू।
घड़ी दोय अंतरीया, णिगोइया हुंति वहु जीवा ॥ (पृष्ठ १४२)

संवत्सरेण-मेकत्वं चैवर्तकस्य हिंसकः।
एकादश दवादाहे अपूतजल-संग्रही ॥ (पृष्ठ १६२)

लूतास्यतन्तु-गलिते ये विन्दौ सन्ति जन्तवः।
सूक्ष्मा भ्रमरमानापि, नैव मान्ति त्रिविष्टपे ॥ (पृष्ठ १६२)

षट्त्रिंशदङ्गुलं वस्त्रं चतुर्विंशतिविस्तृतम्।
तद्वस्त्रं द्विगुणीकृत्य तोयं तेन तु गालयेत् ॥ (पृष्ठ १६२)

तस्मिन् मध्यस्थिताञ्जीवान् जलमध्ये तु स्थाप्यते।
एवं कृत्वा पिवेत्तोयं, स याति परमां गतिम् ॥ (पृष्ठ १६२)

राहु-अरिट्ठविमाणं किंचूणा किं पि जोयणं अधोगंता।
छम्मासे पव्वन्ते चन्दं रविं छादयदि कमेण ॥ (पृष्ठ २०१)

स्नानं पूर्वामुखी भूप, प्रतीच्यां दन्त-धावनम्।
उदीच्यां श्वेतवस्त्राणि, पूजा पूर्वोत्तरामुखी ॥ (पृष्ठ २०३)

अरहंता छैयाला सिद्धा अट्ठेव सूरि छत्तीसा।
उवझाया पणवीसा साहूणं हुंति अडवीसा ॥ (पृष्ठ २२३)

श्री दौलतरा -कृत क्रियाकोष में

गुण-वय-तव-सम-पडिमा, दाणं जलगालणं च अणत्थमियं।
दंसण णाण चरित्तं किरिया तेवण्ण सावया भणिया॥ (पृष्ठ २२४)

मय-मूढमणायदणं संकाइ वसण्ण भयमईयारं।
एहिं चउदालेदे ण संति ते हुंति सद्दिट्ठी॥ (पृष्ठ २६२)

आद्यं शरीर-संस्कारो द्वितीयं वृष्यसेवनम्।
तौर्यत्रिकं तृतीयं स्यात्संसर्गस्तुर्यं भण्यते॥ (पृष्ठ ३००)

योषिद्विषसंकल्पं पञ्चमं परिकीर्तितम्।
तदङ्गवीक्षणं षष्ठं सत्कारः सप्तमो मतः॥ (पृष्ठ ३००)

पूर्वानुभूत-सभोगः स्मरणं स्यात्तदष्टमम्।
नवमे भावनी चिन्ता दशमे वस्तिमोक्षणम्॥ (पृष्ठ ३००)

भोजने षट्रसे पाने, कुंकुमादि-विलेपने।
पुष्पताम्वूल-गीतेषु, नृत्यादौ व्रह्मचर्यके॥ (पृष्ठ ३३३)

स्नान-भूषण-वस्त्रादौ, वाहने शयनाशने।
सचित्त वस्तु-संख्यादौ, प्रमाणं भज प्रत्यहम्॥ (पृष्ठ ३३३)

पं० दौलतराम जीने भी अपने क्रिया-कोषका आधार संस्कृत क्रिया-कोषको ही वताया है। जैसा कि उनके निम्न पद्यसे स्पष्ट है—

'तातैं' नर-भाषा यह कीनी, सुर-भाषा अनुसारैं लीनी॥
पंचम काल मांहि सुर-भाषा, विरला समझै जिन-मत साखा॥

इस पद्यमें 'नर-भाषा' से अभिप्राय वर्तमानमें वोली जानेवाली हिन्दी भाषासे है और सुर-भाषासे अभिप्राय देवभाषा संस्कृतसे है।

इस उल्लेखसे यह सिद्ध है कि उनके सम्मुख कोई संस्कृत क्रिया-कोष विद्यमान था।

पदम कविने अपने श्रावकाचार की प्रशस्तिमें जिन आचार्यों, भट्टारकों एवं ब्रह्मचारियोंका उल्लेख किया है। उनके नाम इस प्रकार है—

आचार्य—१. आ० कुन्दकुन्द, २. समन्तभद्र, ३. जिनसेन, ४. गुणभद्र, ५. अकलंक, ६. अमृतचन्द्र, ७. प्रभाचन्द्र, ८. वसुनन्दि।

पंडित—आशाधर।

भट्टारक—१. पद्मनन्दी, २. सकलकीर्ति, ३. भुवनकीर्ति, ४. ज्ञानभूषण, ५. विजयकीर्ति, ६. शुभचन्द्र, ७. कुमुदचन्द्र।

गुरुजन—आम्नाय गुरु—शुभचन्द्र।
आगम गुरु—विनयचन्द्र।
अध्यात्मगुरु—कर्मश्री ब्रह्म।
शिक्षागुरु—हीरब्रह्मेन्द्र।

श्रावकाचारके आधारभूत ग्रन्थोंके नाम—

१. स्वामी समन्तभद्रका रत्नकरण्ड श्रावकाचार।
२. आचार्य वसुनन्दीका श्रावकाचार।
३. पं० आशाधरका सागारधर्मामृत।
४. श्री सकलकीर्त्तिका प्रश्नोत्तर श्रावकाचार।

पदम कविने त्रेपन क्रियाओंके वर्णनका आधार किसी ग्रन्थको न बता करके श्रेणिकके प्रश्न पर गौतमके द्वारा श्रावकके सम्पूर्ण आचारका वर्णन कराया है। जैसा कि इसकी मंगलाचरणके पश्चात् दी गई उत्थानिकासे प्रकट है।

■